

मुद्रक और प्रकाशक-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

मालिक-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस, बम्बई.





विद्यालंकार शिवशर्मा वैद्यशास्त्री।

DEDICATION.

TO

Vaidya Ratna Pandit Ram Prasad

Raj Vaidya of Patiala



Whose Solicitude for the advancement of Ayurveda has manifested itself in such glorious success, whose sympathies for suffering humanity are highly genuine, and whose fount of Knowledge has incessantly been supplying the author amongst thousand others, with inspirations that have been the main cause of the production of this work, this Commentary entitled the Shiv Prakashika is very respectfully dedicated by.

His most dutiful & obedient Son

SHIV SHARMA.

PREFACE.



While every session witnesses a tremendous outpour of the so called sommentaries on Ayurvedic Books from the Press an apology seems necessary for the production of the present work.

That the book has universally been approved by the present Scholars of Ayurveda as a sagacious and conenient access to enter the vast science of Ayurveda, is evident from the fact that the leading institutes of Ayurveda have with a singular coincidence, chosen it as the fit text for the beginners of Ayurveda. A suitable commentary on this Nighantu for the students of Ayurveda, therefore, is not an unnecessary labour.

This may not satisfy the fastidious critic and he might still assert with this professional frown, that these are translations extant in the same line, and another work in the same line is a futile labour.

In response to this I can only request him to alienate my humble work from that line. The work in this line in many cases, though written by professional parasites of Ayurveda, have clearly omitted the texts, whenever they invite some racking of the brain, and replaced by the convenient and self-made texts, which fail to follow the chain In many places most confounding and misleading translations have been consciously given to hide the inability of rightly understanding the text. The text in such cases were better left to itself than to be distorted into such crude forms.

I have endeavoured, in the present translation to clear out such intricate points, and made the best effort I could to simplify the work for the young students of Ayurveda.

I must not forget to acknowlege the great help rendered to me by Pandit Hari Sharma Shastri Vaidya Bhushan, which enabled me to bring forth this work with great convenience, and much sooner than anticipated.

Patiala.
7th June 1926

SHIV SHARMA.

भूमिका।



धार्मिक उन्नतिको छोडकर और अनेक प्रकारकी उन्नति संसार इस समय अपने अपने ढंगसे कर रहा है। इस उन्नतिमें आयुर्वैदिक उन्नतिवालोंने भी आगे पांव बढाया। जिससे कुछ आयुर्वैदिक हिन्दी उर्दूके पत्र आयर्वैदिक ग्रन्थ तथा उनकी जैसी तैसी भाषा भी आगे आने लगी।

इस समय सब वैद्य ऋषियोंकी आज्ञानुसार शास्त्रको विधिवत् गुरुओंसे पढकर सब विधि व्यवस्था अपने पूज्य गुरुओंसे सीखकर और अनुभव प्राप्त करनेके अनन्तर संसारके हितमें धर्म्मानुसार अपना भी हितसाधन कर उभयलोक कल्याणकारी मार्गका अवलम्बन करनेवाले मिल सकें यह बात तो है ही नहीं, किन्तु वे गुरुके वैद्य स्वयं गीता पढे हुए इस समय शास्त्रज्ञ भी बहुत मिल सकते हैं। जो व्याख्यान और लेखोंमें एवं प्रस्ताव विज्ञानमें कहीं न कहीं प्रति-वर्ष अपना पाण्डित्य प्रकाशित कर डालते हैं। ऐसी अवस्थामें विना गुरुओंकी सेवा और विना ही मर्य्यादाके सबको आयुर्वेद–शिरोमणि बननेका अभ्यास बडे वेगसे बढता जाता है।

मैंने दश पन्द्रह वर्षमें अपने पूज्य पिताजीके पास स्वयं सर्वसिद्धान्ती बन-नेवाले बहुतसे रोगी आते देखे हैं। ऐसे सर्वतन्त्रस्वतन्त्रोंको देख कभी २ मुझे हास्य और कभी २ वैद्यराज बननेकी रुचि हो आती थी, परन्तु पूज्य पिताजी आयुर्वैदिक ग्रन्थोंको कभी हाथ भी लगाने नहीं देते थे। हम दोनों भाइयोंके भाग्यमें व्याकरण, न्याय और काव्यप्रकाश ही रहता था। हमको छः महीने पढकर घर भाग जानेवाले वैद्यराजोंपर बडी ईर्षा रहती थी।

हमने यह कष्ट 'शास्त्री' के काठिन ग्रन्थों और बी० ए० के स्टीवसन आदि तक भोगा। फिर हमको आयुर्वेदकी प्रथम श्रेणीका विद्यार्थी बनाया गया। और ग्रन्थोंके साथ साथ पारेके संस्कार तथा सर्कारी औषधालयोंमें उपवैद्योंसे आरम्भ कर कभी कभी वैद्यके स्थान पर काम करनेको भी लगाया गया। अब पंद्रह वर्षके बाद चरक संहिताके पढते समय हम समझे कि उस

समय पिताजी हमको क्यों आयुर्वेदका नाम तक नहीं लेने देते थे । आयुर्वेद शास्त्रके ज्ञानके लिये जितने शास्त्रोंका पण्डित प्रथम ही हो जाना चाहिये, अभी हममें वह योग्यता नहीं आयी थी ।

तो भी पढ़ते २ सुश्रुतसंहिता और चरकसंहिता पर अंग्रेजी टीका करनेकी धुन सवार हुई । हमने अपना भाव पूज्य पिताजीसे प्रगट किया । पिताजीने आज्ञा दी अभी जल्दी मत करो । पहले छोटे ग्रंथोंपर भाषानुवाद करो फिर संस्कृत अंग्रेजी टिप्पणियें करो । सब उपकरण एकत्रित कर चरककी अंग्रेजी टीका करना ।

जो ग्रंथ भाषानुवादके लिये मुझे दिये गये उनमें यह "हरीतक्यादिनिघण्टु" भी है । मैंने प्रथम इसीको लेकर इसका भाषानुवाद किया । इसमें कहीं २ अंग्रेजी और फारसीके शब्द भी साथ दे दिये गये हैं ।

सर्वज्ञ सर्वाधार अन्तर्यामीकी पूजाके लिये यह अनुवाद मेरा प्रथम आयुर्वैदिक पुष्प है । इसको भगवान्की भेंटके लिये अनभिज्ञावस्थामें लाया हूं, भगवान् मुझ पर कृपा करें कि मैं और पुष्प जानकार पुजारीके समान भगवान्की भेंट कर सकूं । जिससे मैं आयुर्वेद द्वारा सच्चा पुजारी कहलानेका अधिकारी बन जाऊं ।

जिन पूज्य पिताजी द्वारा इस आयुर्वेदसमुद्रका दर्शन हुआ है, उनकी आज्ञानुसार यह निघण्टु "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें छपनेको भेज दूसरे फूलकी खोजमें लगता हूं ।

भगवान् अपने भक्तोंको अनभिज्ञताके दोषोंपर सदा क्षमा करते आये हैं । विराट् भगवान् इस फूलके चढानेकी अनभिज्ञता पर भी अवश्य क्षमा कर विज्ञ बननेका आशीर्वाद प्रदान करेंगे ।

यदि मानुषी बुद्धिके कारण या छापेखानेकी कृपासे कोई भ्रष्टतानाटक खिल जाये तो बुद्धिमान् जन क्षमाकर सूचित करनेकी कृपा करेंगे; जिससे दूसरी वार छपनेमें सुधार दिया जावे ।

—शिवशर्मा,
पटियाला ।

अभ्यर्थना ।

सर्व शक्तिवाले प्रभू, हे जगके कर्तार !
अपने आयुर्वेदकी, अब तो सुनो पुकार ॥

अपनी सृष्टीका हित कर जो आयुर्वेद बनाया है ।
सृष्टीकी रचनासे पहले ही जो तुमको भाया है ॥
जिसमें सब सृष्टीका हितकर सब विधि मार्ग बताया है ।
जिसको कह उपवेद विधाताने प्रचार कराया है ॥

इसी आपके वेदपर, अब संकट रहा छाय ।
हे इसके प्यारे प्रभू, लीजे इसैं बचाय ॥

प्रथम तो इसके ही पूजक अब नाना कष्ट उठाते हैं ।
तिसपर भी नैतिक बलसे कोइ इसे डराने आते हैं ॥
कहीं वृथा कोइ एक्ट बनाकर इसे दबाने आता है ।
कोई झूठे विज्ञापन दे इसको बदनाम कराता है ॥

शत्रुमण्डली इस तरह, करे नित्य बदनाम ।
पर यह सबको दे रहा, फिर भी पूरण काम ॥

फिर भी पूरण काम सभीका सब विध यह हितकारी है ।
धर्म्म, अर्थ अरु काम मोक्षतकका भी यही प्रचारी है ॥
इसमें ही सब स्वास्थ्यवृत्त और धर्म्म कर्म बतलाया है ।
मिलते सब उभयलोक सुख जिसे हृदय यह भाया है ॥

अंग अंगमें है भरा, निःस्वारथ उपकार ।
छिपी नहीं इसकी दशा, क्या २ कहूँ पुकार ॥

फिर अपने इस पुण्य देशपर दया काहे नहीं करते हो ।
जगके कर्ता हर्ता हो भी क्या कलियुगसे डरते हो ॥
सद् विनानोंने कुछ बढ़कर अब भी यह विज्ञानी है ।
रामप्रसाद प्रजाका हितकर सबविध दास अमानी है ॥

—रामप्रसाद.



प्रस्तावना।



अथर्ववेदमें देव ग्रहादिपूजन, प्रायश्चित्त उपवास आदिके अनन्तर देहको आरोग्य रखनेके लिये चिकित्साका उपदेश किया है । द्रव्य, गुण, कर्मके विचार करनेसे आरोग्य लाभ होता है। किस द्रव्यमें क्या गुण है उसकी इति-कर्तव्यता किस प्रकारसे है इतना जान लेना सभीको आवश्यक है। वात, पित्त, कफ अथवा इनके संयोगसे हुई प्रकृतियोंके अनुकूल पदार्थोंके सेवन करनेसे देहमें रोग नहीं हो सकते। कदाचित् विरुद्ध पदार्थोंके सेवनसे वातादि दोषोंमें वैषम्य हो जानेके कारण रोग हो भी जावें तो उनके कर्षण बृंहणात्मक (दोषोंके घटाने बढाने रूप) सुचिकित्सासे शीघ्र नष्ट हो सकते हैं। यही सब विचार करके आयुर्वेदतत्त्वज्ञ भावमिश्रने अपने निर्मित भावप्रकाशमें नाना प्रकारके अन्न, शाक, फल, मूल, जल, दही, दूध, शर्करा आदि नित्यके उपयोगी प्रायः सभी पदार्थोंके गुण अवगुण कहे हैं । उसी भावप्रकाशमें संग्रह कर यह **भावप्रकाशनिघण्टु** बनाया गया है। इसीका दूसारा नाम **हरीतक्यादिनिघण्टु** है। इसमें ग्रन्थकार (भावमिश्र) ने द्वीपान्तर वचा (चोबचीनी) आदि वर्तमान समयमें प्रचलित कतिपय नवीन द्रव्योंके नाम गुण लिखकर अपने पूर्ववर्ती निघण्टुकारोंसे विशेषता दिखाते हुए इसकी उपादेयताको और भी बढा दिया है। यह ऐसा उत्तम निघण्टु बना है कि वैद्य तथा अन्य आयुर्वेदप्रेमी मनुष्योंने इसको अत्यन्त आदरसे पठन पाठन आदि कार्यमें ग्रहण किया है । इसके द्वारा देशवासियोंका जो उपकार हुआ है इसके लिये उक्त ग्रंथकारके, लोग अत्यन्त उपकृत और ऋणी हैं । ऐसे परमोपयोगी—सर्वप्रिय-सर्वमान्य निघण्टुका यथार्थ भाषानुवाद न होनेके कारण संस्कृतानभिज्ञ जनसाधारण इसके अनुपम लाभोंसे वञ्चित थे। यद्यपि हमारे यहांके छपे हुए सविस्तृत सरल भाषाटीकासहित **भावप्रकाशमें** इस निघण्टुका भी सुविस्तृत सरलभाषा-

नुवाद आचुका है तथापि समग्र ग्रंथका मूल्य अधिक होनेके कारण वह भी सर्व साधारणको सुलभ न था; अतः यह सबके लिये सुलभ हो इस इच्छासे हमारे यहां तृतीयावृत्ति–प्रकाशित मूल पुस्तकका पटियाला राजवैद्य वैद्यरत्न पं० रामप्रसादात्मज विद्यालङ्कार शिवशर्म वैद्यशास्त्रि द्वारा औषधोंके अंग्रेजी नामोंसहित शिवप्रकाशिका नामक सरल हिन्दी भाषाटीका बनवाकर प्रकाशित किया है। उक्त पुस्तकमें **मांसवर्ग** और **कृतान्नवर्ग** न होनेके कारण हमारे यहां प्रकाशित स्व० लालाशालग्राम वैश्यकृत भाषानुवादसहित भावप्रकाशसे उद्धृतकर उक्त दोनों वर्गोंको भी इसमें जोड दिया है। और वर्तमान कालमें फारसी नामोंसे व्यवहृत होनेवाली अनेक औषधोंके संस्कृत नाम तथा अनेक अप्रसिद्ध संस्कृतनामवाली औषधोंके प्रचलित भाषानाम प्रदर्शित करनेवाला परिशिष्ट भी जोड दिया है, इससे इसकी उपयोगिता अत्यधिक बढ गयी है। इस प्रकारका यह संस्करण यद्यपि यथासंभव सुविधायुक्त और भली भांति परिशोधित करके ही छापा गया है तथापि प्रथम प्रयत्न और मनुष्यस्वभावके कारण यदि कोई त्रुटि प्रतीत हो तो उसे सहृदय महोदय सदय हृदय होकर अवश्य क्षमा करें। ऐसी विनीत प्रार्थना करते हुए आशा करते हैं कि आरोग्यको सबसे अधिक लाभ समझनेवाले नीतिज्ञ पुरुष तथा आयुर्वेद विद्याप्रेमी इसका संग्रह कर हमारे परिश्रमको सफल करते हुए इससे लाभ उठावेंगे।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष–"**श्रीवेङ्कटेश्वर**" स्टीम-प्रेस,

बम्बई.

श्रीः ।

अथ भावप्रकाश (हरीतक्यादि) निघण्टुस्थ वर्गोंकी सूची ।





भावप्रकाश (हरीतक्यादि) निघण्टुकी सूची।

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।

श्रीगणेशाय नमः ।

भावप्रकाशनिघण्टुः ।

अर्थात्

हरीतक्यादिनिघण्टुः ।

शिवप्रकाशिकाटीकोपेतः ।

गुरवे नमः ।

टीकाकारकृतं मंगलम् ।

ब्रह्मेन्द्रादींश्च वै देवान् भरद्वाजादिकानृषीन् ।
सिद्धाचार्य्यांस्तथान्यांश्च ह्यायुर्वेदप्रचारकान् ॥ १ ॥
प्रणम्य श्रीगुरून्भक्त्या पूज्यान् पितृपदाब्जकान् ।
हरीतक्यादिकोशस्य भाषा शिवप्रकाशिका ।
सर्वलोकहितार्थाय क्रियते शिवशर्म्मणा ॥ २ ॥

ब्रह्मादिक देवताओं, भरद्वाजादि ऋषियों, सिद्धाचार्य्यों और अन्य आयुर्वेदप्रचारकों, गुरुओं तथा पूज्य पितृचरणकमलोंमें भक्तिसहित प्रणाम करके मैं शिवशर्म्मा सब लोगोंके हितके लिये हरीतक्यादि निघण्टुपर शिवप्रकाशिका नामकी भाषाटीकाको करता हूं ॥ १ ॥ २ ॥

यतो द्रव्यगुणज्ञानं प्रधानं हि चिकित्सिते ।
हरितकीं पुरस्कृत्य निघण्टुर्लिख्यते मया ॥

दोहा ।

आयुर्वैदिक शास्त्र है, औषध ज्ञान प्रधान ।
यासे पथ्यादिक लिख्यो, उचित द्रव्य गुण ज्ञान ॥

अथ प्रथमं हरीतक्या उत्पत्तिर्नाम लक्षणं गुणाश्च ।

दक्षं प्रजापतिं स्वस्थमश्विनौ वाक्यमूचतुः ।
कुतो हरीतकी जाता तस्यास्तु कति जातयः ॥१॥
रसाः कति समाख्याताः कति चोपरसाः स्मृताः ।
नामानि कति चोक्तानि किंवा तासां च लक्षणम् ॥२॥
के च वर्णा गुणाः के च का च कुत्र प्रयुज्यते ।
केन द्रव्येण संयुक्ता कांश्च रोगान्व्यपोहति ॥ ३ ॥
प्रश्नमेतं यथा पृष्टं भगवन्वक्तुमर्हसि ।
अश्विनोर्वचनं श्रुत्वा दक्षो वचनमब्रवीत् ॥ ४ ॥

सर्वथा सुखपूर्वक बैठे हुए दक्ष प्रजापतिजीसे अश्विनीकुमार पूछने लगे कि हे भगवन् ! हरीतकी (हरड़) कहां से उत्पन्न हुई है और इसकी कितनी जातियें है ? इसमें कितने रस और उपरस है ? इसके कितने नाम है और उनके क्या लक्षण है ? इसके वर्ण और गुण क्या क्या है ? किस प्रकारकी हरीतकीका किस स्थानमें प्रयोग करना चाहिये ? हरीतकी किन २ द्रव्योंके संयोगसे किन २ रोगोंको दूर करती है ? इन प्रश्नोंका क्रमपूर्वक उत्तर देनेकी कृपा कीजिये । इस प्रकार अश्विनीकुमारोंके वचनोंको सुनकर दक्ष प्रजापति कहने लगे ॥ १–४ ॥

हरीतक्या उत्पत्तिः ।

पपात बिंदुर्मेदिन्यां शक्रस्य पिबतोऽमृतम् ।
ततो दिव्या समुत्पन्ना सप्तजातिर्हरीतकी ॥ ५ ॥

आदिकालमें जब इन्द्र अमृत पीने लगे तो पीते समय अमृतकी एक बूंद पृथ्वीपर गिर पडी उससे सात जातिकी दिव्य शक्तियोंवाली हरीतकी उत्पन्न हुई ॥ ५ ॥

हरीतकीनामानि ।

हरीतक्यभया पथ्या कायस्था पूतनामृता ।
हैमवत्यव्यथा चापि चेतकी श्रेयसी शिवा ॥
वयस्था विजया चापि जीवन्ती रोहिणीति च ॥६॥

हरीतकी, अभया, पथ्या, कायस्था, पूतना, अमृता, हैमवती, अव्यथा, चेतकी, श्रेयसी, शिवा, वयस्था, विजया, जीवन्ती और रोहिणी यह हरीतकीके संस्कृत नाम हैं ।

इसे हिन्दी भाषामें हरड, हर्र, हरीतकी, यूनानीमें हलैलाजर्द और अंग्रेजीमें Myraaqlans कहते हैं ॥ ६ ॥

हरीतकीजातयः ।

विजया रोहिणी चैव पूतना चामृताभया ।
जीवन्ती चेतकी चेति पथ्यायाः सप्त जातयः॥ ७ ॥

विजया, रोहिणी, पूतना, अमृता, अभया, जीवन्ती और चेतकी यह हरीतकीकी सात जातियें है ॥ ७ ॥

हरीतकीलक्षणम् ।

अलाबुवृत्ता विजया वृत्ता सा रोहिणी स्मृता ।
पूतनास्थिमती सूक्ष्मा कथिता मांसलामृता ॥ ८ ॥
पंचरेखाभया प्रोक्ता जीवन्ती स्वर्णवर्णिनी ।
त्रिरेखा चेतकी ज्ञेया सप्तानामियमाकृतिः ॥ ९ ॥

तूम्बीके आकारकी गोल हरडको विजया कहते है । साधारण गोल हरड़ रोहिणी कही जाती है । जिस हरड़में गुठली बड़ी और छिलका पतला हो उसको पूतना कहते है । मोटे गुद्दे वाली हरडें अमृता कही जाती है । पञ्च रेखाओंवाली हरडको अभया कहते हैं । स्वर्णके समान वर्णवाली जीवन्ती कही जाती है । और तीन रेखावाली हरडको चेतकी कहते है । इस प्रकार सात जातिकी हरडोंके यह सात स्वरूपसे लक्षण

कहे हैं । विजया हरड प्रायः विन्ध्याचल पर्वतपर उत्पन्न होती है । चेतकी हिमाचलपर, पूतना सिन्धु नदीके किनारे पर, रोहिणी प्रायः सब स्थानोंमें, अमृता और अभया चम्पेके पहाडोंपर और जीवन्ती सौराष्ट्र देशमें उत्पन्न होती है ॥ ८ ॥ ९ ॥

हरीतकीप्रयोगः ।

विजया सर्वरोगेषु रोहिणी व्रणरोपणी ।
प्रलेपे पूतना योज्या शोधनार्थेऽमृता हिता ॥ १० ॥
अक्षिरोगेऽभया शस्ता जीवन्ती सर्वरोगहृत् ।
चूर्णार्थे चेतकी शस्ता यथायुक्तं प्रयोजयेत् ॥ ११ ॥
चेतकी द्विविधा प्रोक्ता श्वेता कृष्णा च वर्णतः ।
षडंगुलायता श्वेता कृष्णा त्वेकांगुला स्मृता ॥ १२ ॥
काचिदास्वादमात्रेण काचिद् गन्धेन भेदयेत् ।
काचित्स्पर्शेन दृष्टयान्या चतुर्धा भेदयेच्छिवा ॥ १३ ॥
चेतकीपादपच्छायामुपसर्पन्ति ये नराः ।
भिद्यन्ते तत्क्षणादेव पशुपक्षिमृगादयः ॥ १४ ॥
चेतकी तु धृता हस्ते यावत्तिष्ठति देहिनः ।
तावद् भिद्येत वेगैस्तु प्रभावान्नात्र संशयः ॥ १५ ॥
नृपादिसुकुमाराणां कृशानाम्भेषजद्विषाम् ।
चेतकी परमा शस्ता हिता सुखविरेचनी ॥ १६ ॥
सप्तानामपि जातीनां प्रधानं विजया स्मृता ।
सुखप्रयोगा सुलभा सर्वरोगेषु शस्यते ॥ १७ ॥

विजया हरड सब रोगोंमें प्रयुक्त की जाती है. रोहिणी व्रणोंके भरनेमें हितकारी

है, पूतना लेप करनेके लिये उत्तम है, अमृता हरड शोधन (रेचन कार्य) में हितकारी है, अभया नेत्रविकारोंके लिये श्रेष्ठ है, जीवन्ती सब रोगोंको हरनेवाली है, और चूर्णोंमें चेतकीका प्रयोग करना चाहिये ॥ चेतकी वर्णसे दो प्रकारकी है—सफेद और काली । सफेद प्रायः छे अंगुल लम्बी होती है और काली एक अंगुल लम्बी होती है ॥

कोई हरड स्वादमात्रसे, कोई गन्ध लेनेसे, कोई स्पर्श मात्रसे और कोई दृष्टिमात्रसे ही दस्त लाने लगती है । इनमें चेतकी हरडके वृक्षके नीचेको जो मनुष्य या पशु पक्षि मृग आदि लख जाते हैं उनको तत्क्षण दस्त होने लगते है । उत्तम चेतकी हरड जबतक मनुष्य हाथमें धारण करता है तबतक उसको इस हरडके प्रभावसे बराबर विरेचन होता रहता है । राजा आदि सुकुमार पुरुषोंको, कृश पुरुषोंको तथा औषध पीनेसे द्वेष रखनेवालोंको चेतकी हरड परम हितकारी और सुखपूर्वक विरेचन करनेवाली है ॥

इन सातों ही जातिकी हरडोंमें विजया हरड प्रधान है सब स्थानोंमें मिल सकती है, सब रोगोंमें हितकारी है और इसका सुखपूर्वक प्रयोग किया जा सकता है ॥ १०—१७ ॥

हरीतकीगुणाः ।

हरीतकी पञ्चरसाऽलवणा तुवरा परम् ।
रूक्षोष्णा दीपनी मेध्या स्वादुपाका रसायनी॥१८॥
चक्षुष्या लघुरायुष्या बृंहणी चानुलोमनी ।
श्वासकासप्रमेहार्शःकुष्ठशोथोदरक्रिमीन् ॥ १९ ॥
वैसर्प्यग्रहणीरोगविबन्धविषमज्वरान् ।
गुल्माध्मानव्रणच्छर्दिहिक्काकंठहृदामयान् ॥ २० ॥

कामलां शूलमानाहं प्लीहानं च यकृद्गदम् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं च नाशयेत् ॥ २१ ॥

हरीतकी लवणके अतिरिक्त पांचों रसोंवाली है, विशेषतः कषाय रसवाली है, तथा रूखी, गरम, दीपन करनेवाली, बुद्धिको बढानेवाली, स्वादु पाकवाली, आयुको बढानेवाली, आंखोंको हितकारी, हलकी, आयुवर्धक, शरीरको पुष्ट करनेवाली और वायुको शांत करनेवाली है ॥ हरड—श्वास, खांसी, प्रमेह, ववासीर, कोढ, सूजन, उदर, कृमिरोग, विसर्परोग, (पाठान्तर वैस्वर्यस्वरभङ्ग रोग) ग्रहणी, विवन्ध, विषमज्वर, गुल्म, आध्मान, व्रण (घाव), वमन, हिचकी, कण्ठ और हृदयके रोग, कामला, शूल, आनाह, प्लीहा और यकृतके रोग, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात इन सबको नष्ट करती है ॥ १८–२१ ॥

स्वादुतिक्तकषायत्वात् पित्तहृत्कफहृत्तु सा ।
कटुतिक्तकषायत्वादम्लत्वाद्वातहृच्छिवा ॥ २२ ॥
पित्तकृत्कटुकाम्लत्वाद्वातकृन्न कथं शिवा ।
प्रभावाद्दोषहंतृत्वं सिद्धं यत्तत्प्रकाश्यते ॥ २३ ॥
हेतुभिः शिष्यबोधार्थं पूर्वं तु क्रियतेऽधुना ।
कर्मान्यत्वं गुणैः साम्यं दृष्टमाश्रयभेदतः ॥ २४ ॥
यतस्ततो नेति चिंत्यं धात्रीलकुचयोर्यथा ।
पथ्याया मज्जनि स्वादु स्नाय्वावम्लो व्यवस्थितः २५
वृंते तिक्तस्त्वचि कटुरस्थिस्थस्तुवरो रसः ।
नवा स्निग्धा घना वृत्ता गुर्वी क्षिप्ता च यांभसि २६
निमज्जेत्सा सुप्रशस्ता कथितातिगुणप्रदा ।
नवादिगुणयुक्तत्वं तथैवात्र द्विकर्षता ।
हरीतक्याः फले यत्र द्वयं तच्छ्रेष्ठमुच्यते ॥ २७ ॥

हरीतकी मधुर, तिक्त और कषैली होनेसे पित्तको, कटु तिक्त और कसैली होनेसे कफको और अम्ल होनेसे वातको हरनेवाली है। यदि ऐसा कहो कि कटु और अम्ल होनेसे पित्तको क्यों नही बढाती ? कड़वी और कसैली होनेसे वायुको क्यों नही बढाती ? क्योंकि प्रभावसे ही इसका दोष हरनेवाला स्वभाव है इसलिये यह दोषोंका प्रकोप नही करती। पहले जो हमने रसोंके गुणसे दोषोंका प्रशमनक्रम बतलाया है वह शिष्योंके बोधके लिये है। बहुतसे द्रव्यरस गुणोंमें साम्यावस्था रखते हुए भी आश्रय भेदसे भिन्न भिन्न कर्मोंको करते है। जैसे आमले और बडहरके फूल रसमें समान होनेपर भी भिन्न भिन्न गुणोंको करते है।

हरडकी मज्जा स्वादु है, इसकी नाडियोंमें खट्टापन है, वृन्तमें तिक्त रस है, त्वचामें कटुपन है और गुठलीमें कसैला रस है।

हरड नई चिकनी, घन, पुष्ट, गोल और भारी लेनी चाहिये। जो इन गुणोंवाली हरड जलमें गिरानेसे डूब जाय वह हरड अत्यन्त श्रेष्ठ और गुणोंके करनेवाली होती है। जो हरड नवीन आदि गुणोंके होते हुए भी दो तोला की तोलमें हो वह हरड श्रेष्ठ कही है॥ २२–२७॥

चर्विता वर्द्धयत्यग्निं पेषिता मलशोधनी।
स्विन्ना संग्राहिणी पथ्या भृष्टा प्रोक्ता त्रिदोषनुत्॥२८
उन्मीलिनी बुद्धिबलेन्द्रियाणां
निर्मूलिनी पित्तकफानिलानाम्।
विस्रंसिनी मूत्रशकृन्मलानां
हरीतकी स्यात्सह भोजनेन॥ २९॥
अन्नपानकृतान्दोषान्वातपित्तकफोद्भवान्।
हरीतकी हरत्याशु भुक्तस्योपरि योजिता॥ ३०॥

हरीतकी चर्वण करनेसे अग्निको बढाती है, । पीसकर खानेसे मलको शुद्ध

करती है, पुटपाक की हुई मलको बांधती है, भूनकर खाई हुई त्रिदोषको नाश करती है ।

यदि हरीतकी भोजनके साथ खाई जावे तो बुद्धि, बल और इन्द्रियोंको विकसित करती है; वात, पित्त कफके विकारोंको निर्मूल करती है; मूत्र विष्ठा और मलोंको साफ करके निकाल देती है । यदि हरडको भोजनके अन्तमें सेवन किया जाय तो अन्न पानके मिथ्या उपयोग करनेसे उत्पन्न हुए वात पित्त कफके सब विकारोंको दूर करती है ॥ २८–३० ॥

लवणेन कफं हंति पित्तं हंति सशर्करा ।
घृतेन वातजान्रोगान्सर्वरोगान्गुडान्विता ॥ ३१ ॥
सिंधूत्थशर्करशुंठीकणामधुगुडैः क्रमात् ।
वर्षादिष्वभया प्राश्या रसायनगुणैषिणा ॥ ३२ ॥

हरड लवणके साथ कफको, मिश्रीके साथ पित्तको, घृतके साथ वातविकारोंको और गुडके साथ सब रोगोंको दूर करती है । हरड–सेंधा नमक, शर्करा, सोंठ, पीपल, शहद और गुडके साथ क्रमपूर्वक वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म ऋतुमें खानेसे रसायनके गुणोंको करती है अर्थात् बुढापे और बीमारीको दूरकरके उमरको बढाती है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

हरड़ सेवनके अयोग्य प्राणी ।

अध्वातिखिन्नो बलवर्जितश्च रूक्षः कृशो लंघनकर्षितश्च ।
पित्ताधिको गर्भवतीचनारी विमुक्तरक्तस्त्वभयांनखादेत् ॥

जो मनुष्य मार्ग चलकर थक गया हो, बलरहित हो, रूक्ष हो, कृश हो, जो लंघन करनेसे कृश होगया हो, जिसके शरीरमें पित्त अधिक हो, जिसका रक्त निकलवाया गया हो और गर्भवती स्त्री इनको हरड़का सेवन नहीं करना चाहिये ॥ ३३ ॥

विभीतकः ।

विभीतकस्त्रिलिङ्गः स्यादक्षः कर्षफलस्तथा ।
कलिद्रुमो भूतवासस्तथा कलियुगालयः ॥ ३४ ॥
विभीतकं स्वादुपाकं कषायं कफपित्तनुत् ।
उष्णवीर्यं हिमस्पर्शं भेदनं कासनाशनम् ॥ ३५ ॥
रूक्षं नेत्रहितं केश्यं कृमिवैस्वर्य्यनाशनम् ।
विभीतमज्जा तृट्छर्दिकफवातहरी लघुः ॥ ३६ ॥
कषाया मदकृच्चाथ धात्रीमज्जापि तद्गुणा ।

बहेडा, विभीतक, विभीतकी, अक्ष, कर्षफल, कलिद्रुम, भूतवास, कलियुगालय, सम्वर्त, सम्वर्त्तक, कुशिक और कासघ्न यह बहेडेके नाम है। हिंदीमें बहेडा, फारसीमें बलैले और अंग्रेजीमें Belleric Myrabalam कहते है। बहेडा मधुरपाकी, कसैला, कफ और पित्तको नष्ट करनेवाला, उष्णवीर्य, स्पर्शमें ठण्डा, दस्तावर और खांसीको नष्ट करनेवाला है, रूक्ष है, नेत्रोंको हितकारी है, केशोंको बढाता है, कृमि और स्वरभङ्गको दूर करता है।

बहेडेकी मज्जा—प्यास, छर्दि, कफ और वायुको हरनेवाली है। हलकी है, कसैली है और मदके करनेवाली है, आमलेकी मज्जाके भी प्रायः यही गुण है ॥ ३४–३६ ॥

आमलकी ।

वयस्यामलकी वृष्या जातीफलरसं शिवम् ॥ ३७ ॥
धात्रीफलं श्रीफलं च तथामृतफलं स्मृतम् ।
त्रिष्वामलकमाख्यातं धात्री तिष्यफलामृता ॥३८॥
हरीतकीसमं धात्री फलं किन्तु विशेषतः ।
रक्तपित्तप्रमेहघ्नं परं वृष्यं रसायनम् ॥ ३९ ॥

इति वातं तदम्लत्वात्पित्तं माधुर्य्यशैत्यतः ।
कफं रूक्षकषायत्वात्फलं धात्र्यास्त्रिदोषजित् ॥ ४० ॥

वयस्या, आमलकी, वृष्या, जातीफलरसा, शिवधात्रिफल, श्रीफल, अमृतफल, धात्री, तिष्यफल और अमृता यह आमलेके नाम हैं। इसको हिन्दीमें आमला, फारसीमें आमलज, अंग्रेजीमें Emblic Myrabalan कहते है। आमलक शब्द तीनों लिङ्गोंमें होता है। आमला हरीतकीके समान गुणोंवाला है किन्तु इतनी इसमें विशेषता है कि रक्तपित्त तथा प्रमेहको दूर करनेमें, वीर्य पुष्टि और रसायन कर्ममें यह विशेषरूपसे गुण करता है, आमला अम्ल रससे वायुको, मधुर रससे और शीततासे पित्तको, रूक्ष और कषाय होनेसे कफको जीतता है। इस लिये धात्रीफल त्रिदोषनाशक है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

यस्ययस्य फलस्येह वीर्य्यं भवति यादृशम् ।
तस्यतस्यैव वीर्येण मज्जानामपि निर्दिशेत् ॥ ४१ ॥

जिस २ फलका जिस २ प्रकारका वीर्य होता है उस २ फलकी मज्जाको भी उसी प्रकारके वीर्यवाली जानना चाहिये ॥ ४१ ॥

त्रिफला ।

पथ्या विभीतधात्रीणां फलैः स्यात्त्रिफला समैः ।
फलत्रिकं च त्रिफला सा वरा च प्रकीर्तिता ॥ ४२ ॥
त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठहरा सरा ।
चक्षुष्या दीपनी रुच्या विषमज्वरनाशिनी ॥ ४३ ॥

हर्ड, बहेड़ा तथा आमला इन तीनोंकी गुठलीरहित छाल सम भाग लेनेसे त्रिफला कही जाती है। फलत्रिक, त्रिफला और वरा यह त्रिफले के नाम हैं। त्रिफला कफपित्तनाशक, प्रमेह और कुष्ठको हरनेवाला, दस्तावर, नेत्रोंको हितकारी, दीपक, रुचिकारक और विषमज्वरको दूर करनेवाला है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

शुंठी ।

शुंठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् ।
ऊषणं कटुभद्रं च शृंगवेरं महौषधम् ॥ ४४ ॥
शुंठी रुच्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः ।
स्निग्धोष्णा मधुरा पाककफवातविबंधनुत् ॥ ४५ ॥
वृष्या स्वर्य्या वमिश्वासशूलकासहृदामयान् ।
हंति श्लीपदशोफार्शआनाहोदरमारुतान् ॥ ४६ ॥
आग्नेयगुणभूयिष्ठं तोयांशं परिशोषयेत् ।
संगृह्णाति मलं तत्तु ग्राहि शुंठ्यादयो यथा ॥ ४७ ॥
विबंधभेदनी या तु सा कथं ग्राहिणी भवेत् ।
शक्तिर्विबंधभेदेऽस्या यतो न मलपातने ॥ ४८ ॥

शुण्ठी, विश्वा, विश्व, नागर, विश्वभेषज, ऊषण, कटुभद्र, शृङ्गवेर और महौषध यह सोंठके नाम है। शुण्ठीको हिन्दीमें सोंठ, फारसीमें जंजबील, अंग्रेजीमें Drygingerroot कहते है।

सोंठ—रुचिकारक, आमवातको नष्ट करनेवाली, पाचन करनेवाली, कटु, हलकी, चिकनी, गरम, पाकमें मधुर, कफ वात तथा मलके बन्धको नष्ट करनेवाली, वीर्यवर्धक, स्वरको बढानेवाली, तथा वमन, श्वास, शूल, खांसी, हृदयके रोग, श्लीपद, सूजन, बवासीर, आनाह और वायुके विकारोंको नष्ट करती है। जो द्रव्य अग्निके गुणकी अधिकतासे जलके अंशको शोषण करनेवाला हो और मलके बांधनेवाला हो उसको ग्राही कहते है। जैसे सोंठ, यदि इसमें यह शंका की जाय कि जब सोंठ मलके बन्धको भेदन करनेवाली है फिर यह ग्राही कैसे हो सकती है? इसके उत्तरमें कहते है कि सोंठकी शक्ति भेदन करनेमें है परन्तु मलको पातन करना इसका धर्म्म नहीं है॥ ४४–४८ ॥

आर्द्रकम् ।

आर्द्रकं शृंगबेरं स्यात्कटुभद्रं तथार्द्रिका ।
आर्द्रिका भेदनी गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी मता ॥ ४९ ॥
कटुका मधुरा पाके रूक्षा वातकफापहा ।
ये गुणाः कथिताः शुण्ठ्यां तेऽपि संत्यार्द्रकेऽखिलाः ५०
भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम् ।
अग्निसंदीपनं रुच्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम् ॥ ५१ ॥

आर्द्रक, शृंगबेर, कटुभद्र और आर्द्रिका यह अदरकके नाम है। इसे हिन्दीमें अदरक, फारसीमें जिंजिविलरतवा और अंग्रेजीमें Emblic Myrobalan कहते है । आर्द्रिका भेदन करनेवाली, भारी, तीक्ष्ण, ऊष्ण और दीपन करती है । आर्द्रिक पाकमें मधुर, रूखा और वात तथा कफको नष्ट करनेवाला है। जो गुण सोंठमें है वह सम्पूर्ण अदरकमें भी है । भोजनसे प्रथम लवण और आर्द्रक खाना सर्वदा हितकारी, अग्निको दीपन करनेवाला, रोचक और जीभ तथा कण्ठको शुद्ध करता है ॥ ४९-५१ ॥

कुष्ठे पांड्वामये कृच्छ्रे रक्तपित्ते व्रणे ज्वरे ।
दाहे निदाघशरदोर्नैव पूजितमार्द्रकम् ॥ ५२ ॥

कुष्ठ, पाण्डुरोग, कृच्छ्र, रक्तपित्त, व्रण (घाव), ज्वर, दाह इनमें तथा ग्रीष्म और शरद ऋतुमें अदरकका सेवन नही करना चाहिये ॥ ५२ ॥

पिप्पली ।

पिप्पली मागधी कृष्णा वैदेही चपला कणा ।
उपकुल्योषणा शौंडी कोला स्यात्तीक्ष्णतंडुला ॥ ५३ ॥
पिप्पली दीपनी वृष्या स्वादुपाका रसायनी ।
अनुष्णा कटुका स्निग्धा वातश्लेष्महरी लघुः ॥ ५४ ॥

पिप्पली रेचनी हंति श्वासकासोदरज्वरान् ।
कुष्ठप्रमेहगुल्मार्शःप्लीहशूलाममारुतान् ॥ ५५ ॥
आर्द्रा कफप्रदा स्निग्धा शीतला मधुरा गुरुः ।
पित्तप्रशमनी सा तु शुष्का पित्तप्रकोपनी ॥ ५६ ॥
पिप्पली मधुसंयुक्ता मेदःकफविनाशिनी ।
श्वासकासज्वरहरी वृष्या मेध्याग्निवर्द्धनी ॥ ५७ ॥
जीर्णज्वरेऽग्निमांद्ये च शस्यते गुडपिप्पली ।
कासाजीर्णारुचिश्वासहृत्पांडुकृमिरोगनुत् ॥ ५८ ॥
द्विगुणः पिप्पलीचूर्णाद्गुडोऽत्र भिषजां मतः ॥

पिप्पली, मागधी, कृष्णा, वैदेही, चपला, कणा, उपकुल्या, ऊषणा, शौंडी, कोला तीक्ष्णतण्डुला यह पिप्पलीके नाम हैं । इसको हिन्दीमें मघ फारसीमें पिप्पिलादराज

पिप्पली—दीपन करनेवाली, वीर्यवर्धक, पाकमें मधुर, आयुके बढानेवाली, ऊष्ण नहीं, कटु, चिकनी, वात और कफ को हरनेवाली, हलकी और रेचक है । पिप्पली—श्वास, खाँसी, उदर, ज्वर, कोढ, प्रमेह, गुल्म, अर्श, प्लीहा (तिल्ली), शूल तथा आमको नष्ट करती है । पिप्पली यदि गीली हो तो कफको बढानेवाली, चिकनी, शीतल, मधुर, भारी और पित्तको शमन करनेवाली है, यदि सूखी हो तो पित्तको प्रकोप करती है । मधुके साथ खाई हुई पिप्पली मेद तथा कफको नष्ट करनेवाली, श्वास, कास और ज्वरको हरनेवाली, वीर्यवर्धक, बुद्धिवर्धक तथा अग्निको बढानेवाली है । जीर्ण ज्वरमें और अग्निके मन्द हो जानेपर गुड़के साथ पिप्पली खाने योग्य है । गुड़के साथ पीपल खानेसे कास, अजीर्ण, अरुचि, श्वास तथा हृदय, पाण्डु और कृमि रोगोंको नष्ट करती है । श्रेष्ठ वैद्योंके मतमें पिप्पली-चूर्णसे द्विगुण गुड़ डालना योग्य है ॥ ५३–५८ ॥

मरिचम् ।

मरिचं वेल्लजं कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम् ।
मरिचं कटुकं तीक्ष्णं दीपनं कफवातजित् ॥ ५९ ॥
उष्णं पित्तकरं रूक्षं श्वासशूलकृमीन् हरेत् ।
तदार्द्रं मधुरं पाके नात्युष्णं कटुकं गुरु ॥ ६० ॥
किंचित्तीक्ष्णगुणं श्लेष्मप्रसेकि स्यादपित्तलम् ।

मरिच, वेल्लज, कृष्ण, ऊषण, धर्मपत्तन यह काली मिरचके नाम हैं । इसको हिन्दीमें काली मिरच तथा गोल मिरच, फारसीमें पिलपिले अस्वद्, और अंग्रेजीम Black Pepper कहते है । काली मिरच—कटु, तीक्ष्ण, दीपक, कफ और वातको जीतनेवाली, उष्ण, पित्तकारक, रूखी तथा श्वास, शूल और कृमियोंको नष्ट करती है । गीली काली मिरच पाकमें स्वादु, बहुत ऊष्ण नही, कटु, भारी, कुछ तीक्ष्ण गुणोंवाली, कफको निकाल देनेवाली और पित्तकारक नहीं है ॥ ५९ ॥ ६० ॥

त्रिकटु ।

विश्वोपकुल्यामरिचत्रयं त्रिकटु कथ्यते ॥ ६१ ॥
कटुत्रिकं तु त्रिकटु त्र्यूषणं व्योषमुच्यते ।
त्र्यूषणं दीपनं हंति श्वासकासत्वगामयान् ॥ ६२ ॥
गुल्ममेहकफस्थौल्यमेदःश्लीपदपीनसान् ।

सोंठ, पीपल और काली मिरच इन तीनोंको त्रिकटु कहते है । कटुत्रिक, त्रिकटु, त्र्यूषण और व्योष यह त्रिकटुके पर्य्यायवाचक शब्द हैं । त्रिकुटा-अग्निदीपक तथा श्वास, खांसी, त्वचाके रोग, गुल्म, प्रमेह, कफ, मोटापन, मद, श्लीपद और पीनस इन रोगोंको नष्ट करता है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

पिप्पलीमूलम् ।

ग्रंथिकं पिप्पलीमूलमूषणं चटकाशिरः ॥ ६३ ॥

दीपनं पिप्पलीमूलं कटूष्णं पाचनं लघु ।
रूक्षं पित्तकरं भेदि कफवातोदरापहम् ॥ ६४ ॥
आनाहप्लीहगुल्मघ्नं कृमिश्वासक्षयापहम् ।

ग्रन्थिक, पिप्पलीमूल, ऊषण और चटकाशिर यह पिप्पलीमूलके संस्कृत नाम हैं । हिन्दीमें इसे पिप्पलामूल, फारसीमें फिलफिलमोया और अंग्रेजीमें Piper Root कहते हैं ।

पिप्पलामूल—अग्निदीपक, कटु, उष्ण, पाचक, हल्का, रूखा, पित्तकारक, भेदन करनेवाला तथा कफ, वात, उदर, आनाह, प्लीहा, गुल्म, कृमिरोग, श्वास तथा क्षयको नष्ट करता है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

चतुरूषणम् ।

त्र्यूषणं सकणामूलं कथितं चतुरूषणम् ॥ ६५ ॥
व्योषस्यैव गुणाः प्रोक्ता अधिकाश्चतुरूषणे ।

सोंठ, काली मिरच, पीपल और पीपरामूल इन चारोंको चतुरूषण कहते है । चतुरूषणमें त्र्यूषणवाले ही अधिक गुण है ॥ ६५ ॥

चव्यम् ।

भवेच्चव्यन्तु चविका कथिता सा तथोषणा ॥ ६६ ॥
कणामूलगुणं चव्यं विशेषाद्गुदजापहम् ।

चव्य, चविक, ऊषण यह चव्यके संस्कृत नाम है । हिन्दीमें इसको चव्य और अंग्रेजीमे Chavica Rax Burghi Piper Chava कहते हैं चव्यम पीपलामूल सदृश ही गुण हैं परन्तु गुदासे उत्पन्न हुए रोगोंके लिये विशेषतः हितकारी हैं ॥ ६६ ॥

गजपिप्पली ।

चविकायाः फलं प्राज्ञैः कथिता गजपिप्पली ॥ ६७ ॥
कपिवल्ली कोलवल्ली श्रेयसी वशिरश्च सा ।

गजकृष्णा कटुर्वातश्लेष्महृद्वह्निवर्धिनी ॥ ६८ ॥
उष्णा निहंत्यतीसारं श्वासकण्ठामयान्क्रिमीन् ।

चविकाके फलको ही विद्वान् पुरुष गजपिप्पली कहते हैं । कपिवल्ली, कोलवल्ली, श्रेयसी तथा वशिर यह संस्कृतमें गजपिप्पलीके पर्य्यावाचक शव्द है । हिन्दीमें इसको गजपीपल, अंग्रेजीमें Scendapsus Officinalis कहते है । गजपीपल–कटु, वात और कफको हरनेवाली, अग्निको वढाने-वाली, गरम तथा अतिसार, श्वास, कण्ठके रोग तथा कृमियोंको नष्ट करती है ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

चित्रकः ।

चित्रकोऽनलनामा च पाठी व्यालस्तथोषणः॥६९॥
चित्रकः कटुकः पाके वह्निकृत्पाचनो लघुः ।
रूक्षोष्णो ग्रहणीकुष्ठशोथार्शःकृमिकासनुत् ॥७० ॥
वातश्लेष्महरो ग्राही वातार्शःश्लेष्मपित्तहृत् ।

चित्रक, अनलनामा (अर्थात् अग्निके जितने नाम है वह सव चित्रकके भी है) पाठी, व्याल और ऊषण यह चित्रकके नाम है । इसको हिन्दीमें चीता और चित्रक, फारसीमें वेख वरन्दा और अङ्गरेजीमें Gingerroot कहते है । चीता–पाकमें कटु, अग्निको दीपन करनेवाला, पाचन करनेवाला, रूखा और ग्राही है । चित्रक–ग्रहणी, कुष्ठ, सूजन, ववासीर, कृमिरोग और कासको नष्ट करनेवाला तथा वात और कफको नष्ट करनेवाला है ॥ ६९ ॥ ७० ॥

पंचकोलम् ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ॥ ७१ ॥
पंचभिः कोलमात्रं यत्पंचकोलं तदुच्यते ।

पंचकोलं रसे पाके कटुकं रुचिकृन्मतम् ॥ ७२ ॥
तीक्ष्णोष्णं पाचनं श्रेष्ठं दीपनं कफवातनुत् ।
गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नं पित्तकोपनम् ॥ ७३ ॥

पीपल, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता और सोंठ इन पांचोंको एक २ कोल (आठ २ मासे) लेकर एकत्रित करे उसे पञ्चकोल कहते है। पञ्चकोल—रस तथा पाकमें कटु, रुचिकारक, तीक्ष्ण, गरम, पाचन करनेवाला, अग्निदीपक, कफ वातको नष्ट करने वाला तथा गुल्म, प्लीहा, तिल्ली, उदररोग, आनाह और शूलको हरनेवाला और पित्तको प्रकुपित करनेवाला है ॥ ७१–७३ ॥

षडूषणम् ।

पंचकोलं समरिचं षडूषणमुदाहृतम् ।
पंचकोलगुणं तत्तु रूक्षमुष्णं विषापहम् ॥ ७४ ॥

पञ्चकोलमें काली मिरच मिला देनेसे षडूषण बन जाता है। पञ्चकोल—रूखा, गरम और विषोंका हरने वाला है ॥ ७४ ॥

यवानिका ।

यवानिकोग्रगंधा च ब्रह्मदर्भाजमोदिका ।
सैवोक्ता दीप्यका दीप्या तथा स्याद्यवसाह्वया ॥ ७५ ॥
यवानी पाचनी रुच्या तीक्ष्णोष्णा कटुका लघुः ।
दीपनी च तथा तिक्ता पित्तला शुक्रशूलहृत् ॥ ७६ ॥
वातश्लेष्मोदरानाहगुल्मप्लीहकृमिप्रणुत् ।

यवानिका, उग्रगन्धा, ब्रह्मदर्भा, अजमोदिका, दीप्यका, दीप्या तथा यवसाह्वया ये अजवायनके संस्कृत नाम हैं इसे हिन्दीमें अजवायन, फारसीमें नानुका, अंग्रेजीमें Bishops weed seed कहते हैं।

अजवायन—पाचन करनेवाली, रुचिकारक, तीक्ष्ण, गरम, कटु, हलकी,

अग्निदीपक, तिक्त, पित्तकारक, तथा वीर्य, शूल, वात, कफ, उदररोग, आनाह, गुल्म, प्लीहा तथा कृमियोंको हरती है ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

अजमोदा ।

अजमोदा खराश्वा च मायूरो दीप्यकस्तथा ॥७७॥
तथा ब्रह्मकुशा प्रोक्ता कारवी लोचमस्तका ।
अजमोदा कटुस्तीक्ष्णा दीपनी कफवातनुत् ॥७८॥
उष्णा विदाहिनी हृद्या वृष्या बलकरी लघुः ।
नेत्रामयकफच्छर्दिहिक्कावस्तिरुजो हरेत् ॥ ७९ ॥

अजमोदा, खराश्वा, मायूर, दीप्यक, ब्रह्मकुशा, कारवी, लोचमस्तका यह अजमोदके संस्कृत नाम है । हिन्दीमें इसे अजमोद. फारसीमें करपस और अंग्रेजीमें Celery Seed कहते है ।

अजमोद—कटु, तीक्ष्ण, अग्निदीपक, कफ, वातको हरनेवाली, उष्ण, दाहको करनेवाली, हृदयको प्रिय लगनेवाली, वीर्यवर्धक, बलकारक, हलकी तथा नेत्ररोग, कफ, वमन, हिचकी तथा वस्ति (मसाना) के रोगोंको नष्ट करती है ॥ ७७–७९ ॥

पारसीकयवानी ।

पारसीकयवानी तु यवानीसदृशा गुणैः ।
विशेषात्पाचनी रुच्या ग्राहिणी मादिनी गुरुः ॥८०॥

पारसीकियवानी गुणोंमें यवानीके ही समान है किंतु यह विशेषतासे पाचन करनेवाली, रुचिकारक, ग्राही, मदकारक और भारी है । इसे हिंदीमें खुरासानी अजवाइन, फारसीमें तुरूमें बंजे और अंग्रेजीमें Artimisia-maritema कहते हैं । खुरासानी अजवायन अधिक खानेसे विषका प्रभाव करती है ॥ ८० ॥

शुक्लजीरकं कृष्णजीरकमुपकुञ्ची ।

जीरको जरणोजाजी कणा स्याद्दीर्घजीरकः ।
कृष्णजीरः सुगंधिश्च तथैवोद्गारशोधनः ॥ ८१ ॥
कालाजाजी तु सुषवी कालिका चोपकालिका ।
पृथ्वीका कारवी पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुंचिका ॥ ८२
उपकुंची च कुंची च बृहज्जीरकमित्यपि ।
जीरकत्रितयं रूक्षं कटूष्णं दीपनं लघु ॥ ८३ ॥
सग्राहि पित्तलं मेध्यं गर्भाशयविशुद्धिकृत् ।
ज्वरघ्नं पाचनं वृष्यं बल्यं रुच्यं कफापहम् ॥ ८४ ॥
चक्षुष्यं पवनाध्मानगुल्मच्छर्द्यतिसारहृत् ।

जीरक, जरण, अजाजी, कणा, दीर्घजीरक, ये सफेद जीरेके संस्कृतमें नाम है। हिन्दीमें इसे सफेद जीरा, फारसीमें जीरा और अंग्रेजीमें Cumminon Seed कहते हैं ।

कृष्णजीर, सुगंधि, उद्गारशोधन यह काले जीरेके संस्कृत नाम हैं। हिन्दीमें इसे काला जीरा, फारसीमें जीरा स्याह और अंग्रेजीमें Black Caraway Seed कहते हैं।

कालाजाजी, सुषवी, कालिका, उपकालिका, पृथ्वीका, कारवी, पृथ्वी, पृथु, कृष्णा, उपकुञ्चिका, उपकुंची, कुञ्ची, तथा बृहज्जीरक यह कलौंजीके संस्कृत नाम हैं। हिन्दीमें इसे कलौंजी, फारसीमें स्याहदाने, अंग्रेजीमें Small Fennel Flower कहते हैं। तीनों प्रकारके जीरे, रूखे, कटु, उष्ण, अग्निदीपक, हलके, ग्राही, पित्तकारक, बुद्धिवर्धक, गर्भाशयको शुद्ध करनेवाले, ज्वरनाशक, पाचक, वीर्यवर्धक, बलकारक, रुचिकारक, कफनाशक, नेत्रोंको हितकर तथा वायु, आध्मान, गुल्म, वमन और अतिसारको नष्ट करते हैं॥ ८१–८४ ॥

धान्यकम् ।

धान्यकं धानकं धान्यं धाना धानेयकं तथा ॥८५॥
कुनटी धेनुका छत्रा कुस्तुम्बुरु वितुन्नकम् ।
धान्यकं तुवरं स्निग्धमवृष्यं मूत्रलं लघु ॥ ८६ ॥
तिक्तं कटूष्णवीर्यं च दीपनं पाचनं स्मृतम् ।
ज्वरघ्नं रोचनं ग्राहि स्वादुपाकि त्रिदोषनुत् ॥८७॥
तृष्णादाहवमिश्वासकासामार्शःकृमिप्रणुत् ।
आर्द्रं तु तद्गुणं स्वादु विशेषात्पित्तनाशि तत् ॥८८॥

धान्यक, धानक, धान्य, धाना, धानेयक, कुनटी, धेनुका, छत्रा, कुस्तुम्बुरु, वितुन्नक यह धनियेके संस्कृत नाम है। धनियां फारसीमें तुख्मेकसनीजई, अंग्रेजीमें Coriander Seed कहते हैं । धनिया—कसैला, चिकना, वीर्यनाशक, मूत्रको उत्पन्न करनेवाला, हल्का, तिक्त, कटु, ऊष्णवीर्य, अग्निदीपक, पाचक, ज्वरनाशक, रुचिकारक, ग्राही, पाकमें मधुर, त्रिदोषनाशक तथा प्यास, दाह, वमन, कास, आम, अर्श और कृमियोंका उन्मूलन करता है।

गीले धनियेके भी गुण सूखेके समान ही है किन्तु वह विशेषतः मधुर और पित्तनाशक होता है ॥ ८५–८८ ॥

शतपुष्पा मिश्रेया ।

शतपुष्पा शताह्वा च मधुरा कारवी मिसिः ।
अतिलंबी सितच्छत्रा संहितच्छत्रकापि च ॥८९॥
छत्रा शालेयशालीनौ मिश्रेया मधुरा मिसिः ।
शतपुष्पा लघुस्तीक्ष्णा पित्तकृद्दीपनी कटुः ॥ ९० ॥
उष्णा ज्वरानिलश्लेष्मव्रणशूलाक्षिरोगहृत् ।
मिश्रेया तद्गुणा प्रोक्ता विशेषाद्योनिशूलनुत् ॥९१॥

अग्निमांद्यहरी हृद्या बद्धविट्कृमिशुक्रहृत्।
रूक्षोष्णापाचनीकासवमिश्लेष्मानिलान् हरेत्॥९२॥

शतपुष्पा, शताह्वा, मधुरा, कारवी, मिसी, अतिलम्बी, सितच्छत्रा, संहितच्छत्रका, छत्रा, शालेय तथा शालीन यह सौंफके संस्कृत नाम है, हिन्दीमें इसे सौंफ कहते है, फारसीमें बादियान, अंग्रेजीमें Fennel Seed कहते है।

मिश्रेया, मधुरा और मिसि यह सोयाके संस्कृत नाम हैं। इसको हिन्दीमें सोया फारसीमें तुख्मे शूत, अंग्रेजीमें Dill Seed कहते है।

सौंफ—हलकी, तीक्ष्ण, पित्तवर्धक, अग्निदीपक, कटु, गरम तथा ज्वर, वायु, कफ, व्रण, शूल और नेत्ररोगोंको नष्ट करती है। सोयेके भी ऐसे ही गुण है परन्तु सोया विशेषतासे योनिके शूलको हरनेवाला, अग्निदीपक, हृद्-यको हितकर, मलको बान्धनेवाला, कृमि तथा वीर्यको हरनेवाला, रूखा, गरम, पाचक तथा कास, वमन, कफ और वातको नष्ट करनेवाला है॥ ८९—९२॥

मेथिका वनमेथिका।

मेथनी मेथिका मेथी दीपनी बहुपत्रिका।
बोधनी बहुबीजा च जातीगंधफला तथा॥ ९३॥
वल्लरी चन्द्रिका मंथा मिश्रपुष्पा च कैरवी।
कुंचिका बहुपर्णी च पीतबीजा मुनिच्छदा॥ ९४॥
मेथिका वातशमनी श्लेष्मघ्नी ज्वरनाशिनी।
ततःस्वल्पगुणा वन्या वाजिनां सा तु पूजिता॥ ९५॥

मेथिका, मेथनी, मेथी, दीपनी, बहुपत्रिका, बोधनी, बहुबीजा, जातिगंध-फला, वल्लरी, चान्द्रिका, मन्था, मिश्रपुष्पा, कैरवी, कुञ्चिका, बहुपर्णी, पीतबीजा तथा मुनिच्छदा यह मेथीके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे मेथी, फारसीमें तुख्मे शमपीत, अंग्रेजीमें Fennyreek कहते है।

मेथी—वातको शमन करनेवाली, कफको नष्ट करनेवाली तथा ज्वर-नाशक है । वनमेथी इसकी अपेक्षा थोडी गुणोंवाली है, यह घोडोंके लिये परमोत्तम है ॥ ९३—९५ ॥

चंद्रशूरम् ।

चंद्रिका चर्महंत्री च पशुमेहनकारकः ।
नंदनी कारवी भद्रा वासपुष्पा सुवासरा ॥ ९६ ॥
चंद्रशूरं हितं हिक्कावातश्लेष्मातिसारिणाम् ।
असृग्वातगदद्वेषि बलपुष्टिविवर्धनम् ॥ ९७ ॥

चन्द्रिका, चर्महन्त्री, पशुमेहनकारक, नन्दनी, कारवी, भद्रा, वासपुष्पा, सुवासरा, यह चन्द्रशूरके संस्कृत नाम हैं. इसे हिन्दीमें हाली हालिम्. फारसीमें हालम तुख्मे तरातेजक, और अंग्रेजीमें Common Cress कहते है ।

चन्द्रशूर—हिचकी, वात, कफ, रुधिर तथा वातव्याधियोंमें हितकारी है । तथा बलकारक और पुष्टि करनेवाला है ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

चतुर्बीजम् ।

मेथिका चंद्रशूरश्च कालाजाजी यवानिका ।
एतच्चतुष्टयं युक्तं चतुर्बीजमिति स्मृतम् ॥ ९८ ॥
तच्चूर्णं भक्षितं नित्यं निहंति पवनामयम् ।
अजीर्णशूलमाध्मानं पार्श्वशूलं कटिव्यथाम् ॥ ९९ ॥

मेथी, हालो, कालाजीरा और अजवायन इन चारोंको चतुर्बीज(चारदाना) कहते है । चतुर्बीजका चूर्ण नित्य खाया हुआ वायुके रोग, अजीर्ण, शूल, अफारा, पसलीका शूल और कमरकी वेदना इनको नष्ट करता है ॥९८॥९९॥

हिंगु ।

सहस्रवेधि जतुकं बाल्हीकं हिंगु रामठम् ।

हिंगूष्णं पाचनं रुच्यं तीक्ष्णं वातबलासहृत्॥१००॥
शूलगुल्मोदरानाहकृमिघ्नं पित्तवर्धनम्।

सहस्रवेधि, जतुक, बाह्लीक, हिंगु, रामठ यह हींगके संस्कृत नाम हैं। हिंदीमें इसे हींग, फारसीमें दर्खते और अंगुजखांलिस, अंग्रेजीमें Assaboetida कहते है।

हींग—गरम, पाचक, रुचिकारक, तीक्ष्ण, पित्तवर्धक तथा वात, कफ, शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह और कृमिरोगको दूर करता है॥ १०० ॥

वचा।

वचोग्रगन्धा षड्ग्रंथा गोलोमी शतपर्विका ॥१०१॥
क्षुद्रपत्रीच मङ्गल्या जटिलोग्रा च लोमशा।
वचोग्रगंधा कटुका तिक्तोष्णा वांतिवह्निकृत्॥१०२॥
विबंधाध्मानशूलघ्नी शकृन्मूत्रविशोधनी।
अपस्मारकफोन्मादभूतजन्त्वनिलान् हरेत् ॥१०३॥

वच, उग्रगन्धा, षड्ग्रन्था, गोलोमी, शतपर्विका, क्षुद्रपत्री, मांगल्या, जटिला, उग्रा और लोमशा यह वचके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे वच, फारसीमें सोसनजर्द तथा अगर, तुरकी और अंग्रेजीमें Sweet Flagroot कहते हैं।

वच—उग्र गन्धवाली, कटु, तिक्त, गरम, वमन और वह्निको करनेवाली, मल मूत्रको शुद्ध करनेवाली तथा मलादिके बन्ध, आध्मान, शूल, अपस्मार (मृगी), कफ, उन्माद, भूत, कृमि और वातका नाश करनेवाली है॥१०१॥ ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

पारसीकवचा।

पारसीकवचा शुक्ला प्रोक्ता हैमवतीति सा।
हैमवत्युदिता तद्वद्वातं हंति विशेषतः ॥ १०४ ॥

पारसीकवचा, शुक्ला और हेमवती इन तीन नामोंसे संस्कृतमें खुरासानी वच

कही जाती है । हैमवतीके गुण भी वचके ही समान है किन्तु वातकों यह विशेषतासे हनन करती है । इसका नाम हिन्दीमें खुरासानी वच, फारसीमें सोसनजर्द तथा अगर,तुरकी तथा अंग्रेजीमें Sweet Flagroot है ॥१०४॥

महाभरी-वचा ।

सुगन्धाप्युग्रगंधा च विशेषात्कफकासनुत् ।
सुस्वरत्वकरी रुच्या हृत्कंठमुखशोधनी ॥ १०५ ॥
परा सुगंधा स्थूलग्रंथिर्यस्यालोके महाभरी ।
स्थूलग्रंथिः सुगंधा स्यात्ततो हीनगुणा स्मृता १०६

सुगन्धा और उग्रगन्धा यह कुलींजनके संस्कृत नाम है, हिन्दीमें इसे कुलिजन, फारसीमें खिरद्दासा और अंग्रेजीमें Great Galangal कहते है ।

यह विषेश करके कफ और वातको नष्ट करनेवाली, स्वरकारक, रुचिकारक तथा हृदय,कण्ठ और मुखको शुद्ध करती है। दूसरी वच सुगन्धा,स्थूलग्रन्थि तथा महाभरी नामसे लोकमें प्रसिद्ध है । वह वच सुगन्धयुक्त, मोटी गांठवाली और कुलिजनसे हीन गुणवाली होती है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

द्वीपांतरवचा ।

द्वीपांतरवचा किंचित्तिक्तोष्णा वह्निदीप्तिकृत् ।
विबंधाध्मानशूलघ्नी शकृन्मूत्रविशोधनी ॥ १०७ ॥
वातव्याधीनपस्मारमुन्मादं तनुवेदनाम् ।
व्यपोहति विशेषेण फिरंगामयनाशिनी ॥ १०८ ॥

द्वीपान्तरवच हिन्दीमें चोपचीनी, फारसीमें खन और अंग्रेजीमें Chinaroot कहते है ।

चोपचीनी–किंचित् तिक्त, कुछेक गरम, अग्निको दीपन करनेवाली, मल मूत्रको शुद्ध करनेवाली तथा मल आदिका बन्ध, आध्मान, शूल, वातव्याधि, अपस्मार (मृगी), उन्माद तथा शरीरकी पीडाको और विशेषतः फिरङ्ग रोगको नष्ट करनेवाली है ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

हपुषा ।

तन्मध्ये प्रथमफलं मत्स्यवद्विस्रगंधकम् ।
द्वितीयमश्वत्थफलसदृशं मत्स्यगंधि च ॥ १०९ ॥
हपुषा ह्वुषा विस्रा पराश्वत्थफला मता ।
मत्स्यगंधा प्लीहहंत्री विषघ्नी ध्वांक्षनाशिनी॥११०॥
हपुषा दीपनी तिक्ता मृदूष्णा तुवरा गुरुः ।
पित्तोदरसमीरार्शोग्रहणीगुल्मशूलहृत् ॥ १११ ॥
पराप्येतद्गुणा प्रोक्ता रूपभेदो द्वयोरपि ।

हाऊबेर दो प्रकारका है एक तो मच्छी की तरह की दुर्गन्ध युक्त, दूसरा पीपलके फलके समान और मच्छी की गन्धवाला । हपुषा, ह्वुषा, विस्रा यह प्रथम प्रकारके हाऊबेरके नाम हैं और अश्वत्थफला, प्लीहहन्त्री, विषघ्नी और ध्वांक्षनाशिनी यह दूसरे हाऊबेरके नाम है । इसको हिन्दीमें हाऊबेर, तथा अंग्रेजीमें Thevetic Narifolia कहते है ।

हाऊबेर अग्निको दीपन करनेवाली, तिक्त, मृदु, उष्ण, कषैली, भारी तथा पित्तरोग, उदररोग, वायुके रोग, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म और शूल इनके हरनेवाली है । दूसरे हाऊबेरमें भी यही गुण है । रूपमात्रका ही भेद है ॥ १०९–१११ ॥

विडंगम् ।

पुंसि क्लीबे विडंगः स्यात्कृमिघ्नो जंतुनाशनः ।
तंडुलश्च तथा वेल्लममोघा चित्रतंडुलः ॥ ११२ ॥
विडंगं कटु तीक्ष्णोष्णं रूक्षं वह्निकरं लघु ।
शूलाध्मानोदरश्लेष्मकृमिवातनिबन्धनुत् ॥ ११३॥

विडंग पुँल्लिङ्ग अथवा नपुंसक दोनों लिंगोंमें होता है । कृमिघ्न,जन्तुनाशन, तण्डुल, वेल्ल, अमोघा और चित्रतंडुल यह वायविडङ्गके नाम हैं । हिन्दीमें इसे

वायविडङ्ग, फारसीमें बरंग, काबली और अंग्रेजीमें Bubreng कहते हैं।

वायविडङ्ग–कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, रूक्ष, जठराग्निको चैतन्य करनेवाला और हलका है। तथा शूल, आध्मान, उदररोग, कफविकार, कृमि और वायुके बन्धको दूर करता है॥ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥

तुंबरुः ।

तुंबरुः सौरसः सौरो वनजः सोऽणुजोऽधकः ।
तुंबरु कथितं तिक्तं कटु पाकेऽपि तत्कटु ॥ ११४ ॥
रूक्षोष्णं दीपनं तीक्ष्णं रुच्यं लघु विदाहि च ।
वातश्लेष्माक्षिकर्णौष्ठशिरोरुग्गुरुताकृमीन् ॥ ११५ ॥
कुष्ठशूलारुचिश्वासप्लीहकृच्छ्राणि नाशयेत् ।

तुम्बरु, सौरस, सौर, वनज, सानुज, (-सोऽणुज) और अन्धक यह नैपाली धनियेके नाम है। इसे हिन्दीमें नैपाली धनिया कहते हैं।

तुम्बरु–तिक्त, कटु, पाकमें भी कटु, रूक्ष, उष्ण, अग्निदीपक, रुचिकारक, हलका, दाहको उत्पन्न करनेवाला तथा वात, कफ, नेत्ररोग, कर्णरोग, ओष्ठरोग, शिरोरोग, भारीपन, कृमि, कोढ, शूल, अरुचि, श्वास, प्लीहा तथा कृच्छ्र इनको नाश करनेवाला है॥ ११४ ॥ ११५ ॥

वंशरोचना ।

स्याद्वंशरोचना वांशी तुगाक्षीरी तुगा शुभा ॥ ११६ ॥
त्वक्क्षीरी वंशजा शुभ्रा वंशक्षीरी च वैष्णवी ।
वंशजा बृंहणी वृष्या बल्या स्वाद्वी च शीतला ॥ ११७ ॥
तृष्णाकासज्वरश्वासक्षयपित्तास्रकामलाः ।
हरेत्कुष्ठं व्रणं पांडुं कषायो वातकृच्छ्रजित् ॥ ११८ ॥

वंशरोचना, वांशी, तुगाक्षीरी, तुगा, शुभा, त्वक्क्षीरी, वंशजा, शुभ्रा, वंशक्षीरी तथा वैष्णवी यह वंशलोचनके नाम है । इसे हिन्दीमें वंशलोचन

फारसीमें बवाशीर और अंग्रेजीमें The Siliceous Concretion कहते हैं।

वंशलोचन–शरीरकी धातुओंको पुष्ट करनेवाली, वीर्यवर्धक, बलवर्धक, मधुर, शीतल तथा तृष्णा, (प्यास) खांसी ज्वर,श्वास, क्षय, पित्त, रक्तविकार, कामला, कुष्ठ, व्रण, पाण्डु रोग इन रोगोंको हरनेवाली कसैली तथा वायु और कृच्छ्रको जीतनेवाली है ॥ ११६––११८ ॥

समुद्रफेनः ।

समुद्रफेनः फेनश्च डिंडीरोऽब्धिकफस्तथा ।
समुद्रफेनश्चक्षुष्यो लेखनः शीतलश्च सः ॥ ११९ ॥
कषायो विषपित्तघ्नः कर्णरुक्कफहृल्लघुः ।

समुद्रफेन, फेन, डिण्डीर, अब्धिकफ यह समुद्रफेनके नाम हैं। इसको हिन्दीमें समुद्रझाग, फारसीमें कफेदरया और अंग्रेजीमें Catilefish bone कहते है।

समुद्रफेन–नेत्रोंके लिये हितकारी, लेखन, शीतल, कषाय, विष और पित्तको नष्ट करनेवाली, कर्णरोग और कफको हरनेवाली तथा हलकी है ॥ ११९ ॥

अष्टवर्गः ।

जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यौ ऋद्धिवृद्धिके ॥१२०॥
अष्टवर्गोऽष्टभिर्द्रव्यैः कथितश्चरकादिभिः ।
अष्टवर्गो हिमः स्वादुः बृंहणः शुक्रलो गुरुः॥१२१॥
भग्नसन्धानकृत्कामबलसंबलवर्द्धनः ।
वातपित्तास्रतृड्दाहज्वरमेहक्षयापहः ॥ १२२ ॥

जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि और वृद्धि इन आठोंको चरकादि ऋषियोंने अष्टवर्ग कहा है।

अष्टवर्ग–शीतल, मधुर, धातुओंको पुष्ट करनेवाला, वीर्यवर्धक, भारी, टूटे हुएको जोडनेवाला, काम, कफ तथा बलको बढानेवाला, तथा वात, पित्त, रक्त-विकार, प्यास, दाह, ज्वर, प्रमेह तथा क्षयको नष्ट करता है ॥१२०–१२२॥

जीवकर्षभयोरुत्पत्तिर्लक्षणं नाम गुणाः ।

जीवकर्षभकौ ज्ञेयौ हिमाद्रिशिखरोद्भवौ ।
रसोनकंदवत्कंदौ निस्सारौ सूक्ष्मपत्रकौ ॥ १२३ ॥
जीवकः कूर्चिकाकारः ऋषभो वृषशृंगवत् ।
जीवको मधुरः शृंगी ह्रस्वांगो कूर्चशीर्षकः ॥१२४॥
ऋषभो वृषभो धीरो विषाणी द्राक्ष इत्यपि ।
जीवकर्षभकौ बल्यौ शीतौ शुक्रकफप्रदौ ॥१२५॥
मधुरौ पित्तदाहास्रकार्श्यवातक्षयापहौ ।

जीवक और ऋषभक यह दोनों हिमालयपर उत्पन्न होते हैं। रसोन (लहसुन) कन्दकी तरह यह दोनों कन्द साररहित और सूक्ष्म पत्तोंवाले होते हैं। जीवक कूर्चाके आकारवाला तथा ऋषभक बैलके सींगके आकारवाला होता है। जीवक, मधुर, शृंगी, ह्रस्वांग, कूर्चशीर्षक यह जीवकके नाम है। ऋषभ, वृषभ, धीर, विषाणी, द्राक्ष यह ऋषभकके नाम है। जीवक और ऋषभक-बलवर्द्धक, शीत, वीर्य तथा कफको बढानेवाले, मधुर तथा पित्त, दाह, रुधिरविकार, दौर्बल्य, वात तथा क्षयको हरनेवाले है ॥ १२३–१२५ ॥

मेदामहामेदयोः ।

महामेदाभिधः कंदो मोरंगादौ प्रजायते ॥ १२६ ॥
महामेदा वनीमेदा स्यादित्युक्तं मुनीश्वरैः ।
शुष्कार्द्रकनिभः कंदो लताजातः सपांडुरः ॥१२७॥
महामेदाभिधो ज्ञेयो मेदालक्षणमुच्यते ।
शुक्लकंदो नखच्छेद्यो मेदो धातुमिव स्रवेत् ॥१२८॥

यः स मेदेति विज्ञेयो जिज्ञासातत्परैर्जनैः ।
स्वल्पपर्णी मणिच्छिद्रा मेदा मेदोभवाधरा ॥१२९॥
महामेदा वसुच्छिद्रा त्रिदंती देवतामणिः ।
मेदायुगं गुरु स्वादु वृष्यं स्तन्यकफावहम् ॥१३०॥
बृंहणं शीतलं पित्तरक्तवातज्वरप्रणुत् ।

महामेदा नामका कन्द मोरंग आदि पहाड पर उत्पन्न होता है । महामेदा और अवनिमेदा यह महामेदाके नाम मुनीश्वरोंने कहे हैं । महामेदा नामका कन्द सूखे हुए अदरकके समान श्वेत तथा लतासे उत्पन्न होता है । अब मेदाका लक्षण कहते हैं । जिस श्वेत कन्दको नखसे छेदने पर मेद धातु के समान रस निकले उसे जिज्ञासु मनुष्य मेदा कहते है । स्वल्पपर्णी, मणिच्छिद्रा, मेदा, मेदोभवा, अधरा यह मेदा के नाम हैं । महामेदा, वसुछिद्रा, त्रिदन्ती, देवतामणि यह महामेदाके नाम है। मेदा और महामेदा—भारी, मधुर, वीर्यवर्धक, दूध तथा कफको बढानेवाली, धातुओंको पुष्ट करनेवाली, शीतल तथा पित्त,रुधिरविकार, वात,ज्वर इनको नष्ट करती है ॥१२६–१३०

काकोल्योः ।

जायते क्षीरकाकोली महामेदोद्भवस्थले ॥ १३१ ॥
यत्र स्यात्क्षीरकाकोली काकोली तत्र जायते ।
पीवरीसदृशः कन्दक्षीरं स्रवति गंधवान् ॥ १३२ ॥
सा प्रोक्ता क्षीरकाकोली काकोलीलिंगमुच्यते ।
यथा स्यात्क्षीरकाकोली काकोल्यपि तथा भवेत् १३३
एषा किंचिद्भवेत्कृष्णा भेदोऽयमुभयोरपि ।
काकोली वायसोली च वीरा कायस्थिका तथा १३४

सा शुक्ला क्षीरकाकोली वयःस्था क्षीरवल्लिका ।
कथिता क्षीरिणी धारी क्षीरशुक्ला पयस्विनी ॥ १३५ ॥
काकोलीयुगलं शीतं शुक्रलं मधुरं गुरु ।
बृंहणं वातदाहास्रपित्तशोथज्वरापहम् ॥ १३६ ॥

जहां महामेदा उत्पन्न होती है वहीं अर्थात् मोरंग पहाडमें ही क्षीरकाकोली उत्पन्न होती है और जहां जहां क्षीरकाकोली उत्पन्न होती है वहीं काकोली उत्पन्न होती है । क्षीरकाकोलीका कन्द पीवरी असगन्धके समान होता है और उसमेंसे गन्धयुक्त दूध निकलता है, यह क्षीरकाकोलीके लक्षण हैं, काकोलीके चिह्न कहते हैं—काकोली भी क्षीर काकोलीके समान ही होती है किन्तु यह किञ्चित् काली होती है यही इन दोनोंमें भेद है । काकोली, वायसोली, वीरा, कायस्थिका यह काकोलीके नाम हैं । सफेद काकोली क्षीरकाकोली कही जाती है । वयस्या, क्षीरवल्लिका, क्षीरिणी, धारी, क्षीरशुक्ला और पयस्विनी यह क्षीरकाकोलीके नाम हैं । दोनों काकोलियें—शीतल, वीर्यको बढानेवाली, मधुर, भारी, धातुओंको पुष्ट करनेवाली तथा वात, दाह, रक्तविकार, पित्त, शोथ, ज्वर, इन सबको जीतनेवाली हैं ॥ १३१–१३६ ॥

ऋद्धिवृद्ध्योः ।

ऋद्धिर्वृद्धिश्च कंदौ द्वौ भवतः कोशयामले ।
श्वेतलोमान्वितौ कन्दौ लताजातौ सरंध्रकौ ॥ १३७ ॥
तावेव वृद्धिर्ऋद्धिश्च भेदमप्येतयोर्ब्रुवे ।
तूलग्रंथिसमा ऋद्धिर्वामावर्त्तफला च सा ॥ १३८ ॥
वृद्धिस्तु दक्षिणावर्त्तफला प्रोक्ता महर्षिभिः ।
ऋद्धियुग्मं सिद्धिलक्ष्म्यौ वृद्धेरप्याह्वया इमे ॥ १३९ ॥

ऋद्धिर्बल्या त्रिदोषघ्नी शुक्रला मधुरा गुरुः ।
प्राणैश्वर्य्यकरी मूर्च्छारक्तपित्तविनाशिनी ॥ १४० ॥
वृद्धिर्गर्भप्रदा शीता बृंहणी मधुरा स्मृता ।
वृष्या पित्तास्रशमनी क्षतकासक्षयापहा ॥ १४१ ॥
राज्ञामप्यष्टवर्गस्तु यतोऽयमतिदुर्लभः ।
तस्मादस्य प्रतिनिधिं गृह्णीयात्तद्गुणं भिषक् ॥१४२॥

ऋद्धि और वृद्धि यह दोनों कन्द कोशयामल पर्वतमें पाये जाते हैं। ऋद्धि व वृद्धिके कन्द लताओंके नीचेसे निकलते हैं, इन कन्दों पर श्वेत लोम और छिद्रसे होते है अब ऋद्धि और वृद्धिमें भेद कहते हैं । ऋद्धि कपासकी गांठके समान होती है तथा इसका फल बाई ओर घूमा हुआ होता है । वृद्धिका फल दाई ओर घूमा हुआ रहता है ऐसा महर्षियोंने कहा है । ऋद्धि सिद्धि तथा लक्ष्मी यह ऋद्धिके और वृद्धि सिद्धि तथा लक्ष्मी यह वृद्धिके नाम हैं ।

ऋद्धि बलवर्धक, त्रिदोषनाशक, वीर्यको बढानेवाली, मधुर, भारी, आयु तथा ऐश्वर्यको बढानेवाली तथा मूर्च्छा और रक्तपित्तका नाश करनेवाली है । वृद्धि—गर्भके देनेवाली, शीतवीर्य, धातु पुष्टिको करनेवाली, मधुर, वीर्यवर्धक, पित्त तथा रक्तको शमन करनेवाली तथा क्षत कास और क्षयको दूर करती है । क्योंकि प्रायः यह अष्टवर्ग राजाओंके लिये भी दुष्प्राप्य होगया है इसलिये वैद्यको इसके स्थान पर इसके सदृश गुणोंवाले इसके प्रतिनिधि द्रव्य प्रयोग करना चाहिये ॥ १३७–१४२ ।

मुख्यसदृशः प्रतिनिधिः ।

मेदाजीवककाकोलीवृद्धिद्वंद्वेऽपि चासति ।
वरी विदार्य्यश्वगंधा वाराहीश्च क्रमात्क्षिपेत् ॥१४३॥

मेदामहामेदास्थाने शतावरीमूलम् ।
जीवकर्षभकस्थाने विदारीमूलम् ॥ १४४ ॥
काकोलीक्षीरकाकोलीस्थाने अश्वगंधामूलम् ।
ऋद्धिवृद्धिस्थाने वाराहीकंदंगुणैस्तत्तुल्यं क्षिपेत् १४५

मेदा, महामेदा, जीवक और ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली तथा ऋद्धि वृद्धिके अभावमें क्रमसे शतावर, विदारीकन्द, असगन्ध तथा वाराहीकन्दका प्रयोग करे । अर्थात् मेदा और महामेदाके अभावमें शतावर, जीवक और ऋषभकके अभावमें विदारीकन्द, काकोली और क्षीरकाकोलीके अभावमें असगन्ध एवं ऋद्धिके तथा वृद्धिके अभावमें वाराहीकन्द डालना चाहिये ॥ १४३–१४५ ॥

यष्टीमधु ।

यष्टीमधु तथा यष्टीमधुकं क्लीतकं तथा ।
अन्यत्क्लीतनकं तत्तु भवेत्तोयमधूलिका ॥ १४६ ॥
यष्टी हिमा गुरुः स्वाद्वी चक्षुष्या बलवर्णकृत् ।
सुस्निग्धा शुक्रला केश्या स्वर्य्या पित्तानिलास्रजित् ॥
व्रणशोथविषच्छर्दितृष्णाग्लानिक्षयापहा ॥ १४७ ॥

यष्टीमधु, यष्टीमधुक, क्लीतक, यह मधुयष्टिके नाम हैं । जो मधुयष्टि जलमें उत्पन्न होती है उसे क्लीतक और क्लीतनक कहते हैं । मधुयष्टिको हिन्दीमें मुलैठी, फारसीमें वेखमेहेक्मज़ू तथा अरबीमें असल–असूस अंग्रेजीमें Liguariel poor कहते हैं। मधुयष्टी––शीतल, भारी, मधुर, नेत्रोंको हितकर, बल तथा वर्णके लिये हितकारी, स्निग्ध, वीर्यवर्धक, केशों और स्वरको बढानेवाली तथा पित्त, वायु, व्रण, शोथ, विष, वमन, प्यास, ग्लानी तथा क्षयको दूर करती है ॥ १४६ ॥ १४७ ॥

काम्पिल्लः ।

कांपिल्यः(ल्लः)कर्कशश्चन्द्रोरक्तांगोरेचनोपिच ॥१४८
कांपिल्यः कफपित्तास्रकृमिगुल्मोदरव्रणान् ।
हंति रेची कटूष्णश्च मेहानाहविषाश्मनुत् ॥१४९ ॥

कांपिल्य, कर्कश, चन्द्र, रक्तांग तथा रेचन यह कमीलेके नाम हैं । इसको हिन्दीमें कमीला, फारसीमें कन्विलाम और अंग्रेजीमें-Kamila Rodtlera कहते है । कमीला-रेचन करनेवाला, कटु, गरम तथा कफ, पित्त, रक्तविकार, कृमि, गुल्म, उदररोग और व्रण इनको नष्ट करनेवाला तथा प्रमेह, आनाह, विष और पथरीको दूर करता है ॥ १४८ ॥ १४९ ॥

आरग्वधः ।

आरग्वधो राजवृक्षः शंपाकश्चतुरंगुलः ।
आरेवतो व्याधिघाती कृतमालः सुवर्णकः॥१५० ॥
कर्णकारो दीर्घफलः स्वर्णांगः स्वर्णभूषणः ।
आरग्वधो गुरुः स्वादुः शीतलः स्रंसनो मृदुः १५१
ज्वरहृद्रोगपित्तास्रवातोदावर्त्तशूलनुत् ।
तत्फलं स्रंसनं रुच्यं कोष्ठपित्तकफापहम् ॥ १५२ ॥
ज्वरे तु सततं पथ्यं कोष्ठशुद्धिकरं परम् ।

आरग्वध, राजवृक्ष, शंपाक, चतुरंगुल, आरेवत, व्याधिघाती, कृतमाल, सुवर्णक, कर्णकार, दीर्घफल, स्वर्णांग तथा स्वर्णभूषण यह अमलतासके नाम है । हिन्दीमें यह अमलतास, फारसीमें ख्यारे शम्बर और अंग्रेजीमें Pudding Pipeltree इन नामोंसे पुकारा जाता है । अमलतास-भारी, मधुर, शीतल, स्रंसन (दस्तोंके लगानेवाला), कोमल तथा ज्वर, हृदयके रोग, रक्तविकार, वात, उदावर्त तथा शूलका नाश करता है । अमलतासकी फली स्रंसन करनेवाली,

रुचिकारक तथा कोष्ठ, पित्त और कफको नष्ट करनेवाली है । यह ज्वरमें दी हुई सर्वदा पथ्य तथा कोठेको शुद्ध करनेवाली होती है ॥ १५०–१५२ ॥

कटूवी ।

कटूवी तु कटुका तिक्ता कृष्णभेदा कटंभरा॥१५३॥
अशोका मत्स्यशकला चक्रांगी शकुलादनी ।
मत्स्यपित्ता कांडरुहा रोहिणी कटुरोहिणी ॥१५४॥
कटुका कटुका पाके तिक्ता रूक्षा हिमा लघुः ।
भेदनी दीपनी हृद्या कफपित्तज्वरापहा ॥ १५५ ॥
प्रमेहश्वासकासास्रदाहकुष्ठकृमिप्रणुत् ।

कटूवी, कटुका, तिक्ता, कृष्णभेदा, कटंभरा, अशोका, मत्स्यशकला, चक्रांगी, शकुलादनी, मत्स्यपित्ता, काण्डरुहा, रोहिणी, कटुरोहिणी यह कटवीके नाम हैं । इसे हिन्दीमें कटुकी, कुटकी, कडु, फारसीमें खर्ब केसियाह और अंग्रेजीमें Black Hellhare कहते है ।

कुटकी—पाकमें कटु, तिक्त, रूक्ष, शीतल, हलकी, मलको भेदन करनेवाली, अग्निदीपक, हृदयको प्रिय तथा कफपित्तज्वर, प्रमेह, श्वास, खांसी, रक्तविकार, दाह, कुष्ठ तथा कृमी इनका नाश करनेवाली है ॥ १५३–१५५ ॥

किरातः ।

किराततिक्तः कैरातो कटुतिक्तः किरातकः ॥ १५६॥
कांडतिक्तोऽनार्यतिक्तो भूनिंबो रामसेनकः ।
किरातकोऽन्यो नैपालःसोऽर्द्धतिक्तो ज्वरांतकः १५७
किरातः सारको रूक्षः शीतलस्तिक्तको लघुः ।

सन्निपातज्वरश्वासकफपित्तास्रदाहनुत् ॥ १५८ ॥
कासशोथतृषाकुष्ठज्वरव्रणकृमिप्रणुत् ।

किराततिक्त, कैरात, कटुतिक्त, किरातक, काण्डतिक्त, अनार्यतिक्त, भूनिम्ब, रामसेनक यह चिरायतेके नाम हैं । इसी प्रकारका चिरायता जो नैपाल देशमें उत्पन्न होता है उसको अर्द्धतिक्त और ज्वरांतक कहते है । इसको हिंदीमें चिरायता, फारसीमें नेनीहादा तथा अंग्रेजीमें Chireta कहते हैं।

चिरायता—दस्तावर, रूक्ष, शीतल, तिक्त, हलका तथा सन्निपातज्वर, श्वास, कफ, पित्त, रक्तविकार, दाह, खांसी, शोथ, तृषा, कुष्ठ, ज्वर, व्रण तथा कृमि इनको नष्ट करता है ॥ १५६–१५८ ॥

इन्द्रयवम् ।

उक्तं कुटजबीजं तु यवमिंद्रयवं तथा ॥ १५९ ॥
कलिंगं चापि कालिंगं तथा भद्रयवं स्मृतम् ।
क्वचिदिन्द्रस्य नामैव भवेत्तदभिधायकम् ॥१६० ॥
फलानीन्द्रयवास्तस्य तथा भद्रयवा अपि ।

कुटजबीज, यव, इन्द्रयव, कलिग, कालिंग तथा भद्रयव यह इन्द्रजौके नाम है । यह अमरकोशमें लिखा है । भगवान् धन्वन्तारि कहते है कि इन्द्रके सम्पूर्ण नाम इन्द्रजौके पर्य्यायवाचक शब्द होते है । जैसे शक्र, इन्द्र, इन्द्रयव और भद्रयव इत्यादि । इसे हिन्दीमें इन्द्रजौ, फारसीमें जवान कुंचिस्क और अंग्रेजीमें Rosebay कहते है ॥ १५९ ॥ १६० ॥

इन्द्रयवं त्रिदोषघ्नं संग्राहि कटु शीतलम् ॥ १६१॥
ज्वरातीसाररक्तार्शःकृमिवीसर्पकुष्ठनुत् ।
दीपनं गुदकीलास्रवातास्रश्लेष्मशूलजित् ॥१६२ ॥

इन्द्रजौ—त्रिदोषनाशक, ग्राही, कटु, शीतल तथा ज्वर, अतिसार, रक्तविकार, अर्श, कृमि, विसर्प तथा कुष्ठको नष्ट करनेवाला, अग्निदीपक,

और ववासीरके मस्सों, रुधिरविकार, वात, कफ तथा शूलको जीतनेवाला है ॥ १६१ ॥१६२ ॥

मदनः ।

मदनश्छर्दनः पिंडीराठः पिंडीतकस्तथा ।
करहाटो मरुबकः शल्यको विषपुष्पकः ॥ १६३ ॥
मदनो मधुरस्तिक्तो वीर्योष्णो लेखनो लघुः ।
वांतिकृद्विद्रधिहरः प्रतिश्यायव्रणान्तकः ॥ १६४ ॥
रूक्षः कुष्ठकफानाहशोथगुल्मव्रणापहः ।

मदन, छर्दन, पिण्डीराठ, पिण्डीतक, करहाट, मरुवक, शल्यक, विषपुष्पक यह मदनफलके संस्कृत नाम हैं । हिन्दीमें इसे राडा तथा मैनफल, अंग्रेजीमें Bushia Gardenia कहते है । मैनफल—मधुर, तिक्त, उष्णवीर्यवाला, लेखन करनेवाला, हलका, वमनको करनेवाला, विद्रधिनाशक, रूक्ष तथा प्रतिश्याय. व्रण, कोढ,कफ, शोथ, आनाह, (अफारा), गुल्म तथा व्रणको नाश करनेवाला है ॥ १६३॥१६४ ॥

रास्ना ।

रास्ना युक्तरसा रस्या सुवहा रसना रसा ॥ १६५ ॥
एलापर्णी च सुरसा सुगन्धा श्रेयसी तथा ।
रास्नामपाचनी तिक्ता गुरूष्णा कफवातजित् ॥१६६
शोथश्वाससमीरास्रवातशूलोदरापहा ।
कासज्वरविषाशीतिवातकामयसिध्महृत् ॥ १६७ ॥

रास्ना, युक्तरसा, रस्या, सुवहा, रसना, रसा, एलापर्णी, सुरसा, सुगन्धा, श्रेयसी यह रास्नाके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें रायसन, फारसीमें रासुन कहते है ॥

रायसन—आमको पचानेवाली, तिक्त, भारी, गरम, कफवातनाशक तथा शोथ, श्वास, वातरक्त, वातशूल, उदररोग, कास, ज्वर, विष, अस्सीप्रकारकी वातव्याधियां तथा सिध्म, कोढ इनको नष्ट करती है ॥ १६५–१६७ ॥

नाकुली ।

नाकुली सुरसा नागसुगन्धा गंधनाकुली ।
नकुलेष्टा भुजंगाक्षी सर्पाक्षी विषनाशनी ॥ १६८ ॥
नाकुली तुवरा तिक्ता कटुकोष्णा विनाशयेत् ।
भोगिलूतावृश्चिकाखुविषज्वरकृमिव्रणान् ॥ १६९ ॥

नाकुली, सुरमा, नागसुगन्धा, गंधनाकुली, नकुलेष्टा, भुजंगाक्षी, सर्पाक्षी और विषनाशिनी यह इसके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें नाई तथा नाकुली-कन्द, फारसीमें विषमूंगरी और अंग्रेजीमें Kauwolfia Scrpentına कहते हैं ।

नाकुली—कषाय रसवाली, तिक्त, कटु, उष्ण तथा सर्प लूता (मकडी), विच्छू तथा चूहेका विष, ज्वर, कृमि तथा व्रण इनको नष्ट करती है ॥१६८॥१६९॥

माचिका ।

माचिका प्रस्थकांबष्ठा तथांबालिकांबिका ।
मसूरविदला केशी सहस्रा वालमूलिका ॥ १७० ॥
माचिकाम्ला रसे पाके कषाया शीतला लघुः ।
पक्वातीसारपित्तास्रकफकंड्वामयापहा ॥ १७१ ॥

माचिका, प्रस्थका, अम्बष्ठा, अम्बा, अम्बालिका, अम्बिका, मसूरविदला, केशी, सहस्रा और वालमूलिका यह माचिकाके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमे मकोह, फारसीमें रोवातरीख और अंग्रेजीमें Solenum Nigrum कहते हैं ।

मकोह—रसमें अम्ल, पाकमें कषाय, शीतल, हलका और पक्वातिसार, पित्त, रक्तविकार, कफ तथा कण्डुरोग (खुजली) दूर करता है ॥१७०॥१७१

तेजवती ।

तेजस्विनी तेजवती तेजोह्वा तेजनी तथा ।
तेजस्विनी कफश्वासकासास्यामयवातहृत् ॥ १७२ ॥
पाचन्युष्णा कटुस्तिक्ता रुचिवह्निप्रदीपनी ।

तेजस्विनी, तेजवती, तेजोह्वा, तेजनी यह तेजवतीके संस्कृत नाम हैं। इसे हिन्दीमें तेजोवती और अंग्रेजीमें Toothache Tree कहते है।

तेजस्विनी–पाचन करनेवाली, गरम, कटु, तिक्त, रुचिकर, अग्निदीपक तथा कफ, श्वास, कास, मुखरोग तथा वायुको हरण करती है ॥ १७२ ॥

ज्योतिष्मती ।

ज्योतिष्मतीस्यात्कटभीज्योतिष्काकंगुनीतिच १७३
पारावतपदी पण्या लता प्रोक्ता ककुंदनी ।
ज्योतिष्मती कटुस्तिक्ता सरा कफसमीराजित् ७१४
अत्युष्णा वामनी तीक्ष्णा वह्निबुद्धिस्मृतिप्रदा ।

ज्योतिष्मती, कटभी, ज्योतिष्का, कंगुनी, पारावतपदी, पण्या, लता, ककुंदनी यह ज्योतिष्मतीके नाम है। हिन्दीमें इसे मालकंगनी, फारसीमें काल और अंग्रेजीमें Staff Tree कहते हैं।

मालकंगनी–कटु, तिक्त, दस्तावर, वात तथा कफको नष्ट करनेवाली, वहुत गरम, वमनकारक, तीक्ष्ण तथा अग्नि, बुद्धि और स्मृतिको बढाती है ॥१७३ ॥ १७४ ॥

कुष्ठम् ।

कुष्ठं रोगाह्वयं वाप्यं पारिभाव्यं तथोत्पलम् ॥१७५
कुष्ठमुष्णं कटु स्वादु शुक्रलं तिक्तकं लघु ।
हंति वातास्रवीसर्पकासकुष्टमरुत्कफान् ॥ १७६ ॥

कुष्ठ, रोगाह्वय, वाप्य, परिभाव्य तथा उत्पल यह कुष्ठके संस्कृत

नाम हैं, हिन्दीमें इसे कूठ, फारसीमें कोश्त और अंग्रेजीमें Castor root कहते हैं।

कूठ—गरम, कटु, मधुर, वीर्यवर्द्धक, तिक्त, हलका तथा वात, रुधिरविकार, विसर्प, कास, कुष्ठ और कफको नष्ट करता है॥ १७५॥ १७६॥

पुष्करमूलम्।

उक्तं पुष्करमूलं तु पौष्करं पुष्करं च तत्।
पद्मपत्रं च काश्मीरं कुष्ठभेदमिमं जगुः॥ १७७॥
पौष्करं कटुकं तिक्तमुक्तं वातकफज्वरान्।
हंतिश्वासारुचिशोथान्विशेषात्पार्श्वशूलनुत् १७८

पुष्करमूल, पौष्कर, पुष्कर, पद्मपत्र तथा काश्मीर यह कुष्ठके भेद पोहकरमूलके नाम हैं, हिन्दीमें इसे पोहकरमूल कहते है।

पोहकरमूल—कटु, तिक्त तथा वात और कफके ज्वर, श्वास, अरुचि, शोथ और विशेषतः पार्श्वशूल इनको नष्ट करनेवाला है॥ १७७॥ १७८॥

हेमाह्वा।

पटुपर्णी हैमवती हेमक्षीरी हिमावती।
हेमाह्वा पीतदुग्धा च तन्मूलं चोकमुच्यते॥१७९॥
हेमाह्वा रेचनी तिक्ता भेदन्युत्क्लेशकारिणी।
कृमिकंडूविषानाहकफपित्तास्त्रकुष्ठनुत्॥ १८०॥

पटुपर्णी, हैमवती, हेमक्षीरी, हिमावती, हेमाह्वा, पीतदुग्धा यह हेमाह्वाके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे पीले दूधकी कटेरी तथा सत्यानाशी और अंग्रेजीमें Gambage Thistle कहते हैं। इसकी जड़को चोक कहते है।

पीले दूधकी कटेली—रेचन करनेवाली, तिक्त, मलको शिथिल करनेवाली, जीको मचलानेवाली तथा कृमि, खुजली, विष, आनाह, कफ, पित्त, रक्तविकार और कोढ़को नष्ट करनेवाली है॥ १७९॥ १८०॥

शृंगी ।

शृंगी कर्कटशृंगी च स्यात्कुलीरविषाणिका ।
अजशृंगी च वक्रा च कर्कटाख्या च कीर्तिता ॥१८१॥
शृंगी कषाया तिक्तोष्णा कफवातक्षयज्वरान् ।
श्वासोर्ध्ववाततृट्कासहिक्काऽरुचिवमीर्हरेत् ॥ १८२ ॥

शृंगी, कर्कटशृंगी, कुलीर, विषाणिका, अजशृंगी, वक्रा तथा कर्कटा यह शृंगीके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे काकड़ासिंगी कहते हैं ।

शृंगी—कषायरसवाली, तिक्त, गरम तथा कफ, वात, क्षय, ज्वर, श्वास, ऊर्ध्ववात, तृष्णा, कास, हिचकी, अरुचि, वमन, इनको हरनेवाली है ॥ १८१ ॥ १८२ ॥

कट्फल ।

कट्फलः सोमवल्कश्च कैटर्य्यः कुंभिकापि च ।
श्रीपर्णिका कुमुदिका भद्रा भद्रवतीति च ॥१८३॥
कट्फलस्तुवरस्तिक्तः कटुर्वातकफज्वरान् ।
हंति श्वासप्रमेहार्शःकासकंडूक्षयारुचीः ॥ १८४ ॥

कट्फल, सोमवल्क, कैटर्य्य, कुम्भिका, श्रीपर्णिका, कुमुदिका, भद्रा, भद्रवती यह कट्फलके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे कायफल, फारसीमें उदुलवर्क तथा अंग्रेजीमें Myricasapida कहते हैं ।

कायफल—कसैला, तिक्त, कटु तथा वात, कफ, ज्वर, श्वास, प्रमेह, अर्श, खांसी, खुजली और अरुचि इन सबको दूर करता है ॥ १८३ ॥ १८४ ॥

भार्ङ्गी ।

भार्ङ्गी भृगुभवा पद्मा फंजी ब्राह्मणयष्टिका ।
ब्राह्मण्यंगारवल्ली च खरशाकश्च हंजिका ॥१८५ ॥

भार्ङ्गी रूक्षा कटुस्तिक्ता रुच्योष्णा पाचनी लघुः ।
दीपनी तुवरा गुल्मरक्तजिन्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ १८६ ॥
शोथकासकफश्वासपीनसज्वरमारुतान् ।

भार्ङ्गी, भृगुभवा, पद्मा, फञ्जी, ब्राह्मणयष्टिका, ब्राह्मणी, अङ्गारवल्ली, खरशाक और हञ्जिका यह भार्ङ्गीके संस्कृत नाम है । हिन्दीमें इसे भारंगी तथा अंग्रेजीमें Clerodendron Seretun कहते है. भारंगी—रूक्ष, कटु, तिक्त, रुचिकारक, उष्ण, पाचक, हलकी, अग्निदीपक, कसैली, गुल्म और रक्तविकारोंके जीतनेवाली, शोथ, कास, कफ, श्वास, पीनस, ज्वर तथा वात इनको शीघ्र ही नष्ट कर देती है ॥ १८५ ॥ १८६ ॥

अश्मभेदः ।

पाषाणभेदकोऽश्मघ्नो गिरिभिद्भिन्नयोजनी ॥ १८७ ॥
अश्मभेदो हिमस्तिक्तः कषायो बस्तिशोधनः ।
भेदनो हंति दोषार्शोगुल्मकृच्छ्राश्महृद्रुजः ॥१८८॥
योनिरोगान्प्रमेहांश्च प्लीहशूलव्रणानि च ।

पाषाणभेद, अश्मघ्न, गिरिभित्, भिन्नयोजनी, अश्मभेद यह पाषाणभेदके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें पाखानभेद, फारसीमें गोशाद तथा अंग्रेजीमें Irissp कहते है ।

पाषाणभेद—शीतल, तिक्त, कसैला, बस्ति (मसाना) को शुद्ध करनेवाला, भेदन करनेवाला तथा वात, पित्त, कफ, अर्श, गुल्म, कृच्छ्र, पथरी, हृदयके रोग, योनिरोग, प्रमेह, प्लीहा, शूल तथा व्रणोंका नाश करता है ॥ १८७ ॥ १८८ ॥

धातकी ।

धातकी धातुपुष्पी च वह्निज्वाला च सा स्मृता १८९

धातकी कटुका शीता मदकृत्तुवरा लघुः ।
तृष्णातीसारपित्तास्रविषकृमिविसर्पजित् ॥ १९० ॥

धातकी, धातुपुष्पी, वह्निज्वाला, यह धातकीके संस्कृत नाम हैं । हिन्दीमें इसे धायके फूल और अंग्रेजीमें Woodfardia Floribunda कहते हैं ।

धायके फूल-कटु, शीत, मदकारक, कसैले, हलके तथा प्यास, अतिसार, पित्त, रक्तविकार, विष, कृमि और विसर्पको जीतनेवाले हैं ॥१८९॥१९०॥

मंजिष्ठा ।

मंजिष्ठा विकसा जिंगी समंगा कालमेषिका ।
मंडूकपर्णी मंडीरी भंडी योजनवल्ल्यपि ॥ १९१ ॥
रसायन्यरुणा काला रक्तांगी रक्तयष्टिका ।
मंडीतकी च गंडीरी मंजूषा वस्त्ररंजनी ॥ १९२ ॥
मंजिष्ठा मधुरा तिक्ता कषाया स्वरवर्णकृत् ।
गुरूष्णा विषश्लेष्मशोथयोन्यक्षिकर्णरुक् ॥ १९३ ॥
रक्तातीसारकुष्ठास्रवीसर्पव्रणमेहनुत् ।

मंजिष्ठा, विकसा, जिङ्गी, समङ्गा, कालमेषिका, मण्डूकपर्णी, मण्डीरी, भण्डी, योजनवल्ली, रसायनी, अरुणा, काला, रक्ताङ्गी, रक्तयष्टिका, मण्डीतकी, गण्डीरी, मंजूषा, वस्त्ररंजनी यह मंजिष्ठाके संस्कृत नाम है। इसे हिन्दीमें मँजीठ, फारसीमें सनास और अंग्रेजीमें Madderroot कहते है ।

मँजीठ-मधुर, तिक्त, कसैली, स्वर और वर्णके लिये उत्तम, भारी, उष्ण तथा विष, श्लेष्म, शोथ, योनि, आक्षि तथा कानोंके रोग, रक्तातिसार, कोढ, रक्तविकार, विसर्प तथा व्रण और मेहको नष्ट करती है ॥ १९१-१९३ ॥

कुसुंभम् ।

स्यात्कुसुंभं वह्निशिखं वस्त्ररंजकमित्यपि ॥ १९४ ॥
कुसुंभं वातलं कृच्छ्ररक्तपित्तकफापहम् ।

कुसुंभ, वह्निशिखा तथा वस्त्ररञ्जक यह कुसुंभके संस्कृत नाम है। हिन्दी-

में इसे कुसुंभा, फारसीमें गुलेमास्कर और अंग्रेजीमें Officinal Carthamus कहते हैं।

कुसुम्भा—वातकारक तथा कृच्छ्र, रक्त, पित्त और कफको दूर करता है ॥ १९४ ॥

लाक्षा।

लाक्षा पलंकषालक्तो यावो वृक्षामयो जतु ॥ १९५॥
लाक्षा वर्ण्या हिमा बल्या स्निग्धा च तुवरा लघुः।
अनुष्णा कफपित्तास्रहिक्काकासज्वरप्रणुत् ॥ १९६॥
व्रणोरःक्षतवीसर्पकृमिकुष्टगदापहा।
अलक्तको गुणैस्तद्वद्विशेषाद् व्यंगनाशनः ॥१९७॥

लाक्षा, पलंकषा, अलक्त, याव, वृक्षामय, जतु यह लाक्षाके संस्कृत नाम हैं। हिन्दीमें इसे लाख, फारसीमें इसे लाक और अंग्रेजीमें Shellac कहते हैं। लाक्षा—वर्णको उत्तम करनेवाली, शीतल, बलवर्धक, स्निग्ध, कसैली, अनुष्ण और कफ, पित्त, रक्तविकार, हिचकी, कास, ज्वर, व्रण, उरक्षत, विसर्प, कृमि, कुष्ठ इन व्याधियोंको हरण करती है। अलंक्तक (लाखका रस) भी लाक्षाके समान गुणोंवाली है किन्तु विशेषकरके त्वचाके छिम्भ और छाइयोंको नष्ट करती है ॥ १९५–१९७ ॥

हरिद्रा।

हरिद्रा कांचनी पीता निशाख्या वरवर्णिनी।
कृमिघ्ना हलदी योषित्प्रिया हट्टविलासिनी॥१९८॥
हरिद्रा कटुका तिक्ता रूक्षोष्णा कफपित्तनुत्।
वर्ण्या त्वग्दोषमेहास्रशोथपांडुव्रणापहा ॥ १९९ ॥

हरिद्रा, काञ्चनी, पीता, निशाख्या, वरवर्णिनी, कृमिघ्ना, हलदी, योषित्प्रिया, हट्टविलासनी यह हल्दीके नाम है। हिन्दीमें इसे हलदी, फारसीमें जर्दचोब और अंग्रेजीमें Turmeric कहते हैं।

हल्दी—कटु, तिक्त, रूक्ष, गरम, कफ और पित्तको नष्ट करनेवाली, वर्णको उत्तम करनेवाली और त्वचाके दोष, प्रमेह, रक्तविकार, शोथ, पाण्डुरोग और व्रणोंको नष्ट करती है ॥ १९८ ॥ १९९ ॥

आम्रगन्धिहरिद्रा ।

दार्वीभेदा सुगंधा च दार्वी दारुकदारु च ।
कर्पूरा पद्मपत्रा स्यात्सुरभी सुरनायका ॥ २०० ॥
आम्रगंधिहरिद्रा या सा शीता वातला मता ।
पित्तहन्मधुरा तिक्ता सर्वकण्डूविनाशिनी ॥ २०१ ॥

दार्वीभेदा, सुगन्धा, दार्वी, दारुक, दारु, कर्पूरा, पद्मपत्रा, आम्रगन्धी, सुरभी, सुरनायका यह आम्बाहल्दीके नाम हैं। आम्बाहल्दी—शीतल, वातकारक, पित्तनाशक, मधुर, तिक्त और सब प्रकारकी कण्डु (खुजली) को दूर करनेवाली है। अम्बिया हल्दीके नामसे प्रसिद्ध है ॥ २०० ॥ २०१ ॥

अरण्यहरिद्रा ।

अरण्यहलदीकंदः कुष्ठवातास्रनाशनः ।

अरण्यहल्दी अर्थात् जंगलमें होनेवाली हल्दीका कन्द—कुष्ठ और वातरक्तको दूर करता है, यह वनहल्दीके नामसे प्रसिद्ध है ।

दारुहरिद्रा ।

दार्वी दारुहरिद्रा च पर्जन्या पर्जनीति च ॥२०२॥
कटंकटेरी पीता च भवेत्सैव पचंपचा ।
सैव कालीयकः प्रोक्तस्तथा कालेयकोऽपि च॥२०३॥
पीतद्रुश्च हरिद्रुश्च पीतदारुश्च पीतकम् ।
दार्वी निशागुणा किंतु नेत्रकर्णास्यरोगनुत्॥२०४॥

दार्वी, दारुहरिद्रा, पर्जन्या, पर्जनी, कटंकटेरी, पीता, पचम्पचा, कालीयक, कालेयक, पीतद्रु, हरिद्रु, पीतदारु, पीतक यह दारुहल्दीके नाम हैं। सिमलेके पहाडोंमें कसमलके नामसे प्रसिद्ध है ।

दारुहल्दीमें हल्दीके समान ही सब गुण हैं किन्तु नेत्र कान और मुखके रोगोंको विशेष रूपसे दूर करती है ॥ २०२–२०४ ॥

रसांजनम् ।

दार्वीक्वाथसमं क्षीरं पादं पक्त्वा यदा घनम् ।
तदा रसांजनं ख्यातं नेत्रयोः परमं हितम् ॥ २०५ ॥
रसांजनं तार्क्ष्यशैलं रसगर्भं च तार्क्ष्यजम् ।
रसांजनं कटुश्लेष्मविषनेत्रविकारनुत् ॥ २०६ ॥
उष्णं रसायनं तिक्तं छेदनं व्रणदोषहृत् ।

दारुहल्दीके अष्टावशेष क्वाथमें चौथा हिस्सा गोदुग्ध मिलाकर पकावे,जब वह अफीमके समान गाढा हो जाय तो इसको रसाञ्जन या रसोत कहते है। यह नेत्रोंके लिये परम हितकारी है । रसाञ्जन, तार्क्ष्यशैल, रसगर्भ, तार्क्ष्यज, यह रसौतके संस्कृत नाम हैं ।

रसौत–कटु है, कफ, विष और नेत्ररोगोंको हरती है, उष्ण है, रसायन है, तिक्त है, छेदन है और व्रण दोषोंको हरनेवाली है ॥२०५॥२०६॥

वाकुची ।

अवल्गुजा वाकुची स्यात्सोमराजी सुपर्णिका २०७
शशिलेखा कृष्णफला सोमा पूतिफलीति च ।
सोमवल्ली कालमेषी कुष्ठघ्नी च प्रकीर्तिता ॥२०८॥
वाकुची मधुरा तिक्ता कटुपाका रसायनी ।
विष्टंभहृद्धिमा रुच्या सरा श्लेष्मास्रपित्तनुत्॥२०९॥
रूक्षा हृद्या श्वासकुष्ठमेहज्वरकृमिप्रणुत् ।

तत्फलं पित्तलं कुष्ठकफानिलहरं कटु ॥ २१० ॥
केश्यं त्वच्यं वमिश्वासकासशोथामपांडुनुत् ।

अवल्गुजा, वाकुची, सोमराजी, सुपर्णिका, शशिलेखा, कृष्णफला, सोमा, पूतिफली, सोमवल्ली, कालमेषी और कुष्ठघ्नी यह बावचीके नाम है ।

बावची–मधुर, तिक्त, कटुपाकी, रसायनकर्त्री, विबन्धको दूर करनेवाली, ठण्डी, रुचिकारक, दस्तावर, कफ और रक्तपित्तको हरनेवाली, रूक्ष, हृदयको हितकारी, श्वास, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर और कृमियोंको दूर करती है । बावचीके फल पित्तकारक, कुष्ठ कफ और वायुके हरनेवाले कटु, केशोंको हितकारी, त्वचाको सुन्दर बनानेवाले, वमन, श्वास, कास, सूजन और पाण्डुरोगको हरनेवाले है । बावचीका श्वित्रकुष्ठ (फुलवहरी) के ऊपर विशेष रूपसे प्रयोग किया जाता है । इसे हिन्दीमें बावची और अगरेजीमें Esculent Fiacourtia कहते है ॥ २०७–२१० ॥

चक्रमर्दः ।

चक्रमर्दः प्रपुन्नाटो दद्रुघ्नो मेषलोचनः ॥ २११ ॥
पद्माटः स्यादेडगजः चक्री पुन्नाट इत्यपि ।
चक्रमर्दो लघुः स्वादू रूक्षः पित्तानिलापहः ॥२१२॥
हृद्यो हिमः कफश्वासकुष्ठदद्रुकृमीन् हरेत् ।
हन्त्युष्णं तत्फलं कुष्ठकंडुदद्रुविषानिलान् ॥ २१३ ॥
गुल्मकासकृमिश्वासनाशनं कटुकं स्मृतम् ।

चक्रमर्द, प्रपुन्नाट, दद्रुघ्न, मेषलोचन, पद्माट, एडगज, चक्री, पुन्नाट, यह पनवाडके नाम है । पननाड–हलका, स्वादु, रूक्ष, पित्त और वायुके हरनेवाला, हृदयको हितकारी, शीतल, कफ, श्वास, कुष्ठ, दद्रु, विष, वायु, कृमियोंको हरनेवाला है, इसके फल गरम हैं, कुष्ठ, कण्डु, दद्रु, विष, वायु, गुल्म, खांसी, कृमि और श्वास रोगको नष्ट करनेवाले है तथा कटु है ।

इसके पेड वर्षाऋतुमें उत्पन्न होते हैं, गरीब लोग इसके पत्तोंका शाक भी खाते हैं. । इसकी फलियोंमेंसे मोठके समान बीज निकलते हैं, जो दहीमें मिलाकर त्वचा पर लगानेके काम आते है ॥२११-२१३॥

अतिविषा ।

विषा त्वतिविषा विश्वा शृंगी प्रतिविषारुणा २१४
शुक्लकंदा चोपविषा भंगुरा घुणवल्लभा ।
विषा सोष्णा कटुस्तिक्ता पाचनी दीपनी हरेत्२१५
कफपित्तातिसारामविषकासवमिक्रिमीन् ।

विषा, अतिविषा, विश्वा, शृङ्गी, प्रतिविषा, अरुणा, शुक्लकन्दा, उपविषा, भङ्गुरा, घुणवल्लभा यह अतीसके नाम है । अतीस—किंचित् उष्ण, कटु, तिक्त, पाचनकर्त्ता और अग्निदीपक है । तथा कफ,पित्त, अतिसार,आमविकार, विषविकार, खांसी, वमन और कृमिरोगको दूर करती है । ज्वरातिसार और बारीके ज्वरोंमें यह विशेष रूपसे प्रयुक्त किया जाता है । अतीस नामसे यह सब जगह प्रसिद्ध है ॥ २१४ ॥ २१५ ॥

सावरलोध्रः । पटियालोध्रः ।

लोध्रस्तिल्लस्तिरीटश्च सावरो गालवस्तथा ॥२१६॥
द्वितीयः पट्टिकालोध्रः क्रमुकः स्थूलवल्कलः ।
जीर्णपत्रो बृहत्पक्षः पट्टी लाक्षाप्रसादनः ॥ २१७ ॥
लोध्रो ग्राही लघुः शीतः चक्षुष्यः कफपित्तनुत् ।
कषायो रक्तपित्तासृग्ज्वरातीसारशोथहृत् ॥ २१८ ॥

लोध्र, तिल्ल, तिल्लक, तिरीट, सावर, गालव यह शावरलोधके नाम हैं । पट्टिकालोध्र, क्रमुक, स्थूलवल्कल, जीर्णपत्र, बृहत्पत्र, पट्टी और लाक्षाप्रसादन यह पटिया लोध्र या पठानीलोधके नाम हैं । लोध्र—ग्राही, हलका, शीतल, नेत्रोंको हितकारी, कफ—पित्तनाशक, कसैला, रक्तपित्त, रक्तविकार, ज्वर,

अतिसार और शोथके हरनेवाला है । पठानी लोधके नामसे सब जगह प्रसिद्ध है ॥ २१६-२१८ ॥

रसोनः ।

लशुनस्तु रसोनः स्यादुग्रगंधो महौषधम् ।
अरिष्टो म्लेच्छकंदश्च यवनेष्टो रसोनकः ॥ २१९ ॥
यदामृतं वैनतेयो जहार सुरसत्तमात् ।
तदा ततोऽपतद्बिंदुः स रसोनोऽभवद्भुवि ॥२२० ॥
पंचभिश्च रसैर्युक्तो रसेनाम्लेन वर्जितः ।
तस्माद्रसोन इत्युक्तो द्रव्याणां गुणवेदिभिः ॥२२१॥
कटुकश्चापि मूलेषु तिक्तः पत्रेषु संस्थितः ।
नाले कषाय उद्दिष्टो नालाग्रे लवणः स्मृतः ॥२२२॥
बीजं तु मधुरः प्रोक्तो रसस्तद्गुणवेदिभिः ।
रसोनो बृंहणो वृष्यः स्निग्धोष्णः पाचनः सरः२२३
रसे पाके च कटुकस्तीक्ष्णो मधुरको मतः ।
बलवर्णकरो मेधाहितो नेत्र्यो रसायनः ॥ २२४ ॥
हृद्रोगजीर्णज्वरकुक्षिशूलविबन्धगुल्मारुचिकासशोफान् ।
दुर्नामकुष्ठानलसादजंतुसमीरणश्वासकफांश्च हंति २२५

लशुन, रसोन, उग्रगन्ध, महौषध, अरिष्ट, म्लेच्छकन्द, यवनेष्ट, रसोनक यह लशुनके नाम है । जब गरुड़जी देवलोकसे अमृत लेकर आये तो उनके मुखसे जो एक बिन्दु पृथ्वीपर गिरा उससे रसोनकन्द (लशुन) उत्पन्न हुआ। क्योंकि अम्लरससे रहित यह कन्द पांच रसोंवाला होता है इसलिये इसको द्रव्यगुणके जाननेवालोंने रसोन कहा है । रसोन—मूलमें कटु, पत्रोंमें तिक्त, नालमें कषाय, नालके अग्रभागमें लवण और बीजोंमें मधुर रसवाला, इसके

तत्त्वको जाननेवालोंने कहा है । लशुन वीर्यको पुष्ट करनेवाला, शरीरको पुष्ट करनेवाला चिकना, गरम, पाचन, दस्तावर, रस और पाकमें कटु, तीक्ष्ण और मधुर है, बल वर्णके करनेवाला, मेधावर्धक, नेत्रोंको हितकारी और रसायन है । हृद्रोग, जीर्णज्वर, कुक्षिशूल, विबन्ध, गुल्म, अरुचि, कास, सूजन, बवासीर, कुष्ठ, अग्निकी मन्दता, कृमि, वायु, श्वास और कफको हरनेवाला है ॥ २१९–२२५ ॥

पलाण्डुः ।

पलाण्डुर्यवनेष्टश्च दुर्गन्धो मुखदूषकः ।
पलाण्डुस्तु गुणैर्ज्ञेयो रसोनसदृशो बुधैः ॥ २२६ ॥
स्वादुः पाके रसेनोष्णः कफकृन्नातिपित्तलः ।
हरते केवलं वातं बलवीर्य्यकरो गुरुः ॥ २२७ ॥

पलाण्डु, यवनेष्ट, दुर्गन्ध, मुखदूषक यह प्याजके नाम हैं । इसे हिन्दीमें पियाज, फारसीमें प्याज आर अंग्रेजीमें Onion bulb कहते हैं ।

पियाज (पलाण्डु) गुणोंमें रसोनके समान है । पाकमें मधुर, रसमें उष्ण, कफकारक, किञ्चित् पित्तकारक, केवल वातनाशक, बलवीर्यवर्धक और भारी है ॥ २२६ ॥ २२७ ॥

भल्लातकम् ।

भल्लातकं त्रिषु प्रोक्तमरुष्कोरुष्करोऽग्निकः ।
तथैवाग्निमुखी भल्ली वीरवृक्षश्च शोफकृत् ॥२२८॥
भल्लातकफलं पक्वं स्वादु पाकरसं लघु ।
कषायं पाचनं स्निग्धं तीक्ष्णोष्णं छेदि भेदनम् २२९॥
मेध्यं वह्निकरं हंति कफवातव्रणोदरम् ।
कुष्ठार्शोग्रहणीगुल्मशोथानाहज्वरक्रिमीन् ॥ २३० ॥

तन्मज्जा मधुरा वृष्या बृंहणी वातपित्तहा ।
वृंतमारुष्करं स्वादु पित्तघ्नं केश्यमग्निकृत् ॥२३१॥
भल्लातकः कषायोष्णः शुक्लो मधुरो लघुः ।
वातश्लेष्मोदरानाहकुष्ठार्शोग्रहणीगदान् ॥ २३२ ॥
हंति गुल्मज्वरश्वित्रवह्निमांद्यकृमिव्रणान् ।

भल्लातक शब्द त्रिलिङ्ग वाचक है । अरुष्क, अरुष्कर, अग्निक, अग्निमुखी, भल्ली, वीरवृक्ष और शोफकृत् यह भिलावेके नाम है । इसे हिन्दीमें भिलावा, फ़ारसीमें बिलादुर और अंग्रेजीमें rarkingnut कहते हैं । भिलावेके पक्के फल रस और पाकमें मधुर, हलके, कसैले, पाचन, स्निग्ध, तीक्ष्ण, उष्ण, छेदी, भेदनकर्ता, बुद्धिवर्धक, और अग्निकारक हैं । तथा कफ, वात, व्रण, उदर-रोग, कुष्ठ, बवासीर, ग्रहणी, गुल्म, शोथ, अफारा, ज्वर और कृमियोंको नाश करते हैं । भिलावेके फलोंकी मज्जा—मधुर, वीर्यवर्धक, शरीरपुष्टिकारक और वात पित्तके हरनेवाली है । भिलावेके फलोंकी डण्डियें मधुर, पित्तनाशक, केशों और जठराग्निको बढानेवाली होती हैं । भिलावे—कैसेले, गरम, वीर्य-वर्धक, मधुर और हलके हैं । तथा वात, कफ, उदररोग, अफारा, कुष्ठ, बवासीर, गुल्म, ज्वर, श्वित्रकुष्ठ, मन्दाग्नी, कृमि और व्रणोंको दूर करनेवाले हैं । भिलावेका विधिरहित उपयोग करनेसे शरीरमें खुजली और सूजन आदि दारुण विकार उत्पन्न हो जाते हैं । दही, नारियलकी गिरी और तिलोंका लेप करनेसे और खानेसे भिलावेकी खुजली तथा विष शान्त होता है ॥ २२८–२३२ ॥

भङ्गा ।

भङ्गा गञ्जा मातुलानी मादनी विजया जया॥२३३॥
भङ्गा कफहरी तिक्ता ग्राहणी पाचनी लघुः ।
तीक्ष्णोष्णा पित्तला मोहमदवाग्वह्निवर्धनी॥२३४॥

भंगा, गंजा, मातुलानी, मादनी, विजया और जया यह भांगके नाम

हैं। फारसीमें कनक तथा अंग्रेजीमें mnlian Hded कहते हैं । भांग कफको हरनेवाली, तिक्त, ग्राही, पाचन करनेवाली, हलकी, तीक्ष्ण, उष्ण, पित्तकारक और मोह, मद, वाणी और अग्निको बढानेवाली है ॥ २३३ ॥ २३४ ॥

खसतिलः ।

तिलभेदः खसतिलः खाखसश्चापि संस्मृतः ।
स्यात्खाखसफलोद्भूतं वल्कलं शीतलं लघु ॥ २३५ ॥
ग्राहि तिक्तं कषायं च वातकृत्कफकासहृत् ।
धातूनां शोषकं रूक्षं मदकृद्वाग्विवर्द्धनम् ॥ २३६ ॥
मुहुर्मोहकरं रुच्यं सेवनात्पुंस्त्वनाशनम् ।

तिलभेद, खसतिल और खाखस यह पोस्तके नाम हैं । इसे हिन्दीमें पोस्तदानेके डोडे अथवा खसखस, फारसीमें कोकनार तथा अंग्रेजीमें Poppy Seed कहते हैं ।

खसखसका छिलका शीतल, हलका, ग्राही, तिक्त, कसैला, वातकारक, कफ और खांसीके हरनेवाला, धातुओंको सुखानेवाला, रूखा, मदकारक, वाणीको बढानेवाला, बारंबार मोहकारक, अरुचिकारक तथा सेवन करनेसे पुरुषत्वको नष्ट करनेवाला है । खसखसके डोडे पर पछने लगाकर जो दूधसा लगाकर सूखता है वह अफीम कहाती है ॥ २३५ ॥ २३६ ॥

अहिफेनकम् ।

उक्तं खसफलं क्षीरमाफूकमहिफेनकम् ॥ २३७ ॥
आफूकं शोषणं ग्राहि श्लेष्मघ्नं वातपित्तलम् ।
तथा खसफलोद्भूतवल्कलप्राग्यमित्यपि ॥ २३८ ॥

खसफल, क्षीर, आफूक और अहिफेनक यह अफीमके नाम हैं । इसे हिन्दीमें अफीम, फारसीमें अफयून और अंग्रेजीमें opium कहते हैं ।

अफीम—शोषण करनेवाली, ग्राही, कफनाशक, वात पित्तकारक और जो पोस्तकी छालके गुण है वह भी प्रायः इसमें है ॥ २३७ ॥ २३८ ॥

खसबीजानि ।

उच्यंते खसबीजानि ते खाखसतिला अपि ।
खसबीजानि बल्यानि वृष्याणि सुगुरूणि च २३९
शमयंति कफं तानि जनयंति समीरणम् ।

खसबीज और खाखसतिला यह खसखसके नाम है । खसबीज—बलकारक, वीर्यवर्धक, अत्यंत भारी, कफको शमन करनेवाले तथा वायुको उत्पन्न करनेवाले है ॥ २३९ ॥

सैन्धवम् ।

सैन्धवोऽस्त्री शीतशिवं पाणिमंथं च सिंधुजम् २४०
सैंधवं लवणं स्वादु दीपनं पाचनं लघु ।
स्निग्धं रुच्यं हिमं वृष्यं सूक्ष्मं नेत्र्यं त्रिदोषहृत् ॥ २४१

सैंधव शब्द स्त्रीलिंगमें नही होता । सैंधव, शीतशिव, पाणिमन्थ और सिन्धु यह सैंधव नमकके नाम है । इसको हिन्दीमें सेंधा नमक, फारसीमें नमकसंग, अंग्रेजीमें Cloride of Sodium कहते हैं ।

सैंधव नमक—स्वादु, दीपन करनेवाला, पाचक, हलका, स्निग्ध, रुचिकारक, शीतल, वीर्यवर्धक, सूक्ष्म, नेत्रोंको हितकर तथा त्रिदोषको नष्ट करनेवाला है ॥ २४० ॥ २४१ ॥

गडाख्यम् ।

शाकंभरीयं कथितं गडाख्यं रोमकं तथा ।
गडाख्यं लघु वातघ्नमत्युष्णं भेदि पित्तलम् २४२
तीक्ष्णोष्णं चापि सूक्ष्मं चाभिष्यंदि कटुपाकि च ।

शाकंभरी, गडाख्या और रोमक यह सांभर नूनके नाम है । इसे हिन्दीमें सांभर नून, फारसीमें मिलहे अवकीर कहते है ।

सांभर नमक—हलका, वातनाशक, अत्यन्त उष्ण, दस्तावर, पित्तवर्धक, तीक्ष्ण, उष्ण, सूक्ष्म, अभिष्यन्दी और कटुपाकी है। यह सांभरलवण नामसे प्रसिद्ध है ॥ २४२ ॥

सामुद्रम्।

सामुद्रं यत्तु लवणमक्षीवं वशिरं च तत् ॥ २४३ ॥
सामुद्रं वै सागरजं लवणोदधिसंभवम्।
सामुद्रं मधुरं पाके सतिक्तं मधुरं गुरु ॥ २४४ ॥
नात्युष्णं दीपनं भेदि सक्षारमविदाहि च।
श्लेष्मलं वातनुत्तिक्तमरूक्षं नाति शीतलम् ॥ २४५ ॥

समुद्रलवण, अक्षीव, वशिर, सामुद्रज, सागरज, उदधिसम्भव यह समुद्रलवणके नाम हैं।

सामुद्र नमक—पाकमें मधुर, किंचित् तिक्त, मधुर, भारी, किञ्चित् उष्ण, दीपन, भेदनकर्त्ता, क्षारयुक्त, अविदाही, कफकारक, वातनाशक, तिक्त, स्निग्ध और किंचित् शीतल है ॥ २४३–२४५ ॥

विडम्।

विडं पाक्यं च कतकं तथा द्राविडमासुरम्।
विडं सक्षारमूर्द्ध्वाधःकफवातानुलोमनम् ॥ २४६ ॥
(ऊर्द्ध्वं कफमधो वातं संचारयेदित्यर्थः।)
दीपनं लघु तीक्ष्णोष्णं सूक्ष्मं रुच्यं व्ययायि च।
विबंधानाहविष्टंभोदर्दगौरवशूलनुत् ॥ २४७ ॥

विड, पाक्य, कतक, द्राविड और आसुर यह विड़ नमकके नाम है। विड़नमक क्षारयुक्त है। ऊपर और नीचेके मार्गोंसे कफ और वायुके अनु-लोमन करनेवाला है अर्थात् ऊर्ध्व मार्गसे कफ और अधो मार्गसे पवनको अनुलोमन करके निकालता है। विड़नमक अग्निदीपनकर्ता, हलका, तीक्ष्ण,

उष्ण, रूखा, रुचिकारक, व्यवायी, विबंधनाशक तथा आनाह, विष्टम्भ, उदर्द, शरीरका भारीपन और शूलको नाश करता है ॥ २४६ ॥ २४७ ॥

सौवर्चलम् ।

सौवर्चलं स्याद्रुचकमक्षपाकं च धातुमत् ॥ २४८ ॥
रुचकं रोचनं भेदि दीपनं पाचनं परम् ।
सुस्नेहं वातनुन्नातिपित्तलं विशदं लघु ॥ २४९ ॥

सौवर्चल, रुचक, अक्षपाक और धातुमत् यह सञ्चर नमकके नाम हैं। इसे हिन्दीमें काला नमक, फारसीमें नमकस्याह तथा अंग्रेजीमें Black Salt कहते हैं इसको काला नमक भी कहते हैं।

सञ्चर नमक—रुचिकारक, दस्तावर, अग्निदीपक, पाचन करनेवाला, स्निग्ध, वातनाशक, पित्तको किञ्चित् बढानेवाला, विशद और हल्का है ॥ २४८ ॥ २४९ ॥

औद्भिदम् ।

औद्भिदं पांशु लवणं यज्जातं भूमितः स्वयम् ।
क्षारं गुरु कटु स्निग्धं शीतलं वातनाशनम् ॥ २५० ॥

औद्भिद और पांशु लवण यह खारी नोनके नाम हैं। यह नमक भूमिसे स्वयं ही उत्पन्न होता है।

पांशु लवण—क्षार, भारी, कटु, स्निग्ध, शीतल और वातनाशक है॥ २५० ॥

चणकाम्लकम् ।

चणकाम्लकमत्युष्णं दीपनं दंतहर्षणम् ।
लवणाम्लरसं रुच्यं शूलाजीर्णविबंधनुत् ॥ २५१ ॥

चणकाम्लक (चनेका खार) बहुत उष्ण, दीपन, दन्तहर्षकर्ता, नमकीन और खट्टे रसवाला है, रुचिकारक, शूल, अजीर्ण और विबन्धको नाश करनेवाला है ॥ २५१ ॥

यवक्षारा-स्वर्जिका-सुवर्चिकाश्च।

पाक्यः क्षारो यवक्षारो यावशूको यवाग्रजः।
स्वर्जिकापि स्मृतः क्षारः कापोतः सुखवर्चका २५२

पाक्य, क्षार, यवक्षार, यवाग्रज और यावशूक यह जवाखारके नाम हैं। इसे हिन्दीमें जौखार, अंग्रेजीमें Carbonate of Potash कहते हैं।

स्वर्जिका, सर्जीखार, कपोत और सुखवर्चका यह सज्जीखारके नाम हैं। इसे हिन्दीमें सज्जीखार, फारसीमें सज्जार कलिया और अंगरेजीमें Carbonate o- Soda कहते हैं ॥२५२॥

कथितः स्वर्जिकाभेदो विशेषज्ञैः सुवर्चका।
निहंतिशूलवातामश्लेष्मश्वासगलामयान् ॥२५३॥
पांड्वर्शोग्रहणीगुल्मानाहप्लीहहृदामयान्।
स्वर्जिकाल्पगुणा तस्माद्विशेषाद्गुल्मशूलहृत् २५४
सुवर्चका स्वर्जिकावद्बोद्धव्या गुणतो जनैः।

सर्जीखारका भेद एक सुवर्चिका या लोटासज्जी नामसे प्रसिद्ध है। इनमें जौखार—शूल, वातविकार, आमाविकार, कफ, श्वास, गलेके रोग, पाण्डुरोग, ववासीर, ग्रहणी, गुल्म, अफारा, प्लीहा और हृदयके रोगोंको दूर करता है। सज्जीखार जौखारसे न्यूनगुणोंवाला है। किन्तु गुल्म और शूल-को विशेषरूपसे दूर करता है। सुवर्चिका (लोटासज्जी) भी सज्जीखार-के समान ही गुणवाली है ॥ २५३ ॥ २५४ ॥

सौभाग्यम्।

सौभाग्यं टंकणं क्षारं धातुद्रावकमुच्यते ॥ २५५ ॥
टंकणं वह्निकृद्रूक्षं कफहृद्वातपित्तकृत्।

सौभाग्य, टंकण, क्षार और धातुद्रावक यह सुहागेके नाम हैं। इसे हिंदीमें सुहागा, फारसीमें तीगार और अंग्रेजीमें Borax कहते हैं।

सुहागा—वह्निवर्द्धक, रूक्ष, कफनाशक और वातपित्तके करनेवाला है ॥ २५५ ॥

। क्षारद्वयं क्षारत्रयं च ।

स्वर्जिका यावशूकश्च क्षारद्वयमुदाहृतम् ॥ २५६ ॥
टंकणेन युतं तत्तु क्षारत्रयमुदीरितम् ।
मिलितस्तूक्तगुणवद्विशेषाद्गुल्महृत्परम् ॥ २५७ ॥

सज्जीखार और जौखारके मिलानेसे क्षारद्वय कहा जाता है । यदि इनमें सुहागा मिला दे तो क्षारत्रय बन जाता है । तीनों क्षार मिले हुए उपरोक्त गुणोंको विशेष रूपसे करते है । और गुल्मको तो विशेष-रूपसे नष्ट करनेवाले हो जाते हैं ॥ २५६ ॥ २५७ ॥

। क्षाराष्टकम् ।

पलाशवज्रिशिखरिचिंचार्कतिलनालजः ।
यवजः स्वर्जिका चेति क्षाराष्टकमुदाहृतम् ॥२५८॥
क्षारा एतेऽग्निना तुल्या गुल्मशूलहरा भृशम् ।

पलाश (ढाक), थोहर, अपामार्ग (पुठकण्डा), इमली, आक और तिल, नाल इन ६ द्रव्योंका अलग अलग क्षार बनाकर इनहीमें जौखार और सज्जीखार मिला दिया जाय तो इसको क्षाराष्टक कहते है । यह आठ क्षार मिलकर अग्निके तुल्य हो जाते है तथा गुल्म और शूलको विशेष-रूपसे नष्ट करते हैं ॥ २५८ ॥

चुक्रम् ।

चुक्रं सहस्रवेधि स्याद्रसाम्लं चुक्रमित्यपि ॥२५९॥
चुक्रमत्यम्लमुष्णं च दीपनं पाचनं परम् ।

शूलगुल्मविबन्धामवातश्लेष्महरं परम् ॥ २६० ॥
वमितृष्णास्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमांद्यहृत् ।

चुक्र, सहस्रवेधी, रसाम्ल और शुक्त यह खट्टे चूकके नाम हैं ।

चुक्र–अत्यन्त खट्टा, उष्ण, दीपन और पाचन है तथा शूल, गुल्म, विबन्ध, आमवात, कफ, वमन, प्यास, मुखकी विरसता, हृत्पीडा और मंदाग्निको दूर करनेवाला है ॥ २५९ ॥ २६० ॥

इति श्रीविद्यालंकार–शिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृतशिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ हरीतक्यादिवर्गः ॥ १ ॥

कर्पूरादिवर्गः ।



कर्पूरः ।

पुंसि क्लीबे च कर्पूरो हिमाह्वो हिमबालकः ।
घनसारश्चन्द्रसंज्ञो हिमनामापि स स्मृतः ॥ १ ॥
कर्पूरः शीतलो वृष्यश्चक्षुष्यो लेखनो लघुः ।
सुरभिर्मधुरस्तिक्तः कफपित्तविषापहः ॥ २ ॥
दाहतृष्णास्यवैरस्यमेदोदौर्गन्ध्यनाशनः ।
कर्पूरो द्विविधः प्रोक्तः पक्वापक्वप्रभेदतः ॥ ३ ॥
पक्वात्कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्परम् ।

कर्पूर शब्द पुलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग दोनोंमें होता है । कर्पूर, सिताभ्र हिमाह्व (हिमके सम्पूर्ण नामोंवाला), हिमबालक, घनसार यह कर्पूरके नाम हैं तथा

चन्द्रसाके सम्पूर्ण नामोंसे भी पुकारा जाता है । इसे हिन्दीमें कपूर, फारसीमें कफूर और अंग्रेजीमें Complior कहते हैं ।

कपूर—शीतल, वीर्यवर्धक, नेत्रोंके लिये हितकारी, लेखन, हलका, सुगन्धयुक्त, मधुर, तिक्त तथा कफ, पित्त, विष, दाह, तृष्णा, मुखकी विरसता, मेद और दुर्गंधको नष्ट करता है । कपूर पक्क और अपक्क भेदसे दो प्रकारका है; अपक्क कपूर पक्क कपूरसे अधिक गुणोंवाला है ॥ १–३ ॥

चीनसंज्ञः ।

चीनसंज्ञस्तु कर्पूरः कफक्षयकरः स्मृतः ॥ ४ ॥
कुष्ठकण्डूवमिहरस्तथा तिक्तरसश्च सः ।

चीनसंज्ञक कर्पूर (चीनियाँ कपूर)—तिक्त रसवाला तथा कफ, कोढ, कण्डु (खुजली), वमन इनको नष्ट करता है ॥ ४ ॥

कस्तूरी ।

मृगनाभिर्मृगमदः कथितस्तु सहस्रभित् ॥ ५ ॥
कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा स्मृता ।
कामरूपोद्भवा कृष्णा नैपाली नीलवर्णयुक् ॥ ६ ॥
काश्मीरे कपिलच्छाया कस्तूरी त्रिविधा स्मृता ।
कामरूपोद्भवा श्रेष्ठा नैपाली मध्यमा भवेत् ॥ ७॥
काश्मीरदेशसंभूता कस्तूरी ह्यधमा स्मृता ।
कस्तूरिका कटुस्तिक्ता क्षारोष्णा शुक्रला गुरुः ॥८॥
कफवातविषच्छर्दिशीतदौर्गन्ध्यदोषहृत् ।

मृगनाभि, मृगमद, सहस्रभित्, कस्तूरिका, वेधमुख्या यह कस्तूरिकाके संस्कृत नाम हैं। इसे हिन्दीमें कस्तूरी, फारसीमें मुश्क और अंग्रेजीमें Musk कहते हैं । कामरूप देशमें उत्पन्न हुई कस्तूरी कालेवर्णकी, नैपाल देशमें उत्पन्न हुई नीलवर्ण युक्त तथा काश्मीर देशमें उत्पन्न हुई भूरे रंगकी होती है ।

इस प्रकार कस्तूरी तीन प्रकारकी है। कामरूप देशकी कस्तूरी उत्तम, नैपालकी मध्यम तथा काश्मीरकी हीन गुणोंवाली है।

कस्तूरिका—कटु, तिक्त, खारी, गरम, वीर्यवर्धक, भारी और कफ, वात, विष, वमन, शीत तथा दुर्गन्धताको हरनेवाली है॥ ५-८॥

लताकस्तूरिका।

लता कस्तूरिका तिक्ता स्वाद्वी वृष्या हिमा लघुः॥ ९॥
चक्षुष्या छेदनी श्लेष्मतृष्णावस्त्यास्यरोगहृत्।

लता, कस्तूरी, तिक्त, मधुर, वीर्यवर्धक, शीतल, हलकी, नेत्रोंको हितकर, छेदन और कफ, तृष्णा तथा वस्ति (मसाना) और मुखके रोगोंका नाश करती है॥ ९॥

गन्धमार्जारवीर्य्यम्।

गन्धमार्जारवीर्य्यन्तु वीर्य्यकृत्कफवातहृत्॥ १०॥
कण्डुकुष्ठहरं नेत्र्यं सुगन्धं स्वेदगन्धनुत्।

गन्धमार्जारवीर्य (जवादिकस्तूरी)—वीर्यकारक, नेत्रोंको हितकारी, सुगन्धयुक्त तथा कफ, वात, कण्डु, कुष्ठ और स्वेदकी गन्धको नष्ट करनेवाली है॥१०॥

चन्दनम्।

श्रीखण्डं चन्दनं न स्त्री भद्रश्रीस्तैलपर्णिका॥११॥
गन्धसारो मलयजस्तथा चन्द्रद्युतिश्च सः।
स्वादे तिक्तं कषे पीतं छेदे रक्तं तनौ सितम्॥१२॥
ग्रन्थिकोटरसंयुक्तं चन्दनं श्रेष्ठमुच्यते।
चन्दनं शीतलं रूक्षं तिक्तमाह्लादनं लघु॥ १३॥
श्रमशोषविषश्लेष्मतृष्णापित्तास्रदाहनुत्।

श्रीखंड और चन्दन स्त्रीलिङ्गमें नहीं होते। श्रीखंड, चन्दन, भद्रश्री, तैलपर्णिका, गंधसार, मलयज तथा चन्द्रद्युति यह चन्दनके संस्कृत नाम हैं।

हिन्दीमें इसे सफेद चन्दन, फारसीमें सपेद सन्दल तथा अंग्रेजीमें Sandal wood कहते है ।

उत्तम चन्दन वह होता है जो स्वादसे तिक्त हो, घिसनेपर पीत निकले, छेदन करनेपर लाल निकले, ऊपरसे सफेद हो तथा ग्रंथि और कोटरोंयुक्त हो । चन्दन–शीतल, रूक्ष, तिक्त, आह्लाद करनेवाला, हलका तथा श्रम, शोष, विष, कफ, तृष्णा, पित्त तथा रुधिरके विकारोंको नष्ट करता है ॥ ११–१३ ॥

हरिचन्दनम् ।

कलम्बकं तु कालीयं पीताभं हरिचन्दनम् ॥ १४ ॥
हरिप्रियं कालसारं तथा कालानुसार्य्यकम् ।
कालीयकं रक्तगुणं विशेषाद्व्यंगनाशनम् ॥ १५ ॥

कलम्बक, कालीय, पीताभ, हरिचन्दन, हरिप्रिय, कालसार तथा कालानुसार्य्यक यह पीत चन्दनके नाम है । पीत चन्दनके गुण रक्तचन्दनके ही समान है, किन्तु यह विशेष करके व्यंग (छाई) को नष्ट करता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

रक्तचन्दनम् ।

रक्तचन्दनमाख्यातं रक्तांगं क्षुद्रचन्दनम् ।
तिलपर्णी रक्तसारं तत्प्रवालफलं स्मृतम् ॥ १६ ॥
रक्तं शीतं गुरु स्वादुच्छर्दितृष्णास्रपित्तहृत् ।
तिक्तं नेत्रहितं वृष्यं ज्वरव्रणविषापहम् ॥ १७ ॥

रक्तचन्दन, रक्तांग, क्षुद्रचन्दन, तिलपर्णी, रक्तसार तथा प्रवालफल यह रक्तचन्दनके संस्कृत नाम है । हिन्दीमें इसे लालचन्दन, फारसीमें संदलेसुरख और अंग्रेजीमें इसे Red Sandel wood कहते हैं ।

लालचन्दन–शीतल, भारी, मधुर, तिक्त, नेत्रहितकारी, वीर्यवर्द्धक तथा

वमन, तृष्णा, रक्तविकार, पित्त, ज्वर, व्रण, विष, इनका अपहरण करता है ॥ १६ ॥ १७ ॥

पतंगम् ।

पतंगं रक्तसारं च सुरंगं रंजनं तथा ।
पटरंजकमाख्यातं पत्तूरं च कुचन्दनम् ॥ १८ ॥
पतंगं मधुरं शीतं पित्तश्लेष्मव्रणास्रनुत् ।
हरिचन्दनवद्वेद्यं विशेषाद्दाहनाशनम् ॥ १९ ॥
चन्दनानि तु सर्वाणि सदृशानि रसादिभिः ।
गन्धे न तु विशेषोऽस्ति पूर्वं श्रेष्ठतमं गुणैः ॥२० ॥

पतंग, रक्तसार, सुरंग, रंजन, पटरंजक, पत्तूर और कुचन्दन यह पतंगके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें पतंग अथवा पतंगवृक्ष, फारसीमें बकम, अंग्रेजीमें Sappan wood कहते हैं ।

पतंग–मधुर, शीतल तथा पित्त, कफ, व्रण और रक्तविकारोंको दूर करता है । इसमें पीत चन्दनके समान ही गुण है, परंतु यह दाहको विशेष करके नष्ट करता है । रसादिकमें तो सब चन्दन समान ही है, केवल गन्धका ही भेद है । उन सबमें प्रथम (श्वेत चन्दन) गुणोंमें सबसे श्रेष्ठ है ॥ १८–२० ॥

अगुरु कृष्णागुरु अगुरुसत्त्वं च ।

अगुरु प्रवरं लोहं राजार्हं योगजं तथा ।
वशिकं कृमिजं चापि कृमिजग्धमनार्य्यकम् ॥२१॥
अगुरूष्णं कटु त्वच्यं तिक्तं तीक्ष्णं च पित्तलम् ।
लघुकर्णाक्षिरोगघ्नं शीतवातकफप्रणुत् ॥ २२ ॥

कृष्णं गुणाधिकं तत्तु लोहवद्वारि मज्जति ।
अगुरुप्रभवः स्नेहः कृष्णागुरुसमः स्मृतः ॥ २३ ॥

अगुरु, प्रवर, लोह, राजार्ह, योगज, वाशिक, क्रमिज, क्रमिजग्ध तथा अनार्यक यह अगुरुके संस्कृत नाम हैं । इसको हिन्दीमें अगर अथवा काली अगर, फारसीमें कश वेबवा और अंग्रेजीमें Eagal wood कहते ह ।

अगर—गरम, कटु, त्वचाको उत्तम करनेवाला, तिक्त, तीक्ष्ण, पित्तवर्धक, हल्की और कर्णरोग, अक्षिरोग, शीत, वात तथा कफको दूर करती है । काले रंगकी अगर अधिक गुणोंवाली होती है और वह जलमें लोहेकी तरह डूब जाती है । अगुरुसे उत्पन्न हुए तैलमें भी काली अगरके समान गुण हैं ॥ २१–२३ ॥

देवदारु ।

देवदारु स्मृतं दारु भद्रदार्विन्द्रदारु च ।
मस्तदारु द्रुकिलिमं किलिमं सुरभूरुहः ॥ २४ ॥
देवदारु लघु स्निग्धं तिक्तोष्णं कटुपाकि च ।
विबन्धाध्मानशोथामतन्द्राहिक्काज्वरास्रजित् ॥ २५ ॥
प्रमेहपीनसश्लेष्मकासकण्डूसमीरनुत् ।

देवदारु, दारु, भद्रदारु, इन्द्रदारु, मस्तदारु, द्रुकिलिम, किलिम तथा सुरभूरुह यह देवदारुके संस्कृत नाम हैं । हिन्दीमें इसे देवदारु, फारसीमें देवदार तथा अंग्रेजीमें Isua Caprredea कहते हैं ।

देवदारु—हल्का, स्निग्ध, तिक्त, गरम, पाकमें कटु और मलके बंध, आध्मान, शोथ, आम, तन्द्रा, हिचकी, ज्वर, रक्तविकार, प्रमेह, पीनस, कफ, खांसी, कण्डु, (खुजली) तथा वायुको नष्ट करता है ॥ २४ ॥ २५ ॥

सरलः ।

सरलः पीतवृक्षः स्यात्तथा सुरभिदारुकः ॥ २६ ॥
सरलो मधुरस्तिक्तः कटुपाकरसो लघुः ।

स्निग्धोष्णः कर्णकण्ठाक्षिरोगरक्षोहरः स्मृतः ॥२७॥
कफानिलस्वेददाहकासमूर्च्छाव्रणापहः ।

सरल, पीतवृक्ष, सुरभिदारुक यह सरलके संस्कृत नाम हैं । इसे हिंदीमें धूपवृक्ष तथा अंग्रेजीमें Long Leved pine कहते हैं ।

सरल—मधुर, तिक्त, पाक और रसमें कटु, हल्की, स्निग्ध, गरम और कर्णरोग, अक्षिरोग, कण्ठरोग, भूतादिकोंकी पीडा, कफ, वायु, स्वेद, दाह, कास, मूर्च्छा तथा व्रणको नष्ट करता है ॥ २६ ॥ २७ ॥

तगरम् ।

कालानुसार्य्यं तगरं कुटिलं नहुषं नतम् ॥ २८ ॥
अपरं पिण्डतगरं दण्डहस्तं च बर्हिणम् ।
तगरद्वयमुष्णं स्यात्स्वादु स्निग्धं लघु स्मृतम् २९
विषापस्मारशूलाक्षिरोगदोषत्रयापहम् ।

कालानुसार्य, तगर, कुटिल, नहुष तथा नत यह प्रथम प्रकारकी तगरके नाम हैं । पिण्डतगर, दण्डहस्त तथा बर्हिण यह दूसरी तगरके नाम हैं । तगरको हिन्दीमें तगर कहते हैं ।

दोनों प्रकारकी तगर—उष्ण, मधुर, स्निग्ध, हल्की और विष, अपस्मार शूल, अक्षिरोग तथा त्रिदोष इनको नष्ट करते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

पद्मकम् ।

पद्मकं पद्मगन्धि स्यात्तथा पद्माह्वयं स्मृतम् ॥३०॥
पद्मकं तुवरं तिक्तं शीतलं वातलं लघु ।
विसर्पदाहविस्फोटकुष्ठश्लेष्मास्रपित्तनुत् ॥ ३१ ॥
गर्भसंस्थापनं वृष्यं वमिव्रणतृषाभ्रमनुत् ।

पद्मक, पद्मगन्धि, पद्माह्वय यह पद्मकके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें पद्मकाष्ठ तथा पद्माख कहते हैं ।

पद्मक—कसैला, तिक्त, शीतल, वातवर्धक, हलका, गर्भको स्थापन करनेवाला, वीर्यवर्धक तथा विसर्प, दाह, विस्फोट, कुष्ठ, कफ, रक्तपित्त, वमन, व्रण और तृषाको दूर करता है ॥ ३० ॥ ३१ ॥

गुग्गुलुः ।

गुग्गुलुर्देवधूपश्च जटायुः कौशिकः पुरः ॥ ३२ ॥
कुम्भोलूखलकं क्लीबे महिषाक्षः पलङ्कषः ।
महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पद्म इत्यपि ॥ ३३ ॥
हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्चजातयः ।
भृङ्गांजनसवर्णस्तु महिषाक्ष इति स्मृतः ॥ ३४ ॥
महानीलस्तु विज्ञेयः स्वनामसमलक्षणः ।
कुमुदः कुमुदाभः स्यात् पद्मो माणिक्यसन्निभः ॥ ३५ ॥
हिरण्याख्यस्तु हेमाभः पंचानां लिङ्गमीरितम् ।
महिषाक्षो महानीलो गजेन्द्राणां हिताबुभौ ॥ ३६ ॥
हयानां कुमुदः पद्मः स्वस्त्यारोग्यकरौ परौ ।
विशेषेण मनुष्याणां कनकः परिकीर्तितः ॥ ३७ ॥
कदाचिन्महिषाक्षश्च मतः कैश्चिन्नृणामपि ।
गुग्गुलुर्विशदस्तिक्तो वीर्य्योष्णः पित्तलः सरः ॥ ३८ ॥
कषायः कटुकः पाके कटू रूक्षो लघुः परः ।
भग्नसन्धानकृद्वृष्यः सूक्ष्मस्तत्र्यो रसायनः ॥ ३९ ॥
दीपनः पिच्छिलो बल्यः कफवातव्रणापचीः ।
मेदोमेहाश्मवातांश्च क्लेदकुष्ठाममारुतान् ॥ ४० ॥
पिण्डकाग्रंथिशोफार्शोगण्डमालाकृमीञ्जयेत् ।
माधुर्य्याच्छमयेद्वातं कषायत्वाच्च पित्तहा ॥ ४१ ॥

तिक्तत्वात्कफजित्तेन गुग्गुलः सर्वदोषहा ।
स नवो बृंहणो वृष्यः पुराणस्त्वतिलेखनः ॥ ४२ ॥
स्निग्धः कांचनसंकाशः पक्वजम्बूफलोपमः ।
नूतनो गुग्गुलुः प्रोक्तः सुगन्धिर्यस्तु पिच्छिलः ॥ ४३ ॥
शुष्को दुर्गंधकश्चैव त्यक्तप्रकृतिवर्णकः ।
पुराणः स तु विज्ञेयो गुग्गुलुर्वीर्य्यवर्जितः ॥ ४४ ॥
अम्लं तीक्ष्णमजीर्णं च व्यवायं श्रममातपम् ।
मद्यं रोषं त्यजेत्सम्यग्गुणार्थी पुरसेवकः ॥ ४५ ॥

गुग्गुल, देवधूप, जटायु, कौशिक, पुर, कुम्भ, उलूखलक, महिषाक्ष और पलंकषा यह गुग्गुलके संस्कृत नाम हैं । उलूखलक शब्द नपुंसक लिंगमें ही होता है । गुग्गुलको हिन्दीमें गुग्गुल, फारसीमें बोराजहुदान और अंग्रेजीमें Indian Dellum कहते हैं ।

महिषाक्ष, महानील, कुमुद, पद्म तथा हिरण्य यह गुग्गुलके पांच भेद है । मृगके नेत्रके समान वर्णवाला महिषाक्ष गुग्गुल होता है, जो गुग्गुल अपने नामके अनुसार अत्यंत नीला हो उसे महानील कहते है । जिस गुग्गुलका कुमुद समान वर्ण हो उसे कुमुद कहते है । जिस गुग्गुलकी माणिक्यके समान कान्ति हो उसे पद्म कहते हैं तथा जिसका वर्ण स्वर्णके समान हो वह हिरण्यगुग्गुल जानना । यह पांचोंके लक्षण हैं । महिषाक्ष और महानील हाथियोंके लिये हितकारी हैं, पद्म और कुमुद यह दोनों गुग्गुल अश्वोंके लिये लाभदायक हैं, और मनुष्योंके लिये विशेष करके हिरण्यगुग्गुल हितकर है । कुछ मनुष्योंका मत है कि हिरण्याक्षगुग्गुल मनुष्योंको भी दिया जा सकता है । गुग्गुल—विशद, तिक्त, उष्णवीर्य, पित्तकारक, दस्तावर, कसैला, कटु, पाकमें कटु, रूक्ष, हलका, टूटे हुएको जोडनेवाला, वीर्यवर्धक, सूक्ष्म, स्वरकारक, आयुको बढानेवाला, दीपन, चिकना, बलकारक तथा कफ, वात, व्रण, अपची, मेद, मेह, पथरी, वात, क्लेद, कुष्ठ, आम-

वात, पिण्डक, ग्रन्थि, शोफ, बवासीर, गंडमाला तथा कृमियोंको हरता है। गुग्गुल–मधुर होनेसे वातको, कसैला होनेसे पित्तको तथा तिक्त होनेसे कफको नष्ट करता है, इस प्रकार गुग्गुल त्रिदोषनाशक है। नवीन गुग्गुल पुष्टिकारक तथा वीर्यको बढानेवाला है, पुराना गुग्गुल अत्यन्त लेखन है। जो गुग्गुल स्निग्ध हो, स्वर्णके समान हो, पके हुए जम्बु फलके सदृश हो तथा सुगन्धित और पिच्छिल हो वह नया (नवीन) होता है। जो गूगल सूखा दुर्गन्धियुक्त तथा जिसने अपना स्वाभाविक वर्ण छोड दिया हो, वह पुराना होता है तथा वह शक्तिरहित होता है।

लाभकी इच्छा करनेवाले गूगलके खानेवालेको अम्ल, तीक्ष्ण तथा अजीर्ण करनेवाले पदार्थ तथा व्यवाय, श्रम और गरमी, मद्य तथा क्रोध इनका त्याग कर देना चाहिये ॥ ३२–४५ ॥

श्रीवासः ।

श्रीवासः सरलस्रावः श्रीवेष्टो यक्षधूपकः ।
श्रीवासो मधुरस्तिक्तः स्निग्धोष्णस्तुवरः सरः॥४६॥
पित्तलो वातमूर्धाक्षिस्वररोगक्षयापहः ।
रक्षोघ्नः स्वेददौर्गन्ध्ययूकाकण्डूव्रणप्रणुत् ॥ ४७ ॥

श्रीवास, सरलस्राव, श्रीवेष्ट, यक्षधूपक यह श्रीवासके संस्कृत नाम है। हिन्दीमें इसे गन्धपिरोजा तथा सरलका गोन्द, फारसीमें सन्दरुष काईरुबा और अंग्रेजीमें Gumcopal कहते है।

श्रीवास–मधुर, तिक्त, स्निग्ध, उष्ण, कसैला, दस्तावर, पित्तवर्धक और वात, शिरोरोग, अक्षिरोग, स्वररोग, क्षय, राक्षसकी पीडा, स्वेद, दुर्गन्धता, यूका (जूं), खुजली तथा व्रण इनको नष्ट करता है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

रालः ।

रालस्तु शालनिर्यासः तथा सर्जरसः स्मृतः ।
देवधूपो यक्षधूपस्तथा सर्वरसश्च सः ॥ ४८ ॥

रालो हिमो गुरुस्तिक्तः कषायो ग्राहको हरेत् ।
दोषास्रस्वेदवीसर्पज्वरव्रणविपादिकाः ॥ ४९ ॥
ग्रहभग्नास्थिदग्धामशूलातीसारनाशनः ।

राल, शालनिर्यास, सर्जरज, देवधूप, यक्षधूप और सर्वरस यह रालके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें राल, फारसीमें राल मगरबी और अंग्रेजीमें Yellow Risin कहते हैं । राल—शीतल, भारी, तिक्त, कसैली, ग्राही और दोष, रक्त-विकार, स्वेद, विसर्प, ज्वर, व्रण, विपादिका, ग्रह, भग्नास्थि, अग्निसे दग्ध, आम, शूल तथा अतिसारको नष्ट करती है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

कुंदरुः ।

कुन्दरुस्तु मुकुन्दः स्यात्सुगन्धः कुन्द इत्यपि ॥५०॥
कुन्दरुर्मधुरस्तिक्तस्तीक्ष्णस्त्वच्यः कटुर्हरेत् ।
ज्वरस्वेदग्रहालक्ष्मीमुखरोगकफानिलान् ॥ ५१ ॥

कुंदरु, मुकुंद, सुगन्ध और कुंद यह कुन्दके संस्कृत नाम है, इसे हिन्दीमें नल कुन्दरु, फारसीमें कंदुरुरूमी तथा अंग्रेजीमें Alibanam कहते हैं ।

कुंदरु—मधुर, तिक्त, तीक्ष्ण, त्वचाको हितकर, कटु तथा ज्वर, स्वेद, ग्रह, अलक्ष्मी, मुखरोग, कफ और वातको नष्ट करती है ॥ ५० ॥ ५१ ॥

सिह्लकः ।

सिह्लकस्तु तुरुष्कः स्याद्यतो यवनदेशजः ।
कपितैलं स चाख्यातं तथा च कपिनामकः ॥५२॥
सिह्लकः कटुकः स्वादुः स्निग्धोष्णः शुक्रकांतिकृत् ।
वृष्यः कण्ठ्यः स्वेदकुष्ठज्वरदाहग्रहापहः ॥ ५३ ॥

सिह्लक, तुरुष्क, यवनदेशज, कपितैल और कपिवाचक सम्पूर्ण शब्द इसके नाम हैं । इसे हिन्दीमें शिलारस, फारसीमें सरारस और अंग्रेजीमें Liquid. Amber कहते हैं ।

सिह्लक—कटु, मधुर, स्निग्ध, उष्ण, शुक्र और कांतिको वढानेवाला, वीर्य तथा कंठको वढानेवाला तथा स्वेद, कोढ, ज्वर, दाह तथा ग्रहवाधाको नष्ट करता है ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

जातीफलम् ।

जातीफलं जातिकोषं मालतीफलमित्यपि ।
जातीफलं रसे तिक्तं तिक्तोष्णं रोचनं लघु ॥ ५४ ॥
कटुकं दीपनं ग्राहि स्वर्य्यं श्लेष्मानिलापहम् ।
निहंति मुखवैरस्यं मलदौर्गन्ध्यकृष्णताः ॥ ५५ ॥
कृमिकासे वमिश्वासशोषपीनसहृद्रुजः ।

जातिफल, जातिकोष, मालतीफल यह जातिफलके संस्कृत नाम हैं। इसे हिन्दीमें जायफल, फारसीमें जोभो बुवा तथा अंग्रेजीमें Nutmeg कहते हैं।

जातिफल—रसमें तिक्त, उष्ण, रोचक, हलका, कटु, दीपन, ग्राही, स्वरकारक, श्लेष्म और वातको नष्ट करनेवाला और मुखकी विरसता, मलकी दुर्गन्धता, कृष्णता, कृमि, कास, वमन, शोष, पीनस तथा हृदयके रोगोंको दूर करता है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

जातिपत्री ।

जातीफलस्य त्वक् प्रोक्ता जातीपत्री भिषग्वरैः ५६॥
जातिपत्री लघुः स्वादुः कटूष्णा रुचिवर्णकृत् ।
कफकासवमिश्वासतृष्णाकृमिविषापहा ॥ ५७॥

श्रेष्ठ वैद्योंने जातिफलकी छालको जातिपत्री कहा है । इसको हिन्दीमें जावित्री, फारसीमें जवत्री और अंग्रेजीम Mace कहते है ।

जातिपत्री—लघु, मधुर, कटु, उष्ण, रुचिकारक, वर्णको उत्तम करनेवाली तथा कफ, कास, वमन, श्वास, प्यास, कृमि और विष इनको मारनेवाली ह ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

लवंगम् ।

लवंगं देवकुसुमं श्रीसंज्ञं श्रीप्रसूनकम् ।
लवंगं कटुकं तिक्तं लघु नेत्रहितं हिमम् ॥ ५८ ॥
दीपनं पाचनं रुच्यं कफपित्तास्रनाशनम् ।
तृष्णां छर्दिं तथाध्मानं शूलमाशु विनाशयेत् ॥ ५९ ॥
कासं श्वासं च हिक्कां च क्षयं क्षपयति ध्रुवम् ।

लवंग, देवकुसुम, श्रीसंज्ञ, श्रीप्रसूनक यह लवंगके संस्कृत नाम हैं। इसे हिन्दीमें लौंग, फारसीमें मेहक और अंग्रजीमें Cloves कहते है ।

लवंग–कटु, तिक्त, नेत्रको हितकारी, शीतल, दीपन, पाचन, रुचिकारक तथा कफ, पित्त, रुधिरविकार, प्यास, वमन, आध्मान, शूल, कास, श्वास, हिचकी तथा क्षयको दूर करता है ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

बहुला (एला)।

एला स्थूला च बहुला पृथ्वीका त्रिपुटापि च ॥ ६० ॥
भद्रैला बृहदेला च चन्द्रबाला च निष्कुटिः ।
स्थूला च कटुका पाके रसे चानिलकृल्लघुः ॥ ६१ ॥
रूक्षोष्णा श्लेष्मपित्तास्रकंडूश्वासतृषापहा ।
हृल्लासविषबस्त्यास्यशिरोरुग्वमिकासनुत् ॥ ६२ ॥

एला, स्थूला, बहुला, पृथ्वीका, त्रिकुटा, भद्रैला, बृहदेला, चन्द्रबाला और निष्कुटी यह एलाके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें बडी इलायची, फारसी-में हैलकला और अंग्रजीमें Large Cardamum कहते हैं ।

एला–पाक और रसमें कटु, वातकारक, हलकी, रूक्ष, उष्ण तथा कफ, पित्त, रक्तविकार, कण्डु (खुजली), श्वास, हृल्लास (सूखे वमन होना), विष, बस्ति (मसाना) के रोग, मुखके रोग, शिरके रोग, वमन और कासको नष्ट करनेवाली है ॥ ६०–६२ ॥

उपकुंचिका ।

सूक्ष्मोपकुञ्चिका तुत्था कोरंगी द्राविडी त्रुटिः ।
एला सूक्ष्मा कफश्वासकासार्शोमूत्रकृच्छ्रहत् ॥ ६३ ॥
रसे तु कटुका शीता लघ्वी वातहरी मता ।

सूक्ष्मा, उपकुञ्चिका, तुत्था, कोरंगी, द्राविडी, त्रुटी यह छोटी इलायची के संस्कृत नाम हैं । इसको हिन्दीमें छोटी इलायची, फारसीमें हेल तथा अंग्रजीमें Sheleser Cardamum कहते हैं ।

सूक्ष्म एला–रसमें कटु, शीतल, हलकी, वातनाशक तथा कफ, श्वास, कास, अर्श, मूत्रकृच्छ्र इनको नष्ट करती है ॥ ६३ ॥

त्वक् ।

त्वक्पत्रं च वरांगं स्याद् भृंगं चोचं मदोत्कटम् ॥ ६४ ॥
त्वचं लघूष्णं कटुकं स्वादु तिक्तं च रूक्षकम् ।
पित्तलं कफवातघ्नं कण्ड्वामारुचिनाशनम् ॥ ६५ ॥
हृद्वस्तिरोगवातार्शःकृमिपीनसशुक्रहृत् ।

त्वक्पत्र, वरांग, भृंग, चोच तथा मदोत्कट यह त्वक्पत्रके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें तेजपात और अंग्रजीमें Cinnamon कहते है ।

त्वक्पत्र–हलका, गरम, कटु, मधुर, तिक्त, रूक्ष, पित्तवर्धक, कफवातनाशक, कण्डु, आम, अरुचि, हृदयके रोग, वस्तिके रोग, वात, अर्श, कृमि, पीनस और शुक्रको नष्ट करता है ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

दारुसिता ।

त्वक्स्वाद्वीतनुत्वक् सा स्यात्तथा दारुसितामता ६६
उक्ता दारुसिता स्वाद्वी तिक्ता चानिलपित्तहृत् ।
सुरभिः शुक्रला वर्ण्या मुखशोषतृषापहा ॥ ६७ ॥

त्वक्, स्वाद्वी, तनुत्वक् तथा दारुसिता यह दालचीनीके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें दालचीनी, फारसीमें दार्चीनी तथा

अंग्रेजीमें Cinnamon Bark कहते हैं। दालचीनी–मधुर, तिक्त, वात और पित्तको हरनेवाली, सुगन्धयुक्त, वीर्यवर्धक, वर्णको उत्तम करनेवाली तथा मुखशोष और तृषाको नष्ट करनेवाली है॥ ६६ ॥ ६७ ॥

तमालपत्रम्।

पत्रं तमालपत्रं च तथा स्यात्पत्रनामकम् ।
पत्रकं मधुरं किंचित्तीक्ष्णोष्णं पिच्छिलं लघु॥६८॥
निहंति कफवातार्शोहृल्लासारुचिपीनसान् ।

पत्र, तमालपत्र तथा पत्रवाचक सम्पूर्ण शब्द यह तमालपत्रके संस्कृत नाम है। इसे हिन्दीमें तेजपात, फारसीमें सादरसु, अंग्रेजीमें Falia Malabathy कहते हैं।

पत्रक–मधुर, किंचित् तीक्ष्ण और उष्ण, चिकना, हलका और कफ, वात, अर्श, हृल्लास तथा पीनस इन रोगोंको नष्ट करनेवाला है॥ ६८ ॥

नागपुष्पः।

नागपुष्पः स्मृतो नागः केशरो नागकेसरः ॥ ६९ ॥
चांपेयो नागकिंजल्कः कथितः कांचनाह्वयः ।
नागपुष्पं कपायोष्णं रूक्षं लघ्वामपाचनम् ॥ ७० ॥
ज्वरकण्डूतृषास्वेदच्छर्दिहृल्लासनाशनम् ।
दौर्गन्ध्यकुष्ठवीसर्पकफपित्तविषापहम् ॥ ७१ ॥

नागपुष्प, नाग, केसर, नागकेसर, चांपेय, नागकिञ्जल्क तथा सुवर्णके सम्पूर्ण नाम यह नागकेशरके नाम हैं। इसे हिन्दीमें नागकेशर, फारसीमें लरकीमास, अंग्रेजीमें Saffron कहते है।

नागकेशर–कसैला, गरम, रूक्ष, हलका, आमको पकानेवाला और ज्वर, कण्डु, तृषा, स्वेद, वमन, हृल्लास, दुर्गन्धता, कुष्ठ, विसर्प, कफ, पित्त तथा विषको नष्ट करनेवाला है॥ ६९–७१ ॥

त्रिजातं चतुर्जातम् ।

त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धि त्रिजातकम् ।
नागकेसरसंयुक्तं चतुर्जातकमुच्यते ॥ ७२ ॥
तद्द्वयं रोचनं रूक्षं तीक्ष्णोष्णं मुखगन्धहृत् ।
लघुपित्ताग्निकृद्वर्ण्यं कफवातविषापहम् ॥ ७३ ॥

दालचीनी, एला तथा तमालपत्र, इन तीनोंको त्रिजातक तथा त्रिसुगन्धि कहा जाता है । यदि इन तीनोंमें नागकेसर भी मिला दिया जावे तो उसे चतुर्जातक कहते है ।

त्रिजातक और चतुर्जातक—रुचिकारक, रूक्ष, तीक्ष्ण, मुखकी दुर्गन्धताको हरनेवाले, हलके, पित्ताग्निवर्द्धक, वर्णको उत्तम करनेवाले तथा कफ, वात और विषको नष्ट करनेवाले हैं ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

कुंकुमम् ।

कुंकुमं घुसृणं रक्तं काश्मीरं पीतकं वरम् ।
संकोचं पिशुनं धीरं बाह्लीकं शोणिताभिधम् ॥७४॥
काश्मीरदेशजे क्षेत्रे कुंकुमं यद्भवेद्धितम् ।
सूक्ष्मकेसरमारक्तं पद्मगन्धि तदुत्तमम् ॥ ७५ ॥
बाह्लीकदेशसंजातं कुंकुमं पांडुरं मतम् ।
केतकीगन्धयुक्तं तन्मध्यमं सूक्ष्मकेसरम् ॥ ७६ ॥
कुंकुमं पारसीकं यन्मधुगन्धि तदीरितम् ।
ईषत्पांडुरवर्णं तत् ह्यधमं स्थूलकेसरम् ॥ ७७ ॥
कुंकुमं कटुकं स्निग्धं शिरोरुग्व्रणजन्तुजित् ।
तिक्तं वमिहरं वर्ण्यं व्यंगदोषत्रयापहम् ॥ ७८ ॥

कुंकुम, घुसृण, रक्त, काश्मीर, पीतक, वर, संकोच, पिशुन, धीर, बाह्लिक,

यह तथा रक्तके सम्पूर्ण नाम कुंकुमके हैं । इसे हिन्दीमें केसर अथवा केशर, फारसीमें जाफरान और अंग्रेजीमें Saffron कहते हैं ।

जो केशर काश्मीरमें उत्पन्न होती है वह सूक्ष्म, लाल तथा कमलके समान गन्धवाली होती है और वह सर्वोत्तम है । जो केशर बाह्लीक देशमें उत्पन्न होती है वह पाण्डु रंगवाली, केतकी पुष्पके समान गन्धवाली तथा सूक्ष्म होती है, और वह केसर मध्यम है । जो केशर पारस देशमें उत्पन्न होती है वह स्थूल, कुछ पाण्डु वर्णवाली तथा मधुके समान गन्धवाली होती है और वह अधम है ।

कुंकुम—कटु, स्निग्ध, तिक्त, वमनको हरनेवाला, वर्णको उत्तम करनेवाला तथा शिरके रोग, व्रण, क्रमि, व्यंग और त्रिदोषको नष्ट करनेवाला है ॥ ७४–७८ ॥

गोरोचना ।

गोरोचना तु मांगल्या वंद्या गौरी च रोचना ।
गोरोचना हिमा तिक्ता वश्या मंगलकांतिदा ॥७९॥
विषालक्ष्मीग्रहोन्मादगर्भस्रावक्षतास्रजित् ।

गोरोचना, मांगल्या, वन्द्या, गौरी और रोचना यह गोरोचनके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें गोरोचन, फारसीमें गायरोहन तथा अंग्रेजीमें Gallstone Bijoor कहते है । गोरोचना—शीतल, तिक्त, वशमें करनेवाली, मंगल और कान्तिको करनेवाली तथा विष, अलक्ष्मी, ग्रह, उन्माद, गर्भस्राव, क्षत तथा रक्तविकारोंको जीतती है ॥ ७९ ॥

नखम् ।

नखं व्याघ्रनखं व्याघ्रायुधं तच्चक्रकारकम् ॥ ८० ॥
नखं स्वल्पं नखी प्रोक्ता हनुर्हट्टविलासिनी ।
नखद्वयं ग्रहश्लेष्मवातास्रज्वरकुष्ठनुत् ॥ ८१ ॥

लघूष्णं शुक्लं वर्ण्यं स्वादु व्रणविषापहम् ।
अलक्ष्मीमुखदौर्गन्ध्यहृत्पाकरसयोः कटु ॥ ८२ ॥

नख, व्याघ्रनख, व्याघ्रायुध तथा चक्रकारक यह नखके नाम हैं । छोटे नखोंको नखी, हनु और हट्टविलासिनी कहते हैं । इसे हिन्दीमें नख अथवा नखी. फारसीमें नाखुविरयाँ तथा अंग्रेजीमें Shell कहते है ।

नख और नखी दोनों—हलके, गरम. वीर्यवर्धक, वर्णको उत्तम करनेवाले. मधुर तथा ग्रह. कफ, वात, रक्तविकार, ज्वर, कुष्ट, व्रण, विष, अलक्ष्मी. मुखकी दुर्गन्ध इन सबको हरनेवाले हैं तथा पाक और रसमें कटु है ॥ ८०–८२ ॥

ह्रीबेरम् ।

बालं ह्रीबेरबर्हिष्ठोदीच्यं केशांबुनाम च ।
बालकं शीतलं रूक्षं लघु दीपनपाचनम् ॥ ८३ ॥
हृल्लासारुचिवीसर्पहृद्रोगामातिसारजित् ।

बाल. ह्रीबेर, बर्हिष्ठ, उदीच्य यह और केशों तथा जलके सम्पूर्ण नाम ह्रीबेरके नाम है । इसको हिन्दीमें सुगंधवाला, फारसीमें असारूं तथा अंग्रेजीमें Muricatus कहते है ।

सुगन्धवाला—शीतल, रूक्ष, हलका, दीपन, पाचन तथा हृल्लास, अरुचि. विसर्प, हृदयके रोग और आमातिसारको दूर करता है ॥ ८३ ॥

वीरणम् ।

स्याद्वीरणं वीरतरं वीरं च बहुमूलकम् ॥ ८४ ॥
वीरणं पाचनं शीतं स्तंभनं लघु तिक्तकम् ।
मधुरं ज्वरनुद्वांतिमदाजित्कफपित्तहृत् ॥ ८५ ॥
तृष्णास्रविषवीसर्पकृच्छ्रदाहव्रणापहम् ।

वीरण, वीरतरु, वीर, बहुमूलक यह वीरनके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें वीरण तृण या पहीघास कहते है ।

वीरणतृण—पाचन, शीतल, स्तम्भन करनेवाला, हलका, तिक्त, मधुर, तथा ज्वर, वमन, मद, कफ, पित्त, तृष्णा, रक्तविकार, विष, विसर्प, कृच्छ्र, दाह तथा व्रण इनको नष्ट करता है ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

उशीरम् ।

वीरणस्य तु मूलं स्यादुशीरं नलदं च तत् ॥८६॥
अमृणालं च सेव्यं च समगन्धकमित्यपि ।
उशीरं पाचनं शीतं स्तंभनं लघु तिक्तकम् ॥ ८७ ॥
मधुरं ज्वरहृद्वांतिमदनुत्कफपित्तहृत् ।
तृष्णास्रविषवीसर्पदाहकृच्छ्रव्रणापहम् ॥ ८८ ॥

वीरणकी जड़को उशीर, जलद, अमृणाल, सेव्य, समगन्धक कहा जाता है। हिन्दीमें इसको खस कहते हैं ।

उशीर (खस) पाचन, शीतल, स्तम्भन करनेवाला, हलका, तिक्त, मधुर तथा ज्वर, वमन, मद, कफ, पित्त, तष्णा, रक्तविकार, विष, विसर्प, कृच्छ्र, दाह और व्रणोंको हरनेवाला है ॥ ८६–८८ ॥

जटामांसी ।

जटामांसी भूतजटा जटिला च तपस्विनी ।
मांसी तिक्ता कषाया च मेध्या कांतिबलप्रदा ॥८९॥
स्वाद्वी सिता त्रिदोषास्रदाहवीसर्पकुष्ठनुत् ।

जटामांसी, भूतजटा, जटिला और तपस्विनी यह जटामांसीके संस्कृत नाम हैं। इसको हिन्दीमें बालछड, फारसीमें सुंबुल और अंग्रेजीमें Spikenard कहते है ।

जटामांसी—तिक्त, कसैली, बुद्धिवर्धक, कान्ति और बलको देनेवाली, मधुर, शीतल तथा त्रिदोष, रक्तविकार, दाह, विसर्प और कुष्ठको दूर करती है ॥ ८९ ॥

शिलापुष्पम् ।

शैलेयं तु शिलापुष्पं वृद्धं कालानुसार्य्यकम् ॥ ९० ॥
शैलेयं शीतलं हृद्यं कफपित्तहरं लघु ।
कण्डूकुष्ठाश्मरीदाहविषहृल्लासरक्तजित् ॥ ९१ ॥

शैलेय, शिलापुष्प, वृद्ध, कालानुसार्य्यक यह शैलेयके नाम हैं । इसको हिन्दीमें भूरिछरीला तथा पत्थरका फूल और फारसीमें उहालु कहते हैं ।

शैलेय छार छरीला—शीतल, हृदयको प्रिय, कफ और पित्तको हरने-वाला, हलका तथा कुष्ठ, कण्डू, पथरी, दाह, विष, हृल्लास और रक्तविकारोंको जीतता है ॥ ९० ॥ ९१ ॥

मुस्तकं (नागरमुस्तकम्) ।

मुस्तकं न स्त्रियां मुस्तं त्रिषु वारिदनामकम् ।
कुरुविन्दो परो भद्रमुस्तो नागरमुस्तकः ॥ ९२ ॥
मुस्तं हिमं कटु ग्राहि तिक्तं दीपनपाचनम् ।
कषायकफपित्तास्रतृड्ज्वरारुचिजंतुजित् ॥ ९३ ॥
अनूपदेशे यज्जातं मुस्तकं तत् प्रशस्यते ।
तत्रापि मुनिभिः प्रोक्तं वरं नागरमुस्तकम् ॥ ९४ ॥

मुस्तक शब्द स्त्रीलिंगमें नही होता । मुस्त शब्द त्रिलिंगवाची है । मुस्तक, मुस्त, कुरुविन्द, पर, भद्रमुस्त, नागरमुस्तक यह तथा मेघके सम्पूर्ण नाम यह नागरमोथेके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें मोथा अथवा नागरमोथा, और फारसीमें मुश्कजमीन् कहते हैं ।

मुस्तक—कटु, शीतल, ग्राही, तिक्त, दीपन, पाचन, कसैला तथा कफ, पित्त, रक्तविकार, तृषा, ज्वर, अरुचि और कृमियोंको जीतनेवाला है । जो मुस्तक अनूप देशमें उत्पन्न होता है वह उत्तम होता है । उसमें भी मुनियोंने नागर मुस्तकको श्रेष्ठ कहा है ॥ ९२–९४ ॥

कर्चूरः ।

कर्चूरो वेधमुख्यश्च द्राविडः कालिपका शटी ।
कर्चूरो दीपनो रुच्यः कटुकस्तिक्त एव च ॥ ९५ ॥
सुगन्धिः कटुपाकः स्यात्कुष्ठार्शोव्रणकासनुत् ।
उष्णो लघुर्हरेच्छ्वासगुल्मवातकफक्रिमीन् ॥ ९६ ॥

कर्चूर, वेधमुख्य, द्राविड, कालिपक, शटी यह कचूरके संस्कृत नाम है । इसको हिन्दीमें कचूर अथवा काली हलदी, फारसीमें जरंवाद, अंग्रेजीमें Long zedoory कहते हैं ।

कचूर—दीपन, रुचिकारक, कटु, तिक्त, सुगन्धयुक्त, कटुपाकी, हलका, गरम तथा कुष्ठ, अर्श, व्रण, कास, श्वास, गुल्म, वात, कफ और कृमियोंको हरता है ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

मुरा ।

मुरा गन्धकुटी दैत्या सुरभिस्तालपर्णिका ।
मुरा तिक्ता हिमा स्वाद्वी लघ्वी पित्तानिलापहा ९७
ज्वरासृग्भूतरक्षोघ्नी कुष्ठकासविनाशिनी ।

मुरा, गन्धकुटी, दैत्या, सुरभि और तालपर्णिका यह मुराके संस्कृत नाम हैं । इसे हिन्दीमें मुरा कहते है ।

मुरा—तिक्त, शीतल, मधुर, हलकी, पित्त और वातको दूर करनेवाली, कुष्ठ और कासको नष्ट करनेवाली तथा ज्वर, रक्तविकार और भूत, राक्षसोंकी पीडाको हरनेवाली है ॥ ९७ ॥

पलाशी ।

शटी पलाशी षड्ग्रन्था सुव्रता गन्धमूलका ॥९८॥
गन्धारिका गन्धवधूर्वधूः पृथुपलाशिका ।
भवेद् गन्धपलाशी तु कषाया ग्राहिणी लघुः॥९९॥

तिक्ता तीक्ष्णा च कटुका उष्णास्यमलनाशिनी ।
शोथकासव्रणश्वासशूलहिध्मग्रहापहा ॥ १०० ॥

शटी, पलाशी, षड्ग्रन्था, सुव्रता, गन्धमूलका, गन्धारिका, गन्धवपु, वधू और पृथुपलाशिका यह गन्धपलाशीके नाम है। इसे हिन्दीमें गन्धपलाशी, फारसीमें जरंवाद कहते है।

गन्धपलाशी–कसैली, ग्राही, हलकी, तिक्त, तीक्ष्ण, कटु, गरम, मुखके मलको नष्ट करनेवाली तथा शोथ, कास, व्रण, श्वास, शूल, हिध्म, हिचकी तथा ग्रहको दूर करनेवाली है॥ ९८–१०० ॥

प्रियंगुः ।

प्रियंगुः फलिनी कांता लता च महिलाह्वया ।
गुन्द्रा गन्धफली श्यामा विष्वक्सेनांगनाप्रिया ॥१॥
प्रियंगुः शीतला तिक्ता तुवरानिलपित्तहृत् ।
रक्तातीसारदौर्गंध्यस्वेददाहज्वरापहा ॥ २ ॥
गुल्मतृड्विषमेहघ्नी तद्वद्गन्धप्रियंगुका ।
तत्फलं मधुरं रूक्षं कषायं शीतलं गुरु ॥ ३ ॥
विबन्धाध्मानबलकृत् संग्राहि कफपित्तजित् ।

प्रियंगु, फलिनी, कान्ता, लता, गुन्द्रा, गन्धफली, श्यामा, विष्वक्सेना, अंगना, प्रिया यह तथा महिलाके सब नाम प्रियंगुके नाम है। इसको हिन्दीमें फूलप्रियंगु कहते हैं।

प्रियंगु–शीतल, तिक्त, कसैली, कफ और पित्तको हरनेवाली, रक्तविकार, अतिसार, दुर्गन्धता, स्वेद, दाह, ज्वर, गुल्म तथा तृषाको नष्ट करनेवाली है, गन्धप्रियंगु भी इन्ही गुणोंवाली जाननी । प्रियंगुका फल मधुर, रूक्ष, कसैला, शीतल, भारी, ग्राही, कफ और पित्तको जीतनेवाला तथा मलके बन्ध, आध्मान और बलको करता है॥ १–३ ॥

रेणुका।

रेणुका राजपुत्री च नन्दनी कपिला द्विजा ॥ ४ ॥
भस्मगंधा पाण्डुपुत्री स्मृता कौंती हरेणुका।
रेणुका कटुका पाके तिक्तानुष्णा कटुर्लघुः ॥ ५ ॥
पित्तला दीपनी मेध्या पाचनी गर्भपातिनी।
बलासवातकृच्चैव तृट्कण्डूविषदाहनुत् ॥ ६ ॥

रेणुका, राजपुत्री, नन्दनी, कपिला, द्विजा, भस्मगन्धा, पाण्डुपुत्री, कौन्ती तथा हरेणुका यह रेणुकाके नाम हैं।

रेणुका—पाकमें कटु, तिक्त, अनुष्णा, कटु, हलकी, पित्तकारक, दीपन, बुद्धिवर्धक, पाचन, गर्भको गिरानेवाली, कफ और वातको नष्ट करनेवाली तथा प्यास, कण्डू, विष और दाहको दूर करनेवाली है ॥ ४–६ ॥

ग्रन्थिपर्णम्।

ग्रन्थिपर्णं ग्रन्थिकं च काकपुच्छं च गुत्थकम्।
नीलपुष्पं सुगन्धं च कथितं तैलपर्णिकम् ॥ ७ ॥
ग्रंथिपर्णं तिक्ततीक्ष्णं कटूष्णं दीपनं लघु।
कफवातविषश्वासकण्डुदौर्गंध्यनाशनम् ॥ ८ ॥

ग्रन्थिपर्ण, ग्रान्थिक, काकपुच्छ, गुत्थक, नीलपुष्प, सुगन्ध और तैलपर्णिक यह ग्रन्थिपर्णके नाम हैं।

ग्रन्थिपर्ण—तिक्त, तीक्ष्ण, कटु, उष्ण, दीपन, हलका तथा कफ, वात, विष, श्वास, कण्डु और दुर्गन्धको नष्ट करता है। ॥ ७ ॥ ८ ॥

स्थौणेयकम्

स्थौणेयकं बर्हिबर्हं शुकबर्हं च कुक्कुरम्।
शीर्णं रोम शुकं चापि शुकपुष्पं शुकच्छदम् ॥ ९ ॥
स्थौणेयकं कटु स्वादु तिक्तं स्निग्धं त्रिदोषनुत्।

मेधाशुक्रकरं रुच्यं रक्षोऽश्रीज्वरजन्तुजित् ॥ १० ॥
हंति कुष्ठास्रतृड्दाहदौर्गंध्यतिलकालकान् ।

स्थौणेयक, बर्हिवर्ह, शुकवर्ह, कुक्कुर, शीर्ण, रोम, शुक, शुकपुष्प, शुकच्छद यह स्थौणेयकके नाम है । इसे हिन्दीमें थुनेर कहते है ।

स्थौणेयक–कटु, मधुर, तिक्त, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, बुद्धि तथा वीर्यको वढानेवाला, रुचिकारक तथा राक्षस, अलक्ष्मी, ज्वर, कृमि, कुष्ठ, रक्तविकार, प्यास, दाह तथा तिलकालक इनको दूर करनेवाला है ॥ ९ ॥ १० ॥

निशाचरः ।

निशाचरो धनहरः कितवो गणहासकः ॥ ११ ॥
रोचकः शंकितश्चण्डो दुष्पत्रः क्षेमको रिपुः ।
रोचको मधुरस्तिक्तो कटुः पाके कटुर्लघुः ॥ १२ ॥
तीक्ष्णो हृद्यो हिमो हंति कुष्ठकण्डूकफानिलान् ।
रक्षोऽश्रीस्वेदमेदोस्रज्वरगन्धविषव्रणान् ॥ १३ ॥

निशाचर, धनहर, कितव, गणहासक, रोचक, शंकित, चण्ड, दुष्पत्र, क्षेमक, रिपु यह निशाचर (भटेरा) के नाम हैं ।

भटेरा (निशाचर)–मधुर, तिक्त, कटु, पाकमें कटु, हलका, तीक्ष्ण, हृदयको प्रिय, शीतल तथा कुष्ठ, खुजली, कफ, वात, राक्षसभय, अलक्ष्मी, स्वेद, मेद, रक्तविकार, ज्वर, दुर्गन्ध, विष और व्रणोंको नाश करनेवाला है ॥ ११–१३ ॥

तालीसपत्रम् ।

तालीसमुक्तं पत्राढ्यं धात्रीपत्रं च तत्स्मृतम् ।
तालीसं लघु तीक्ष्णोष्णं श्वासकासकफानिलान् १४
निहन्त्यरुचिगुल्मामवह्निमांद्यक्षयामयान् ।

तालीसपत्र, तालीस, पत्राढ्य और धातीपत्र यह तालीसपत्रके नाम है । हिन्दीमें इसे तालीसपत्र, फारसीमें जरणवा कहते है ।

तालीसपत्र—हलका, तीक्ष्ण, उष्ण तथा श्वास, कास, कफ, वात, अरुचि, गुल्म, आम, अग्निकी मन्दता तथा क्षयको नष्ट करता है ॥ १४ ॥

कक्कोलम् ।

कक्कोलं कोलकं प्रोक्तं तथा कोशफलं स्मृतम् ॥१५॥
कक्कोलं लघु तीक्ष्णोष्णं तिक्तं हृद्यं रुचिप्रदम् ।
आस्यदौर्गंध्यहृद्रोगकफवातामयांध्यहृत् ॥ १६ ॥

कक्कोल, कोलक और कोशफल यह कंकोलके नाम हैं । इसे हिंदीमें कंकोल, फारसीमें कबाबह और अंग्रेजीमें Cubeba Pepper कहते हैं ।

कंकोल—हलका, तीक्ष्ण, उष्ण, तिक्त, हृदयको प्रिय, रुचिकारक तथा मुखकी दुर्गंधता, हृदयके रोग, वात, कफ और अन्धताको हरनेवाला है ॥ १५ ॥ १६ ॥

गन्धकोकिला, गन्धमालती ।

स्निग्धोष्णा कफहृत्तिक्ता सुगन्धा गंधकोकिला ।
गंधकोकिलया तुल्या विज्ञेया गंधमालती ॥ १७ ॥

गन्धकोकिला—स्निग्ध, कफको हरनेवाली, तिक्त और सुगन्धवाली है । गन्धकोकिलाके समान ही गंधमालती जाननी ॥ १७ ॥

लामज्जकम् ।

लामज्जकं सुनालं स्यादमृणालं लयं लघु ।
इष्टकावथकं सेव्यं नलदं चावदातकम् ॥ १८ ॥
लामज्जकं हिमं तिक्तं लघु दोषत्रयास्रजित् ।
त्वगामयस्वेदकृच्छ्रदाहपित्तास्ररोगनुत् ॥ १९ ॥

लामज्जक, सुनाल, अमृणाल, लय, लघु, इष्टकावथक, सेव्य, नलद और अवदातक यह लामज्जकके नाम हैं ।

लामज्जक-शीतल, तिक्त, हलका तथा त्रिदोष, रक्तविकार, त्वचाके रोग, स्वेद, कृच्छ्र, दाह और रक्तपित्तका नाश करनेवाला है ॥१८॥१९॥

एलावालुकम् ।

एलावालुकमैलेयं सुगंधि हरिवालुकम् ।
ऐलवालुकमैलालु कपित्थफलमीरितम् ॥ २० ॥
ऐलालु कटुकं पाके कषायं शीतलं लघु ।
हंति कण्डूव्रणच्छर्दितृट्कासारुचिहृद्रुजः ॥ २१ ॥
बलासविषपित्तास्रकुष्ठमूत्रगदक्रिमीन् ।

एलवालुक, ऐलेय, सुगन्धि, हरिवालुक, ऐलवालुक, ऐलालु और कपित्थफल यह एलवेके संस्कृत नाम हैं ।

एलवा-कटु, पाकमें कसैला, शीतल, हलका तथा खुजली, व्रण, वमन, प्यास, कास, अरुचि, हृदयके रोग, कफ, विष, पित्त, रक्तविकार, कोढ, मूत्ररोग तथा कृमियोंको नाश करनेवाला है ॥ २० ॥ २१ ॥

कुटन्नटम् ।

कुटन्नटं दासपुरं वानेयं परिपेलवम् ॥ २२ ॥
प्लवगोपुरगोनर्दं कैवर्तीं मुस्तकानि च ।
मुस्तावत्पेलवपुटं शुकाह्वं स्याद्वितुन्नकम् ॥ २३ ॥
वितुन्नकं हिमं तिक्तं कषायं कटुकांतिदम् ।
कफपित्तास्रवीसर्पकुष्ठकंडूविषप्रणुत् ॥ २४ ॥

कुटन्नट, दास, वानेय, पारिपेलव, प्लव, गोपुर, गोनर्द, कैवर्ती तथा मुस्तक यह केवटी मोथेके नाम है। केवटीमोथा मोथेके समान कोमल पत्रोंवाला तथा शुकके समान कांतिवाला होता है और उसको वितुन्नक कहते हैं ।

वितुन्नक-शीतल, तिक्त, कसैला, कटु, कांतिवर्धक तथा कफ, पित्त, रक्तविकार, विसर्प, कोढ, खुजली और विष इनको नष्ट करता है ॥ २२-२४॥

स्पृक्का ।

स्पृक्कासृग् ब्राह्मणी देवी मरुन्माला लता लघुः ।
समुद्रांता वधूः कोटिवर्षालंकोपकेत्यपि ॥ २५ ॥
स्पृक्का स्वाद्वी हिमा वृष्या तिक्ता निखिलदोषनुत् ।
कुष्ठकण्डूविषस्वेददाहाढ्यज्वररक्तहृत् ॥ २६ ॥

स्पृक्का, असृग्, ब्राह्मणी, दर्वी, मरुन्माला, लता, लघु, समुद्रांता, वधू, कोटिवर्षा और अलंकोपका यह असबरगके नाम हैं ।

स्पृक्का—मधुर, शीतल, वीर्यवर्धक, तिक्त, त्रिदोषनाशक तथा कुष्ठ, खुजली, विष, स्वेद, दाह, आढ्यवात, ज्वर तथा रक्तविकारको नष्ट करनेवाली है ॥ २५ ॥ २६ ॥

पर्पटी ।

पर्पटी रंजनी कृष्णा जतुकी जननी जनिः ।
जतुकृष्णाग्निसंस्पर्शा जतुकृच्चक्रवर्त्तनी ॥ २७ ॥
पर्पटी तुवरा तिक्ता शिशिरा वर्णकृल्लघुः ।
विषव्रणहरी कण्डूकफपित्तास्रकुष्ठनुत् ॥ २८ ॥

पर्पटी, रञ्जनी, कृष्णा, जतुकी, जननी, जनि, जतुकृष्णा, अग्निसंस्पर्शा, जतुकृत् और चक्रवर्तिनी यह पर्पटीके नाम है ।

पर्पटी—कषाय, तिक्त, शीतल, वर्णको उत्तम करनेवाली, हलकी तथा विष, व्रण, खुजली, कफ, पित्त, रक्तविकार और कुष्ठको नष्ट करनेवाली है ॥ २७ ॥ २८ ॥

नलिका ।

नलिका विद्रुमलता कपोतचरणा नटी ।
धमन्यंजनकेशी च निर्मथ्या सुषिरा नली ॥ २९ ॥

नलिका शीतला लघ्वी चक्षुष्या कफपित्तहृत् ।
कृच्छ्राश्मवाततृष्णास्रकुष्ठकण्डुज्वरापहा ॥ १३० ॥

नलिका, विद्रुमलता, कपोतचरणा, नटी, धमनी, अञ्जनकेशी, निर्मथ्या, सुषिरा और नली यह नलीके नाम है ।

नली—शीतल, हलकी, नेत्रोंको हितकर तथा कफ, पित्त, कृच्छ्र, पथरी, बात, प्यास, रक्तविकार, कोढ, खुजली और ज्वरको दूर करनेवाली है ॥ २९ ॥ १३० ॥

प्रपौण्डरीकम् ।

प्रपौण्डरीकं पौंडर्य्यं चक्षुष्यं पौंडरीयकम् ।
पौंडर्य्यं मधुरं तिक्तं कषायं शुक्रलं हिमम् ।
चक्षुष्यं मधुरं पाके वर्ण्यं पित्तकफप्रणुत् ॥ १३१ ॥

इति कर्पूरादिवर्गः ।

प्रपौण्डरीक, पौण्डर्य, चक्षुष्य और पौण्डरीयक यह पौण्डरीयकके नाम है ।

पौण्डरीयक—मधुर, तिक्त, कसैला, वीर्यवर्धक, शीतल, नेत्रहितकर, पाकमें मधुर, वर्णको उत्तम करनेवाला, पित्त तथा कफका नाश करनेवाला है ॥ १३१ ॥

इति श्रीविद्यालंकार—शिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ कर्पूरादिवर्गः ॥ २ ॥

गुडूच्यादि-वर्गः ।



तत्रादौ गुडूच्या उत्पत्तिर्नाम गुणाश्च ।

अथ लंकेश्वरो मानी रावणो राक्षसाधिपः ।
रामपत्नीं वनात्सीतां जहार मदनातुरः ॥ १ ॥

ततस्तं बलवान् रामो रिपुं जायापहारिणम् ।
वृतो वानरसैन्येन जघान रणमूर्द्धनि ॥ २ ॥
हते तस्मिन् सुरारातौ रावणे बलगर्विते ।
देवराजः सहस्राक्षः परितुष्टो हि राघवे ॥ ३ ॥
तत्र ये वानराः केचिद्राक्षसैर्निहता रणे ।
तानिंद्रो जीवयामास संसिच्यामृतवृष्टिभिः ॥ ४ ॥
ततो येषु प्रदेशेषु कपिगात्रात्परिच्युताः ।
पीयूषबिन्दवः पेतुस्तेभ्यो जाता गुडूचिका ॥ ५ ॥

प्रथम गिलोयकी उत्पत्ति तथा गुणोंको कहते है—जब अभिमानी राक्षसोंके अधिपति रावणने कामातुर होकर बलात् सीताका हरण किया, तब जायाके हरनेवाले रावणको बलवान् रामचन्द्रजीने वानरोंको साथ ले जाकर रणमें मारा । बलाभिमानी और देवताओंके शत्रु रावणके मारे जानेपर रामचन्द्रजी पर अत्यंत प्रसन्न होकर देवताओंके राजा इंद्रने अमृतकी वृष्टि करके वानरोंको—जिनको रणमें राक्षसोंने मार दिया था, फिर जीवित कर दिया । उस समय जिन २ स्थानोंपर वानरोंके शरीरसे भ्रष्ट होकर अमृतकी बूँदें गिरी वहां २ गुडूची उत्पन्न हो गई ॥ १–५ ॥

गुडूची ।

गुडूची मधुपर्णी स्यादमृतामृतवल्लरी ।
छिन्ना छिन्नरुहा छिन्नोद्भवा वत्सादिनीति च ॥ ६ ॥
जीवंती तंत्रिका सोमा सोमवल्ली च कुण्डली ।
चक्रलक्षणिका धारा विशल्या च रसायनी ॥ ७ ॥

चन्द्रहासा वयस्या च मंडली देवनिर्मिता ।
गुडूची कटुका तिक्ता स्वादुपाका रसायनी ॥ ८ ॥
संग्राहिणी कषायोष्णा लघ्वी बल्याग्निदीपनी ।
दोषत्रयामतृड्दाहमेहकासांश्च पांडुताम् ॥ ९ ॥
कामलाकुष्ठवातास्रज्वरक्रिमिवमीर्हरेत् ।

गिलोय, गुडूची, मधुपर्णी, अमृत, अमृतवल्लरी, छिन्ना, छिन्नरुहा, छिन्नोद्भवा, वत्सादिनी, तंत्रिका, सोमा, सोमवल्ली, कुण्डली, चक्रलक्षणिका, धारा, विशल्या, रसायनी, चन्द्रहासा, वयस्या, मण्डली, देवनिर्मिता यह गुडूचीके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें गिलो, फारसीमें गिलोय और अंग्रजीमें Coculs corbi कहते है ।

गिलोय—कटु, तिक्त, पाकमें मधुर, आयुवर्धक, ग्राही, कसैली, गरम, हलकी, वलकारक, अग्निदीपक तथा त्रिदोष, आम, प्यास, दाह, प्रमेह, कास, पाण्डुता, कामला, कुष्ठ, वायु, रक्तविकार, ज्वर, कृमि तथा वमनको हरनेवाली है ॥ ६—९ ॥

तांबूलम् ।

तांबूलवल्ली तांबूली नागिनी नागवल्लरी ॥ १० ॥
तांबूलं विशदं रुच्यं तीक्ष्णोष्णं तुवरं सरम् ।
वश्यं तिक्तं कटु क्षारं रक्तपित्तकरं लघु ॥ ११ ॥
बल्यं श्लेष्मास्यदौर्गंध्यमलवातश्रमापहम् ।

ताम्बूलवल्ली, ताम्बूली, नागिनी तथा नागवल्लरी यह ताम्बूलके नाम हैं । इसको हिन्दीमें पान, फारसीमें तंबोल और अंग्रजीमें Betel leaf कहते है ।

ताम्बूल—विशद, रुचिकारक, तीक्ष्ण, उष्ण, कसैला, दस्तावर, वशकारक, तिक्त, कटु, खारा, रक्तपित्तकर, हलका, बलवर्धक तथा कफ, मुखकी दुर्गन्ध, मल, वात और श्रमको हरनेवाला है ॥ १० ॥ ११ ॥

बिल्वः।

बिल्वः शाण्डिल्यशैलूषौ मालूरश्रीफलावपि ॥१२॥
गन्धगर्भः शलाटुश्च कण्टकी च सदाफलः ॥
श्रीफलस्तुवरस्तिक्तो ग्राही रूक्षोऽग्निपित्तकृत् ॥१३
वातश्लेष्महरो बल्यो लघुरुष्णश्च पाचनः।

बिल्व, शाण्डिल्य, शैलूष, मालूर, श्रीफल, गंन्धगर्भ, शलाटु, कण्टकी, सदाफल यह बिल्वके नाम हैं। अंग्रेजीमें इसे Bangakins कहते हैं।

बिल्व–कसैला, तिक्त, ग्राही, रूखा, अग्नि और पित्तको वढानेवाला, वात और कफको हरनेवाला, बलवर्धक, हलका, उष्ण और पाचन है ॥१२॥१३॥

गंभारी।

गंभारी भद्रपर्णी च श्रीपर्णी मधुपर्णिका ॥ १४ ॥
काश्मीरी काश्मरी हीरा काश्मर्य्यः पीतरोहिणी।
कृष्णवृन्ता मधुरसा महाकुसुमकापि च ॥ १५ ॥
काश्मरी तुवरा तिक्ता वीर्य्योष्णा मधुरा गुरुः।
दीपनी पाचनी मेध्या भेदनी भ्रमशोथजित् ॥१६॥
दोषतृष्णामशूलार्शोविषदाहज्वरापहा।
तत्फलं बृंहणं वृष्यं गुरु केश्यं रसायनम् ॥ १७ ॥
वातपित्ततृषारक्तक्षयमूत्रविबंधनुत्।
स्वादु पाके हिमं स्निग्धं तुवराम्लं विशुद्धिकृत्॥१८॥
हन्याद्दाहतृषावातरक्तपित्तक्षतक्षयान्।

गम्भारी, भद्रपर्णी, श्रीपर्णी, मधुपर्णिका, काश्मीरी, काश्मरी, हीरा, काश्मर्य, पीतरोहिणी, कृष्णवृन्ता, मधुरसा, महाकुसुमका यह गम्भारीके

नाम है । कालकाके समीप कौशल्या नदीके किनारे इसके वडे वृक्ष पीपलके समान चौडे पत्तोंवाले होते हैं, वहां यह कुम्हार नामसे प्रसिद्ध है ।

काश्मरी—कसैली, तिक्त, उष्णवीर्य, मधुर, भारी, दीपन, पाचन, बुद्धि-वर्धक, दस्तावर तथा भ्रम, शोथ, त्रिदोष, प्यास, आम, शूल, अर्श, विष, दाह और ज्वरको दूर करनेवाली है । काश्मरीका फल—धातुओं-को पुष्ट करनेवाला, वीर्यवर्धक, भारी, केशोंको वढानेवाला और रसायन, पाकमें मधुर, शीतल, स्निग्ध, कसैला, अम्ल, शुद्धिकारक और वात, पित्त, प्यास, रक्तविकार, क्षय, मूत्ररोग. मलका वन्ध, दाह, वात, प्यास, रक्त, पित्त, क्षत और क्षय इनको नष्ट करता है ॥ १४–१८॥

पाटला ।

पाटली पाटलामोघा मधुदूती फलेरुहा ॥ १९ ॥
कृष्णवृन्ता कुबेराक्षी काचस्थाल्यलिवल्लभा ।
ताम्रपुष्पी च कथिता परा स्यात्पाटला सिता ॥२०
मुष्कको मोक्षको घण्टा पाटलिः काष्ठपाटला ।
पाटला तुवरा तिक्तानुष्णा दोषत्रयापहा ॥ २१ ॥
अरुचिश्वासशोथार्शश्छर्दिहिक्कातृषाहरी ।
पुष्पं कषायं मधुरं हिमं हृद्यं कफास्रनुत् ॥ २२ ॥
पित्तातीसारहृत्कंठ्यं फलं हिक्कास्रपित्तहृत् ।

पाटली, पाटला, अमोघा, मधुदूती, फलेरुहा, कृष्णवृन्ता, कुबेराक्षी, काचस्थाली, अलिवल्लभा, ताम्रपुष्पी यह पाढलके नाम हैं । मुष्कक, मोक्षक, वण्टा, पाटली. काष्ठपाटला, यह घंटापाढलके नाम है । इसको अंग्रेजीमें Banduknut कहते है ।

पाटला—कषाय, तिक्त, अनुष्ण, त्रिदोषनाशक तथा अरुचि, श्वास, शोथ, अर्श, वमन, हिचकी, प्यास इनको हरनेवाली है। इसका पुष्प—कसैला, मधुर, शीतल, हृदयको प्रिय. कफ और रक्तविकारको जीतनेवाला, पित्त और अतिसारको जीतनेवाला और कण्ठको हितकारी है। इसका फल हिचकी, रक्तविकार और पित्तको जीतनेवाला है॥ १९—२२॥

अग्निमंथः।

अग्निमन्थो जया स स्यात् श्रीपर्णी गणकारिका२३
जया जयंती तर्कारी नादेयी वैजयंतिका।
अग्निमंथः श्वयथुनुद्वीर्य्योष्णः कफवातहृत्॥२४॥
पांडुनुत् कटुकस्तिक्तस्तुवरो मधुरोऽग्निदः।

अग्निमंथ, जय, श्रीपर्णी, गणकारिका, जया. जयंती, तर्कारी, नादेयी, वैजयतिका यह अग्निमंथके नाम हैं। इसको हिन्दीमें अर्णी कहते हैं।

अग्निमंथ—सूजनको नष्ट करनेवाला, उष्णवीर्य, कफ तथा वातको नष्ट करनेवाला, पाण्डुरोगनाशक, कटु, तिक्त, कषाय, मधुर तथा अग्निको बढाने-वाला है॥ २३॥ २४॥

स्योनाकः।

स्योनाकः शोषणश्च स्यान्नटकट्वंगटुंटुकः॥ २५॥
मण्डूकपर्णपत्रोर्णशुकनाशकटुंनटाः।
दीर्घवृन्तोरलुश्चापि पृथुशिंबः कटंभरः॥ २६॥
स्योनाको दीपनः पाके कटुकस्तुवरो हिमः।
ग्राही तिक्तोऽनिलश्लेष्मपित्तकासामनाशनः॥२७॥
टुंटुकस्य फलं बालं रूक्षं वातकफापहम्।

हृद्यं कषायं मधुरं रोचनं लघु दीपनम् ॥ २८ ॥
गुल्मार्शःकृमिहृत्प्रौढं गुरुवातप्रकोपनम् ।

स्योनाक, शोषण, नट, कट्वंग, टुंटुक, मण्डूकपर्ण, पत्रोर्ण, शुकनाश, कटुम्नट, दीर्घवृन्त, अरलु, पृथुसिब और कटंभर यह स्योनाकके नाम हैं। हिन्दीमें इसे सोनापाठा कहते है।

स्योनाक—दीपन, पाकमें कटु, कसैला, शीतल, ग्राही, तिक्त तथा वात, कफ, पित्त, कास, आम इनको नष्ट करता है। इसका कच्चा फल—रूखा, वात तथा कफनाशक, हृदयको प्रिय, कसैला, मधुर, रुचिकारक, हल्का, दीपन तथा गुल्म, अर्श, कृमि इनको नष्ट करता है और पका हुआ फल भारी तथा वातको कुपित करनेवाला है। यह शिमलेके पहाड़ोंमें और कालकाके पास बड़ा वृक्ष होता है, इसको तलवारके समान फल लगते हैं। और वहां इसे टाटमडंगा कहते है॥ २५–२८॥

बृहत्पञ्चमूलम् ।

श्रीफलः सर्वतोभद्रा पाटला गणिकारिका ।
स्योनाकः पञ्चभिश्चैतैः पञ्चमूलं महन्मतम् ॥२९॥
पंचमूलं महत्तिक्तं कषायं कफवातनुत् ।
मधुरं श्वासकासघ्नमुष्णं लघ्वग्निदीपनम् ॥ ३० ॥

श्रीफल (बिल), सर्वतोभद्रा (कारमरी), पाटला (पाढल), गणिकारिका (अग्निमन्थ) तथा स्योनाक (सोनापाठा) इन पांचोंको मिलानेसे बृहत्पंचमूल बन जाता है। बृहत्पंचमूल—अत्यन्त तिक्त, कसैला, कफ और वातको नष्ट करनेवाला, मधुर, श्वास और कासको हरनेवाला, गरम, लघु तथा अग्निदीपक है॥ २९॥ ३०॥

शालपर्णी ।

शालपर्णी स्थिरा सौम्या त्रिपर्णी पीवरी गुहा ।
विदारिगंधा दीर्घाङ्घ्रिर्दीर्घपत्रांशुमत्यपि ॥ ३१ ॥

शालपर्णी गुरुश्छर्दिज्वरश्वासातिसारजित् ।
शोषदोषत्रयहरी बृंहण्युक्ता रसायनी ॥ ३२ ॥
तिक्ता विषहरी स्वादुः क्षतकासकृमिप्रणुत् ।

शालपर्णी, स्थिरा, सौम्या, त्रिपर्णी, पीवरी, गुहा, विदारिगन्धा, दीर्घाङ्घ्रि, दीर्घपत्रा और अंशुमती यह शालपर्णीके नाम हैं ।

शालपर्णी—भारी, शोष तथा त्रिदोषनाशक, धातुओंको पुष्ट करनेवाली, आयुवर्द्धक, तिक्त, विषको हरनेवाली, मधुर तथा वमन, ज्वर, श्वास, अतिसार, क्षत, कास और कृमि इनको हरनेवाली है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

पृश्निपर्णी ।

पृश्निपर्णी पृथक्पर्णी चित्रपर्ण्यङ्घ्रिपर्णिका ॥ ३३ ॥
क्रोष्टुविन्ना सिंहपुच्छी कलशी धावनी गुहा ।
पृश्निपर्णी त्रिदोषघ्नी वृष्योष्णा मधुरा सरा ॥३४॥
हंति दाहज्वरश्वासरक्तातीसारतृड्वमीः ।

पृश्निपर्णी, पृथक्पर्णी, चित्रपर्णी, अंघ्रिपर्णिका, क्रोष्टुविन्ना, सिंहपुच्छी, कलशी तथा गुहा यह पृश्निपर्णीके नाम है ॥

पृश्निपर्णी—त्रिदोषघ्न, वीर्य्यवर्द्धक, गरम, मधुर, दस्तावर तथा दाह, ज्वर, श्वास, रक्तातिसार, प्यास और वमन इनको नष्ट करती है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

बृहती ।

वार्ताकी क्षुद्रभंटाकी महती बृहती कुली ॥ ३५ ॥
हिंगुली राष्ट्रिका सिंही महोटी दुष्प्रधर्षणी ।
बृहती ग्राहणी हृद्या पाचनी कफवातहृत् ॥ ३६ ॥
कटुतिक्तास्यवैरस्यमलारोचकनाशनी ।
उष्णा कुष्ठज्वरश्वासशूलकासाग्निमांद्यजित् ॥३७॥

वार्ताकी, क्षुद्रभंटाकी, महती, बृहती, कुली, हिंगुली, राष्ट्रिका, सिंही, महोटी, दुष्प्रधर्षणी, यह बृहतीके नाम है, इसको बडी कटेली कहते हैं ।

बृहती-ग्राही, हृदयको प्रिय, पाचन, कफ तथा वातको हरनेवाली, कटु, तिक्त, गरम तथा मुखकी विरसता, अरुचि, मल, कुष्ठ, ज्वर, श्वास, शूल, कास तथा अग्निकी मन्दता इनको दूर करनेवाली है ॥ २५-२७ ॥

कंटकारी ।

कण्टकारी तु दुःस्पर्शा क्षुद्रा व्याघ्री निदिग्धिका ।
कंटारिका कंटकिनी धावनी बृहती तथा ॥ ३८ ॥

कंटकारी, दुःस्पर्शा, क्षुद्रा, निदिग्धिका, कंटारिका, कंटकिनी, धावनी तथा बृहती यह कटेरीके नाम हैं ॥ ३८ ॥

उभे च बृहत्यौ यत्र आह सुश्रुतः ।

क्षुद्रायां क्षुद्रघंटाक्यां बृहतीति निगद्यते ।
श्वेता क्षुद्रा चंद्रहासा लक्ष्मणा क्षुद्रदूतिका ॥३९॥
गर्भदा चन्द्रभा चन्द्रा चन्द्रपुष्पा प्रियंकरी ।
कंटकारी सरा तिक्ता कटुका दीपनी लघुः ॥४० ॥
रूक्षोष्णा पाचनी कासश्वासज्वरकफानिलान् ।
निहंति पीनसं पार्श्वपीडाकृमिहृदामयान् ॥ ४१ ॥
तयोः फलं कटु रसे पाके च कटुकं भवेत् ।
शुक्रस्य रेचनं भेदि तिक्तं पित्ताग्निकृल्लघु ॥ ४२ ॥

कटेरी और बड़ी कटेरी दोनों ही बृहती कहलाती है । यह सुश्रुतमें कहा है । श्वेता, क्षुद्रा, चन्द्रहासा, लक्ष्मणा, क्षुद्रदूतिका, गर्भदा, चन्द्रभा, चन्द्रा, चन्द्रपुष्पा और प्रियंकरी यह सफेद पुष्पवाली कटेरीके नाम है ।

कटेरी-दस्तावर, तिक्त, कटु, अग्निदीपक, हलकी, रूक्ष, गरम, पाचन करनेवाली तथा कास, श्वास, ज्वर, कफ, वात, पीनस, पसलीकी पीड़ा, कृमि तथा हृदयके रोगोंको हरती है । दोनों कटेरियोंके फल-कटु, रस और पाकमें कटु, वीर्य्यके रेचन करनेवाले, दस्तावर, तिक्त, पित्ताग्नि

वर्धक, हलके तथा कफ, वायु, खुजली, कास, मेद कृमि और ज्वरको दूर करनेवाले हैं ॥ ३९–४२ ॥

हन्यात्कफमरुत्कंडूकासमेदःकृमिज्वरान् ।
तद्वत्प्रोक्ता सिता क्षुद्रा विशेषाद्गर्भकारिणी ॥ ४३ ॥

उसीके समान श्वेत कटेरीके गुण हैं; किन्तु यह विशेषतासे गर्भको धारण करानेवाली है ॥ ४३ ॥

गोक्षुरः ।

गोक्षुरः क्षुरकोऽपि स्यात् त्रिकंटः स्वादुकंटकः ।
गोकंटको भक्षटंको वनशृंगाट इत्यपि ॥ ४४ ॥
पलंकपाश्वदंष्ट्रा च तथा स्यादिक्षुगंधिकः ।
गोक्षुरः शीतलः स्वादुर्बलकृद्बस्तिशोधनः ॥ ४५ ॥
मधुरो दीपनो वृष्यः पुष्टिदश्चाश्मरीहरः ।
प्रमेहश्वासकासार्शःकृच्छ्रहृद्रोगवातनुत् ॥ ४६ ॥

गोक्षुर, क्षुरक, त्रिकण्ट, स्वादुकण्टक, गोकण्टक, भक्षटंक, वनशृङ्गाट, पलंकष, अश्वदंष्ट्रा तथा इक्षुगंधिक यह गोखरूके नाम है । इसको हिन्दीमें गोखरू और फारसीमें तुरूमेखार या हस्ताचिंघाड कहते है ।

गोखरू–शीतल, मधुर, बलवर्द्धक, मसानेको शुद्ध करनेवाला, स्वादु, दीपन, वीर्य्यवर्द्धक, पुष्टिकारक, पथरीको हरनेवाला तथा प्रमेह, श्वास, कास, अर्श, कृच्छ्, हृदयके रोग और वात इनको नष्ट करता है ॥ ४४–४६ ॥

लघुपंचमूलम् ।

शालपर्णी पृश्निपर्णी वार्ताकी कंटकारिका ।
गोक्षुरः पंचभिश्चैतैः कनिष्ठं पंचमूलकम् ॥ ४७ ॥

पंचमूलं लघु स्वादु बल्यं पित्तानिलापहम् ।
नात्युष्णं बृंहणं ग्राहि ज्वरश्वासाश्मरीप्रणुत् ॥४८॥

शालपर्णी, पृश्निपर्णी, छोटी कटेरी, बडी कटेरी और गोखरू इनको लघु पञ्चमूल कहते हैं ।

लघु पञ्चमूल—हलका, मधुर, बलकारक, पित्त तथा वायुको नष्ट करनेवाला, किञ्चित् गरम, बृंहण, ग्राही, ज्वर, श्वास और पथरीको नष्ट करनेवाला है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

दशमूलम् ।

उभाभ्यां पंचमूलाभ्यां दशमूलमुदाहृतम् ।
दशमूलं त्रिदोषघ्नं श्वासकासशिरोरुजः ॥ ४९ ॥
तंद्राशोथज्वरानाहपार्श्वपीडारुचीर्हरेत् ।

लघुपञ्चमूल और बृहत् पञ्चमूल यह दोनों मिलकर दशमूल कहलाते है। दशमूल—त्रिदोषनाशक तथा श्वास, कास, शिरके रोग, तंद्रा, शोथ, ज्वर, आनाह (अफारा), पसलीका शूल तथा अरुचि इनको नष्ट करता है ॥ ४९ ॥

जीवन्ती ।

जीवंती जीवनी जीवा जीवनीया मधुस्रवा ॥५० ॥
मांगल्यनामधेया च शाकश्रेष्ठा पयस्विनी ।
जीवंती शीतला स्वादुः स्निग्धा दोषत्रयापहा॥५१॥
रसायनी बलकरी चक्षुष्या ग्राहिणी लघुः ।

जीवंती, जीवनी, जीवा, जीवनीया, मधुस्रवा, मांगल्यनामधेया, शाकश्रेष्ठा तथा पयस्विनी, यह जीवन्तीके नाम है ।

जीवन्ती—शीतल, स्वादु, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, वायु तथा बलवर्द्धक, नेत्रोंको हितकर, ग्राही और हलकी है ॥ ५० ॥ ५१ ॥

मुद्गपर्णी ।

मुद्गपर्णी काकपर्णी शूर्पपर्ण्यल्पिका सहा ॥ ५२ ॥
काकमुद्गा च सा प्रोक्ता तथा मार्जारगंधिका ।
मुद्गपर्णी हिमा रूक्षा तिक्ता स्वाद्वी च शुक्रला ५३
चक्षुष्या क्षतशोथघ्नी ग्राहणी ज्वरदाहनुत् ।
दोषत्रयहरी लघ्वी ग्रहण्यर्शोऽतिसाराजित् ॥ ५४ ॥

मुद्गपर्णी, काकपर्णी, शूर्पपर्णी, अल्पिका, सहा, काकमुद्गा और मार्जारगंधिका यह मुद्गपर्णीके नाम हैं ।

मुद्गपर्णी—शीतल, रूक्ष, तिक्त, वीर्यवर्धक, नेत्रोंको हितकर, त्रिदोष-नाशक, हलकी, ग्राही तथा ज्वर, दाह, अर्श और अतिसारको जीतती है ॥ ५२-५४ ॥

माषपर्णी ।

माषपर्णी सूर्यपर्णी कांबोजी हयपुच्छिका ।
पांडुलोमशपर्णी च कृष्णवृन्ता महासहा ॥ ५५ ॥
माषपर्णी हिमा तिक्ता रूक्षा शुक्रबलासकृत् ।
मधुरा ग्राहणी शोथवातपित्तज्वरास्रजित् ॥ ५६ ॥

माषपर्णी, सूर्य्यपर्णी, कांबोजी, हयपुच्छिका, पाण्डुलोमशपर्णी, कृष्णवृन्ता, महासहा यह माषपर्णीके नाम है ।

माषपर्णी—ठंढी, तिक्त, रूखी, वीर्य और कफको बढानेवाली, मधुर, ग्राही, शोथ, वात, पित्त, ज्वर और रक्तविकारको हरनेवाली है ॥ ५५ ॥५६॥

जीवनीयगणः ।

अष्टवर्गः सयष्टीको जीवंती मुद्गपर्णिका ।
माषपर्णीगणोऽयं तु जीवनीय इति स्मृतः ॥ ५७ ॥

जीवनो मधुरश्चापि नाम्ना स परिकीर्तितः ।
जीवनीयगणः प्रोक्तः शुक्रकृत् बृंहणो हिमः॥५८ ॥
गुरुर्गर्भप्रदः स्तन्यकफकृत्पित्तरक्तहृत् ।
तृष्णां शोषं ज्वरं दाहं रक्तपित्तं व्यपोहति ॥ ५९ ॥

अष्टवर्ग-(जीवक,ऋषभक, मेदा,महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि) जीवन्ती, मुद्गपर्णी तथा माषपर्णी इनको जीवनीय गण कहते हैं । जीवनीयगण—वीर्यकारक,धातुओंको पुष्ट करनेवाला, शीतल, भारी,गर्भको देनेवाला, दूध तथा कफको उत्पन्न करनेवाला, पित्त, तथा रक्त, प्यास, शोष, ज्वर, दाह तथा रक्तपित्त इनको नष्ट करता है ॥ ५७–५९ ॥

शुक्लरक्तैरंडौ ।

शुक्ल एरंड आमंडश्चित्रो गंधर्वहस्तकः ।
पंचांगुलो वर्धमानो दीर्घदंडो व्यडंबकः ॥ ६० ॥
रक्तोऽपरोरुबूकः स्यादुरुबूको रुबुस्तथा ।
व्याघ्रपुच्छश्च वातारिश्चंचुरुत्तानपत्रकः ॥ ६१ ॥
एरण्डयुग्मं मधुरमुष्णं गुरु विनाशयेत् ।
शूलशोथकटीवस्तिशिरःपीडोदरज्वरान् ॥ ६२ ॥
ब्रध्नश्वासकफानाहकासकुष्ठाममारुतान् ।
एरंडपत्रं वातघ्नं कफक्रिमिविनाशनम् ॥ ६३ ॥
मूत्रकृच्छ्रहरं चापि पित्तरक्तप्रकोपनम् ।
वातार्य्यग्रदलं गुल्मवस्तिशूलहरं परम् ॥ ६४ ॥
कफवातकृमीन् हंति वृद्धिं सप्तविधामपि ।
एरंडफलमत्युष्णं शूलगुल्मानिलापहम् ॥ ६५ ॥

यकृत्प्लीहोदराशोंघ्नं कटुकं दीपनं परम्।
तद्वन्मज्जा च विड्भेदी वातश्लेष्मोदरापहा॥६६॥

शुक्ल एरंड, आमंड, चित्र, गंधर्वहस्तक, पंचांगुल, वर्धमान, दीर्घदण्ड तथा विडम्बक यह सफेद एरंडके नाम हैं। रक्त एरंड, रुबूक, उरुबूक, रुबू, व्याघ्रपुच्छ, वातारि, चंचु, उत्तानपत्रक यह लाल एरंडके नाम हैं। इनको हिन्दीमें सफेद तथा लाल एरंड, फारसीमें बेदंजीर और अंग्रेजीमें Castor Oil कहते हैं।

दोनों प्रकारके एरंड—मधुर, उष्ण, भारी तथा शूल, शोथ, कमर, वस्ति और शिरकी पीडा, उदररोग, ज्वर, श्वास, कफ, अफारा, कास, कुष्ठ और आमवातको नाश करनेवाले है। एरंडके पत्र पित्त तथा रक्तको कुपित करनेवाले हैं तथा वात, कफ, कृमि और मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करते हैं। एरंडकी कोपल—गुल्म, वस्तिके शूल, कफ, वात कृमि तथा साता प्रकारकी वृद्धिको नष्ट करती है। एरंडके फल अत्यन्त गरम, कटु, दीपन तथा गुल्म, शूल, वात, यकृत्, प्लीहा, उदररोग और अर्शको नष्ट करनेवाले हैं। इसकी मज्जा मलभेदक तथा वात, कफ और उदरके रोगोंको हरनेवाली है॥ ६०—६६॥

आकारकरभः।

आकारकरभश्चैवाकल्लकोऽथ ह्यकल्लकः।
अकल्लकोष्णो वीर्य्येण बलकृत्कटुको मतः॥६७॥
प्रतिश्यायं च शोथं च वातं चैव विनाशयेत्।

आकारकरभ, आकल्लक और अकल्लक यह अकरकरेके नाम हैं।

अकर्करा—ऊष्णवीर्य, बलकारक, कटु तथा वात, प्रतिश्याय और शोथको नष्ट करता है॥ ६७॥

शुक्लरक्तार्कौ ।

श्वेतार्कों गणरूपः स्यान्मंदारो वसुकोऽपि च॥६८॥
श्वेतपुष्पः सदापुष्पः स बालार्कः प्रतापसः ।
रक्तोऽपरोऽर्कनामा स्यादर्कपर्णो विकीरणः ॥ ६९ ॥
रक्तपुष्पः शुक्लफलस्तथा स्फोटः प्रकीर्तितः ।
अर्कद्वयं सरं वातकुष्ठकण्डूविषव्रणान् ॥ ७० ॥
निहंति प्लीहगुल्मार्शःश्लेष्मोदरशकृत्कृमीन् ।
अलर्ककुसुमं वृष्यं लघु दीपनपाचनम् ॥ ७१ ॥
अरोचकप्रसेकार्शःकासश्वासनिवारणम् ॥ ७२ ॥
रक्तार्कपुष्पं मधुरं सतिक्तं कुष्ठक्रिमिघ्नं कफनाशनं च ।
अर्शोविषंहंतिचरक्तपित्तंसंग्राहिगुल्मेश्वयथौहितं तत् ७३
क्षीरमर्कस्य तिक्तोष्णं स्निग्धं सलवणं लघु ।
कुष्ठगुल्मोदरहरं श्रेष्ठमेतद्विरेचनम् ॥ ७४ ॥

श्वेतार्क, गणरूप, मन्दार, वसुक, श्वेतपुष्प, सदापुष्प, बालार्क तथा प्रतापस यह श्वेत अर्कके नाम है। रक्तार्क, अर्कपर्ण, विकीरण, रक्तपुष्प, शुक्लफल, स्फोट तथा सूर्यके सम्पूर्ण नाम यह रक्तार्कके नाम है। इनको हिन्दीमें सफेद और लाल आक, फारसीमे दुध तथा खुर्क और अंग्रेजीमें Gigontic Swallw wart कहते है।

दोनों प्रकारके आक—दस्तावर तथा वात, कोढ़, खुजली, विष, व्रण. प्लीहा, गुल्म, अर्श, कफ, उदररोग और मलके क्रमियोंको नष्ट करते हैं। आकका फूल—वीर्यवर्धक, हलका, दीपन, पाचन, रुचिकारक, प्रसेक (मुखसे लार गिरना) अर्श, कास और श्वास इनको दूर करता है । लाल आकका

फूल–मधुर, तिक्त तथा कुष्ठ, कृमि, कफ, अर्श, विष, रक्तपित्त इनको दूर करनेवाला है। ग्राही तथा गुल्म और सूजनमें हितकारी है। आकका दूध–तिक्त, उष्ण, स्निग्ध, लवण रसवाला और कुष्ठ, गुल्म, उदर इन रोगोंको हरनेवाला है तथा विरेचन कार्य्यमें श्रेष्ठ है ॥ ६८–७४ ॥

सेहुंडः।

सेहुण्डः सिंहतुण्डः स्याद्वज्री वज्रद्रुमोऽपि च।
सुधा समंतदुग्धा च स्नुक्स्त्रियां स्यात्स्नुही गुडा ७५॥
सेहुण्डो रेचनस्तीक्ष्णो दीपनः कटुको गुरुः।
शूलामष्टीलिकाध्मानकफगुल्मोदरानिलान् ॥ ७६ ॥
उन्मादमेदकुष्ठार्शःशोथमेदोऽश्मपांडुताः।
व्रणशोथज्वरप्लीहविषदूषीविषं हरेत् ॥ ७७ ॥
उष्णवीर्य्यं स्नुहीक्षीरं स्निग्धं च कटुकं लघु।
गुल्मिनां कुष्ठिनां चापि तथैवोदररोगिणाम् ॥७८॥
हितमेतद्विरेकार्थे ये चान्ये दीर्घरोगिणः।

सेहुण्ड, सिंहतुंड, वज्री, वज्रद्रुम, सुधा, समंतदुग्धा, स्नुक्, स्नुही, गुडा यह थोहरके नाम हैं। इसे हिंदीमें थोहर, फारसीमें लादनाम, अंग्रेजीमें nilkhedge Prickly Pear कहते हैं।

थोहर–रेचन, तीक्ष्ण, दीपन, कटु, गुरु तथा शूल, आम, अष्ठीलिका, आध्मान, कफ, गुल्म, उदर रोग, वायु, उन्माद, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, शोथ, मद, पथरी, पांडुरोग, व्रण, शोथ, प्लीहा, विष और दूषीविषको नष्ट करता–है। थोहरका दूध–स्निग्ध, कटु, उष्णवीर्य्य, हल्का है तथा गुल्म, कुष्ठ, उदर रोग, और दीर्घ रोगियोंके विरेचनके लिये उत्तम गुणकारी है ॥ ७५–७८ ॥

सेहुंडभेदश्शातला।

शातला सप्तला सारविमला विदुला च सा ॥७९॥
तथा निगदिता भूरिफेना कर्म्मकषेत्यपि।
शातला कटुका पाके वातला शीतला लघुः ॥८०॥
तिक्ता शोथकफानाहपित्तोदावर्तरक्तजित्।

शातला, सप्तला, सारविमला, विदला, भूरिफेना तथा कर्म्मकषा यह शातलाके नाम है। इसे फारसीमें एपण कहते है।

शातला—पाकमें कटु, वातवर्द्धक, शीतल, हल्की, तिक्त तथा शोथ, कफ, आनाह (अफारा), पित्त, उदावर्त्त और रक्तविकारको जीतती है ॥७९॥८०॥

कलिहारी।

कलिहारी तु हलिनी लांगली शुक्रपुष्प्यपि ॥ ८१ ॥
विशल्याग्निशिखानंता वह्निवक्त्रा च गर्भनुत्।
कलिहारी सरा कुष्ठशोफार्शोव्रणशूलजित् ॥ ८२ ॥
सक्षारा श्लेष्मजित्तिक्ता कटुका तुवरापि च।
तीक्ष्णोष्णकृमिहल्लध्वी पित्तला गर्भपातिनी ॥८३॥

कलिहारी, हलिनी, लाङ्गली, शुक्रपुष्पी, विशल्या, अग्निशिखा, अनंता, वह्निवक्त्रा और गर्भनुत् यह कलिहारीके नाम है। इसको अंग्रेजीमें wolfsbone कहते है। इसको शिमला प्रान्तमें नगरौडी कहते है।

कलिहारी—दस्तावर, कुष्ठ, शोफ, अर्श, व्रण और शूलको जीतनेवाली है। क्षार, कफनाशक, तिक्त, कटु, कषाय, तीक्ष्ण, उष्ण, कृमिनाशक, हल्की, पित्तकारक और गर्भको गिरानेवाली है ॥ ८१—८३ ॥

श्वेतरक्तकरवीरौ।

करवीरः श्वेतपुष्पः शतकुम्भोऽश्वमारकः।
द्वितीयो रक्तपुष्पश्च चंडातो लगुडस्तथा ॥ ८४ ॥

करवीरद्वयं तिक्तं कषायं कटुकं च तत्।
व्रणलाघवकृन्नेत्रकोपकुष्ठव्रणापहम् ॥ ८५ ॥
वीर्योष्णं कृमिकण्डुघ्नं भक्षितं विषवन्मतम्।

करवीर, श्वेतपुष्प, शतकुंभ और अश्वमारक यह सफेद कनेरके नाम हैं। दूसरा लाल कनेर—रक्तपुष्प, चंडोत और लगुड कहलाता है। इसे फारसीमें खरजेरा और अंग्रेजीम Sweet Scented obander कहते हैं, हिन्दीमें कनेर कहते हैं।

दोनों कनेर—तिक्त, कषाय, कटु, व्रणकारक, लाघव करनवाले, नेत्रपीड़ा, कुष्ठ और व्रणको नष्ट करनेवाले, उष्णवीर्य, कृमि और खुजलीको हटानेवाले, खानेसे विषके समान हानिकर हैं ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

धत्तूरः।

धत्तूरधूर्तधुत्तूरा उन्मत्तः कनकाह्वयः ॥ ८६ ॥
देवता कितवस्तूरी महामोही शिवप्रियः।
मातुलो मदनश्चास्य फले मातुलपुत्रकः ॥ ८७ ॥
धत्तूरो मदवर्णाग्निवातकृज्ज्वरकुष्ठनुत्।
कषायो मधुरस्तिक्तो यूकालिक्षाविनाशनः ॥ ८८ ॥
उष्णो गुरुर्व्रणश्लेष्मकंडूकृमिविषापहः।

धत्तूर, धूर्त, धुत्तूर, उन्मत्त, स्वर्णके पर्य्यायवाचक सब शब्द, देवता, कितव, तूरी, महामोही, शिवप्रिय, मातुल और मदन यह धतूरेके नाम हैं। इसके फलको मातुलपुत्रक कहते हैं। अंग्रेजीमें इसे Thorn Apple समझते है।

धतूरा—मदकारक, वर्णकारक, अग्नि तथा वायुवर्द्धक, ज्वर और कुष्ठको मारनेवाला, कषाय, मधुर, तिक्त, यूका और लिक्षानाशक, उष्ण, भारी तथा व्रण, कफ, कंडु, कृमि और विषको नाश करनेवाला है ॥ ८६–८८ ॥

वासकः ।

वासको वासिका वासा भिषङ्माता च सिंहिका ॥ ८९ ॥
सिंहास्यो वाजिदंतः स्यादाटरूषक इत्यपि ।
अटरूषो वृषनामा सिंहपर्णश्च स स्मृतः ॥ ९० ॥
वासको वातकृत्स्वर्यः कफपित्तास्रनाशनः ।
तिक्तस्तुवरको हृद्यो लघुः शीतस्तृडर्तिहृत् ॥ ९१ ॥
श्वासकासज्वरच्छर्दिमेहकुष्ठक्षयापहः ।

वासक, वासिका, वासा, भिषड्माता, सिंहिका, सिंहास्य, वाजिदन्त, आटरूषक, अटरूष, वृष, सिंहपर्ण यह बांसेके नाम है ।

बांसा-वातकारक, स्वरकारक, कफ, पित्त और रुधिविकारको नाश करनेवाला, तिक्त, कषाय, हृदयको हितकर, हल्का, शीतल, प्यास और पीडाको हरनेवाला तथा श्वास, कास, ज्वर, वमन, प्रमेह, कुष्ठ, क्षय इनको नष्ट करनेवाला है और रक्तपित्त (नकशीर) आदिकी सिद्ध औषध है ॥ ८९-९१ ॥

पर्पटः ।

पर्पटो वरतिक्तश्च स्मृतः पर्पटकश्च सः ॥ ९२ ॥
कथितः पांशुपर्यायस्तथा कवचनामकः ।
पर्पटो हंति पित्तास्रभ्रमतृष्णाकफज्वरान् ॥ ९३ ॥
संग्राही शीतलस्तिक्तो दाहनुद्वातलो लघुः ।

पर्पट, वरातिक्त, पर्पटक तथा पांशु और कवचके पर्यायवाचक शब्द पित्तपापडेके नाम हैं । इसे फारसीमें शाहतरा और अंग्रेजीमें Justacia Procarabens कहते हैं ।

पित्तपापड़ा—ग्राही, शीतल, तिक्त, हलका, वातकारक तथा दाह, पित्त, रक्तविकार, भ्रम, प्यास, कफ और ज्वर इनका नाश करता है ॥९२॥९३॥

निंबः ।

निंबः स्यात्पिचुमर्दश्च पिचुमंदश्च तिक्तकः ॥ ९४ ॥
अरिष्टः पारिभद्रश्च हिंगुनिर्यास इत्यपि ।
निंबः शीतो लघुर्ग्राही कटुपाकोऽग्निवातनुत् ॥९५॥
अहृद्यः श्रमतृट्कासज्वरारुचिकृमिप्रणुत् ।
व्रणपित्तकफच्छर्दिकुष्ठहृल्लासमेहनुत् ॥ ९६ ॥
निंबपत्रं स्मृतं नेत्र्यं कृमिपित्तविषप्रणुत् ।
वातलं कटुपाकं च सर्वारोचककुष्ठनुत् ॥ ९७ ॥
नैम्बं फलं रसे तिक्तं पाके तु कटुभेदनम् ।
स्निग्धं लघूष्णं कुष्ठघ्नं गुल्मार्शःकृमिमेहनुत् ॥९८

निंब, पिचुमर्द, पिचुमन्द तिक्तक, अरिष्ट, पारिभद्र, हिंगुनिर्यास यह नीमके नाम है । इसे फारसीमें नेनव और अंग्रेजीमें Nimbtree कहते है । नीम—शितल, हल्की, ग्राही, पाकमें कटु, अग्नि और वातको नष्ट करनेवाली, हृदयको अप्रिय तथा श्रम, प्यास, कास, ज्वर, अरुचि, कृमि, व्रण, पित्त, कफ, वमन, कुष्ठ, हृल्लास और प्रमेहको हरनेवाली है । नीमके पत्ते नेत्रोंके लिये हितकारी, वातकारक, पाकमें कटु तथा कृमि, पित्त, विष, सब प्रकारकी अरुचि और कुष्ठको नष्ट करनेवाले हैं । नीमके फल—रसमें तिक्त, पाकमें कटु, भेदन, स्निग्ध, हलके, उष्ण, कुष्ठघ्न तथा गुल्म, अर्श, कृमि और प्रमेहके नाश करनेवाले हैं ॥ ९४–९८ ॥

महानिंबः ।

महानिंबः स्मृतो द्रेको रम्यको विषमुष्टिकः ।
केशमुष्टिर्निबरकः कार्मुको क्षीव इत्यपि ॥९९ ॥
महानिंबो हिमो रूक्षस्तिक्तो ग्राही कषायकः ।

कफपित्तभ्रमच्छर्दिकुष्ठहृल्लासरक्तजित् ॥ १०० ॥
प्रमेहश्वासगुल्मार्शोमूषिकाविषनाशनः ।

महाबिब, द्रेक, रम्यक, विषमुष्टिक, केशमुष्टि, निवरक, कार्मुक और क्षीव यह बकायनके संस्कृत नाम है । इसे हिन्दीमें डेक और बकायन, और फारसीमें तुजाकुनार्य कहते है ।

बकायन—शीतल, रूक्ष, तिक्त, ग्राही, कषाय तथा कफ, पित्त, भ्रम, वमन, कोढ़, हृल्लास, रक्तविकार, प्रमेह, श्वास, गुल्म, अर्श और चूहेके विषको नष्ट करनेवाली है ॥ ९९ ॥ १०० ॥

पारिभद्रः ।

पारिभद्रो निंबतरुर्मंदारः पारिजातकः ॥ १०१ ॥
पारिभद्रोनिलश्लेष्मशोथमेदःकृमिप्रणुत् ।
तत्पुष्पं पित्तरोगघ्नं कर्णव्याधिविनाशनम् ॥ १०२

पारिभद्र, निंबतरु, मंदार, पारिजातक यह पारिभद्रके नाम हैं । इसे फारसीमें फरहद और अंग्रेजीमें Erythrine Indica कहते है ।

पारिभद्र—वात, कफ, शोथ, मेद और कृमिरोगको नष्ट करता है । इसका फूल पित्तरोगोंको नाश करनेवाला और कर्णरोगको हरनेवाला है ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

कांचनारः कोविदारश्च ।

कांचनारः कांचनको गंडारिः शोणपुष्पकः ।
कोविदारश्चमरिकः कुद्दालो युगपत्रकः ॥ १०३ ॥
कुण्डली ताम्रपुष्पश्चाश्मंतकः स्वल्पकेसरी ।
कांचनारो हिमो ग्राही तुवरः श्लेष्मपित्तहृत् ॥ १०४ ॥
कृमिकुष्ठगुदभ्रंशगंडमालाव्रणापहः ।

कोविदारोऽपि तद्वत्स्यात्तयोः पुष्पं लघु स्मृतम् १०५
रूक्षं संग्राहि पित्तास्रप्रदरक्षयकासनुत् ।

कांचनार, कांचनक, गंडारी, शोणपुष्पक, कोविदार, चमरिक, कुद्दाल, युगपत्रक, कुण्डली, ताम्रपुष्प, अश्मन्तक, स्वल्पकेशरी यह कचनारके नाम है।

कचनार—शीतल, ग्राही, कसैला, कफ तथा पित्तनाशक और कृमि, कोढ़, गुदभ्रंश, गंडमाला और व्रणोंको हरनेवाला है। कोविदार भी इसीके समान गुणोंवाला है। इन दोनोंके फूल—लघु, रूक्ष, ग्राही तथा पित्त, रक्तविकार, प्रदर, क्षय और कासको नष्ट करनेवाले है ॥ १०३–१०५ ॥

श्याम-श्वेत-रक्त-शिग्रुः ।

शोभांजनः शिग्रुतीक्ष्णगंधकाक्षीवमोचकाः ॥१०६॥
तद्बीजं श्वेतमरिचं मधुशिग्रुस्तु लोहितः ।
शिग्रुः शरः कटुः पाके तीक्ष्णोष्णं मधुरो लघुः॥१०७
दीपनो रोचनो रूक्षः क्षारस्तिक्तो विदाहकृत् ।
संग्राही शुक्रलो हृद्यो पित्तरक्तप्रकोपनः ॥ १०८ ॥
चक्षुष्यः कफवातघ्नो विद्रधिश्वयथुक्रिमीन् ।
मेदोऽपचीविषप्लीहगुल्मगंडव्रणान् हरेत् ॥ १०९ ॥
श्वेतः प्रोक्तगुणो ज्ञेयो विशेषाद्दीपनः सरः ।
प्लीहानं विद्रधिं हंति व्रणघ्नः पित्तरक्तकृत् ॥११० ॥
मधुशिग्रुः प्रोक्तगुणो विशेषाद्दीपनः सरः ।
शिग्रुवल्कलपत्राणां स्वरसः परमार्तिहृत् ॥ १११ ॥
चक्षुष्यं शिग्रुजं बीजं तीक्ष्णोष्णं विषनाशनम् ।
अवृष्यं कफवातघ्नं तन्नस्येन शिरोर्तिहृत् ॥ ११२॥

शोभांजन, शिग्रु, तीक्ष्णगंधक, अक्षीव, मोचक यह सहिजनेके नाम है। इसे अंग्रेजीमें Horse Radish Tree कहते हैं।

लाल सहिजनेको लघुशिग्रु कहते हैं । सहिंजना—दस्तावर, पाकमें कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, मधुर, हल्की, दीपन, रोचन, रूक्ष, क्षार, तिक्त, दाहकारक, ग्राही, वीर्यवर्धक, हृदयको हितकर, पित्त और रुधिरको कुपित करनेवाली, नेत्रोंको हितकर, कफ तथा वातनाशक और विद्रधि, सूजन, कृमिरोग, मेद, अपची, विष, प्लीहा, गुल्म, गंडमाला और व्रणोंको हरनेवाली है । सफेद सहिजनेके भी यही गुण है । परन्तु यह विशेषतासे अग्निदीपक, दस्तावर तथा विद्रधि, प्लीहा, व्रण, पित्त और रक्तविकारको नष्ट करनेवाली है । लाल सहिजनेमें भी यही गुण है, विशेषतासे अग्निदीपक और दस्तावर है । सहिजनेकी छाल और पत्तोंका स्वरस अत्यन्त पीडाको नष्ट करता है । इसके बीज नेत्रोंको हितकर, तीक्ष्ण, ऊष्ण, विषनाशक, वीर्यको कम करनेवाले तथा कफ और वातको नष्ट करनेवाले हैं । उनकी नसवार सिर—दर्दको दूर करती है ॥ १०६–११२ ॥

श्वेतनीलपुष्पा अपराजिता ।

आस्फोता गिरिकर्णी स्याद् विष्णुक्रांतापराजिता ।
अपराजिते कटुमेध्ये शीते कण्ठ्ये सुदृष्टिदे ॥११३॥
कुष्ठमूत्रत्रिदोषामशोथव्रणविषापहे ।
कषाये कटुके पाके तिक्ते च स्मृतिबुद्धिदे ॥११४॥

आस्फोता, गिरिकर्णी, विष्णुक्रांता, अपराजिता यह अपराजिताके नाम है । अंग्रेजीमें इसे Megerin कहते है ।

दोनों प्रकारकी अपराजिता—कटु, मेधावर्धक, शीतल, कण्ठको हितकर, दृष्टिको देनेवाली, कषाय, पाकमें कटु, तिक्त, स्मृति और बुद्धिदायक तथा कोढ़, मूत्ररोग, त्रिदोष, आम, शोथ, व्रण और विष इनको नष्ट करनेवाली है ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

सिंदुवारः ।

सिंदुवारः श्वेतपुष्पः सिंदुकः सिंदुवारकः ।
नीलपुष्पी तु निर्गुंडी शेफाली सुवहा च सा ॥११५

सिंदुकः स्मृतिदस्तिक्तः कषायः कटुको लघुः ।
केश्यो नेत्रहितो हंति शूलशोथाममारुतान् ॥११६॥
कृमिकुष्ठारुचिश्लेष्मव्रणान्नीला हि तद्विधा ।
सिंदुवारदलं जन्तुवातश्लेष्महरं लघु॥ ११७ ॥

सिंदुवार, श्वेतपुष्प, सिन्दुक, सिंदुवारक, नीलपुष्पी, निर्गुण्डी, शेफाली, सुवहा यह संभालूके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Five Leaved Chus Tree कहते हैं।

संभालू–स्मृतिदायक, तिक्त, कषाय, कटु, हलका, केश और नेत्रोंको हितकर तथा शूल, शोथ, आम, वात, कृमि, कोढ़, अरुचि, कफ और व्रण इनको नष्ट करनेवाला है । नीले फूलवाले संभालूके भी यही गुण हैं। इसके पत्ते कृमि, वात तथा कफ इनको हरनेवाले और हल्के हैं ॥ ११५–११७ ॥

कुटजः ।

कुटजः कुटिजः कौटो वत्सको गिरिमल्लिका ।
कालिंगश्चक्रशाखी च मल्लिकापुष्प इत्यपि॥११८॥
इंद्रयवफलः प्रोक्तो वृष्यकः पांडुरद्रुमः ।
कुटजः कटुको रूक्षो दीपनस्तुवरो हिमः ॥ ११९ ॥
अर्शोतिसारपित्तास्रकफतृष्णामकुष्ठजित् ।

कुटज, कुटिज, कौट, वत्सक, गिरिमल्लिका, कालिंग, चक्रशाखी, मल्लिकापुष्प, इंद्रयवफल, वृष्यक, पाण्डुरद्रुम यह कुड़ाके नाम हैं। अंग्रेजीमें इसे Ovalleaved Rose Bay कहते हैं ।

कुड़ा–कटु, रूक्ष, दीपन, कषाय, शीतल तथा अर्श, अतिसार, पित्त, रक्तविकार, कफ, प्यास, आम और कोढको जीतनेवाली है । शिमला प्रान्तमें कोयड़ नामसे प्रसिद्ध है ॥ ११८ ॥ ११९ ॥

करंजो ह्रस्वकरंजः ।

करंजो नक्तमालश्च करजश्चिरबिल्वकः ॥ १२० ॥
घृतपूर्णः करंजोऽन्यः प्रकीर्यः पूतिकोऽपि च ।
स चोक्तः पूतिकारंजः सोमवल्कश्च स स्मृतः १२१॥
करंजः कटुकस्तीक्ष्णो वीर्य्योष्णो योनिदोषहृत् ।
कुष्ठोदावर्तगुल्मार्शोव्रणक्रिमिकफापहा ॥ १२२ ॥
तत्पत्रं कफवातार्शःकृमिशोथहरं परम् ।
भेदनं कटुकं पाके वीर्योष्णं पित्तलं लघु ॥ १२३ ॥
तत्फलं कफवातघ्नं मेहार्शःकृमिकुष्ठजित् ।
घृतपूर्णकरंजोऽपि करंजसदृशो गुणैः ॥ १२४ ॥

करंज, नक्तमाल, करज, चिरबिल्वक यह करंजके नाम हैं । घृतपूर्ण, करंज, प्रकीर्य्य, पूतिक, पूतिकरंज और सोमवल्क यह घियाकरंजके नाम है । इसे अंग्रेजीमें Smooth Leaved Pongamia कहते है ।

करंज–कटु, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य्य, योनिरोगनाशक तथा कोढ़, उदावर्त, गुल्म, अर्श, व्रण, कृमि और कफके नाश करनेवाला है । इसके पत्ते, भेदनकर्ता है, पाकमें कटु, उष्णवीर्य्य, पित्तकारक, हलके तथा कफ, वात, अर्श, कृमि और शोथके हरनेवाले हैं । करंजका फल–कफ, वात, प्रमेह, अर्श, कृमि और कोढको नष्ट करता है । घृतपूर्ण करंजके भी करंजसदृश गुण है ॥ १२०–१२४ ॥

तृतीयः करंजः ।

उदकीर्य्यस्तृतीयोऽन्यः षड्ग्रन्थो हस्तिवारुणी ।
मर्कटी वायसी चापि करंजी करभंजिका ॥१२५॥

करंजी स्तंभनी तिक्ता तुवरा कटुपाकिनी ।
वीर्य्योष्णा वमिपित्तार्शःकृमिकुष्ठप्रमेहजित् १२६ ॥

उदकीर्य्य, पङ्ग्रंथ, हस्तिवारुणी, कर्कटी, वायसी, करंजी, करभंजिका यह तीसरे करंजुएके नाम हैं ।

करंजी—वीर्य्यस्तंभक, तिक्त, कषाय, पाकमें कटु, ऊष्णवीर्य तथा वमन, पित्त, अर्श, कृमि, कोढ और प्रमेहको नष्ट करनेवाली है ॥ १२५ ॥ १२६॥

श्वेतरक्तगुंजे ।

श्वेता गुञ्जोच्चटा प्रोक्ता कृष्णला चापि सा स्मृता ।
रक्ता सा काकचिंची स्यात्काकणंती च रक्तिका१२७
काकादनी काकपीलुः सा स्मृतांगारवल्लरी ।
गुञ्जाद्वयं तु केश्यं स्याद्वातपित्तज्वरापहम् ॥१२८॥
मुखशोषभ्रमश्वासतृष्णामदविनाशिनी ।
नेत्रामयहरं वृष्यं बल्यं कंडुव्रणापहम् ॥ १२९ ॥
कृमींद्रलुप्तकुष्ठानि रक्ता च धवलापि च ।

सफेद घुंघुचीको उच्चटा और कृष्णला कहते हैं । लाल घुंघुचीको काकचिंची, काकणंती, रक्तिका, काकादनी, काकपीलू और अंगारवल्लरी कहते है । दोनों घुंघुची रत्तकके नामसे प्रसिद्ध है ।

दोनों घुंघुचियें—केश, वीर्य और बलवर्धक तथा वात, पित्त, ज्वर, मुखशोष, भ्रम, श्वास, प्यास, मद, नेत्ररोग, खुजली, व्रण, कृमि, इंद्रलुप्त और कोढको नष्ट करनेवाली है, खानेसे विषका प्रभाव करती हैं ॥ १२७–१२९ ॥

कपिकच्छुः ।

कपिकच्छूरात्मगुप्ता ऋष्यप्रोक्ता च मर्कटी ॥१३०॥
अजडा कण्डुरा व्यंडा दुःस्पर्शा प्रावृषायणी ।

लांगूली शूकशिंबी च सैव प्रोक्ता महर्षिभिः॥१३१॥
कपिकच्छुर्भृशं वृष्या मधुरा बृंहणी गुरुः ।
तिक्ता वातहरी बल्या कफपित्तास्रनाशिनी ॥१३२॥
तद्बीजं वातशमनं स्मृतं वाजीकरं परम् ।

कपिकच्छु, आत्मगुप्ता, रिष्यप्रोक्ता, मर्कटी, अजहा, कण्डुरा, अव्यंडा, दुःस्पर्शा, प्रावृषायणी, लांगूली, शूकशिंबी यह कौंचके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Cowhedge कहते है ।

कौंच—अत्यन्त वीर्यवर्धक, मधुर, धातुओंको पुष्ट करनेवाली, भारी, तिक्त, वातनाशक, बलवर्धक तथा कफ, पित्त और रक्तविकारोंको नष्ट करनेवाली है । कौंचका बीज—वातनाशक, स्मृतिवर्धक और परम वाजीकर है ॥ १३०–१३२ ॥

रोहिणी ।

मांसरोहिण्यतिविषा वृत्ता चर्मकषा कृशा ॥१३३॥
प्रहारवल्ली विकसा वीरवत्यपि कथ्यते ।
स्यान्मांसरोहिणी वृष्या सरा दोषत्रयापहा ॥१३४॥

मांसरोहिणी, अतिविषा, वृता, चर्मकषा, कृशा, प्रहारवल्ली, विकसा और वीरवती यह रोहिणीके नाम है । रोहिणी—वीर्यवर्धक, दस्तावर और त्रिदोषनाशक है ॥ १३३ ॥ १३४ ॥

चिल्लकः ।

चिल्लको वातनिर्हारी श्लेष्मघ्नो धातुपुष्टिकृत् ।
आग्नेयो विषवद्यस्य फलं मत्स्यनिषूदनम्॥१३५॥

चिल्लक—वातनाशक, कफनाशक, धातुओंकी पुष्टि करनेवाला और अग्निगुण भूयिष्ठ है । इसका फल विषसदृश मच्छियोंको मार डालता है ॥ १३५ ॥

टंकारी।

टंकारी वातजित्तिक्ता श्लेष्मघ्नी दीपनी लघुः।
शोथोदरव्यथाहंत्री हिता कोष्ठविसर्पिणाम् ॥१३६॥

टंकारी–वातको जीतनेवाली, तिक्त, कफनाशक, दीपन, हल्की, शोथ और उदरपीडाको नष्ट करनेवाली, तथा कोष्ठ और विसर्पके लिये हितकारी है ॥ १३६ ॥

वेतसः।

वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वंजुलस्तथा।
अभ्रपुष्पश्च विदलो रथशीतश्च कीर्तितः ॥१३७॥
वेतसः शीतलो दाहशोथार्शोयोनिरुक्प्रणुत्।
हंति वीसर्पकृच्छ्रास्रपित्ताश्मरिकफानिलान् ॥१३८॥

वेतस, नम्रक, वानीर, वंजुल, अभ्रपुष्प, विदल और रथशीत यह व्यूंस-(वेतस) के नाम हैं।

वेतस–शीतल है और दाह, शोथ, अर्श, योनिरोग, विसर्प, कृच्छ्र, रक्तपित्त, पथरी, कफ और वातका नाश करती है ॥ १३७ ॥ १३८ ॥

जलवेतसः।

निकुंचकः परिव्याधो नादेयी जलवेतसः।
जलजो वेतसः शीतः संग्राही वातकोपनः ॥१३९॥

निकुंचक, परिव्याध, नादेयी, जलवेतस, जलज यह जलवेतसके नाम है। जलवेतस–शीत, ग्राही और वातको बढ़ानेवाली है ॥ १३९ ॥

इज्जलः।

इज्जलो हिज्जलश्चापि निचुलश्चांबुजस्तथा।
जलवेतसवद्वेद्यो हिज्जलोऽयं विषापहः ॥ १४० ॥

इज्जल, हिज्जल, निचुल और अंबुज यह हिज्जलके नाम हे। इसके सब गुण जलवेतस जैसे ही हैं। विशेषतासे यह विषनाशक है ॥१४०॥

अंकोटः ।

अंकोटो दीर्घकीलः स्यादंकोलश्च निकोचकः ।
अंकोटकः कटुस्तीक्ष्णः स्निग्धोष्णस्तुवरो लघुः १४१
रेचनः कृमिशूलामशोफग्रहविषापहः ।
विसर्पकफपित्तास्रमूषिकाहिविषापहः ॥ १४२ ॥
तत्फलं शीतलं स्वादु श्लेष्मघ्नं बृंहणं गुरु ।
बल्यं विरेचनं वातपित्तदाहक्षयास्रजित् ॥ १४३ ॥

अंकोट, दीर्घकील, अंकोल, निकोचक यह ढेराके नाम है ।

ढेरा—कटु, तीक्ष्ण, स्निग्ध, उष्ण, कषाय, हल्का रेचन तथा कृमि, शूल, आम, शोफ, ग्रह, विष, विसर्प, कफ, पित्त, रक्तविकार, चूहे और सांपका विष इनको नष्ट करनेवाला है । इसका फल—शतिल, स्वादु, कफनाशक, धातुओंको पुष्ट करनेवाला, भारी, बलकारक, दस्तावर और वात, पित्त, दाह, क्षय, रक्तविकार इनको जीतनेवाला है ॥ १४१–१४३ ॥

बला, महाबला, अतिबला, नागबला ।

बला वाट्यालिका वाट्या सैव वाट्यालकापि च ।
महाबला पीतपुष्पा सहदेवी च सा स्मृता ॥१४४॥
ततोऽन्यातिबला ऋष्यप्रोक्ता कंकतिका सहा ।
गांगेरुकी नागबला झषा ह्रस्वगवेधुका ॥ १४५ ॥
बलाचतुष्टयं शीतं मधुरं बलकांतिकृत् ।
स्निग्धं ग्राहि समीरास्रपित्तास्रक्षतनाशनम् ॥१४६॥
बलामूलत्वचश्चूर्णं पीतं सक्षीरशर्करम् ।
मूत्रातिसारं हरति दृष्टमेतन्न संशयः ॥ १४७ ॥

हरेन्महाबला कृच्छ्रं भवेद्वातानुलोमनी।
हन्यादतिबला मेहं पयसा सितया समम् ॥१४८॥

बला, वाट्यालिका, वाट्या, वाट्यालका, महाबला, पीतपुष्पा, सहदेवी यह बला और महाबलाके नाम है। बलाको अंग्रेजीमें Hombeamep Side कहते हैं। अतिबला, रिष्यप्रोक्ता, कंकतिका यह अतिबलाके नाम है। इसे अंग्रेजीमें Indian Mellow कहते है। गांगेरुकी, नागबला, झषा, ह्रस्वगवेधुका यह नागबलाके नाम है।

चारों बला—शीतल, मधुर, बलवर्धक, कान्तिवर्धक, स्निग्ध, ग्राही और वात, रक्त, पित्त, रक्तविकार, क्षत इनको नष्ट करनेवाली है। बलाकी जड़की छालका चूर्ण दूध और शर्कराके साथ खाया हुआ मूत्रकृच्छ्रको दूर करता है इसमें संशय नहीं, दृष्टिसे देखा हुआ है। महाबला मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करती है और वातनाशक है। अतिबला दूध और मिसरीके साथ खाई हुई प्रमेहका नाश करती है॥ १४४–१४८ ॥

लक्ष्मणा।

पुत्रकाकाररक्ताल्पबिंदुभिर्लाञ्छिता सदा।
लक्ष्मणा पुत्रजननी वस्तगन्धाकृतिर्भवेत् ॥१४९॥
कथिता पुत्रदा वश्या लक्ष्मणा मुनिपुङ्गवैः।

लक्ष्मणाका कन्द पुतलेके आकारवाला होता है, पत्र लाल और छोटी बूंदोंसे लांछित होता है। इसकी गंध बकरेके सदृश होती है। लक्ष्मणा और पुत्रजननी इसके संस्कृत नाम है। मुनि कहते है कि लक्ष्मणा अवश्य ही पुत्रको देती है। इसके अभावमें सफेद फूलकी कटेलीकी जड़का प्रयोग करते हैं॥ १४९ ॥

स्वर्णवल्ली।

स्वर्णवल्ली रक्तफला काकायुः काकवल्लरी ॥१५०॥
स्वर्णवल्ली शिरःपीडां त्रिदोषं हंति दुग्धदा।

स्वर्णवल्ली, रक्तफल, काकायु, काकवल्लरी यह स्वर्णवल्लीके नाम हैं।

स्वर्णवल्ली—शिरकी पीड़ा और त्रिदोषका नाश करती है, दूधको बढाने-वाली है ॥ १५० ॥

कार्पासी।

कार्पासी तुंडकेशी च समुद्रांता च कथ्यते॥१५१॥
कर्पासको लघुः कोष्णो मधुरो वातनाशनः।
तत्पलाशं समीरघ्नं रक्तकृन्मूत्रवर्द्धनम् ॥ १५२ ॥
तत्कर्णपिडिकानादपूयास्रावविनाशनम्।
तद्बीजं स्तन्यदं वृष्यं स्निग्धं कफकरं गुरु ॥१५३॥

कार्पासी, तुण्डकेशी, समुद्रांता यह कपासके नाम हैं।

कपास—लघु, किंचित् गरम, मधुर, वातनाशक है। इसके पत्ते वातनाशक रक्त और मूत्रको बढानेवाले और कानकी पीड़ा, कर्णनाद, पीप बहना, इनको बंद करनेवाले हैं। कपासके बीज दूध बढानेवाले, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, कफकारक और भारी है ॥ १५१–१५३ ॥

वंशः।

वंशस्त्वक्सारकर्मारत्वचिसारतृणध्वजाः।
शतपर्वा शतफली वेणुमस्करतेजनाः ॥ १५४ ॥
वंशः सरो हिमः स्वादुः कषायो वस्तिशोधनः।
छेदनः कफपित्तघ्नः कुष्ठास्रव्रणशोथजित् ॥१५५॥
तत्करीरः कटुः पाके रसे रूक्षो गुरुः सरः।
कषायः कफकृत्स्वादुर्विदाही वातपित्तलः ॥१५६॥
तद्यवास्तु सरा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः।
वातपित्तकरा उष्णा बद्धमूत्राः कफापहाः ॥ १५७॥

वंश, त्वक्सार, कर्मार, त्वचिसार, तृणध्वज, शतपर्वा, शतफली, वेणु-

मस्कर और तेजन यह बांसके नाम हैं। इसे फारसीमें कसव और अंग्रेजीमें Bombooeamc कहते हैं।

बांस–दस्तावर, शीतल, मधुर, कषाय, वस्तिशोधक, छेदन, कफ और वातको नष्ट करनेवाला, कोढ, रक्तविकार, व्रण, शोथ इनको जीतनेवाला है। बांसका अंकुर–पाक और रसमें कटु, रूक्ष, भारी, दस्तावर, कषाय, कफकारक, मधुर, दाहकारक, वात और पित्तको वढानेवाला है। बांसके जौ दस्तावर, रूक्ष, कसैले, पाकमें कटु, वातपित्तकारक, उष्ण, मूत्ररोधक और कफ नाशक हैं॥ १५४–१५७॥

नलः।

नलः पोटगलः शून्यमध्यश्च धमनस्तथा।
नलस्तु मधुरस्तिक्तः कषायः कफरक्तजित्॥१५८॥

नल, पोटगल, शून्यमध्य, धमन यह नलके नाम हैं। इसे अंग्रेजीमें ndian Tobaccoo कहते हैं। नल–मधुर, तिक्त, कषाय, कफ और वातनाशक है॥ १५८॥

मुंजः।

भद्रमुञ्जः शरो बाणस्तेजनश्चेक्षुमुण्डनः।
मुञ्जो मुञ्जातको बाणः स्थूलदर्भः सुमेखलः॥१५९॥
मुञ्जद्वयं तु मधुरं तुवरं शिशिरं तथा।
दाहतृष्णाविसर्पास्रमूत्रकृच्छ्राक्षिरोगहृत्॥ १६०॥
दोषत्रयहरं वृष्यं मेखलासूपयुज्यते।

भद्रमुंज, शर, बाण, तेजन, चक्षुमण्डन, मुंज, मुंजातक, बाण, स्थूलदर्भ, सुमेखल यह मुञ्जके नाम हैं। दोनों मुंज–मधुर, कषाय, शीतल और दाह, प्यास, विसर्प, रक्तविकार, मूत्रकृच्छ्र, नेत्ररोग, त्रिदोष इनको नष्ट करनेवाली तथा वीर्यवर्धक हैं। मुंज मेखलाओंमें प्रयोग की जाती है॥ १५९॥१६०॥

काशः ।

काशः कशेक्षुरुद्दिष्टः स स्यादिक्षुरकस्तथा ॥१६१॥
इक्ष्वालिकेक्षुगंधा च तथा पोटगलः स्मृतः ।
काशःस्यान्मधुरस्तिक्तःस्वादुपाको हिमःसरः १६२॥
मूत्रकृच्छ्राश्मदाहास्रक्षयपित्ताक्षिरोगजित् ।

काश, काशेक्षु, इक्षुरस, इक्षुवालिका, इक्षुगन्धा और पोटगल यह कासके नाम है । कास—मधुर, तिक्त, पाकमें मधुर, शीतल, दस्तावर और मूत्रकृच्छ्र, पथरी,दाह,रक्तविकार,क्षय,पित्त,नेत्ररोग इनको हरनेवाली है ॥१६१॥१६२॥

गुन्द्रः ।

गुन्द्रः पटेरको गुत्थः शृंगवेराभमूलकः ॥ १६३ ॥
गुंद्रः कषायो मधुरः शिशिरः पित्तरक्तजित् ।
स्तन्यः शुक्ररजोमूत्रशोधनो मूत्रकृच्छ्रहृत् ॥ १६४ ॥

गुन्द्र, पटेरक, गुत्थ, शृंगवेराभमूलक यह गुन्द्रके नाम हैं । गुन्द्र—कषाय, मधुर, शीतल, दूध वढानेवाला, वीर्य्य, रज और मूत्रको शुद्ध करनेवाला तथा पित्त, रक्तविकार, मूत्रकृच्छ्र इनको नष्ट करनेवाला है ॥ १६३॥१६४ ॥

एरका ।

एरका गुंद्रमूला च शिवगुंद्रा शरीति च ।
एरका शिशिरा वृष्या चक्षुष्या वातकोपिनी १६५॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीदाहपित्तशोणितनाशिनी ।

एरका, गुंद्रमूला, शिवगुन्द्रा और शरीति यह एरकाके नाम हैं । एरका—शीतल, वीर्य्यवर्द्धक, नेत्रोंको हितकर, वातवर्द्धक और मूत्रकृच्छ्र, पथरी, दाह, पित्त तथा रुधिरविकार नाशक है ॥१६५ ॥

कुशः ।

कुशो दर्भस्तथा बर्हिः सूच्यग्रो यज्ञभूषणः ॥१६६॥
ततोऽन्यो दीर्घपत्रः स्यात्क्षुरपत्रस्तथैव च ।
दर्भद्वयं त्रिदोषघ्नं मधुरं तुवरं हिमम् ॥ १६७ ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीतृष्णावस्तिरुक्प्रदरास्रजित् ।

कुश, दर्भ, बर्हि, सूच्यग्र, यज्ञभूषण यह कुशाके नाम हैं। क्षुरपत्र भी ऐसी ही है परन्तु लम्बे पत्तोंवाली होती है। दोनों कुशा—त्रिदोषनाशक, मधुर, कसैली, शीतल तथा मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्यास, वस्तिरोग और प्रदरको हरनेवाली है॥ १६६ ॥ १६७ ॥

कत्तृणम् ।

कत्तृणं रोहिषं देवजग्धं सौगंधिकं तथा ॥ १६८ ॥
भूतीकं ध्याम पौरं च श्यामकं धूपगंधिकम् ।
रोहिषं तुवरं तिक्तं कटुपाकं व्यपोहति ॥ १६९ ॥
हृत्कंठव्याधिपित्तास्रशूलकासकफज्वरान् ।

कत्तृण, रोहिष, देवजग्ध, सौगंधिक, भूतीक, ध्याम, पौर, श्यामक, धूपगंधिक यह रोहिषके नाम है। रोहिष—कषाय, तिक्त, पाकमें कटु तथा हृदयव्याधि, कण्ठव्याधि, पित्त, रक्तविकार, शूल, कास, कफ और ज्वरको नष्ट करता है॥ १६८ ॥ १६९ ॥

भूस्तृणम् ।

भूतीकं गुह्यबीजं च सुगंधं गोमयप्रियम् ॥ १७० ॥
भूस्तृणं तु भवेच्छत्रा मालातृणकमित्यपि ।
भूस्तृणं कटुकं तिक्तं तीक्ष्णोष्णं रोचनं लघु॥१७१॥

विदाहि दीपनं रूक्षमनेत्र्यं मुखशोधनम् ।
अवृष्यं बहुविट्कं च पित्तरक्तप्रदूषणम् ॥ १७२ ॥

भूतीक, गुह्यबीज, सुगंध, गोमयप्रिय, भूस्तृण, छत्रा, मालातृण यह भूतृणके नाम हैं । भूतृण—कटु, तिक्त, तीक्ष्ण, उष्ण रेचन, लघु, दाहकारक, दीपन, रूक्ष, नेत्रों को हितकर, मुखशोधक, वीर्य्यको कम करनेवाला, बहुत विष्ठा निकालनेवाला, पित्त और रक्तको दूषित करनेवाला है ॥ १७०-१७२ ॥

नीलदूर्वा ।

नीलदूर्वा रुहानंता भार्गवी शतपर्विका ।
शस्या सहस्रवीर्य्या च शतवल्ली च कीर्तिता ॥ १७३ ॥
नीलदूर्वा हिमा तिक्ता मधुरा तुवरा हरेत् ।
कफपित्तास्रवीसर्पतृष्णादाहत्वगामयान् ॥ १७४ ॥

नीलदूर्वा, रुहा, अनंता, भार्गवी, शतपर्विका, शस्या, सहस्रवीर्य्या और शतवल्ली यह नीली दूबके नाम है । नीली दूब—शीतल, मधुर, तिक्त, कषाय और कफ, पित्त, रक्तविकार, वीसर्प, प्यास, दाह तथा त्वचाके रोगोंको नष्ट करनेवाली है ॥ १७३ ॥ १७४ ॥

श्वेतदूर्वा ।

दूर्वा शुक्ला तु गोलोमी शतवीर्य्या च कथ्यते ।
श्वेतदूर्वा कषाया स्यात्स्वाद्वी व्रण्या च दीपनी १७५
तिक्ता हिमा विसर्पास्रतृट्पित्तकफदाहहृत् ।

श्वेतदूर्वा, गोलोमी, शतवीर्य्या यह सफेद दूबके नाम हैं । सफेद दूब—कषाय, मधुर, व्रणनाशक, दीपन, तिक्त, शीतल और विसर्प, रक्तविकार, प्यास, पित्त, कफ और दाहको नष्ट करनेवाली है ॥ १७५ ॥

गंडदूर्वा ।

गंडदूर्वा तु गंडीरी मत्स्याक्षी शकुलादनी ॥ १७६ ॥
गंडदूर्वा हिमा लोहद्रावणी ग्राहणी लघुः ।

तिक्ता कषाया मधुरा वातकृत्कटुपाकिनी ॥१७७॥
दाहतृष्णाबलासास्रकुष्ठपित्तज्वरापहा ।

गंडदूर्वा, गंडीरी, मत्स्याक्षी, शकुलादनी यह गंडदूर्वाके नाम हैं। गंडदूर्वा—शीतल, लोहा आदि धातुओंको द्रवित करनेवाली, ग्राही, हल्की, तिक्त, कषाय, मधुर, वातकारक, कटुपाकी तथा दाह, प्यास, कफ, रक्तविकार, कोढ़, पित्त और ज्वरका नाश करनेवाली है ॥ १७६ ॥ १७७ ॥

विदारीकंदः । वाराहीकंदः ।

वाराहीकंद एवान्यश्चर्मकारालुको मतः ॥ १७८ ॥
अनूपे स भवेद्देशे वाराह इव लोमवान् ।
विदारी स्वादुकंदा च सा तु क्रोष्ट्री सिता मता १७९॥
इक्षुगंधा क्षीरवल्ली क्षीरशुक्ला पयस्विनी ।
वाराही वरदा घृष्टिर्वदरेत्यभिधीयते ॥ १८० ॥
विदारी मधुरा स्निग्धा बृंहणी स्तन्यशुक्रदा ।
शीता स्वर्य्या मूत्रला च जीवनी बलवर्णदा॥१८१॥
गुरुः पितास्रपवनदाहान्हंति रसायनी ।

वाराहीकन्दको भेवरकन्द भी कहते है। वाराहीकन्दकी सजल देशमें होनेवाली एक जातीको चर्मकारालु भावमिश्र मानते है, परन्तु कालकाके समीप पहाड़ोंपर जो भेवरकन्द है वही वाराहीकंद है। यह सूअर जैसे रोमवाला कन्द होता है। विदारी, स्वादुकंदा, क्रोष्ट्री, सिता, इक्षुगंधा, क्षीरवल्ली, क्षीरशुक्ला, पयस्विनी यह विदारीकन्दके नाम हैं। शिमलेके पहाड़ पर इसको सराली कहते है। वाराही, वरदा, घृष्टि, वरद यह भी वाराहिकन्दके नाम हैं। विदारीकन्द—मधुर, स्निग्ध, बृंहण, वीर्य्यवर्द्धक, शीतल, स्वरकारक, मूत्रवर्द्धक, जीवन देनेवाला, बल और वर्ण बढ़ानेवाला, भारी, रसायन तथा पित्त, रक्तविकार, वात और दाहको नष्ट करनेवाला है॥ १७८–१८१ ॥

मूषली ।

तालमूली तु विद्वद्भिर्मूषली परिकीर्तिता ॥ १८२ ॥
मूषली मधुरा वृष्या वीर्य्योष्णा बृंहणी गुरुः ।
तिक्ता रसायनी हंति गुदजाननिलं तथा ॥ १८३ ॥

तालमूली और मुसली यह मुसलीके नाम है । मुसली—मधुर, वीर्य्य-वर्द्धक, उष्णवीर्य्य, बृंहणी, भारी, तिक्त, रसायन, ववासीरको हरनेवाली तथा वातनाशक है ॥ १८२ ॥ १८३ ॥

शतावरी ।

शतावरी बहुसुता भीरुरिन्दीवरी वरी ।
नारायणी शतपदी शतवीर्य्या च पीवरी ॥ १८४ ॥
महाशतावरी चान्या शतमूल्यूर्ध्वकंटिका ।
सहस्रवीर्य्या हेतुश्च रिष्यप्रोक्ता महोदरी ॥ १८५॥
शतावरी गुरुः शीता तिक्ता स्वाद्वी रसायनी ।
मेधाग्निपुष्टिदा स्निग्धा नेत्र्या गुल्मातिसाराजित् १८६
शुक्रस्तन्यकरी बल्या वातपित्तास्रशोथजित् ।
महाशतावरी मेध्या हृद्या वृष्या रसायनी ॥१८७ ॥
शीतवीर्य्या निहंत्यर्शोग्रहणीनयनामयान् ।

शतावरी, बहुसुता, भीरु, इन्दीवरी, वरी, नारायणी, शतपदी, शतवीर्य्या, पीवरी यह शतावरीके नाम है । महाशतावरी, शतावरी, ऊर्ध्वकंटिका, सहस्रवीर्य्या, हेतु, रिष्यप्रोक्ता, महोदरी यह बड़ी शतावरीके नाम है । शतावरी-भारी, शीतल, तिक्त, मधुर, रसायन, बुद्धिवर्द्धक, अग्निवर्द्धक, स्निग्ध, नेत्रोंको हितकर, गुल्म और अतिसारको जीतनेवाली, वीर्य्य तथा दुग्धवर्द्धक, बलकारक, वात, पित्त, रक्तविकार और शोथको नष्ट करनेवाली है । महाशतावरी-बुद्धि-

वर्धक, हृदयको प्रिय, वीर्यवर्धक, रसायन, शीतवीर्य और अर्श, ग्रहणी, नेत्र रोग इनको नष्ट करनेवाली है ॥ १८४–१८७ ॥

अंकुरः ।

तदंकुरस्त्रिदोषघ्नो लघुरर्शःक्षयापहः ॥१८८॥

इसका अंकुर–त्रिदोषनाशक, हलका, अर्श और क्षयको नाश करनेवाला है ॥ १८८ ॥

अश्वगन्धा ।

गन्धांता वाजिनामादिरश्वगंधा हयाह्वया ।
वाराहकर्णी वरदा बलदा कुष्ठगंधिनी ॥१८९॥
अश्वगंधानिलश्लेष्मश्वित्रशोथक्षयापहा ।
बल्या रसायनी तिक्ता कषायोष्णातिशुक्रला १९०

गंधांता, वाजिगंधा, अश्वगंधा, हयाह्वया, वाराहकर्णी, वरदा, बलदा, कुष्ठगन्धिनी यह असगन्धके नाम हैं । इसको फारसीमें मेहेमन बररी और अंग्रेजीमें Winter Chery कहते हैं । असगन्ध–बलकारक, रसायन, तिक्त, कषाय, उष्ण, अत्यन्त वीर्यवर्धक और वात, कफ, श्वित्र, शोथ, क्षय इनको नष्ट करनेवाला है ॥ १८९ ॥ १९० ॥

पाठा ।

पाठांबष्ठांबष्ठकी च प्राचीना पापचेलिका ।
एकाष्ठीला रसा प्रोक्ता पाठिका वरतिक्तिका॥१९१॥
पाठोष्णा कटुका तीक्ष्णा वातश्लेष्महरी लघुः ।
हंति शूलज्वरच्छर्दिकुष्ठातीसारहृद्रुजः ॥ १९२ ॥
दाहकंडुविषश्वासकृमिगुल्मगरव्रणान् ।

पाठा, अंबष्ठा, अंबष्ठकी, प्राचीना, पापचेलिका, एकाष्ठीला, रसा, पाठिका, वरतिक्तिका यह पाढके नाम है । पाढ–उष्ण, कटु, तीक्ष्ण, वात

और कफ नाशक, हल्की तथा शूल, ज्वर, वमन, कुष्ठ, अतिसार, हृदयके रोग, दाह, खुजली, विष, श्वास, कृमि, गुल्म और विपके व्रणको नष्ट करता है ॥ १९१ ॥ १९२ ॥

श्वेता निशोथा ।

श्वेता त्रिवृत्त्रिभंडी स्यात्त्रिवृता त्रिपुटापि च॥१९३॥
सर्वानुभूतिः सरलो निशोथो रेचनीति च ।
श्वेता त्रिवृद्रेचनी स्यात्स्वादुरुष्णा समीरहृत् १९४
रूक्षा पित्तज्वरश्लेष्मपित्तशोथोदरापहा ।

श्वेता, त्रिवृत्, त्रिभंडी, त्रिवृता, त्रिपुटा, सर्वानुभूति, सरल, निशोथ, रेचनी यह निसोतके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Turbitn root कहते है । सफेद निसोत रेचनी, मधुर, उष्ण, वातनाशक, रूखी तथा पित्त, ज्वर, कफ, शोथ और उदररोगको नष्ट करती है ॥ १९३ ॥ १९४ ॥

श्यामात्रिवृत् ।

त्रिवृच्छ्यामार्द्धचन्द्रा च पालिंदी च सुषेणिका १९५
श्यामा त्रिवृत्ततो हीनगुणा तीव्रविरेचनी ।
मूर्च्छादाहमदभ्रांतिकण्ठोत्कर्षणकारिणी ॥ १९६ ॥

त्रिवृत्, श्यामा, अर्धचन्द्रा, पालिन्दी, सुषेणिका यह कालीनिसोतके नाम है । कालीनिसोत उससे गुणमें कुछ हीन है । परन्तु विरेचन करानेमें तीव्र है । मूर्छा, दाह, मद, भ्रम और कण्ठका खिचना, अधिक सेवनसे इन उपद्रवोंको करती है ॥ १९५ ॥ १९६ ॥

लघ्वीदन्ती च बृहद्दन्ती ।

लघ्वी दन्ती विशल्या च स्यादुदुंबरपर्ण्यपि ।
तथैरंडफला शीघ्रा श्येनघण्टा घुणप्रिया ॥१९७॥
वाराहांगी च कथिता निकुंभश्च मुकूलकः ।

द्रवंती शंबरी चित्रा प्रत्यक्पर्ण्याखुपर्ण्यपि ॥ १९८॥
चित्रोपचित्रा न्यग्रोधी सुतश्रेणी तथा वृषा ।
दंतीद्वयं सरं पाके रसे च कटु दीपनम् ॥ १९९ ॥
गुदांकुराश्मशूलार्शःकंडुकुष्ठविदाहनुत् ।
तीक्ष्णोष्णं हंतिपित्तास्रकफशोथोदरक्रिमीन्॥२००॥

लव्वी, दन्ती, विशल्या, उदुम्बरपर्णी, एरंडफला, शीघ्रा, श्येनघण्टा, गुणप्रिया, वाराहांगी, निकुंभ, मुकूलक यह लघुदन्तीके नाम हैं । इसको दंदन और तिरीफल भी कहते है । अंग्रेजीमें इसे Croton Seed और फारसीमें दंद कहते है ।

द्रवन्ती, शंवरी, चित्रा, प्रत्यक्पर्णी, आखुपर्णी, चित्रोपचित्रा, न्यग्रोधी, सुतश्रेणी और वृषा यह वडी दन्तीके नाम है । इसे फारसीमें शकारहुजुव और अंग्रेजीमें Physician nut कहते है । दोनों प्रकारकी दन्ती–दस्तावर, पाक और रसमें कटु तथा दीपन है । ववासीर, पथरी, शूल, गुदाकी खुजली, कुष्ठ और दाहको नष्ट करनेवाली है । तीक्ष्ण और उष्ण है । पित्त, रक्त, कफ, सूजन, उदररोग और कृमियोंको दूर करती है ॥ १९७–२०० ॥

लघुदन्तीफलं बृहद्दंतीफलम् ।

क्षुद्रदन्तीफलं तु स्यान्मधुरं रसपाकयोः ।
शीतलं सृष्टविण्मूत्रं गरशोथकफापहम् ॥ २०१ ॥
जयपालो दंतिबीजं विख्यातं तिंतिणीफलम् ।
जयपालो गुरुः स्निग्धो रेचनः कफपित्तहा॥२०२॥

छोटी दन्तीके फल–पाक और रसमें मधुर हैं, शीतल, मलमूत्रको निकालनेवाले हैं । विषविकार, सूजन और कफको हरनेवाले हैं । वडी दन्तीके फल–जयपाल, दन्तीवीज, तिंतणीफल और जमालगोटेके नामसे प्रसिद्ध हैं । जमालगोटा–भारी, चिकना, तीक्ष्ण, विरेचनकर्ता, पित्त और कफको हरनेवाला है ॥ २०१ ॥ २०२ ॥

ऐंद्रवारुणी ।

ऐंद्रीन्द्रवारुणी चित्रा गवाक्षी च गवादनी ।
वारुणी च परा शुक्ला सा विशाला महाफला २०३
श्वेतपुष्पा मृगाक्षी च मृगैर्वारुर्मृगादनी ॥
गवादनीद्वयं तिक्तं पाके कटु सरं लघु ॥ २०४ ॥
वीर्योष्णं कामलापित्तकफप्लीहोदरापहम् ।
श्वासकासापहं कुष्ठगुल्मग्रंथिव्रणप्रणुत् ॥ २०५ ॥
प्रमेहमूढगर्भामगंडामयविषापहम् ।

ऐंद्री, इन्द्रवारुणी, चित्रा, गवाक्षी, गवादनी, वारुणी यह इन्द्रायणके नाम हैं । दूसरी इन्द्रायण–शुक्ला, विशाला, महाफला, श्वेतपुष्पा. मृगाक्षी. मृगा, एर्वारु और मृगादनी इन नामोंवाली है । दोनों प्रकारकी इंद्रायण पाकमें तिक्त, कटु, दस्तावर, हल्की, उष्णवीर्य है तथा कामला, पित्त, कफ, तिल्ली, उदर रोग, श्वास, कास, कोढ, गुल्म, ग्रंथिरोग, व्रण, प्रमेह, मूढगर्भ, आम-विकार, गंडमाला और विषविकारको दूर करनेवाली है । इसे फार्सीमें खुरियाजा तलख और अंग्रेजीमें Clocynth कहते है ॥ २०३–२०५ ॥

नीली ।

नीली तु नीलिनी तूणी काला दोला च नीलिका२०६
रञ्जनी श्रीफली तुत्था ग्रामीणा मधुपर्णिका ।
क्लीतिका कालकेशी च नीलपुष्पा च सा स्मृता२०७
नीलनी रेचनी तिक्ता केश्या मोहभ्रमापहा ।
उष्णा हंत्युदरप्लीहवातरक्तकफानिलान् ॥ २०८ ॥
आमवातमुदावर्तं मदं च विषमुद्धतम् ।

नीली, नीलिनी, तूणी, काला, दोला, नीलिका. रञ्जनी, श्रीफली, तुत्था, मीणा, मधुपर्णिका, क्लीतिका, कालकेशी और नीलपुष्पा यह नीलिनीके नाम है।

हिन्दीमें इसे कालादाना या काहलियां कहते हैं । कालादाना रेचक, तिक्त, केशोंको बढानेवाला, मोह और श्रमको हरनेवाला और उष्ण है । तथा उदररोग, प्लीहा, वातरक्त, कफ, वायु, आमवात, उदावर्त, मद और बढे हुए विषविकारको दूर करता है ॥ २०६-२०८ ॥

शरपुंखा ।

शरपुंखा प्लीहशत्रुर्नीलवृक्षाकृतिश्च सा ॥ २०९ ॥
शरपुंखा यकृत्प्लीहगुल्मव्रणविषापहा ।
तिक्तः कषायः कासास्रश्वासज्वरहरो लघुः ॥२१०॥

शरपुंखा, प्लीहशत्रु, नीलवृक्षाकृति यह सरपुंखाके नाम है । हिंदीमें इसे सरफोंका कहते हैं । अंग्रेजीमें Purpose Tebhrosia कहते हैं । सरपुंखा—यकृत्, प्लीहा, गुल्म, व्रण और विषको हरनेवाली है तथा तिक्त और कषाय है । एवं कास, रक्तविकार, श्वास, ज्वरको हरनेवाली है और हल्की है ॥ २०९ ॥ २१० ॥

वृद्धदारकः ।

वृद्धदारक आवेगी छत्रांगी रिष्यगंधिका ।
वृद्धदारः कषायोष्णः कटुस्तिक्तो रसायनः॥२११॥
वृष्यो वातामवातार्शःशोथमेहकफप्रणुत् ।
शुक्रायुर्बलमेधाग्निस्वरकांतिकरः सरः ॥ २१२ ॥

वृद्धदारक, आवेगी, छत्रांगी, रिष्यगंधिका यह वृद्धदारुके नाम है । हिन्दीमें इसे विधायरा कहते है । शिमला प्रान्तमें इसे बुड्ढलकी वेल कहते है । विधायरा—कषाय, उष्ण, कटु, तिक्त, रसायन, वीर्य्यवर्धक, वातनाशक और आमवात, अर्श, सूजन, प्रमेह और कफको नाश करता है । तथा वीर्य्य, आयु, बल, बुद्धि, जठराग्नि, स्वर और कान्तिको बढानेवाला और दस्तावर है ॥ २११ ॥ २१२ ॥

यवास दुरालभा ।

यासो यवासो दुःस्पर्शो धन्वयासः कुनाशकः ।
दुरालभा दुरालंभा समुद्रांता च रोदनी ॥ २१३ ॥
गांधारी कच्छुरानंता कषाया दुरभा ग्रहा ।
यासः स्वादुः सरस्तिक्तस्तुवरः शीतलो लघुः॥२१४
कफमेदोमदभ्रांतिपित्तास्रकुष्ठकासजित् ।
तृष्णाविसर्पवातास्रवमिज्वरहरः स्मृतः ॥ २१५ ॥
यवासस्य गुणैस्तुल्या बुधैरुक्ता दुरालभा ।

यास, यवास, दुस्पर्श, धन्वयास, कुनाशक, दुरालभा, दुरालंभा, समुद्रांता, रोदनी, गान्धारी, कच्छुरा, अनंता, कषाया, दुरभा और ग्रहा यह जवासेके नाम हैं। जवासा-मधुर, दस्तावर, तिक्त, कसैला, शीतल और हल्का है । तथा कफ, मेद, मद, श्रम, पित्त, रक्त, कुष्ठ, खांसी, प्यास, विसर्प, वातरक्त, वमन, ज्वर, इनको हरनेवाला है । जवासा और दुरालभा एक जातिके क्षुप हैं। अम्बाला जिलामें जवासा और झवांसाके नामसे बहुत मिलता है ॥ २१३-२१५ ॥

मुण्डी ।

मुंडी भिक्षुरपि प्रोक्ता श्रावणी च तपोधना २१६॥
श्रावणाह्वा मुण्डितिका तथा श्रावणशीर्षिका ।
महाश्रावणिका त्वन्या सा स्मृता भूकदंबिका २१७
कदंबपुष्पिका च स्यादव्यथातितपस्विनी ।
मुण्डितिका कटुः पाके वीर्य्योष्णा मधुरा लघुः२१८
मेध्या गंडापचीकृच्छ्रक्रमियोन्यार्तिपांडुनुत ।

श्लीपदारुच्यपस्मारप्लीहमेदोगुदार्तिहृत् ॥ २१९ ॥
महामुंडी च तुल्या हि गुणैरुक्ता महर्षिभिः ।

मुण्डी, भिक्षु, श्रावणी, तपोधना, श्रावणाह्वा, मुण्डितिका, श्रवणशीर्षिका यह गोरखमुण्डीके नाम हैं। दूसरी मुण्डी महाश्रावणी, भूकदंबिका, कदंबपुष्पिका अव्यथा, अतितपस्विनी इन नामोंवाली है। दोनों प्रकारकी मुंडियां पाकमें कटु, वीर्य्यमें उष्ण, मधुर, हलकी, बुद्धिवर्द्धक तथा गंड, अपची, कुष्ठ, कृमि, योनिरोग, पांडु, श्लीपंद, अरुचि, अपस्मार, प्लीहा, मेद और बवासीर इनको दूर करती है। मुंडी और महामुंडी गुणोंमें एक जैसी है ॥ २१६–२१९ ॥

अपामार्गः ।

अपामार्गस्तु शिखरी ह्यधःशल्यो मयूरकः ।
मर्कटी दुर्ग्रहा चापि किणही खरमंजरी ॥ २२० ॥
अपामार्गः सरस्तीक्ष्णो दीपनस्तिक्तकः कटुः ।
पाचनो नावनश्छर्दिकफमेदोऽनिलापहः ॥ २२१ ॥
निहंति हृद्रुजाध्मानार्शःकण्डुशूलोदरापचीः ।

अपामार्ग, शिखरी, अधःशल्य, मयूरक, मर्कटी, दुर्ग्रहा, किणही और खरमंजरी यह अपामार्गके नाम हैं। हिंदीमें इसे पुठकंडा और आधाझारा कहते हैं। अपामार्ग–दस्तावर, तीक्ष्ण, दीपन, कटु, पाचन तथा छींक, वमन, कफ, मेद, वायु, हृद्रोग, अफारा, अर्श, खुजली, शूल, उदररोग और अपचीको दूर करता है ॥ २२० ॥ २२१ ॥

रक्तापामार्गः ।

रक्तोऽन्यो वशिरो वृन्तफलो धामागवोऽपि च २२२
प्रत्यक्पर्णी केशपर्णी कथिता कपिपिप्पला ।
अपामार्गोऽरुणो वातविष्टंभी कफहृद्धिमः ॥ २२३॥

रूक्षः पूर्वगुणैर्न्यूनः कथितो गुणवेदिभिः ।
अपामार्गफलं स्वादु रसे पाके च दुर्जरम् ॥ २२४॥
विष्टंभि वातलं रूक्षं रक्तपित्तप्रसादनम् ।

रक्तअपामार्ग, वशिर, वृन्तफल, धामार्गव, प्रत्यक्पर्णी, केशपर्णी और कपिपिप्पला यह लाल अपामार्गके नाम हैं । लाल अपामार्ग–वायुकारक, विष्टंभकारक, कफनाशक, शीतल, रूक्ष और अपामार्गसे गुणोंमें हीन है ।

अपामार्गके फल–रसमें स्वादु, पाकमें दुर्जर, विष्टंभी, वातकारक, रूखे, रक्त और पित्तको प्रसन्न करनेवाले हैं ॥ २२२–२२४ ॥

कोकिलाक्षः ।

कोकिलाक्षस्तु काकेक्षुरिक्षुरः क्षुरिकः क्षुरः ॥२२५॥
भिक्षुः कांडेक्षुरप्युक्त इक्षुगन्धेक्षुवालिका ।
क्षुरिकःशीतलो वृष्यः स्वाद्वम्लः पिच्छलस्तथा२२६
तिक्तो वातामशोथाश्मतृष्णादृष्ट्यनिलास्रजित् ।

कोकिलाक्ष, काकेक्षु, इक्षुर, क्षुरिक, क्षुर, भिक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुगन्धा और इक्षुवालिका यह कोकिलाक्षके नाम है । हिंदी भाषामें इसे तालमखाना कहते है । तालमखाना–शीतल, वीर्य्यवर्धक, मधुर, अम्ल,पिच्छल और तिक्त है । तथा वायु, आम, शोथ, पथरी,प्यास, दृष्टिदोष, वात और रक्तविकारको जीतनेवाला है ॥ २२५ ॥ २२६ ॥

अस्थिसंहारी ।

ग्रंथिमानस्थिसंहारी वज्रांगी चास्थिशृंखला २२७
अस्थिसंहारिकः प्रोक्तो वातश्लेष्महरोऽस्थियुक् ।
उष्णः सरः कृमिघ्नश्च दुर्नामा चाक्षिरोगहृत् ॥२२८
रूक्षः स्वादुर्लघुर्वृष्यः पाचनः पित्तलः स्मृतः ।

भिषग्वरैर्यथानाम फलञ्चापि प्रकीर्तितम् ॥ २२९॥
कांडं त्वग्विरहितमस्थिशृंखलाया,
माषार्द्धं द्विदलमकंचुकं तदर्द्धम्
संपिष्टं तदनु ततस्तिलस्य तैले,
संपक्कं वटकमतीव वातहारि ॥ २३० ॥

ग्रंथिमान, अस्थिसंहारी, वज्रांगी, अस्थिशृंखला यह अस्थिसंहारीके नाम है। हिन्दीमें इसे हडजोडी कहते हैं । अस्थिसंहारी—वात, कफनाशक, हड्डीको जोडनेवाली, गरम, दस्तावर, कृमिघ्न, अर्शनाशक, नेत्ररोगहर, रूक्ष, मधुर, हल्की, वीर्यवर्धक, पाचन और पित्तकारक है । वैद्योंने इसके नामके माफिक ही इसके फलको भी कथन किया है । अस्थिसंहारीका त्वचारहित कांड लेकर उससे आधी छिलका रहित उडदकी दाल लेकर दोनोंको बारीक पीस टिकिया बनाकर तिलोंके तेलमें पकावे, यह सम्पूर्ण वातविकारोंको दूर करती है ॥ २२७–२३० ॥

महाजालनी ।

महाजालनिका चर्मरंगः स्यान्नीलपुष्पिका ।
आवर्तकी तिंदुकिनी विभांडी रक्तपुष्पिका॥२३१॥
महाजालनिका तिक्ता रेचनी कफपित्तजित् ।
हंति दाहोदरानाहशोफकुष्ठकफज्वरान् ॥ २३२ ॥

महाजालनिका, चर्म्मरंग, नीलपुष्पिका, आवर्तकी, तिंदुकिनी, विभांडी और रक्तपुष्पिका, यह जंगली कड़वी तुरईके नाम हैं । महाजालनी—तिक्त, दस्तावर, कफ, पित्त, दाह, उदररोग, अफारा, सूजन, कुष्ठ, कफ और ज्वरको हरनेवाली है ॥ २३१ ॥ २३२ ॥

कुमारी ।

कुमारी गृहकन्या च कन्या घृतकुमारिका
कुमारी भेदनी शीता तिक्ता नेत्र्या रसायनी ॥२३३॥
मधुरा बृंहणी बल्या वृष्या वातविषप्रणुत् ।
गुल्मप्लीहयकृद्वृद्धिकफज्वरहरी भवेत् ॥ २३४ ॥
ग्रन्थ्यग्निदग्धविस्फोटपीतरक्तत्वगामयान् ।

कुमारी, गृहकन्या, कन्या, घृतकुमारिका यह घीकुमार या घुमारपट्टेके नाम है । घीकुमार–दस्तावर, शीतल, तिक्त, नेत्रोंको हितकर, रसायन, मधुर, बृंहण, बलकारक और वीर्यवर्धक है । तथा वात, विषविकार, गुल्म, प्लीहा, यकृत्, अण्डवृद्धि, कफ, ज्वर, ग्रंथि, अग्निदग्ध, विस्फोटक, कामला, रक्तविकार और त्वचाके विकारोंको दूर करता है । इसे फारसीमें दरख्ते सिब्र और अंग्रेजीमें Barhadses aloes कहते हैं ॥ २३३ ॥ २३४ ॥

श्वेतपुनर्नवा ।

पुनर्नवा श्वेतमूला शोथघ्नी दीर्घपत्रिका ॥२३५॥
कटुः कषायानुरसा पांडुघ्नी दीपनी सरा ।
शोफानिलगरश्लेष्महरी व्रणोदरप्रणुत् ॥ २३६ ॥

पुनर्नवा, श्वेतमूला, शोथघ्नी, दीर्घपत्रिका यह श्वेतपुनर्नवाके नाम हैं । हिन्दीमें साठी, इट्खिट और विसखपरा कहते है । इसे अंग्रेजीमें Spreading Hagweed कहते है । श्वेतपुनर्नवा–कटु कषायानुरस है । तथा दस्तावर, दीपन, पांडुनाशक एवं सूजन, वायु, विषविकार, कफ, व्रण और उदररोगको दूर करती है ॥ २३५ ॥ २३६ ॥

रक्तपुनर्नवा ।

पुनर्नवापरा रक्ता रक्तपुष्पा शिवाटिका ।
शोथघ्नी क्षुद्रवर्षाभूर्वृषकेतुः कठिल्लिका ॥ २३७ ॥

पुनर्नवारुणा तिक्ता कटुपाका हिमा लघुः ।
वातला ग्राहिणी श्लेष्मपित्तरक्तविनाशिनी ॥२३८॥

रक्तपुनर्नवा, रक्ता, रक्तपुष्पा, शिवाटिका, शोथघ्नी, वर्षाभू, वृषकेतु, कठिल्लिका यह लालपुनर्नवाके नाम है । लालपुनर्नवा--तिक्त, कटुपाकी, शीतल, हलकी, वातकारक, मलरोधक तथा कफ, पित्त और रक्तविकारको दूर करती है ॥ २३७ ॥ २३८ ॥

एलायकः ।

एलायकः कृष्णबोलः कुमारी सारतोद्भवः ।
कृष्णबोलः कटुः शीतो भेदको रसशोधकः ।
शूलाध्मानकफं वातं कृमिगुल्मौ च नाशयेत् २३९॥

एलायक, कृष्णबोल, कुमारी सारतोद्भव यह एलवेके नाम हैं । एलवा-कटु, शीतल, दस्तावर, रसशोधक, शूल, आध्मान, कफ, वात, कृमि और गुल्मरोगको नाश करता है ॥ इसे अंग्रेजीमें Socotrin Aloes कहते है ॥ २३९ ॥

प्रसारणी ।

प्रसारणी राजबाला भद्रपर्णी प्रतानिनी ॥२४०॥
सरणी सारणी भद्रबला चापि कटंभरा ।
प्रसारणी गुरुर्वृष्या बलसंधानकृत्सरा ॥ २४१ ॥
वीर्य्योष्णा वातहृत्तिक्ता वातरक्तकफापहा ।

प्रसारणी, राजबला, भद्रपर्णी, प्रतानिनी, सरणी, सारिणी, भद्रबला और कटंभरा यह प्रसारिणीके नाम हैं । हिन्दीमें खीप या पसरन और चन्द्रवेल कहते हैं । प्रसारणी—भारी, वीर्यवर्द्धक, बलकारक, सन्धानकारक, दस्तावर, उष्णवीर्य, वातनाशक, तिक्त, वातरक्त और कफको हरनेवाली है ॥ २४० ॥ २४१ ॥

कृष्णसारिवा ।

कृष्णा तु सारिवा श्यामा गोपीगोपवधूश्च सा२४२
धवला सारिवा गोपी गोपकन्या च शारदी ।
स्फोटाश्यामागोपवल्लीलतास्फोताचचंदना॥२४३॥

कृष्णसारिवा, श्यामा, गोपी, गोपवधू और कृष्णा यह काले शारिवाके नाम हैं । धवला, सारिवा, गोपी, गोपकन्या, शारदी, स्फोटा, श्यामा, गोपवल्ली, लता, स्फोता और चन्दना यह श्वेतशारिवाके नाम है । इसको हिन्दीमें अनन्तमूल, अंग्रेजीमें Indian Sarsaparila कहते हैं । शिमला प्रान्तमें दुधलीकी बेल कहते हैं ॥ २४२ ॥ २४३ ॥

सारिवा ।

सारिवायुगलं स्वादु स्निग्धं शुक्रकरं गुरु ।
अग्निमांद्यारुचिश्वासकासामविषनाशनम् ॥२४४॥
दोषत्रयास्रप्रदरज्वरातीसारनाशनम् ।

दोनों प्रकारका सारिवा—स्वादु, स्निग्ध, वीर्यवर्धक, भारी है तथा अग्निमांद्य, अरुचि, श्वास, कास, आम, विष, त्रिदोष, रक्त, प्रदर, ज्वर और अतिसारको नष्ट करता है ॥ २४४ ॥

भृंगराजः ।

भृंगराजो भृंगरजो मार्कवो भृंग एव च ॥ २४५ ॥
अंगारकः केशराजो भृङ्गारः केशरञ्जनः ।
भृङ्गारः कटुकस्तिक्तो रूक्षोष्णः कफवातनुत्२४६॥
केश्यस्त्वच्यः कृमिश्वासकासशोथामपांडुनुत् ।
दंत्यो रसायनो बल्यः कुष्ठनेत्रशिरोर्तिनुत्॥ २४७ ॥

भृंगराज, भृंगरज, मार्कव, भृङ्ग, अंगारक, केशराज, भृंगार और केशरंजन

यह भांगरेके नाम हैं। भांगरा—कटु, तिक्त, रूक्ष, उष्ण, कफवातनाशक, केशवर्द्धक, त्वचाको हितकारी तथा कृमि, श्वास, कास, शोथ, आम, पाण्डु, कुष्ठ, नेत्र और शिरके विकारोंको दूर करता है। दांतोंके लिये हितकारी, रसायन और बलवर्द्धक है। इसे फारसीमें जमदर, अंग्रेजीमें Traling Ebi pat कहते हैं ॥ २४५-२४७ ॥

शणपुष्पी ।

शणपुष्पी स्मृता घंटारवा शणसमाकृतिः ।
शणपुष्पी कटुस्तिक्ता वामनी कफपित्तजित् २४८ ॥

शणपुष्पी, घंटारवा, शणसमाकृति यह शणपुष्पीके नाम है। शणपुष्पी—कटु, तिक्त, वमनकारक और कफ पित्तको जीतनेवाली है। इसको हिन्दीमें वनछुनछुना, फारसीमें लादना अंग्रेजीमें Flax Hemq कहते है ॥ २४८ ॥

त्रायमाणा ।

बलभद्रा त्रायमाणा त्रायंती गिरिसानुजा ।
त्रायंती तुवरा तिक्ता सरा पित्तकफापहा ॥ २४९॥
ज्वरहृद्रोगगुल्मार्शोभ्रमशूलविषप्रणुत् ।

बलभद्रा, त्रायमाणा, त्रायंती और गिरिसानुजा यह त्रायमाणके नाम है। त्रायमाण—कसैली, तिक्त, दस्तावर, पित्त—कफनाशक तथा ज्वर, हृद्रोग, गुल्म, अर्श, भ्रम, शूल और विषविकारको दूर करती है ॥ २४९ ॥

मूर्वा ।

मूर्वा मधुरसा देवी मोरटा तेजनी स्रुवा ॥ २५० ॥
मधूलिका मधुश्रेणी गोकर्णी पीलुपर्ण्यपि ।
मूर्वा सरा गुरुः स्वादुस्तिक्ता पित्तास्रमेहनुत् ॥२५१
त्रिदोषतृष्णाहृद्रोगकंडुकुष्ठज्वरापहा ।

मूर्वा, मधुरसा, देवी, मोरटा, तेजनी, स्रुवा, मधूलिका, मधुश्रेणी, गोकर्णी, पीलुपर्णी यह मूर्वाके नाम है। मूर्वा—दस्तावर, भारी, स्वादु, तिक्त तथा

पित्त, रक्त, प्रमेह, त्रिदोष, प्यास, हृद्रोग, कण्डु, कुष्ठ और ज्वरके हरनेवाली है ॥ २५० ॥ २५१ ॥

काकमाची ।

काकमाची ध्वांक्षमाची काकाह्वा चैव वायसी २५२
काकमाची त्रिदोषघ्नी स्निग्धोष्णा स्वरशुक्रदा ।
तिक्ता रसायनी शोथकुष्ठार्शोज्वरमेहजित् ॥२५३॥
कटुर्नेत्रहिता हिक्काछर्दिहृद्रोगनाशनी ।

काकमाची, ध्वांक्षमाची, काकाह्वा, वायसी यह काकमाचीके नाम है। हिन्दीमें इसे मकोह कहते हैं। काकमाची—त्रिदोषनाशक, स्निग्ध, उष्ण, स्वरवर्द्धक, वीर्य्यप्रद, तिक्त और रसायन है। तथा शोथ, कुष्ठ, अर्श, ज्वर, प्रमेह, हिचकी, छर्दी और हृद्रोगको दूर करती है। तथा कटु और नेत्रोंको हितकारी है ॥ २५२ ॥ २५३ ॥

काकनासा ।

काकनासा तु काकांगी काकतुंडफला च सा ॥२५४॥
काकनासा कषायोष्णा कटुका रसपाकयोः ।
कफघ्नी वामनी तिक्ता शोथार्शःश्वित्रकुष्ठहृत् ।२५५

काकनासा, काकांगी, काकतुण्डफला यह काकनासाके नाम हैं। हिन्दीमें इसे कव्वाडोडी कहते हैं। काकनासा—कषाय, उष्ण, रस पाकमें कटु, कफनाशक, वमनकारक, तिक्त तथा शोथ, अर्श और श्वित्रकुष्ठको नाश करनेवाली है ॥ २५४ ॥ २५५ ॥

काकजंघा ।

काकजंघा नदीकांता काकतिक्ता सुलोमशा ।
पारावतपदी दासी काका चापि प्रकीर्तिता ॥२५६॥

काकजंघा हिमा तिक्ता कषाया कफपित्तजित् ।
निहंति ज्वरकुष्ठास्रक्रिमिकंडुविषप्रणुत् ॥ २५७ ॥

काकजंघा, नदीकान्ता, काकतिक्ता, सुलोमशा, पारावतपदी, दासी और काका यह काकजंघाके नाम हैं। काकजंघा—शीतल, तिक्त, कषाय, कफ, पित्तको जीतनेवाली तथा ज्वर, कुष्ठ, रक्तविकार, क्रमि, कण्डू और विषको दूर करती है ॥ ५५६ ॥ २५७ ॥

नागपुष्पी ।

नागपुष्पी श्वेतपुष्पा नागरी रामदूतिका ।
नागरी रोचनी तिक्ता तीक्ष्णोष्णा कफपित्तनुत् २५८
विनिहंति विषं शूलं योनिदोषवमिक्रिमीन् ।

नागपुष्पी, श्वेतपुष्पा, नागरी, रामदूतिका यह नागपुष्पीके नाम हैं। नागपुष्पी—रुचिकारक, तीक्ष्ण, उष्ण, तिक्त, कफपित्तनाशक तथा विष, शूल, योनिदोष, वमन और क्रमियोंको दूर करती है ॥ २५८ ॥

मेषशृंगी ।

मेषशृंगी विषाणी स्यान्मेषवल्ल्याजशृंगिका २५९
मेषशृंगी रसे तिक्ता वातला श्वासकासहृत् ।
रूक्षा पाके कटुस्तिक्ता व्रणश्लेष्माक्षिशूलनुत् २६०॥
मेषशृंगीफलं तिक्तं कुष्ठमेहकफप्रणुत् ।
दीपनं स्रंसनं कासक्रुमिव्रणविषापहम् ॥ २६१ ॥

मेषशृङ्गी, विषाणी, मेषवल्ली, अजशृङ्गी यह मेढाशृङ्गीके नाम है। मेढाशृङ्गी—रसमें तिक्त, वातकारक, श्वास—कासनाशक, रूक्ष, पाकमें कटु, तिक्त, व्रण, कफ और नेत्रशूलको दूर करती है । मेषसिंगीके फल तिक्त

होते हैं । कुष्ठ, मेह और कफको दूर करते है । दीपन है, स्रंसन तथा खाँसी कृमि, व्रण और विषको हरनेवाले है ॥ २५९-२६१ ॥

हंसपदी ।

हंसपादी हंसपदी कीटमाता त्रिपादिका ।
हंसपादी गुरुः शीता हंति रक्तविषव्रणान् ॥ २६२॥
विसर्पदाहातीसारलूताभूतादिरोगनुत् ।

हंसपादी, हंसपदी, कीटमाता, त्रिपादिका यह हंसपदीके नाम है । इसे हिन्दीमें हंसपदी, फारसीमें परस्पाशान और अंग्रेजीमें Maiden Hair कहते है ।

हंसपदी-भारी, शीतल तथा रक्त, विष, व्रण, विसर्प, दाह, अतिसार मकडीका विष, भूतादि रोगोंको दूर करनेवाली है ॥ २६२ ॥

सोमलता ।

सोमवल्ली सोमलता सोमक्षीरी द्विजप्रिया ॥२६३॥
सोमवल्ली त्रिदोषघ्नी कटुस्तिक्ता रसायनी ।

सोमवल्ली, सोमलता, सोमक्षीरी, द्विजप्रिया यह सोमलताके नाम है । सोमवल्लीकी अंशुमान् आदि जातियें होती है । सोमलता-त्रिदोषनाशक, कटु, तिक्त और रसायन है ॥ २६३ ॥

आकाशवल्ली ।

आकाशवल्ली तु बुधैः कथितामरवल्लरी ॥ २६४॥
खवल्ली ग्राहणी तिक्ता पिच्छिलाक्ष्यामयापहा ।
तुवराग्निकरी हृद्या पित्तश्लेष्मामनाशिनी ॥ २६५॥

आकाशवल्ली, अमरवल्लरी और खवल्ली यह अमरबेलके नाम है । अमरबेल-ग्राही, तिक्त, चिकनी, नेत्ररोग नाशक, कषाय, अग्निदीपक, हृदयको प्रिय और पित्त, कफ तथा आमको हरनेवाली है ॥ २६४ ॥ २६५ ॥

पातालगरुड़ी ।

छिलहिंडो महामूलः पातालगरुडाह्वयः ।
छिलहिंडः परं वृष्यः कफघ्नः पवनापहा ॥ २६६ ॥

छिलहिण्ड, महामूल, पातालगरुड तथा गरुडके सम्पूर्ण नाम यह पाताल-गारुडीके नाम हैं । यह अत्यन्त वीर्यवर्धक, कफ तथा वातको नष्ट करने-वाली है ॥ २२६ ॥

वंदा ।

वंदा वृक्षादनी वृक्षभक्ष्या वृक्षरुहापि च ।
वंदाकः स्याद्धिमस्तिक्तः कषायो मधुरो रसे ॥२६७
मांगल्यः कफवातास्त्ररक्षोव्रणविषापहा ।

वन्दा, वृक्षादनी, वृक्षभक्ष्या और वृक्षरुहा यह वन्देके नाम है । वन्दा—शीतल, तिक्त, कषाय, रसमें मधु, मंगलकारक तथा कफ, वात, रक्तविकार, राक्षसरोग, व्रण और विषको हरता है ॥ २६७ ॥

वटपत्री ।

वटपत्री तु कथिता मोहनी रेवती बुधैः ॥ २६८ ॥
वटपत्री कषायोष्णा योनिमूत्रगदापहा ।

वटपत्री, मोहनी और रेवती यह वटपत्रीके नाम है । वटपत्री—कसैली, गरम तथा योनि और मूत्रके रोगोंको हरती है ॥ २६८ ॥

हिंगुपत्री ।

हिंगुपत्री तु कवरी पृथ्वीका पृथुका पृथुः ॥२६९॥
हिंगुपत्री भवेद्रुच्या तीक्ष्णोष्णा पाचनी कटुः ।
हृद्बस्तिरुग्विबंधार्शःश्लेष्मगुल्मानिलापहा ॥ २७०॥

हिंगुपत्री, कवरी, पृथ्वीका, पृथुका, पृथु यह हिंगुपत्रीके नाम है । हिंगु-पत्री—रुचिकारक, तीक्ष्ण, उष्ण, पाचन, कटु तथा हृदयरोग, वस्तिके रोग, विबन्ध, अर्श, कफ, गुल्म और वात इनको जीतनेवाली है ॥२६९॥२७०॥

वंशपत्री ।

वंशपत्री वेणुपत्री पिंगा हिंगुशिवाटिका ।
हिंगुपत्रीगुणा विज्ञैर्वंशपत्रीव कीर्तिताः ॥ २७१ ॥

वंशपत्री, वेणुपत्री, पिङ्गा और हिंगुशिवाटिका यह वंशपत्रीके नाम हैं। इसके गुण विद्वानोंने हिंगुपत्रीके समान ही कहे हैं ॥ २७१ ॥

मत्स्याक्षी ।

मत्स्याक्षी बाह्लिकी मत्स्यगंधा मत्स्यादनीति च ।
मत्स्याक्षी ग्राहणी शीता कुष्ठपित्तकफास्रजित् २७२
लघुस्तिक्ता कषाया च स्वादी कटुविपाकिनी ।

मत्स्याक्षी, बाह्लिकी, मत्स्यगन्धा, मत्स्यादनी ये मत्सीके नाम हैं। मत्सी—ग्राही, शीतल, लघु, तिक्त, कसैली, स्वादु, कटुपाकी तथा कुष्ठ, पित्त, कफ और रक्तविकार इनको नष्ट करनेवाली है इसको मछेछी भी कहते हैं॥२७२॥

सर्पाक्षी ।

सर्पाक्षी स्यात्तु गंडाली तथा नाडीकलायका॥२७३॥
सर्पाक्षी कटुका तिक्ता सोष्णा कृमिनिकृन्तनी ।
वृश्चिकोंदुरुसर्पाणां विषघ्नी व्रणरोपणी ॥ २७४ ॥

सर्पाक्षी, गण्डाली और नाडीकलायका यह सरहटी (गोहके आदे) के नाम है। सर्पाक्षी—कटु, तिक्त, गरम तथा कृमि, विच्छु, चूहा और सांप इनके विषको मारनेवाली तथा व्रणको भरनेवाली है ॥ २७३ ॥ २७४ ॥

शंखपुष्पी ।

शंखपुष्पी तु शंखाह्वा मांगल्या कुसुमापि च ।
शंखपुष्पी सरा मेध्या वृष्या मानसरोगहृत्॥२७५॥

रसायनी कषायोष्णा स्मृतिकांतिबलाग्निदा ।
दोषापस्मारभूतादिकुष्ठक्रिमिविषप्रणुत् ॥ २७६ ॥

शंखपुष्पी, शंखाह्वा और मांगल्यकुसुमी यह शंखपुष्पीके नाम हैं । शंखपुष्पी–दस्तावर, बुद्धिवर्धक, वीर्यवर्धक, मानासिकरोगनाशक, रसायन, कषाय, उष्ण तथा स्मृति, कान्ति, वल और अग्नि इनको वढानेवाली है। दोष, अपस्मार, भूतादि रोग, कृमि तथा विषको हरनेवाली है ॥ २७५ ॥ २७६ ॥

अर्कपुष्पी ।

अर्कपुष्पी क्रूरकर्मा पयस्या जलकामुका ।
अर्कपुष्पी कृमिश्लेष्ममेहपित्तविकारजित् ॥२७७॥

अर्कपुष्पी, क्रूरकर्मा, पयस्या और जलकामुका यह अर्कपुष्पीके नाम है। हिन्दी भाषामें इसे अर्कफूली भी कहते हैं ।

अर्कपुष्पी–कृमि, कफ, प्रमेह और पित्तके विकारोंको जीतती है॥२७७॥

लज्जालुः ।

लज्जालुर्हि शमीपत्रा समंगा जलकर्णिका ।
रक्तपादी नमस्कारी नाम्ना खदिरकेत्यपि ॥२७८ ॥
लज्जालुः शीतला तिक्ता कषाया कफपित्तजित् ।
रक्तपित्तमतीसारं योनिरोगान्विनाशयेत् ॥ २७९ ॥

लज्जालु, शमीपत्रा, समङ्गा, जलकर्णिका, रक्तपादी, नमस्कारी, खदिरका यह लाजवन्तीके नाम है । हिन्दी भाषामें इसे छुईमुई कहते हैं । लाजवन्ती–शीतल, तिक्त और कषाय है तथा कफ, पित्त, रक्तपित्त, अतिसार और योनिरोगोंको दूर करती है ॥ २७८ ॥ २७९ ॥

तद्भेदः अलंबुषा ।

अलंबुषा खरत्वक् च तथा मेदोगला स्मृता ।
अलंबुषा लघुः स्वादुः कृमिपित्तकफापहा ॥२८०॥

लाजवन्तीका भेद अलम्बुषा, खरत्वक् और मेदोगला यह अलम्बुषाके

नाम है । अलम्बुषा—हलकी, स्वादु, कृमि, पित्त और कफको नाश करनेवाली है ॥ २८० ॥

दुग्धिका ।

दुग्धिका स्वादुपर्णी स्यात्क्षीरावी क्षीरिवी तथा ।
दुग्धिकोष्णा गुरू रूक्षा वातला गर्भकारिणी २८१
स्वादुक्षीरा कटुस्तिक्ता सृष्टमूत्रमलापहा ।
स्वादुर्विष्टंभनी वृष्या कफकोष्ठकृमिप्रणुत् ॥२८२ ॥

दुग्धिका, स्वादुपर्णी, क्षीरावी, क्षीरिवी यह दुधलीके नाम हैं । दुग्धिका—गुरु, रूक्ष, वातकारक, गर्भकारिणी, स्वादु, दूधवाली, कटु, तिक्त, मूत्र और मलको निकालनेवाली, स्वादु, विष्टम्भकारी, वृष्य तथा कफ, कोढ और कृमियोंको दूर करनेवाली है ॥ २८१ ॥ २८२ ॥

भूम्यामलकी ।

भूम्यामलकिका प्रोक्ता शिवा तामलकीति च ।
बहुपत्रा बहुफला बहुवीर्य्या जटापि च ॥ २८३ ॥
भूधात्री वातकृत्तिक्ता कषाया मधुरा हिमा ।
पिपासाकासपित्तास्रकफपांडुक्षतापहा ॥ २८४ ॥

भूम्यामलकी, शिवा, तामलकी, बहुफला, बहुवीर्या, जटा यह भूंई आमलेके नाम है । भूंई आमला—वातकारक, तिक्त, कषाय, मधुर और शीतल है तथा प्यास, खाँसी, पित्त, रक्त, कफ, पाण्डु और क्षतको हरनेवाला है । भूमि-आमला—पाताल आमला इन नामोंसे प्रसिद्ध है ॥ २८३ ॥ २८४ ॥

ब्राह्मी ।

ब्राह्मी कपोतवंका च सोमवल्ली सरस्वती ।
मंडूकपर्णी मांडूकी त्वाष्ट्री दिव्या महौषधी॥२८५॥

ब्राह्मी हिमा सरा तिक्ता लघुर्मेध्या च शीतला।
कषाया मधुरा स्वादुपाका पुण्या रसायनी ॥२८६
स्वर्य्या स्मृतिप्रदा कुष्ठपांडुमेहास्त्रकासजित्।
विषशोथज्वरहरी तद्वन्मंडूकपर्णिका ॥ २८७ ॥

ब्राह्मी, कपोतवंका, सोमवल्ली, सरस्वती यह ब्राह्मीके नाम हैं। मण्डूकपर्णी, माण्डूकी, त्वाष्ट्री, दिव्या और महौषधी यह मण्डूकपर्णीके नाम है।

ब्राह्मी—शीतल, दस्तावर, तिक्त, हलकी, बुद्धिवर्धक, ठण्डी, कषाय, मधुर, स्वादुपाकी, पुण्यजनक, रसायनी, स्वरवर्धक, स्मृतिवर्द्धक, कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, रक्तविकार, खांसी, विष, शोथ और ज्वरके हरनेवाली है। ब्राह्मीके समान ही मण्डूकपर्णीके गुण है। ब्राह्मी और मण्डूकपर्णीमें बड़े छोटे पत्रका किंचित् भेद है, परन्तु बंगालके वैद्य जलनीमको ब्राह्मी और दोनों प्रकारकी ब्राह्मीको मण्डूकपर्णी ही मानते है ॥ २८५–२८७ ॥

द्रोणपुष्पी।

द्रोणा च द्रोणपुष्पी च फलपुष्पा च कीर्तिता।
द्रोणपुष्पी गुरुः स्वादू रूक्षोष्णा वातपित्तकृत् २८८
सतीक्ष्णा लवणा स्वादुपाका कट्वी च भेदनी।
कफामकामलाशोथतमकश्वासजंतुजित् ॥ २८९ ॥

द्रोणा, द्रोणपुष्पी और फलपुष्पा यह द्रोणपुष्पीके नाम हैं। देशभाषामें इसको गुम्मा और दड़घल भी कहते हैं। द्रोणपुष्पी—भारी, स्वादु, रूक्ष, उष्ण, वातपित्तकारक, तीक्ष्ण, लवणरसयुक्त, स्वादुपाकी, कटु और दस्तावर है तथा कफ, आम, कामला, शोथ, तमकश्वास और कृमियोंको जीतनेवाली है ॥ २८८ ॥ २८९ ॥

सुवर्चला।

सुवर्चला सूर्य्यभक्ता वरदा बदरापि च।
सूर्य्यावर्ता रविप्रीता परा ब्रह्मसुवर्चला ॥ २९० ॥

सुवर्चला हिमा रूक्षा स्वादुपाका सरा गुरुः ।
अपित्तला कटुः क्षारा विष्टंभकफवातजित् ॥ २९१॥
अन्या तिक्ता कषायोष्णा सरा रूक्षा लघुः कटुः ।
निहंति कफपित्तास्रश्वासकासारुचिज्वरान् ॥२९२॥
विस्फोटकुष्ठमेहास्रयोनिरुक्क्रुमिपांडुताः ।

सुवर्चला, सूर्यभक्ता, वरदा, वदरा, सूर्य्यावर्त्ता, रविप्रीता यह सुवर्चलाके नाम है । दूसरी ब्रह्मसुवर्चला होती है। सुवर्चला-शीतल, रूक्ष, स्वादुपाकी, दस्तावर, भारी, पित्त न करनेवाली, कटु और क्षार होती है । तथा विष्टम्भ, कफ और वातको जीतनेवाली है । ब्रह्मसुवर्चला-कषाय, उष्ण, दस्तावर, रूक्ष, हलकी और कटु है तथा कफ, रक्तपित्त, श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, विस्फोटक, कुष्ठ, प्रमेह, रक्तविकार, योनिरोग, कृमि और पाण्डुरोगका नाश करती है । इसको हिन्दीभाषामें हुलहुल, फारसीमें आफताबपरस्त और अंग्रेजीमें Suu flower कहते है ॥ २९०-२९२ ॥

वंध्याकर्कोटकी ।

वंध्याकर्कोटकी देवी कन्या योगेश्वरीति च ॥२९३॥
नागारिर्नागदमनी विषकंटकिनी तथा ।
वंध्याकर्कोटकी लघ्वी कफनुद्व्रणशोधनी ॥ २९४॥
सर्पदर्पहरी तीक्ष्णा विसर्पविषहारिणी ।

वन्ध्याकर्कोटकी, देवी, कन्या, योगेश्वरी, नागरी, नागदमनी और विषकण्टकिनी यह बांझककोडेके नाम है । बांझककोडा-हलका, कफनाशक, व्रणशोधक, सर्पदर्पनाशक, तीक्ष्ण, विसर्प और विषको हरनेवाला है । बांझककोडेकी बेल होती है । इसकी जडमेंसे कन्द निकलता है और प्रायः वही सब काम आता है ॥ २९३ ॥ २९४ ॥

मार्कंडिका ।

मार्कंडिका भूमिचरी मार्कंडी मृदुरेचनी ॥ २९५ ॥
मार्कंडिका कुष्ठहरी ऊर्ध्वाधःकायशोधनी ।
विषदुर्गंधकासघ्नी गुल्मोदरविनाशनी ॥ २९६ ॥

मार्कंडिका, भूमिचरी, मार्कण्डी और मृदुरेचनी यह मार्कण्डिकाके नाम है । इसको देशभाषामें भुईखाखसा कहते है । भूईखाखसा–कुष्ठको हरनेवाली, वमन विरेचन द्वारा दोनों ओरसे शरीरको शुद्ध करनेवाली तथा विष, दुर्गन्ध, खांसी, गुल्म और उदररोगको नष्ट करती है ॥ २९५ ॥ २९६ ॥

देवदाली ।

देवदाली तु वेणी स्यात्कर्कोटी च गरागरी ।
देवताडो वृत्तकोषस्तथा जीमूत इत्यपि ॥ २९७ ॥
पीतापरा खरस्पर्शा विषघ्नी गरनाशनी ।
देवदाली रसे तिक्ता कफार्शःशोफपांडुताः ॥२९८॥
नाशयेद्वामनी तिक्ता क्षयहिक्काक्रुमिज्वरान् ।
देवदालीफलं तिक्तं क्रुमिश्लेष्मविनाशनम् ॥ २९९॥
संस्रनं गुल्मशूलघ्नमर्शोघ्नं वातजित्परम् ।

देवदाली, वेणी, कर्कोटी, गरागरी, देवताड, वृत्तकोश और जीमूत यह चन्दाल डोडेके नाम है । इसको घघरवेल भी कहते है, इसका भेद पीतदेवदाली है । इसके नाम खरस्पर्शा, विषघ्नी और गरनाशिनी है । देवदाली-रसमें तिक्त है, कफ, अर्श, सूजन और पाण्डुरोगको नष्ट करती है । एवं वमनकर्त्ता, तिक्त तथा क्षय, हिचकी, क्रमि और ज्वरोंको नष्ट करती है । देवदालीके फल–तिक्त हैं, क्रमि, कफ, गुल्म, शूल, अर्श और व्रायुको जीतनेवाले हैं तथा दस्तावर है ॥ २९७–२९९ ॥

जलपिप्पली ।

जलपिप्पल्यभिहिता शारदी शकुलादनी ॥२००॥
मत्स्यादनी मत्स्यगंधा लांगलीत्यपि कीर्तिता ।
जलपिप्पलिका हृद्या चक्षुष्या शुक्रला लघुः॥२०१॥
संग्राहणी हिमा रूक्षा रक्तदाहव्रणापहा ।
कटुपाकरसा रुच्या कषाया वह्निवर्द्धनी ॥ २०२ ॥

जलपिप्पली, शारदी, शकुलादनी, मत्स्यादनी, मत्स्यगन्धा, लांगली यह जलपीपलके नाम हैं, जलपीपल—हृदयके लिये हितकारी, नेत्रोंको हितकारी, वीर्यवर्द्धक, हल्की, संग्राही, शीतल, रूक्ष तथा रक्त, दाह और व्रणोंको हरनेवाली, पाक और रसमें कटु, रुचिकारक, कसैली और अग्निको बढानेवाली है ॥ २००–२०२ ॥

गोजिह्वा ।

गोजिह्वा गोजिका गोजी दार्विका खरपर्णिनी ।
गोजिह्वा वातला शीता ग्राहणी कफपित्तनुत्॥२०३॥
हृद्या प्रमेहकासास्रव्रणज्वरहरी लघुः ।
कोमला तुवरा तिक्ता स्वादुपाकरसा स्मृता॥२०४॥

गोजिह्वा, गोजी, दार्विका, गोजिका, खरपर्णिनी यह गोजिया घासके नाम है । इसको मन्तल, गाजवां और काहजवां भी कहते हैं । गोजिह्वा-वातकारक, शीतल, ग्राही, कफपित्तनाशक, हृदयको हितकारी, प्रमेह, कास, रक्तविकार, व्रण और ज्वरको हरनेवाली, कोमल, कसैली, तिक्त, पाक और रसमें स्वादु होती है ॥ २०३ ॥ २०४ ॥

नागदमनी ।

विज्ञेया नागदमनी बलामोटा विषापहा ।
नागपुष्पी नागपत्री महायोगेश्वरीति च ॥ २०५ ॥

बलामोटा कटुस्तिक्ता लघुः पित्तकफापहा ।
मूत्रकृच्छ्रव्रणान् रक्षो नाशयेज्जालगर्दभम् ॥ २०६॥
सर्वग्रहप्रशमनी विशेषविषनाशनी ।
जयं सर्वत्र कुरुते धनदा सुमतिप्रदा ॥ ३०७ ॥

नागदमनी, बलामोटा, विषापहा, नागपत्री, नागपुष्पी, महायोगेश्वरी यह नागदमनीके नाम हैं। नागदमनी–कटु, तिक्त, हलकी, पित्त कफनाशक तथा मूत्रकृच्छ्र, व्रण, राक्षसभय, जालगर्दभ और सर्व ग्रहोंको शमन करनेवाली है। विशेषतासे विषको नष्ट करती है तथा धन, बुद्धि और सर्वत्र जयको देनेवाली है ॥ २०५–३०७ ॥

वेल्लंतरी ।

वेल्लंतरो जगति वीरतरुः प्रसिद्धः
श्वेतासितारुणविलोहितनीलपुष्पः ।
स्याज्जातितुल्यकुसुमः शमिसूक्ष्मपत्रः
स्यात्कंटकी सजलदेशज एष वृक्षः ॥ ३०८ ॥
वेल्लंतरो रसे पाके तिक्तस्तृष्णाकफापहा ।
मूत्राघाताश्मजिद्ग्राहीयोनिमूत्रानिलार्तिजित् ३०९

वेलन्तर, वीरतरु नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध है। इसमें श्वेत, काले, लाल, अत्यन्त लाल और नीलवर्णके पुष्प आते है। इसमें पुष्प चमेलीके पुष्पोंके समान, इसके पत्र शमीके पत्रोंके समान और बारीक होते है। इसकी टहनियोंमें कांटे होते है। इसके वृक्ष जलवाली भूमिमें उत्पन्न होते हैं। वेलन्तर–रसमें और पाकमें तिक्त होता है तथा प्यास, कफ, मूत्राघात औ पथरीको जीतता है। ग्राही है, योनिरोग, मूत्ररोग और वायुकी पीड़ाको दूर करता है ॥ ३०८ ॥ ३०९ ॥

छिक्कनी ।

छिक्कनी क्षवकृत्तीक्ष्णा छिक्किका घ्राणदुःखदा ।
छिक्कनी कटुका रुच्या तीक्ष्णोष्णा वह्निपित्तकृत् ।
वातरक्तहरी कुष्ठकृमिवातकफापहा ॥ २१० ॥

छिक्कनी, क्षवकृत्, तीक्ष्णा, छिक्किका, घ्राणदुःखदा यह नकछिकनीके नाम है । नकछिक्नी–कटु, रुचिकारक, तीक्ष्ण, उष्ण, वह्नि तथा पित्तको बढानेवाली तथा वातरक्त, कुष्ठ, कृमि और वात कफको हरनेवाली है । नकछिक्नीके क्षुप जमीनपर छाए हुए होते हैं और यह छिकनी नामसे प्रसिद्ध है ॥ २१० ॥

वर्वरी ।

वर्वरी कबरी तुंगी खरपुष्पाजगंधिका ।
वर्वरी तु लघू रुच्या हृद्या च कफवातहृत् ॥ २११ ॥

वर्वरी, कवरी, तुंगी, खरपुष्पा, अजगन्धिका यह नगन्धवावरीके नाम है । नगन्धवावरी–हलकी, रुचिकर, हृदयको हितकारी, कफ और वातको जीतनेवाली है ॥ २११ ॥

ककुंदरः ।

ककुंदरस्ताम्रचूडः सूक्ष्मपत्रो मृदुच्छदः ।
ककुंदरः कटुस्तिक्तो ज्वररक्तकफापहः ॥ २१२ ॥
तन्मूलमार्द्रं निक्षिप्तं वदने मुखशोषहृत् ।

ककुन्दर, ताम्रचूड, सूक्ष्मपत्र, मृदुच्छद ये कुकरौंदाके नाम है । कोई इसे कुकरभंगरा और कुकडछिद्दी कहते है । कुकडछिद्दी–कटु, तिक्त तथा ज्वर, रक्त और कफको हरनेवाली है । इसकी गीली जडको मुखमें रखनेसे मुखका सूखना बन्द होता है ॥ २१२ ॥

सुदर्शना ।

सुदर्शना सोमवल्ली चक्राह्वा मधुपर्णिका ॥ ३१२ ॥
सुदर्शना स्वादुरुष्णा कफशोफास्रवातजित् ।

सुदर्शना, सोमवल्ली, चक्राह्वा, मधुपर्णिका यह सुदर्शनाके नाम है । सुदर्शना–स्वादु, उष्ण, कफ, सूजन, रक्त और वातको जीतनेवाली है॥ ३१३॥

आखुकर्णी ।

आखुकर्णी त्वाखुकर्णपर्णिका भूदरीभवा ॥ ३१४ ॥
आखुकर्णी कटुस्तिक्ता कषाया शीतला लघुः ।
विपाके कटुका मूत्रकफामयक्रिमिप्रणुत् ॥ ३१५ ॥

आखुकर्णी, आखुकर्णपर्णिका, भूदरीभवा यह मूसाकन्नीके नाम हैं । मूसाकन्नी–कटु, तिक्त, कषाय, शीतल और हलकी है, विपाकमें कटु तथा मूत्र और कफके रोगों और कृमियोंको दूर करती है ॥ ३१४ ॥ ३१५ ॥

मयूरशिखा ।

मयूराह्वशिखा प्रोक्ता सहस्रांघ्रिर्मधुच्छदा ।
नीलकण्ठशिखा लघ्वी पित्तश्लेष्मातिसारजित् ३१६

इति गुडूच्यादिवर्गः ।

मयूरशिखा, सहस्रांघ्रि, मधुच्छदा, नीलकण्ठशिखा यह मोरशिखाके नाम है । मोरशिखा–हल्की, पित्त, कफ और अतिसारको जीतनेवाली है ॥ ३१६ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज–विद्यालङ्कारशिवशर्म–
वैद्यशास्त्रिकृत–शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि–
निघण्टौ गुडूच्यादिवर्गः समाप्तः ॥ २ ॥

पुष्पवर्गः ४.



तत्रादौ कमलस्य नामानि गुणाश्च ।

वा पुंसि पद्मं नलिनमरविंदं महोत्पलम् ।
सहस्रपत्रं कमलं शतपत्रं कुशेशयम् ॥ १ ॥
पंकेरुहं तामरसं सारसं सरसीरुहम् ।
बिसप्रसूनराजीवपुष्कराम्भोरुहाणि च ॥ २ ॥
कमलं शीतलं वर्ण्यं मधुरं कफपित्तजित् ।
तृष्णादाहास्रविस्फोटविषवीसर्पनाशनम् ॥ ३ ॥
विशेषतः सितं पद्मं पुंडरीकमिति स्मृतम् ।
रक्तं कोकनदं ज्ञेयं नीलमिंदीवरं स्मृतम् ॥ ४ ॥
धवलं कमलं शीतं मधुरं कफपित्तजित् ।
तस्मादल्पगुणं किंचिदन्यद्रक्तोत्पलादिकम् ॥ ५ ॥

कमलके नाम तथा गुणोंको कहते है–

पद्म शब्द पुंल्लिंग तथा नपुंसक दोनोंमें होता है । पद्म, नलिन, अरविन्द, महोत्पल, सहस्रपत्र, कमल, शतपत्र, कुशेशय, पंकेरुह, तामरस , सारस. सरसीरुह. बिसप्रसून, राजीव, पुष्कर तथा अम्भोरुह यह कमलके नाम है । इसको हिन्दीमें कमल, अंग्रेजीमें Lotus कहते है ।

कमल–शीतल, वर्णको उत्तम करनेवाला, मधुर, कफ तथा पित्तको जीतनेवाला, तथा प्यास, दाह, रक्तविकार. विस्फोट, विष और विसर्प इनको नष्ट करनेवाला है । श्वेत कमलको पुण्डरीक, लालकमलको रक्तनद और नीले कमलको इन्दीवर कहते हैं । श्वेत कमल–शीतल, मधुर तथा कफ और पित्तको जीतनेवाला है । अन्य रक्तादि कमल इससे किंचिन्न्यूनगुणोंवाले है ॥ १–५ ॥

पद्मिनी ।

मूलनालदलोत्फुल्लफलैः समुदिता पुनः ।
पद्मिनी प्रोच्यते प्राज्ञैर्बिसिन्यादिश्च सा स्मृता॥६॥
आदिशब्दात् नलिनीकमलिनीत्यादिः ।
पद्मिनी शीतला गुर्वी मधुरा लवणा च सा ।
पित्तासृक्कफनुद्रूक्षा वातविष्टंभकारिणी ॥ ७ ॥

मूल, नाल, पत्र आदि युक्त और प्रफुल्लित कमलको पद्मिनी तथा बिसिनी कहते हैं ।

पद्मिनी–शीतल, भारी, मधुर, लवणरसयुक्त, वात तथा मलके विष्टम्भको करनेवाली तथा पित्त, रक्तविकार, कफ इनको नष्ट करनेवाली और रूक्ष है ॥ ६ ॥ ७ ॥

नवपत्रादि ।

संवर्तिका नवदलं बीजकोशोऽब्जकर्णिका ।
किञ्जल्कः केसरः प्रोक्तो मकरंदो रसः स्मृतः ॥ ८॥
पद्मनालं मृणालं स्यात्तथा बिसमिति स्मृतम् ।
संवर्तिका हिमा तिक्ता कषाया दाहतृट्प्रणुत् ॥९ ॥
मूत्रकृच्छ्रगदव्याधिरक्तपित्तविनाशिनी ।
पद्मस्य कर्णिका तिक्ता कषाया मधुरा हिमा॥१०॥
मुखवैशद्यकृल्लघ्वी तृष्णासृक्कफपित्तनुत् ।
किंजल्कः शीतलो वृष्यः कषायो ग्राहकोऽपि सः११
कफपित्ततृषादाहरक्तार्शोविषशोथजित् ।
मृणालं शीतलं वृष्यं पित्तदाहास्रजिद्गुरुः ॥ १२ ॥

दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम् ।
संग्राहि मधुरं रूक्षं शालूकमपि तद्गुणम् ॥ १३ ॥

कमलिनीके नवीन पत्रोंको संवर्तिका, बीजकोशको अब्जकर्णिका, केशरको किञ्जल्क तथा इसके रसको मकरंद कहते है। पद्मकी नालको मृणाल तथा बिस या भिस, भसीड़ा कहते है ।

संवर्तिका–शीतल, तिक्त, कसैली, दाह और प्यासको हरनेवाली तथा मूत्रकृच्छ्र, गुदाके रोग और रक्त पित्तको नष्ट करनेवाली है ।

अब्जकर्णिका–तिक्त, कसैली, मधुर, शीतल, मुखको स्वच्छ करनेवाली, हलकी तथा प्यास, रक्तविकार और कफको जीतनेवाली है ।

किंजल्क–शीतल, वीर्य्यवर्धक, कसैला, ग्राही और कफ, पित्त, प्यास, दाह, रक्तविकार, अर्श, विष तथा शोथको जीतनेवाला है ।

मृणाल–शीतल, वीर्यवर्धक, पित्त, दाह और रक्तविकारको जीतनेवाला, दुर्जर, पाकमें मधुर, दूध, वायु तथा कफको बढानेवाला, ग्राही, मधुर तथा रूक्ष है। शालूक (कमलका कन्द) में भी मृणालके समान गुण है ॥ ८–१३ ॥

स्थलकमलिनी ।

पद्मचारिण्यतिचराऽव्यथा पद्मा च शारदी ।
पद्मानुष्णा कटुस्तिक्ता कषाया कफवातजित् ॥ १४ ॥
मूत्रकृच्छ्राश्मशूलघ्नी श्वासकासविषापहा ।

पद्मचारिणी, अतिचरा, अव्यथा, पद्मा और शारदी यह स्थलकमलिनीके नाम हैं ।

स्थलकमलिनी–अनुष्ण, कटु, तिक्त, कसैली, कफ और वातको जीतनेवाली तथा मूत्रकृच्छ्र, पथरी, शूल, श्वास, कास और विष इनको दूर करती है ॥ १४ ॥

कुमुदम् ।

श्वेतं कुवलयं प्रोक्तं कुमुदं कैरवन्तथा ॥ १५ ॥
कुमुदं पिच्छिलं स्निग्धं मधुरं ह्लादि शीतलम् ।

श्वेत कुवलयको कुमुद और कैरव कहते हैं। इसे हिन्दीमें भमुल कहते हैं।

कुमुद-पिच्छिल, स्निग्ध, मधुर, पित्तको प्रसन्न करनेवाला तथा शीतल है ॥ १५ ॥

कुमुदिनी।

कुमुद्वती कैरविका तथा कुमुदिनीति च ॥ १६ ॥
सा तु मूलादिसर्वांगैरुदिता समुदिता बुधैः।
पद्मिन्या ये गुणाः प्रोक्ताः कुमुदिन्यामपि स्मृताः १७

मूलादि सम्पूर्ण अङ्गयुक्त कुमुदको मुकुदिनी कहते हैं। कुमुद्वती, कैरविका और कुमुदिनी यह उसके नाम हैं। जो गुण पद्मिनीके कहे हैं वह कुमुदिनीमें भी हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥

जलकुंभी सेवालम्।

वारिपर्णी कुंभिका स्याच्छेवालं शैवलं च तत्।
वारिपर्णी हिमा तिक्ता लघ्वी स्वाद्वी सरा कटुः १८॥
दोषत्रयहरी रूक्षा शोणितज्वरशोषकृत्
शैवालं तुवरं तिक्तं मधुरं शीतलं लघु ॥ १९ ॥
स्निग्धं दाहतृषापित्तरक्तज्वरहरं परम्।

वारिपर्णी, कुंभिका, शेवाल और शैवाल यह शैवालके नाम हैं। इसको हिन्दीमें शैवाल कहते है।

शैवाल-शीतल, तिक्त, हलका, मधुर, दस्तावर, कटु, त्रिदोषनाशक, रूक्ष तथा रक्तविकार, ज्वर और शोषको नष्ट करता है। शैवाल-कसैला, तिक्त, मधुर, शीतल, हलका, स्निग्ध तथा दाह, प्यास, पित्त, रक्तविकार और ज्वर इनको अत्यन्त हरनेवाला है ॥ १८ ॥ १९ ॥

शतपत्री।

शतपत्री तरुण्युक्ता कर्णिका चारुकेसरा ॥ २० ॥
सहा कुमारी गंधाढ्या लाक्षापुष्पातिमंजुला।

शतपत्री हिमा हृद्या ग्राहिणी शुक्रला लघुः ॥२१॥
दोषत्रयास्रजिद्वर्ण्या तिक्ता कट्वी च पाचनी ।

शतपत्री, तरुणी, कर्णिका, चारुकेसरा, सहा, कुमारी, गंधाढ्या, लाक्षापुष्पा तथा अतिमञ्जुला यह गुलाबके नाम हैं। इसको हिन्दीमें गुलाब, फारसीमें गुलेसुर्ख तथा अंग्रेजीमें Cabbagerose कहते है ।

शतपत्री–शीतल, हृदयको प्रिय, ग्राही, वीर्य्यवर्धक, हलकी, त्रिदोष तथा रक्तविकारको नष्ट करनेवाली, वर्णको उत्तम करनेवाली, तिक्त, कटु और पाचन है ॥ २० ॥ २१ ॥

वासन्ती ।

नैपाली कथिता तज्ज्ञैः सप्तला नवमालिका ॥२२॥
वासंती शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयास्रजित् ।

नैपाली, सप्तला, नवमालिका और वासन्ती यह नवमालिकाके नाम हैं। इसे हिन्दीमें नेवारी या वासन्ती कहते है ।

नेवारी–शीतल, हलकी, तिक्त और त्रिदोषनाशक है ॥ २२ ॥

वार्षिकी ।

श्रीपदी षट्पदा नंदा वार्षिकी मुक्तबंधना ॥ २३ ॥
वार्षिकी शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयापहा ।
कर्णाक्षिमुखरोगघ्नी तत्तैलं तद्गुणं स्मृतम् ॥ २४ ॥

श्रीपदी, षट्पदा, नन्दा, वार्षिकी और मुक्तबन्धना यह श्रीपदीके नाम है।

श्रीपदी–शीतल, हलकी, तिक्त, त्रिदोषनाशक और कर्णरोग, अक्षिरोग और मुखरोगोंको हरनेवाली है। इसके तैलमें भी इसके समान गुण है ॥ २३ ॥ २४ ॥

स्वर्णजातिका ।

जातिर्जाती च सुमना मालती राजपुत्रिका ।
चेतकी हृद्यगंधा च सा पीता स्वर्णजातिका ॥२५॥

जातीयुगं तिक्तमुष्णं तुवरं लघु दोषजित् ।
शिरोऽक्षिमुखदंतार्तिविषकुष्ठव्रणास्रजित् ॥ २६ ॥

जाति, जाती, सुमना, मालती, राजपुत्रिका, चेतकी और हृद्यगन्धा, यह चेतकीके नाम हैं । पीली चेतकीको स्वर्णजातिका कहते हैं । इसको हिन्दीमें चमेली और चम्बेली तथा अंग्रेजीमें Spanish Jasmine कहते है ।

दोनों प्रकारकी चमेली—तिक्त, गरम, कसैली, हलकी, त्रिदोषनाशक और शिरोरोग, अक्षिरोग, मुखरोग, दन्तोंकी पीडा, कुष्ठ, व्रण और रक्तविकारको हरनेवाली है ॥ २५ ॥ २६ ॥

यूथिका ।

यूथिका गणकांबष्टा सा पीता हेमपुष्पिका ।
यूथीयुगं हिमं तिक्तं कटुपाकरसं लघु ॥ २७ ॥
मधुरं तुवरं हृद्यं पित्तघ्नं कफवातलम् ।
व्रणास्रमुखदंताक्षिशिरोरोगविषापहम् ॥ २८ ॥

यूथिका, गणका और अम्बष्ठा यह जूहीके नाम हैं । हेमपुष्पिका पीली जूहीका नाम है ।

दोनों प्रकारकी जूही—शीतल, तिक्त, पाक और रसमें कटु, हलकी, मधुर, कसैली, हृदयको प्रिय, पित्तनाशक, कफ और वातको वढानेवाली तथा व्रण, रक्तविकार, मुखरोग, दन्तरोग, अक्षिरोग, शिरोरोग और विषका नाश करनेवाली है ॥ २७ ॥ २८ ॥

चांपेयः ।

चांपेयश्चंपकः प्रोक्तो हेमपुष्पश्च स स्मृतः ।
एतस्य कलिका गंधफलीति कथिता बुधैः ॥२९॥

चंपकः कटुकस्तिक्तः कषायो मधुरो हिमः ।
विषक्रिमिहरः कृच्छ्रकफवातास्रपित्तजित् ॥ ३० ॥

चांपेय, चम्पक और हेमपुष्प यह चम्पकके नाम हैं । इसे हिन्दीमें चम्पा कहते हैं । इसकी चम्पोतियोंको गन्धफली कहा जाता है । चम्पक–कटु, तिक्त, कसैला, मधुर, शीतल, विष और कृमियोंको हरनेवाला तथा कृच्छ्र, कफ, वात और रक्तपित्तको नष्ट करनेवाला है ॥ २९ ॥ ३० ॥

बकुलः ।

बकुलो मधुगंधश्च सिंहकेसरकस्तथा ।
बकुलस्तुवरोऽनुष्णः कटुपाकरसो गुरुः ॥ ३१ ॥
कफपित्तविषश्वित्रकृमिदंतगदापहा ।

बकुल, मधुगन्ध और सिंहकेसर ये बकुलके नाम हैं । इसे हिन्दीमें मौलसिरी तथा अंग्रेजीमें Surinam medlar कहते है ।

बकुल–कसैला, अनुष्ण, पाक और रसमें कटु, भारी और कफ, पित्त, विष, श्वित्र, कृमि तथा दांतोंकी व्याधियोंको दूर करनेवाला है ॥ ३१ ॥

वकः ।

शिवमल्ली पाशुपत एकाष्ठीलो बको वसुः ॥ ३२ ॥
बकोऽनुष्णः कटुस्तिक्तः कफपित्तविषापहा ।
योनिदोषतृषादाहकुष्ठशोथास्रनाशनः ॥ ३३ ॥

शिवमल्ली, पाशुपत, एकाष्ठील, बक तथा वसु यह बडी मौलसिरीके नाम है ।

बडी मौलसिरी–अनुष्ण, कटु, तिक्त और कफ, पित्त, विष, योनिदोष, प्यास, दाह, कुष्ठ, शोथ तथा रक्तविकारको नष्ट करती है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

कदंबः ।

कदंबः प्रियको नीपो वृत्तपुष्पो हलिप्रियः ।

कदंबो मधुरः शीतः कषायो लवणो गुरुः ॥३४॥
सरोऽवष्टंभकृद्रूक्षः कफस्तन्यानिलप्रदः ।

कदंब, प्रियक, नीप, वृत्तपुष्प तथा हलिप्रिय यह कदंबके नाम हैं। कदंब—मधुर, शीतल, कसैला, लवणरसवाला, भारी, दस्तावर, पेटमें हवा भरनेवाला, रूक्ष और कफ, दूध तथा वायुको बढ़ानेवाला है ॥ ३४ ॥

कुब्जकः ।

कुब्जको भद्रतरुणी बृहत्पुष्पोऽतिकेसरः ॥ ३५ ॥
महासहा कंटकाढ्या नीलाऽलिकुलसंकुला ।
कुब्जकः सुरभिः स्वादुः काषायानुरसः सरः ॥३६॥
त्रिदोषशमनो वृष्यः शीतहर्ता च स स्मृतः ।

कुब्जक, भद्रतरुणी, बृहत्पुष्प, अतिकेसर, महासहा, कंटकाढ्य, नीला और अलिकुलसंकुला यह कुब्जकके नाम हैं। इसे हिन्दीमें कूजा कहते हैं।
कुब्जक—सुगन्धयुक्त, मधुर, कसैला, दस्तावर, त्रिदोषनाशक, वीर्यवर्धक तथा शीतको हरनेवाला है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

मल्लिका ।

मल्लिका मदयंती च शीतभीरुश्च भूपदी ॥ ३७ ॥
मल्लिकोष्णा लघुर्वृष्या तिक्ता च कटुका हरेत् ।
वातपित्तास्यदृग्व्याधिकुष्ठारुचिविषव्रणान् ॥ ३८ ॥

मल्लिका, मदयन्ती, शीतभीरु और भूपदी यह मल्लिकाके नाम हैं। इसको हिन्दीमें मोतिया कहते है।
मल्लिका—गरम, हलकी, वीर्यवर्धक, तिक्त, कटु और वात, पित्त, मुख तथा आखोंके रोग, कुष्ठ, अरुचि, विष और व्रणोंका नाश करनेवाली है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

माधवी ।

माधवी स्यात्तु वासंती पुंड्रिको मंडकोऽपि च ।
अतिमुक्तश्चाविमुक्तः कामुको भ्रमरोत्सवः ॥ ३९ ॥
माधवी मधुरा शीता लघ्वी दोषत्रयापहा ।

माधवी, वासन्ती, पुंड्रिक, मण्डक, अतिमुक्त,अविमुक्त, कामुक और भ्रमरोत्सव यह माधवीके नाम है । इसे हिन्दीमें माधवी और वसन्ती तथा अंग्रेजीमें Clustered Hiptega कहते हैं ।

माधवी—मधुर, शीतल, हलकी और त्रिदोषनाशक है ॥ ३९ ॥

केतकी । स्वर्णकेतकी ।

केतकः सूचिकापुष्पो जंबूकः क्रकचच्छदः ॥ ४० ॥
सुवर्णकेतकी त्वन्या लघुपुष्पा सुगंधिनी ।
केतकः कटुकः स्वादुर्लघुस्तिक्तः कफापहः ॥ ४१ ॥
उष्णस्तिक्तरसो ज्ञेयश्चक्षुष्यो हेमकेतकी ।

केतक, सूचिकापुष्प , जम्बूक और क्रकचच्छद यह केतकीके नाम है । सुवर्णकेतकी, लघुपुष्पा और सुगंधिनी यह सुवर्णकेतकीके नाम हैं। इसको हिन्दीमें केवडा तथा पीला केवडा और फारसीमें करज कहते है ।

केवडा—कटु, स्वादिष्ठ, हलका, तिक्त और कफको हरनेवाला है। पीला केवडा-गरम, तिक्तरसवाला तथा नेत्रोंके लिये हितकारी है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

किंकिरातः ।

किंकिरातो हेमगौरः पीतकः पीतभद्रकः ॥ ४२ ॥
किंकिरातो हिमस्तिक्तः कषायश्च हरेदसौ ।
कफपित्तपिपासास्रदाहशोषवमिक्रिमीन् ॥ ४३ ॥

किंकिरात, हेमगौर, पीतक और पीतभद्रक यह पीतके नाम है । इसको हिन्दीमें किंकिरात और फारसीमें मधिलान कहते हैं ।

किंकीरात—शीतल, तिक्त, कषायरसवाला और कफ, पित्त, प्यास, रक्त-विकार, व्रण और कुष्ठ इनको जीतनेवाला है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

कर्णिकारः।

कर्णिकारः कटुस्तिक्तस्तुवरः शोधनो लघुः ॥ ४४॥
रंजनः सुखदः शोथश्लेष्मास्रव्रणकुष्ठजित्।

कर्णिकार (अमलतास)—कटु, तिक्त, कसैला, शोधन, हलका, रंग देने-वाला, सुखदायक और शोथ, कफ, रक्तविकार, व्रण तथा कुष्ठ इनको जीतने-वाला है ॥ ४४ ॥

अशोकः।

अशोको हेमपुष्पश्च वंजुलस्ताम्रपल्लवः ॥ ४५ ॥
कंकेलिः पिंडपुष्पश्च गंधपुष्पो नटस्तथा।
अशोकः शीतलस्तिक्तो ग्राही वर्ण्यः कषायकः ४६॥
दोषापचीतृषादाहकृमिशोथविषास्रजित्।

अशोक, हेमपुष्प, वंजुल, ताम्रपल्लव, कंकेली, पिण्डपुष्प, गन्धपुष्प और नट यह अशोकके नाम हैं।

अशोक—शीतल, तिक्त, ग्राही, वर्णको उत्तम करनेवाला, कसैला और त्रिदोष, अपची, तृषा, दाह, कृमि, शोथ विष तथा रक्तविकारका नाश करनेवाला है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

बाणपुष्पः।

अम्लातोऽम्लादनः प्रोक्तस्तथाम्लातक इत्यपि ४७॥
कुरंटको बाणपुष्पः सरावोक्ता महासहा।
अम्लादनः कषायोष्णः स्निग्धः स्वादुश्च तिक्तकः ४८

अम्लात, अम्लादन, अम्लातक, कुरंटक, बाणपुष्प, सरावोक्ता और महासहा यह बाणपुष्पके नाम हैं।

बाणपुष्प—कसैला, गरम, स्निग्ध, स्वादु और तिक्त है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

सैरेयकः ।

सैरेयकः श्वेतपुष्पः सैरेया कटिसारिका ।
सहाचरः सहचरः स च भिंद्यपि कथ्यते ॥ ४९ ॥
कुरंटकोऽत्र पीतः स्याद्रक्तः कुरबकः स्मृतः ।
नीलो बाणो द्वयोरुक्तो दासी चार्तगलश्च सः॥५०॥
सैरेयः कुष्ठवातास्रकफकंडूविषापहः ।
तिक्तोष्णो मधुरो दंत्यः सुस्निग्धः केशरंजनः॥५१॥

सैरेयक, श्वेतपुष्प, सैरेया, कटिसारिका, सहाचर, सहचर और भिन्दी यह श्वेतपुष्पवाली कटसरैयाके नाम हैं। पीले पुष्पवाली कटसरैयाको कुरंटक, लालपुष्पवालीको कुरबक तथा नीले फुलवालीको वाण, दासी और आर्तगल कहते है। वाण शब्द स्त्रीलिंग और पुँल्लिग दोनोंमें होता है।

कटसरैया—तिक्त, उष्ण, मधुर, दांतोंको हितकारी, स्निग्ध, केशोंको रंजन करनेवाला और कुष्ठ, वात, रक्तविकार, कफ, कण्डु तथा विषको दूर करनेवाला है ॥ ४९–५१ ॥

कुंदम् ।

कुंदं तु कथितं माध्यं सदापुष्पं च तत्स्मृतम् ।
कुंदं शीतं लघु श्लेष्मशिरोरुग्विषपित्तहृत् ॥ ५२ ॥

कुंद, माध्य और सदापुष्प यह कुंदके नाम है।

कुंद—शीतल, लघु और कफ, शिरकी पीडा, विष तथा पित्तको नष्ट करनेवाला है ॥ ५२ ॥

मुचुकुंदः ।

मुचुकुंदः क्षत्रवृक्षश्चित्रकः प्रतिविष्णुकः ।
मुचुकुंदः शिरःपीडापित्तास्रविषनाशनः ॥ ५३ ॥

मुचुकुंद, क्षत्रवृक्ष, चित्रक और प्रतिविष्णुक यह मुचुकुन्दके नाम है।

मुचुकुन्द–शिरकी पीडा, पित्त, रुधिरविकार तथा विषको नष्ट करता है ॥ ५३ ॥

तिलकः ।

तिलकः क्षुरकः श्रीमान् पुरुषश्छत्रपुष्पकः
तिलकः कटुकः पाके रसे चोष्णो रसायनः ॥५४॥
कफकुष्ठकृमीन्वस्तिमुखदन्तगदान् हरेत् ।

तिलक, क्षुरक, श्रीमान् और छत्रपुष्प यह तिलकके नाम हैं ।

तिलक–पाक और रसमें कटु, उष्ण, रसायन और कफ, कुष्ठ, कृमि, वस्तिरोग, मुखरोग तथा दांतोंके रोगको हरता है ॥ ५४ ॥

बंधूकः ।

बंधूको बंधुजीवश्च रक्तो माध्याह्निको मतः ॥ ५५॥
बंधूकः कफकृद् ग्राही वातपित्तहरो लघुः ।

वन्धूक, वन्धुजीव, रक्त और माध्याह्निक यह वन्धूकके नाम है ।

वन्धूक–कफकारक, ग्राही, पित्त–वातनाशक और लघु है ॥ ५५ ॥

ओण्ड्रपुष्पम् ।

ओण्ड्रपुष्पं जपा चाथ त्रिसंध्या सारुणा मता ५६
जपा संग्राहिणी केश्या त्रिसंध्या कफवातहृत् ।

ओण्ड्रपुष्प, जपा यह जपाके नाम है । लालपुष्पावाली जपाको त्रिसन्ध्या कहते हैं । जपाको हिन्दीमें गुड़हर और अंग्रेजीम Shoe flower कहते हैं ।

जपा–ग्राही और केशोंको उत्तम करनेवाली है । त्रिसन्ध्य (लालपुष्प-वाली जपा) कफ वातको नष्ट करती है ॥ ५६ ॥

सिंदूरी ।

सिंदूरी रक्तबीजा च रक्तपुष्पा सुकोमला ॥ ५७ ॥
सिंदूरी विषपित्तास्त्रतृष्णावांतिहरी हिमा ।

सिन्दूरी, रक्तबीजा, रक्तपुष्पा और कोमला यह सिंदूरीके नाम हैं । इसे हिन्दीमें सिंदूरिया अथवा जाफर और अंग्रेजीमें Armalto कहते है ।

सिन्दूरी—शीतल और विष, पित्त, रक्तविकार प्यास और वमनको दूर करनेवाली है ॥ ५७ ॥

अगस्त्यः ।

अगस्त्याह्वो वंगसेनो मुनिपुष्पो मुनिद्रुमः ॥५८॥
अगस्त्यः पित्तकफजिच्चातुर्थिकहरो हिमः ।
रूक्षो वातकरस्तिक्तः प्रतिश्यायनिवारणः ॥ ५९ ॥

अगस्त्य,वङ्गसेन,मुनिपुष्प और मुनिद्रुम यह अगस्त्यके नाम है। इसे हिन्दीमें अगस्त्य अथवा हाथिया और अंग्रेजीमें Large Flowered Agita कहते हैं।

अगस्त्य—पित्त तथा कफको जीतनेवाला, चातुर्थिक ज्वरको हरनेवाला शीतल रूक्ष,वातकर, तिक्त और प्रतिश्यायको निवारण करता है ॥५८॥५९॥

तुलसी शुक्ला कृष्णा च ।

तुलसी सुरसा ग्राम्या सुलभा बहुमंजरी ।
अपेतराक्षसी गौरी शूलघ्नी देवदुंदुभिः ॥ ६० ॥
तुलसी कटुका तिक्ता हृद्योष्णा दाहपित्तकृत् ।
दीपनी कुष्टकृच्छ्रास्त्रपार्श्वरुक्कफवातजित् ॥६१ ॥
शुक्ला कृष्णा च तुलसी गुणैस्तुल्या प्रकीर्तिता ।

तुलसी, सुरसा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमंजरी, अपेतराक्षसी, गौरी, शूलघ्नी

और देवदुंदुभि यह तुलसीके नाम है । इसे हिन्दीमें तुलसी, फारसीमें रेहान और अंग्रेजीमें white Basil कहते है ।

तुलसी–कटु, तिक्त, हृदयको प्रिय, गरम, दाह और पित्तको करनेवाली, दीपन और कुष्ठ, कृच्छ्र, रक्तविकार, पसलीका शूल, कफ और वात इनको नष्ट करती है । काली और श्वेत दोनों प्रकारकी तुलसी गुणोंमें समान ही है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

मरुबकः ।

मारुतको मरुबको मरुन्मरुरपि स्मृतः ॥ ६२ ॥
फणी फणिज्जकश्चापि प्रस्थपुष्पः समीरणः ।
मरुदग्निप्रदो हृद्यस्तीक्ष्णोष्णः पित्तलो लघुः ॥ ६३ ॥
वृश्चिकादिविषश्लेष्मवातकुष्ठकृमिप्रणुत् ।
कटुपाकरसो रुच्यस्तिक्तो रूक्षः सुगंधिकः ॥ ६४ ॥

मारुतक, मरुवक, मरुत् , मरु, फणि, फणिज्जक, प्रस्थपुष्प और समीरण यह मारुतकके नाम है । हिन्दीमें इसे मरुवा, फारसीमें मर्जगुस और अंग्रेजीमें Sweet Mary aran कहते हैं ।

मरुवा–अग्निवर्धक, हृदयको प्रिय, तीक्ष्ण, उष्ण, पित्तकारक, हलका, पाक और रसमें कटु, रुचिकारक, तिक्त, रूक्ष, सुगन्धयुक्त और विच्छू आदिके विष, कफ, वात, कुष्ठ और कृमि इनको दूर करनेवाला है ॥ ६२–६४ ॥

दमनकः ।

उक्तो दमनको दांतो मुनिपुत्रस्तपोधनः ।
गंधोत्कटो ब्रह्मजटो विनीतः कुलपुत्रकः ॥ ६५ ॥
दमनस्तुवरस्तिक्तो हृद्यो वृष्यः सुगंधिकः ।
ग्रहणीविषकुष्ठास्रक्लेदकंडुत्रिदोषजित् ॥ ६६ ॥

दमनक, दान्त, मुनिपुत्र, तपोधन, गन्धोत्कट, ब्रह्मजट, विनीत और कुल-

पुत्रक यह दमनकके नाम है । इसे हिन्दीमें दौना और अंग्रेजीमें Artee mesia Indica कहते है ।

दमनक–कषायरसवाला, तिक्त, हृदयको प्रिय, वीर्यवर्धक, सुगन्धयुक्त और ग्रहणी, विष, कुष्ठ, रक्तविकार, क्लेद, कण्डु तथा त्रिदोष इनको नष्ट करनेवाला है ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

वर्वरी ।

वर्वरी कवरी तुंगी खरपुष्पाजगंधिका ।
पर्णासस्तत्र कृष्णे तु कठिल्लककुठेरकौ ॥ ६७ ॥
तत्र शुक्लोर्जकः प्रोक्तो वटपत्रस्ततोऽपरः ।
वर्वरीत्रितयं रूक्षं शीतं कटु विदाहि च ॥ ६८ ॥
तीक्ष्णं रुचिकरं हृद्यं दीपनं लघुपाकि च ।
पित्तलं कफवातास्रकंडुक्रिमिविषापहम् ॥ ६९ ॥

इति पुष्पवर्गः ।

वर्वरी, कवरी, तुंगी, खरपुष्पा, अजगंधिका और पर्णास यह वर्वरीके नाम हैं । काली वर्वरीको कटिल्लक और कुठेरक, श्वेत बर्बरीको अर्जक और तीसरे प्रकारकी वर्वरीको वटपत्र कहते हैं । बर्बरीको हिन्दीमें वनतुलसी अथवा वर्बरी और फारसीमें पलंग मुष्क कहते हैं ।

तीनों प्रकारकी बर्वरी–रूक्ष, शीत, कटु, दाहोत्पादक, तीक्ष्ण, रुचिकारक, हृदयको प्रिय, दीपन, पाकमें हलकी, पित्तवर्धक और कफ, वात, रक्तविकार, कण्डु, कृमि तथा विषको दूर करनेवाली है ॥ ६७–६९ ॥

इति श्रीविद्यालंकार–शिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृत–शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ पुष्पवर्गः समाप्तः ॥ ४ ॥

फलवर्गः ५.



तत्रादावाम्रस्य नाम, गुणाः।

आम्रश्चूतो रसलोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः।
कामांगो मधुदूतश्च माकन्दः पिकवल्लभः॥ १॥
आम्रपुष्पमतीसारकफपित्तप्रमेहनुत्।
असृग्दरहरं शीतं रुचिकृद् ग्राहि वातलम्॥ २॥
आम्रं बालं कषायाम्ले रुच्यं मारुतपित्तकृत्।
तरुणं तु तदत्यम्लं रूक्षं दोषत्रयास्रकृत्॥ ३॥
आम्रमामं त्वचाहीनमातपेऽतिविशोषितम्।
अम्लं स्वादु कषायं स्याद्भेदनं कफवातजित्॥४॥
पक्वं तु मधुरं वृष्यं स्निग्धं बलसुखप्रदम्।
गुरु वातहरं हृद्यं वर्ण्यं शीतमपित्तलम्॥ ५॥
कषायानुरसं वह्निश्लेष्मशुक्रविवर्द्धनम्।
तदेव वृक्षसंपक्वं गुरु वातहरं परम्॥ ६॥
मधुराम्लरसं किंचिद्भवेत्तत्पित्तनाशनम्।
आम्रं कृत्रिमपक्वं चेत्तद्भवेत्पित्तनाशनम्॥ ७॥
रसस्याम्लस्य हानेस्तु माधुर्य्याच्च विशेषतः।
चूषितं तत्परं रुच्यं बल्यं वीर्य्यकरं लघु॥ ८॥
शीतलं शीघ्रपाकि स्याद्वातपित्तहरं सरम्।
तद्रसो गालितो बल्यो गुरुर्वातहरः सरः॥ ९॥

अहृद्यस्तर्पणोऽतीव बृंहणः कफवर्द्धनः ।
तस्य खंडं गुरु परं रोचनं चिरपाकि च ॥ १० ॥
मधुरं बृंहणं बल्यं शीतलं वातनाशनम् ।
वातपित्तहरं रुच्यं बृंहणं बलवर्द्धनम् ॥ ११ ॥
वृष्यं वर्णकरं स्वादु दुग्धाम्रं गुरु शीतलम् ॥१२॥
मंदानलत्वं विषमज्वरं च रक्तामयं बद्धगुदोदरं च ।
आम्रातियोगो नयनामयं च
करोति तस्मादति तानि नाद्यात् ॥ १३ ॥
एतदम्लाम्रविषयं मधुराम्रपरं न तु ।
मधुरस्य परं नेत्रहितत्वाद्या गुणा यतः ॥ १४ ॥
शुंठ्यम्भसोऽनुपानं स्यादाम्राणामतिभक्षणे ।
जीरकं वा प्रयोक्तव्यं सह सौवर्चलेन च ॥ १५ ॥

प्रथम आमके नाम और गुण कहते हैं--आम्र, चूत, रसाल, सहकार, अतिसौरभ, कामांग, मधुदूत, माकन्द और पिकवल्लभ यह आमके नाम हैं। इसे हिन्दीमें आम, फारसीमें आंबा और अंग्रेजीमें Mango कहते हैं।

आमका फूल–शीतल, रुचिकारक, ग्राही, वातकारक और अतिसार, कफ, पित्त, प्रमेह, रक्तप्रदर इनको नष्ट करनेवाला है।

कच्चा आम–कसैला, खट्टा, रुचिकारक, वायु और पित्तको बढानेवाला होता है। तरुण (बड़ा और विना पका) आम–अत्यन्त खट्टा, रूक्ष और त्रिदोष तथा रक्तविकारको दूर करनेवाला है। छिला हुआ कच्चा और धूपमें सुखाया हुआ आम (अमचूर)–अम्ल, स्वादु, कसैला, भेदन और कफ तथा वातको जीतनेवाला होता है।

पका आम—मधुर, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, बल और सुखके देनेवाला, भारी, वातनाशक, हृदयको प्रिय, वर्णको उत्तम करनेवाला, शीतल, पित्तको न करनेवाला, कषाय रसवाला और अग्नि, कफ तथा वीर्यको बढानेवाला होता है।

वृक्षपर पका हुआ आम—भारी, वातनाशक, मधुर, अम्ल रसवाला और पित्तको किञ्चित् नष्ट करनेवाला होता है। कृत्रिमतासे पकाया हुआ आम अम्ल न होनेसे तथा अत्यन्त मधुर होनेसे पित्तको नष्ट करता है।

चूसा हुआ आम—अत्यन्त रुचिकारक, बलवर्धक, वीर्यकारक, हलका, शीतल, शीघ्र पाचन करनेवाला, वात और पित्तको हरनेवाला तथा दस्तावर है। आमका निकाला हुआ रस—बलवर्धक, भारी, वातनाशक, दस्तावर, हृदयको अप्रिय, तृप्तिकारक, धातुओंको पुष्ट करनेवाला और कफवर्धक है। आमका खण्ड (मुरब्बा)—भारी, अत्यन्त रुचिकारक, व देरमें पकनेवाला, मधुर, धातुओंको पुष्ट करनेवाला, बलकारक, शीतल और वातनाशक है। दूधके साथ खाया हुआ आम—वात तथा पित्तको हरनेवाला, रुचिकारक, पुष्टिकारक, बलवर्धक, वीर्यको बढानेवाला, वर्णको उत्तम करनेवाला, स्वादु, भारी और शीतल है।

आमका अत्यन्त भक्षण करना—मन्दाग्नि, विषमज्वर, रक्तविकार, मलका रोध, उदररोग तथा नेत्रव्याधियोंको उत्पन्न करता है। इसलिये आमको बहुत नहीं खाना चाहिये। यह दोष अम्ल आम खानेसे होते हैं, मधुरसे नहीं, क्योंकि मधुर आम खानेसे नेत्रोंको हितकरत्व आदि गुण होते हैं। यदि आम अधिक खाने हों तो सोंठके पानी अथवा जीरा और काले नमकके साथ साथ सेवन करना चाहिये ॥ १–१५ ॥

अथाम्रावर्तस्य लक्षणं गुणाश्च ।

पक्कस्य सहकारस्य पटे विस्तारितो रसः ।
घर्मशुष्को मुहुर्दत्त आम्रावत इति स्मृतः ॥ १६ ॥

आम्रावर्तस्तृषाच्छर्दिवातपित्तहरः सरः ।
रुच्यः सूर्यांशुभिः पाकाल्लघुश्च स हि कीर्तितः १७॥

पके हुए आमका रस वस्त्रपर बिछाकर धूपमें वार २ रस डालकर सुखाया हुआ आम्रावर्त्त कहलाता है। आम्रावर्त्त—दस्तावर, रुचिकारक, सूर्यकी किरणों द्वारा पकनेसे लघु और प्यास, वमन, वात तथा पित्तको हरता है ॥ १६ ॥ १७ ॥

आम्रबीजम् ।

आम्रबीजं कषायं स्याच्छर्द्यतीसारनाशनम् ।
ईषदम्लं च मधुरं तथा हृदयदाहनुत् ॥ १८ ॥

आमकी गुठली—कसैली, किञ्चित् अम्ल, मधु, हृदयकी दाहको नष्ट करनेवाली और वमन तथा अतीसारको नष्ट करनेवाली है ॥ १८ ॥

नवपल्लवम् ।

आम्रस्य पल्लवं रुच्यं कफपित्तविनाशनम् ।

आम्रके पत्ते—रुचिकारक और कफ तथा पित्तको नष्ट करते हैं ।

आम्रातकम् ।

आम्रातकः पीतनश्च मर्कटाम्रः कपीतनः ॥ १९ ॥
आम्रातमम्लं वातघ्नं गुरूष्णं रुचिकृत्सरम् ।
पक्वं तु तुवरं स्वादु रसे पाके हिमं स्मृतम् ॥ २० ॥
तर्पणं श्लेष्मलं स्निग्धं वृष्यं विष्टंभि बृंहणम् ।
गुरु बल्यं मरुत्पित्तक्षतदाहक्षयास्रजित् ॥ २१ ॥

आम्रातक, पीतन, मर्कटाम्र और कपीतन यह अम्बोडके नाम हैं। इसको हिन्दीमें अम्बाडा और अंग्रेजीमें Spondias Minate कहते है।

आम्रातक-खट्टा, वातनाशक, भारी, उष्ण, रुचिकारक और दस्तावर है। पका हुआ आम्रातक—कसैला, स्वादु, रस तथा पाकमें शीतल, तृप्तिको

करनेवाला, कफकारक, स्निग्ध, वीर्यवर्धक, मलके बन्धको करनेवाला, पुष्टि-कारक, भारी, बलकारक और वायु, पित्त, क्षत, दाह, क्षय तथा रक्तविकारको दूर करता है ॥ १९-२१ ॥

राजाम्रम्।

राजाम्रष्टंग आम्रातः कामाह्वो राजपुत्रकः ।
राजाम्रं तुवरं स्वादु विशदं शीतलं गुरु ॥ २२ ॥
ग्राहि रूक्षं विबंधाध्मवातकृत्कफपित्तनुत् ।

राजाम्र, टंग, आम्रात, कामाह्व और राजपुत्रक यह कलमी आमके नाम हैं । इसे हिन्दीमें कलमी आम और मालदह आम कहते हैं ।

राजाम्र-कसैला, स्वादु, विशद, शीतल, भारी, ग्राही, रूक्ष, कफ और पित्तको नष्ट करनेवाला और विबन्ध, आध्मान, वात तथा कफ इनको बढाने-वाला है ॥ २२ ॥

कोशाम्रम् ।

कोशाम्र उक्तः क्षुद्राम्रः कृमिवृक्षः सुकोशकः ॥ २३ ॥
कोशाम्रः कुष्ठशोथास्रपित्तव्रणकफापहः ।
तत्फलं ग्राहि वातघ्नमम्लोष्णं गुरु पित्तलम् ॥२४
पक्वं तु दीपनं रुच्यं लघूष्णं कफवातनुत् ।

कोशाम्र, क्षुद्राम्र, कृमिवृक्ष, सुकोशक यह छोटे आमके नाम हैं ।

कोशाम्र-कुष्ठ, शोथ, रक्तविकार, पित्त, व्रण और कफ इनको नष्ट करता है। कोशाम्रका फल-ग्राही, वातनाशक, खट्टा, गरम, भारी, पित्तकारक होता है । इसका पका हुआ फल-दीपन, रुचिकारक, हलका, गरम तथा कफ और वातको दूर करनेवाला है ॥ २३ ॥ २४ ॥

पनसः ।

पनसः कंटकिफलः पनसोऽतिबृहत्फलः ॥ २५ ॥
पनसं शीतलं पक्वं स्निग्धं पित्तानिलापहम् ।

तर्पणं बृंहणं स्वादु मांसलं श्लेष्मलं भृशम् ॥ २६ ॥
बल्यं शुक्रप्रदं हंति रक्तपित्तक्षतव्रणान् ।
आमं तदेव विष्टंभि वातलं तुवरं गुरु ॥ २७ ॥
दाहकृन्मधुरं बल्यं कफमेदोविवर्द्धनम् ।

पनस, कंटकिफल और अतिबृहत्फल यह पनसके नाम हैं । इसे हिन्दीमें कटहर अथवा कटहल कहते है । कटहरका पका हुआ फल—शीतल, स्निग्ध, पित्त और वायुको घटानेवाला, बल तथा शुक्रको बढानेवाला और रक्तपित्त, क्षत और व्रणोंको दूर करता है । कच्चा कटहर—विष्टम्भकारक, वातवर्धक, कसैला, भारी, दाहको हरनेवाला, मधुर और बल, कफ, मेद इनको बढानेवाला है ॥ २५–२७ ॥

लकुचम् ।

लकुचः क्षुद्रपनसो लिकुचो डहुरित्यपि ॥ २८ ॥
आमं लकुचमुष्णं च गुरु विष्टंभकृत्तथा ।
मधुरं च तथाम्लं च दोषत्रयविरक्तकृत् ॥ २९ ॥
शुक्राग्निनाशनं वापि नेत्रयोरहितं स्मृतम् ।
सुपक्वं तत्तु मधुरमम्लं चानिलपित्तहृत् ॥ ३० ॥
कफवह्निकरं रुच्यं वृष्यं विष्टंभकं च तत् ।

लकुच, क्षुद्रपनस, लिकुच और डहु यह बड़हलके नाम है । बड़हल—खट्टा, त्रिदोष और रक्तविकारोंको उत्पन्न करनेवाला, शुक्र और अग्निको नष्ट करनेवाला और नेत्रोंको हानि करनेवाला है । पका बड़हल—मधुर, खट्टा, वात तथा पित्तको हरनेवाला, कफ और अग्निको बढानेवाला, रुचिकारक, वीर्यवर्धक और विष्टम्भ करनेवाला है ॥ २८–३० ॥

मोचाफलम्।

कदली वारणबुसा रंभा मोचांशुमत्फला ॥ ३१ ॥
मोचाफलं स्वादु शीतं विष्टंभि कफनुद् गुरु।
स्निग्धं पित्तास्रतृड्दाहक्षतक्षयसमीरजित् ॥ ३२ ॥
पक्वं स्वादु हिमं पाके स्वादु वृष्यं च बृंहणम्।
क्षुण्नेत्रामयहरं मेहघ्नं रुचिमांसकृत् ॥ ३३ ॥
माणिक्यमर्त्यामृतचंपकाद्या
भेदाः कदल्याबहवोऽपि संति।
उक्ता गुणास्तेष्वधिका भवंति
निदापता स्याल्लघुता च तेषाम् ॥ ३४ ॥

कदली, वारणबुसा, रंभा, मोचा, अंशुमत्फला यह कदलीके नाम हैं। इसे हिंदीमें केला, फारसीमें मावजवोझ, अंग्रेजीमें Plantain कहते हैं।

कदलीफल—स्वादु, शीतल, विष्टम्भकारक, कफनाशक, भारी, स्निग्ध और पित्त, रक्तविकार, तृषा, दाह, क्षत, क्षय और वायुको नष्ट करनेवाले होते है। केलेका पका हुआ फल—स्वादु, शीतल, पाकमें मधुर, वीर्यवर्धक, पुष्टिकारक, रुचि तथा मांसको बढानेवाला और भूख, प्यास, नेत्रोंके रोग तथा प्रमेहको नष्ट करनेवाला है। माणिक्य, मर्त्य, अमृत तथा चम्पकादि भेदोंसे कदली कई प्रकारकी है। उनमें उक्त गुण है किन्तु निर्दोषता और लघुता यह अधिक हैं॥ ३१–३४॥

चिर्भटम्।

चिर्भटं धेनुदुग्धं च तथा गोरक्षकर्कटी।
चिर्भटं मधुरं रूक्षं गुरु पित्तकफापहम्॥ ३५ ॥

अनुष्णं ग्राहि विष्टंभि बालं चानिलकोपनम् ।
कफपित्तकरं स्यंदि पक्वं तूष्णं च पित्तलम् ॥३६॥

चिर्भट, धेनुदुग्ध और गोरक्षकर्कटी यह चिब्भडके नाम हैं । इसको हिन्दीमें चिब्भड, फारसीमें खयार और अंग्रेजीमें Pubescetcucucumber कहते हैं ।

बालचिर्भट—मधुर, रूक्ष, भारी, पित्त और कफको हरनेवाला, अनुष्ण, ग्राही, विष्टम्भकारक है । पक्वचिर्भट—गरम तथा पित्तवर्धक है ॥३५॥३६॥

नारिकेलम् ।

नारिकेलो दृढफलो लांगली कूर्चशीर्षकः ।
तुङ्गः स्कंधफलश्चोच्चस्तृणराजः सदाफलः ॥ ३७ ॥
नारिकेलफलं शीतं दुर्जरं बस्तिशोधनम् ।
विष्टंभि बृंहणं बल्यं वातपित्तास्रदाहनुत् ॥ ३८ ॥
विशेषतः कोमलनारिकेलं निहंति पित्तज्वरपित्तदोषान् ।
तदेव जीर्णं गुरु पित्तकारि विदाहि विष्टंभि मतं भिषग्भिः॥
तस्यांभः शीतलं हृद्यं दीपनं शुक्रलं लघु ।
पिपासापित्तजित्स्वादु वस्तिशुद्धिकरं परम् ॥४०॥
नारिकेलस्य तालस्य खर्जूरस्य शिरांसि च ।
कषायस्निग्धमधुरबृंहणानि गुरूणि च ॥ ४१ ॥

नारिकेल, दृढफल, लांगली, कूर्चशीर्षक, तुंग, स्कन्धफल, उच्च, तृणराज और सदाफल यह नारिकेलके नाम हैं । इसको हिन्दीमें नारियल, फारसीमें फराज और अंग्रेजीमें Coconut Palm कहते है ।

नारियल—शीत, दुर्जर, वस्तिशोधक विष्टम्भकारक, बलवर्धक तथा वात, पित्त, रक्तविकार और दाहको नष्ट करनेवाला है । कोमल नारियल—विशेष

करके पित्तज्वर, और पित्तदोषोंको दूर करता है । जीर्ण नारियल—भारी, पित्त-कारक, दाहोत्पादक और विष्टम्भकारक है । नारियलका जल—शीतल, हृदयको प्रिय, वीर्यवर्धक, दीपन, हलका, प्यास और पित्तको जीतनेवाला, स्वादु और वस्तिको शुद्ध करनेवाला है । नारियल, ताल और खजूर इनकी शिरा कसैली, स्निग्ध, मधुर, पुष्टिकारक और भारी होती है ॥ ३७–४१ ॥

कालिन्दम् ।

कालिन्दं कृष्णबीजं स्यात्कालिंगञ्च सुवर्तुलम् ।
कालिन्दं ग्राहि हक्पित्तशुक्रहृच्छीतलं गुरु ॥४२॥
पक्वं तु सोष्णं सक्षारं पित्तलं कफवातजित् ।

कालिन्द, कृष्णबीज, कालिंग और सुवर्तुल यह तरबूजके नाम हैं । इसे हिन्दीमें तरबूज, फारसीमें हदवाना और अंग्रेजीमें Water Malon कहते है । तरबूज—ग्राही, शीतल, भारी और दृष्टि, पित्त और वीर्यको हरनेवाला है । पका हुआ तरबूज—गरम, क्षारयुक्त, पित्तकारी और कफ तथा वायुको जीतनेवाला है ॥ ४२ ॥

दशांगुलम् ।

दशांगुलं तु खर्बूजं कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ ४३ ॥
खर्बूजं मूत्रलं बल्यं कोष्ठशुद्धिकरं गुरु ।
स्निग्धं स्वादुतरं शीतं वृष्यं पित्तानिलापहम् ॥४४॥
तेषु यच्चाम्लमधुरं सक्षारं च रसाद्भवेत् ।
रक्तपित्तकरं तत्तु मूत्रकृच्छ्रहरं परम् ॥ ४५ ॥

दशांगुल और खर्बूज यह खरबूजेके नाम है । इसे हिन्दी और फारसीमें खरबूजा और अंग्रेजीमें Melon कहते है ।

खरबूजा—मूत्रवर्धक, बलकारक, कोठेकी शुद्धिको करनेवाला, भारी, स्निग्ध, स्वादुतर, शीत, वीर्यवर्धक और पित्त तथा वायुको नष्ट करनेवाला

है । खट्टा खरबूजा—मधुर, क्षार, रक्तपित्तनाशक और मूत्रकृच्छ्रको दूर करनेवाला है ॥ ४३—४५ ॥

त्रपुसम् ।

त्रपुसं कंटकिफलं सुधावासः सुशीतलम् ।
त्रपुसं लघु शीतं च नवं तृट्क्लमदाहजित् ॥ ४६ ॥
स्वादुपित्तापहं शीतं तिक्तं कृच्छ्रहरं परम् ।
तत्पक्वमम्लमुष्णं स्यात्पित्तलं कफवातनुत् ॥४७॥
तद्बीजं मूत्रलं शीतं रूक्षं पित्तास्रकृच्छ्रजित् ।

त्रपुस, कंटकिफल, सुधावास और सुशीतल यह खीरेके नाम हैं । इसे हिन्दीमें खीरा, फारसीमें शियारखुर्द और अंग्रेजीम cucumbet कहते हैं । छोटा और नवीन खीरा—शीतल, स्वादु, पित्तनाशक, तिक्त और कृच्छ्र, प्यास, ग्लानि और दाहको दूर करता है । पका हुआ खीरा—खट्टा, गरम, पित्तकारक तथा कफ और वातको दूर करनेवाला है । खीरेका बीज—मूत्रल, शीतल, रूक्ष और पित्त, रक्तविकार तथा कृच्छ्रको जीतनेवाला है ॥४६॥४७॥

क्रमुकम् ।

घोंटा पूगी च पूगश्च गुवाकः क्रमुकस्य तु ॥ ४८॥
फलं पूगीफलं प्रोक्तमुद्वेगं च तदीरितम् ।
पूगं गुरु हिमं रूक्षं कषायं कफपित्तजित् ॥ ४९ ॥
मोहनं दीपनं रुच्यमास्यवैरस्यनाशनम् ।
आर्द्रं तद्गुर्वभिष्यंदि वह्निदृष्टिहरं स्मृतम् ॥५० ॥
स्विन्नं दोषत्रयच्छेदि दृढमध्यं तदुत्तमम् ।

घोंटा, पूंगी, पूग, गुवाक और क्रमुक यह सुपारीके नाम है । इसके फलको पूगीफल तथा उद्वेग कहते है । इसको हिन्दीमें सुपारी, फारसीमें पोपिल और अंग्रेजीमें Betlnut Palm कहते है ।

सुपारी—भारी, शीतल, रूक्ष, कसैली, कफ और पित्तको जीतनेवाली, मोहन करनेवाली, दीपन, रुचिकारक, मुखकी विरसताका नाश करनेवाली है। गीली सुपारी—भारी, अभिष्यंदि और अग्नि तथा दृष्टीको हरनेवाली है। चिकनी सुपारी—त्रिदोषनाशक है। जिस सुपारीका मध्यभाग दृढ हो वह उत्तम गुणोंवाली होती है ॥ ४८–५० ॥

तालम्।

तालस्तु लेखपत्रः स्यात्तृणराजो महोन्नतः ॥ ५१ ॥
पक्वतालफलं पित्तरक्तश्लेष्मविवर्द्धनम्।
दुर्जरं बहुमूत्रं च तंद्राभिष्यंदशुक्रदम् ॥ ५२ ॥
तालमज्जा तु तरुणा किंचिन्मदकरो लघुः।
श्लेष्मलो वातपित्तघ्नः सस्नेहो मधुरः सरः॥५३॥

ताल, लेखपत्र, तृणराज और महोन्नत यह ताडके नाम है। इसे हिन्दीमें ताड, फारसीमें ताल तथा अंग्रेजीमें palmypalm कहते हैं। तालका पका हुआ फल—पित्त, रक्त और कफको बढानेवाला, दुर्जर, बहुत मूत्रको लानेवाला, अभिष्यन्दकारक तथा तन्द्रा और वीर्यको उत्पन्न करनेवाला है। नवीन ताडकी मज्जा—किञ्चित् मदको करनेवाली, हलकी, कफकारक, वात,—पित्तनाशक, स्निग्ध, मधुर और दस्तावर है ॥ ५१–५३॥

ताडी।

तालजं तरुणं तोयमतीव मदकृन्मतम्।
अम्लीभूतं यदा तु स्यात्पित्तकृद्वातदोषहृत् ॥ ५४ ॥

तालका नवीन रस—अत्यन्त मदकारी होता है। यदि वह खट्टा हो जाय तो पित्तकारक और वातके दोषोंको हरनेवाला है ॥ ५४ ॥

शालफलम् ।

शालं फलं रूक्षशीतं मधुरं स्तंभनं गुरु ।
कषायं लेखनं स्तन्यवाताध्मानविबंधकृत् ॥ ५५ ॥
पित्तदाहतृषाकासक्षतक्षयविषास्रनुत् ।

शालको हिन्दीमें साल और अंग्रेजीमें Soltree कहते हैं । शालका फल—रूक्ष, शीतल, मधुर, स्तंभनकारक, भारी, कसेला, लेखन और दूधवर्धक, वायु, आध्मान तथा विबन्धको करता है । तथा पित्त, दाह, प्यास, खांसी, क्षत, क्षय, विष और रक्तविकारोंको दूर करनेवाला है ॥ ५५ ॥

बिल्वः ।

बिल्वः शांडिल्यशैलूषौ मालूरश्रीफलावपि ॥५६॥
बालं बिल्वफलं बिल्वकर्कटी बिल्वपेशिका ।
ग्राहणी कफवातामशूलघ्नी बिल्वपेशिका ॥ ५७ ॥
बालं बिल्वफलं ग्राहि दीपनं पाचनं कटु ।
कषायोष्णं लघु स्निग्धं तिक्तं वातकफापहम् ॥५८॥
पक्वं गुरु त्रिदोषं स्याद्दुर्जरं पूतिमारुतम् ।
विदाहि विष्टंभकरं मधुरं वह्निमांद्यकृत् ॥ ५९ ॥

बिल्व, शाण्डिल्य, शैलूष, मालूर और श्रीफल यह बेलके नाम है । इसे हिन्दीमें बिल अथवा बेल, अंग्रेजीमें Bangolkins कहते हैं । बिल्वकर्कटी और बिल्वपेशिका यह बाल बिलके नाम हैं ।

बालबिल—ग्राही और कफ, वात, आम तथा शूलको नष्ट करता है । अन्य ग्रन्थोंमें लिखा है कि कच्चा बिल—ग्राही, दीपन, पाचन, कटु, कसैला, गरम, स्निग्ध और वात तथा कफको हरनेवाला है । पक्का बिल—भारी, त्रिदोषकारक, दुर्जर, दुर्गन्धित, दाहोत्पादक, विष्टंभकारक, मधुर और अग्निको मन्द करनेवाला है ॥ ५६–५९ ॥

कपित्थम् ।

कपित्थस्तु दधित्थः स्यात्तथा पुष्पफलः स्मृतः ।
कपिप्रियो दधिफलस्तथा दंतशठोऽपि च ॥ ६० ॥
कपित्थमामं संग्राहि कषायं लेखनं लघु ।
पक्वं गुरु तृषाहिक्काशमनं वातपित्तजित् ॥ ६१ ॥
स्वाद्वम्लं तुवरं कण्ठशोधनं ग्राहि दुर्जरम् ।

कपित्थ, दधित्थ, पुष्पफल, कपिप्रिय, दधिफल और दंतशठ यह कैथके नाम है । इसे हिन्दीमें कैथ और अंग्रेजीम wood apple कहते है । कच्चा कैथ–ग्राही, कसैला, लेखन और हलका है । पक्व कैथ–भारी, प्यास और हिचकियोंको दूर करनेवाला, वात तथा पित्तको जीतनेवाला, स्वादु, अम्ल, कसैला, कण्ठको शुद्ध करनेवाला, ग्राही तथा दुर्जर है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

नारंगम् ।

नारंगो नागरंगः स्यात्त्वक्सुगंधो मुखप्रियः ॥ ६२ ॥
नारंगं मधुराम्लं स्याद्रोचनं वातनाशनम् ।
अपरं त्वम्लमत्युष्णं दुर्जरं वातहृत्सरम् ॥ ६३ ॥

नारंग, नागरंग, त्वक्सुगन्ध और मुखप्रिय यह नारंगीके नाम है । इसे हिन्दीमें नारंगी, फारसीमें नारंग और अंग्रेजीमें Orrange कहते है । नारंग–मधुर, खट्टा, रुचिकारक, वातनाशक, है । दूसरी प्रकारके नारंगी–अम्ल, अत्यन्त उष्ण, दुर्जर, वातहारक और दस्तावर है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

तिंदुकम् ।

तिंदुकः स्फूर्जकः कालस्कंधश्च शितिसारकः ।
स्यादामं तिंदुकं ग्राहि वातलं शीतलं लघु ॥ ६४ ॥
पक्वं पित्तप्रमेहास्रश्लेष्मघ्नं मधुरं गुरु ।

तिंदुक्क, स्फूर्जक, कालस्कन्ध और शितिसारक यह तेन्दूके नाम है । इस

को हिन्दीमें तेन्दू, फारसीमें जनुबस और अंग्रजीमें Ebony कहते हैं । कच्चा तेन्दु–ग्राही, वातकारक,शीतल और भारी है। पका हुआ तेन्दु–मधुर, भारी और पित्त, प्रमेह, रक्तविकार तथा कफको जितनेवाला है ॥ ६४ ॥

कुपीलुः ।

तिंदुकः कथितो यस्तु जलजो दीर्घपत्रकः ॥ ६५ ॥
कुपीलुः कुलकः काकतिंदुकः कालपीलुकः ।
काकेन्दुर्विषतिंदुश्च तथा मर्कटतिंदुकः ॥ ६६ ॥
कुपीलु शीतलं तिक्तं वातलं मदकृल्लघु ।
पादव्यथाहरं ग्राहि कफपित्तविनाशनम् ॥ ६७ ॥

जो तिन्दुक जलमें उत्पन्न हो उसको दीर्घपत्रक, कुपिलु, कुलक, काकतिन्दुक, कालपीलुक, काकेंदु, विषतिन्दु और मर्कटतिन्दुक कहते है । इसको हिन्दीमें काकतेंदु, अथवा कुचला, फारसीमें इफराको और अंग्रेजीमें Paison Nut कहते है । कुचला–शीतल तिक्त, वातकारक, मदवर्धक, हलका, पैरकी पीडाको हरनेवाला, ग्राही तथा कफ और पित्तको नष्ट करनेवाला है ॥ ६५–६७ ॥

फलेंद्रः ।

फलेन्द्रः कथिता नंदी राजजंबूर्महाफला ।
तथा सुरभिपत्रा च महाजंबूरपि स्मृता ॥ ६८ ॥
राजजंबूफलं स्वादु विष्टंभि गुरु रोचनम् ।
क्षुद्रजम्बूः सूक्ष्मपत्रो नादेयी जलजंबुकः ॥ ६९ ॥
जम्बूः संग्राहणी रूक्षा कफपित्तास्रदाहजित् ।

फलेंद्र, नंदी, राजजम्बू, महाफला, सुरभिपत्रा और महाजंबू यह बड़ी जामुनाके नाम है। इसको अंग्रेजीमें Jambil tree कहते ह ।

राजजम्बूफल-स्वादु, विष्टम्भकारक, भारी और रुचिकारक है। क्षुद्रजम्बू, सूक्ष्मपत्र, नादेयी और जलजम्बुक यह छोटी जामुनके नाम हैं। छोटी जामुन-ग्राही, रूक्ष और कफ, पित्त, रक्तविकार तथा दाहको जीतनेवाली है ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

बदरम् ।

पुंसि स्त्रियां च कर्कंधूर्बदरी कोलमित्यपि ॥७० ॥
फेनिलं कुवलं घोंटा सौवीरं बदरं महत् ।
अजाप्रियः कुहाकोलिर्विषमो भयकंटकः ॥ ७१ ॥

कर्कन्धू, बदरी, कोल, फेनिल, कुवल, घोंटा और सौवीर यह बडे बेरके नाम है। अजाप्रिय, कुहा, कोलि, विषम और भयकंटक यह छोटे बेरके नाम है ॥ ७० ॥ ७१ ॥

बदरविशेषाणां लक्षणगुणाश्च ।

पच्यमानं तु मधुरं सौवीरं बदरं महत् ।
सौवीरं बदरं शीतं भेदनं गुरु शुक्रलम् ॥ ७२ ॥
बृंहणं पित्तदाहास्रक्षयतृष्णानिवारणम् ।
सौवीरं लघु संपक्वं मधुरं कोलमुच्यते ॥ ७३ ॥
कोलं तु बदरं ग्राहि रुच्यमुष्णं च वातलम् ।
कफपित्तकरं चापि गुरु सारकमीरितम् ॥ ७४ ॥
कर्कन्धुः क्षुद्रबदरं कथितं पूर्वसूरिभिः ।
अम्लं स्यात्क्षुद्रबदरं कषायं मधुरं मनाक् ॥ ७५ ॥
स्निग्धं गुरु च तिक्तं च वातपित्तापहं स्मृतम् ।
शुष्कं भेद्यग्निकृत्सर्वं लघुतृष्णाक्लमास्रजित् ॥ ७६ ॥

पके हुए मधुर और बडे बेरको सौवीर कहते हैं । सौवीर-शीतल,

भेदन, भारी, वीर्यवर्धक, आयुको बढानेवाला और पित्त, दाह, रक्तविकार, क्षय और तृष्णा इनको निवारण करता है। पके हुए छोटे बेरको कोल कहते हैं। कोल—ग्राही, रुचिकारक, गरम, वातकारक, कफ, पित्तको बढानेवाला, भारी तथा दस्तावर है। अत्यन्त छोटे बेरको कर्कन्धू कहते हैं। कर्कन्धू—अम्ल, कसैला, किंचित् मीठा, स्निग्ध, भारी, तिक्त, वात तथा पित्तको नष्ट करनेवाला है। शुष्कबेर—भेदन करनेवाला, अग्निवर्धक, हलका और तृष्णा, ग्लानि तथा रक्तविकरोंको जीतनेवाला है॥ ७२—७६ ॥

प्राचीनामलकम् ।

प्राचीनामलकं लोके पानीयामलकं स्मृतम् ।
प्राचीनामलकं दोषत्रयजिज्ज्वरघाति च ॥ ७७ ॥

प्राचीनामलक और पानीयामलक यह पानी आमलेके नाम हैं। इसको अंग्रेजीम Hacaurtia Cataphracta कहते हैं। प्राचीनामलक—त्रिदोष तथा ज्वरको जीतनेवाला है॥ ७७ ॥

लवली ।

सुगन्धमूला लवली पांडुकोमलवल्कला ।
लवलीफलमश्मार्शःकफपित्तहरं गुरु ॥ ७८ ॥
विशदं रोचनं रूक्षं स्वाद्वम्लं तुवरं रसे ।

सुगन्धमूला, लवली, पांडु और कोमलवल्कला यह लवलीके नाम है। इसको हिंदीमें हरफारेवडी तथा अंग्रेजीमें Ciccodisticha कहते है।

लवलीका फल—भारी, स्वच्छ, रुचिकारक, रूक्ष, स्वादु, अम्ल, रसमें कसैला और पंथरी, अर्श, कफ तथा पित्तको हरनेवाला है॥ ७८ ॥

करमर्दः करमर्दका ।

करमर्दः सुषेणः स्यात्कृष्णपाकफलस्तथा ॥ ७९ ॥
तस्माल्लघुफला या तु सा ज्ञेया करमर्दिका ।

करमर्द्दद्वयं त्वाममम्लं गुरु तृषापहम् ॥ ८० ॥
उष्णं रुचिकरं प्रोक्तं रक्तपित्तकफप्रदम् ।
तत्पक्वं मधुरं रुच्यं लघुपित्तसमीरजित् ॥ ८१ ॥

करमर्द, सुषेण और कृष्णपाकफल यह करौंदेके नाम हैं। जिसके छोटे फल हों उसको करमर्दिका (करौंदी) कहते है । इसको अंग्रेजीमें Jasmine flowered Carrıressa कहते हैं।

कच्चे करौंदा करौंदी और खट्टे, भारी, प्यासको नष्ट करनेवाले, उष्ण, रुचिकारक और रक्तपित्त तथा कफको उत्पन्न करनेवाले हैं, पक्के करौंदे और करौंदी-मधुर, रुचिकारक, हलके और पित्त तथा वायुको नष्ट करनेवाले ॥ ७९-८१ ॥

प्रियालम् ।

प्रियालस्तु खरस्कंधश्चारो बहुलवल्कलः ।
राजादनं तापसेष्टः सन्नकद्रुर्धनुःपटः ॥ ८२ ॥
चारस्तु पित्तकासघ्नः तत्फलं मधुरं गुरु ।
स्निग्धं सरं मरुत्पित्तदाहज्वरतृषापहम् ॥ ८३ ॥
प्रियालमज्जा मधुरा वृष्या पित्तानलापहा ।
हृद्योऽतिदुर्जरः स्निग्धो विष्टंभी चामवर्द्धनः ॥ ८४ ॥

प्रियाल, खरस्कन्ध, चार, बहुलवल्कल, राजादन, तापसेष्ट, सन्नकद्रु और धनुःपट यह चिरौंजीके नाम हैं। इसको हिन्दीमें चिरौंजी, फारसीमें बुकलेखाजा कहते हैं। चिरौंजी पित्त और कासको दूर करती है। उसका फल मधुर, भारी, स्निग्ध, दस्तावर और वायु, पित्त, दाह, ज्वर तथा प्यासको दूर करता है। चिरौंजीकी मज्जा-मधुर, वीर्यवर्धक, पित्त तथा अग्निको दूर करनेवाली, हृदयको हितकारी, अत्यन्त दुर्जर, स्निग्ध, विष्टम्भकारक और आमको बढानेवाली है ॥ ८२-८४ ॥

राजादनः ।

राजादनः फलाध्यक्षो राजन्या क्षीरिकापि च ।
क्षीरिकाया फलं वृष्यं बल्यं स्निग्धं हिमं गुरु ॥८५॥
तृष्णामूर्च्छामदभ्रांतिक्षयदोषत्रयास्रजित् ।

राजादन, फलाध्यक्ष, राजन्या और क्षीरिका यह खिरनीके नाम हैं। इसको अंग्रेजीमें Obtuse Leaved Mimusops कहते है ।

खिरनीका फल—वीर्यवर्धक, बलकारक, स्निग्ध, शीतल, भारी और प्यास, मूर्च्छा, मद, भ्रांति, क्षय, त्रिदोष तथा रक्तविकारको दूर करता है ॥ ८५ ॥

विकंकतम् ।

विकंकतः स्रुवावृक्षो ग्रंथिलः स्वादुकंटकः ॥ ८६ ॥
स एव यज्ञवृक्षश्च कंटकी व्याघ्रपादपि ।
विकंकतफलं पक्कं मधुरं सर्वदोषजित् ॥ ८७ ॥

विकंकत, स्रुवावृक्ष, ग्रंथिल, स्वादुकण्टक, यज्ञवृक्ष, कण्टकी और कंडवाइ, व्याघ्रपाद् यह कंटाईके नाम हैं। कंटाईका पका हुआ फल—मधुर और त्रिदोषनाशक है ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

पद्मबीजम् ।

पद्मबीजं तु पद्माक्षं गालोड्यं पद्मकर्कटी ।
पद्मबीजं हिमं स्वादु कषायं तिक्तकं गुरु ॥ ८८ ॥
विष्टंभि वृष्यं रूक्षं च गर्भस्थापनकं परम् ।
कफवातहरं बल्यं ग्राहि पित्तास्रदाहनुत् ॥ ८९ ॥

पद्मबीज, पद्माक्ष, गालोड्य और पद्मकर्कटी यह कमलगट्टेके नाम हैं। कमलगट्टा—शीतल, स्वादिष्ट, कसैला, तिक्त, भारी, विष्टम्भकारक, वीर्यवर्धक, रूक्ष, गर्भको स्थापन करनेवाला, कफ और वातको हरनेवाला, बलकारक, ग्राही और पित्तरक्तविकार तथा दाहको दूर करनेवाला है ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

मखाणम्।

मखाणं पद्मबीजाभं पानीयफलमित्यपि ।
मखाणं पद्मबीजस्य गुणैस्तुल्यं विनिर्दिशेत् ॥९०॥

कमलगट्टे भून लेनेपर मखाणे हो जाते हैं। मखाण, पद्मबीजाभ और पानीयफल यह मखाणेके नाम है। मखाणेके गुण कमलगट्टेके समान ही है ॥ ९० ॥

शृंगाटकम्।

शृंगाटकं जलफलं त्रिकोणफलमित्यपि ।
शृंगाटकं हिमं स्वादु गुरु वृष्यं कषायकम् ॥ ९१॥
ग्राही शुक्रानिलश्लेष्मप्रदं दाहास्रपित्तनुत् ।
उक्तं कुमुदबीजं तु बुधैः कैरविणीफलम् ॥ ९२ ॥

शृंगाटक, जलफल और त्रिकोणफल यह सिघाडेके नाम है इसको हिन्दीमें सिंघाडा, फारसीमें सुरञ्जान् और अंग्रेजीमें Water Caltrap कहते हैं। सिंघाड़ा—शीतल, स्वादु, भारी, वीर्यवर्धक, कसैला, ग्राही तथा शुक्र, वायु और कफको बढ़ाता है। तथा दाह और रक्तपित्तको नष्ट करता है ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

कुमुदबीजम्।

भवेत्कुमुद्वतीबीजं स्वादु रूक्षं हिमं गुरु ।

कुमुद्वतीके बीज—स्वादिष्ठ, रूक्ष, शीतल और भारी होते हैं।

मधूकं, जलमधूकम्।

मधूको गुडपुष्पः स्यान्मधुपुष्पो मधुस्रवः ॥ ९३॥
वानप्रस्थो मधुष्ठीलो जलजोऽत्र मधूलकः ।
मधूकपुष्पं मधुरं शीतलं गुरु बृंहणम् ॥ ९४ ॥
बलशुक्रकरं प्रोक्तं वातपित्तविनाशनम् ।

फलं शीतं गुरु स्वादु शुक्रलं वातपित्तनुत् ॥ ९५॥
अहृद्यं हंति तृष्णास्रदाहश्वासक्षतक्षयान् ।

मधूक, गुडपुष्प, मधुपुष्प, मधुस्रव, वानप्रस्थ और मधुष्ठील यह महुएके नाम ह । जलमें उत्पन्न महुएको मधूलक और जलमहुआ कहते हैं । इसको फारसीमें जका और अंग्रेजीमें Elloo Patree कहते हैं । महुएके फूल–मधुर, शीतल, गुरु, बृंहण, बलकारक, वीर्यवर्द्धक और वात, पित्तको नाश करनेवाले हैं । महुएके फल–शीतल, भारी, मधुर, वीर्यवर्द्धक, वात, पित्तनाशक और हृदयके लिये हानिकारक हैं । तथा प्यास, रक्त, दाह, श्वास, क्षत और क्षयको दूर करते हैं ॥ ९३–९५ ॥

पालेवतम् ।

पालेवतं सितं पुष्पैस्तिंदुकाभं फलं मतम् ॥ ९६ ॥
अन्यान्माणवकं ज्ञेयं महापालेवतं तथा ।
स्वाद्वम्लं शीतमुष्णं च द्विधा पालेवतं गुरु ॥९७॥
यत् स्वादु मधुरं तच्छीतं यदम्लं तदुष्णकम् ।

उभयमपि गुरु इति हेमाद्रिः ।

पालेवतके फूल श्वेत होते हैं, फल तिन्दुके समान होते हैं । दूसरा पालेवत माणवक और महापालेवत नामसे प्रसिद्ध है । पालेवत पहाडी सेवकी छोटी जाति है । अपालो और पालो नामसे प्रसिद्ध है । पालेवत–मीठे और खट्टे दो प्रकारके होते हैं । मीठे शीतल और खट्टे उष्णस्वभाववाले होते हैं । दोनों प्रकारके पालेवत भारी होते हैं । यह हेमाद्रिका मत है ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

परूषकम् ।

परूषकं परुषकमल्पास्थि च परापरम् ॥ ९८ ॥
परूषकं कषायाम्लमामं पित्तकरं लघु ।

तत्पक्वं मधुरं पाके शितं विष्टंभि बृंहणम् ॥ ९९ ॥
हृद्यं तु पित्तदाहास्रज्वरक्षयसमीरजित् ।

परूषक, परुष, अल्पास्थि और परापर यह फालसेके नाम हैं। कच्चा फालसा—कसैला, हलका और पित्तकारक है। पकने पर रस और पाकमें मधुर, शीतल, विष्टम्भि, बृंहण और हृदयको हितकारी होता है। तथा पित्त, दाह, रक्त, ज्वर, क्षय और वायुको जीतता है ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

तूतम् ।

तूदस्तूतं च यूपश्च क्रमुको ब्रह्मदारु च ॥ १०० ॥
तूतं पक्वं गुरु स्वादु हिमं पित्तानिलापहम् ।
तदेवामं गुरु सरमम्लोष्णं रक्तपित्तकृत् ॥ १०१ ॥

तूद, तूत, यूप, क्रमुक और ब्रह्मदारु यह शहतूतके नाम हैं। इसे हिन्दीमें सहतूत, फारसीमें शहतूत, अंग्रेजीमें Mulberrias कहते हैं। पके हुए तूत—भारी, स्वादु, शीतल, पित्त और वायुको हरनेवाले होते हैं। कच्चे तूत—भारी, दस्तावर खट्टे, उष्ण आर रक्त पित्तको करनेवाले होते हैं ॥ १०० ॥ १०१ ॥

दाडिमम् ।

दाडिमः करको दंतबीजो लोहितपुष्पकः ।
तत्फलं त्रिविधं स्वादु स्वाद्वम्लं केवलाम्लकम् १०२
तत्तु स्वादु त्रिदोषघ्नं तृड्दाहज्वरनाशनम् ।
हृत्कंठमुखरोगघ्नं तर्पणं शुक्रलं लघु ॥ १०३ ॥
कषायानुरसं ग्राहि स्निग्धं मेधाबलावहम् ।
स्वाद्वम्लं दीपनं रुच्यं किंचित्पित्तकरं लघु ॥१०४
अम्लं तु पित्तजनकमामवातकफापहम् ।

दाडिम, करक, दन्तबीज और लोहितपुष्प यह अनारके नाम है। अनारके फल तीन किसमके होते हैं—मीठे, खट्टेमिट्ठे और केवल खट्टे। इनमें

मीठे अनार—त्रिदोषनाशक, प्यास, दाह और ज्वरका नाश करनेवाले, हृदय, कण्ठ और मुखरोगोंको हरनेवाले, तृप्तिकारक, वीर्यवर्धक, हलके, कषायानुरस ग्राही, स्निग्ध, मेधा और बलके करनेवाले हैं ।

खटामिट्ठा अनार—दीपन, रुचिकारक, किंचित् पित्तको करनेवाला और हलका होता है । खट्टा अनार—पित्तकारक, आमवात और कफके हरनेवाला होता है ॥ १०२– १०४ ॥

बहुवारः ।

बहुवारस्तु शीतः स्यादुद्दालो बहुवारकः ॥ १०५॥
शेलुः श्लेष्मातकश्चापि पिच्छिलो भूतवृक्षकः ।
बहुवारो विषस्फोटव्रणवीसर्पकुष्ठनुत् ॥ १०६ ॥
मधुरस्तुवरस्तिक्तः केश्यश्च कफपित्तहृत् ।
फलमामं तु विष्टंभि रूक्षं पित्तकफास्रजित्॥१०७॥
तत्पक्वं मधुरं स्निग्धं श्लेष्मलं शीतलं गुरु ।

बहुवार, शीत, उद्दाल, बहुवारक, शेलु, श्लेष्मांतक, पिच्छिल और भूतवृक्ष यह लिसोढ़ेके नाम है । इसको हिन्दीमें लिसोढ़, फारसीमें सापिस्ता, अंग्रेजीमें Narrow leaved Sepistun कहते हैं लिसोढ़ा—विष, फोडे, व्रण, विसर्प और कुष्ठको नष्ट करता है । मधुर, कसैला और तिक्त है, केशोंको हितकारी तथा कफपित्तके जीतनेवाला है । इसके कच्चे फल विष्टम्भी, रूक्ष और पित्त, कफ तथा रक्तके जीतनेवाले है । इसके पके हुए फल—मधुर, स्निग्ध, कफकारक, शीतल और भारी होते है ॥ १०५–१०७

कतकम् ।

पयःप्रसादि कतकं कत्तकं तत्फलं च तत् ॥ १०८॥
कतकस्य फलं नेत्र्यं जलनिर्मलताकरम् ।
वातश्लेष्महरं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ १०९ ॥

पयःप्रसादी, कतक और कत्तक यह निर्मलीके वृक्ष तथा फलोंके नाम

हैं । निर्मलीके फल—नेत्रोंको हितकारी, जलको निर्मल बनानेवाले, वात और कफके हरनेवाले, शीतल, मधुर, कसैले और भारी होते हैं । इसे अंग्रेजीमें A nut which clears water कहते हैं ॥ १०८ ॥ १०९ ॥

द्राक्षा ।

द्राक्षा स्वादुफला प्रोक्ता तथा मधुरसापि च ।
मृद्वीका हारहूरा च गोस्तनी चापि कीर्तिता ॥ ११० ॥
द्राक्षा पक्का सरा शीता चक्षुष्या बृंहणी गुरुः ।
स्वादुपाकरसा स्वर्या तुवरा सृष्टमूत्रविट् ॥ १११ ॥
कोष्ठमारुतकृद् वृष्या कफपुष्टिरुचिप्रदा ।
हंति तृष्णाज्वरश्वासवातवातास्रकामलाः ॥ ११२ ॥
कृच्छ्रास्रपित्तसम्मोहदाहशोषमदात्ययान् ।
आमा स्वल्पगुणा गुर्वी सैवाम्ला रक्तपित्तकृत् ११३
वृष्या स्याद्गोस्तनी द्राक्षा गुर्वी च कफपित्तनुत् ।
अबीजाऽन्या स्वल्पतरा गोस्तनी सदृशा गुणैः ११४
द्राक्षा पर्वतजा लघ्वी साम्ला श्लेष्माम्लपित्तकृत् ।
द्राक्षा पर्वतजा यादृक् तादृशी करमर्दिका ॥ ११५ ॥

द्राक्षा, स्वादुफला, मधुरसा, मृद्वीका, हारहूरा और गोस्तनी यह मुनक्का, दाख या अंगूरके नाम हैं । इसको हिंदीमें दाख तथा अंगूर, फारसीमें मुनक्का और अंग्रजीम Grape Raisins कहते हैं । पकी हुई द्राक्षा—दस्ताचर, शीतल, नेत्रोंको हितकारी, बृंहण, भारी, पाक और रसमें स्वादु, स्वरवर्धक, कसैली, मल तथा मूत्रको लानेवाली, कोठेमें हवाको करनेवाली, वीर्यवर्धक, कफ, पुष्टि और रुचिको करनेवाली और तृष्णा, ज्वर श्वास, वात, वातरक्त, कामला, कृच्छ्र, रक्तपित्त, सम्मोह, दाह, शोष तथा मदात्यय इन रोगोंको दूर करती है ॥

कच्ची दाख—थोडे गुणोंवाली तथा भारी है। खट्टी दाख—रक्तपित्तकारक है। गौके स्तनके समान आकारवाली दाख—वीर्यवर्धक, भारी तथा कफ और पित्तको नष्ट करनेवाली है। बीजोंसे रहित दाख—गोस्तनीके समान गुणोंवाली है। पर्वतमें उत्पन्न हुई दाख—हलकी, खट्टी, कफ तथा अम्ल-पित्तके करनेवाली है, पर्वतोत्पन्न द्राक्षाके समान ही करमांदका भूम्बके गुण हैं॥ ११०–११५॥

क्षुद्रखर्जूरं पिंडखर्जूरं च।

भूमिखर्जूरिका स्वाद्वी दुरारोहा मृदुच्छदा।
तथा स्कन्धफला काककर्कटी स्वादुमस्तका॥११६
पिंडखर्जूरिका त्वन्या सा देशे पश्चिमे भवेत्।
खर्जूरी गोस्तनाकारा परद्वीपादिहागता॥ ११७॥
जायते पश्चिमे देशे सा छोहारेति कीर्तिता।
खर्जूरीत्रितयं शीतं मधुरं रसपाकयोः॥ ११८॥
स्निग्धं रुचिकरं हृद्यं क्षतक्षयहरं गुरु।
तर्पणं रक्तपित्तघ्नं पुष्टिविष्टंभशुक्रदम्॥ ११९॥
कोष्ठमारुतहृद्बल्यं वांतिवातकफापहम्।
ज्वरातिसारक्षुत्तृष्णाकासश्वासनिवारकम्॥ १२०॥
मदमूर्च्छामरुत्पित्तमद्योद्भूतगदान्त्यकृत्।
महतीभ्यां गुणैरल्पा स्वल्पा खर्जूरिका स्मृता १२१
खर्जूरितरुतोयं तु मदपित्तकरं भवेत्।
वातश्लेष्महरं रुच्यं दीपनं बलशुक्रकृत्॥ १२२॥

भूमिखर्जूरिका, स्वाद्वी, दुरारोहा, मृदुच्छदा, स्कंधफला, काककर्कटी और स्वादु-मस्तका यह खजूरके नाम है। जो खजूर पश्चिम देशमें उत्पन्न होती है उसे पिंड-

खार्जूरिका कहते हैं । और जो खजूर दूसरी जातिकी गौके स्तनके समान आकारवाली, दूसरे द्वीपसे आई हुई पश्चिम देशमें उत्पन्न होती है उसे छोहारा कहते हैं । इनको हिन्दीमें खजूर, पिण्ड खजूर और छुहारे, फारसीमें तमररुतक और अंग्रेजीमें Date Palm कहते हैं ।

तीनों प्रकारकी खजूरें—शीतल, रस और पाकमें मधुर, स्निग्ध, रुचिकारक, हृदयको प्रिय, क्षत और क्षयको नष्ट करनेवाली, भारी, तृप्तिकारक, रक्तपित्त-नाशक, पुष्टिकारक, विष्टम्भी, शुक्रवर्धक, कोठेकी वायुको हरनेवाली, वलकारक और वमन, वात, कफ, ज्वर, अतिसार, क्षुधा, तृष्णा, कास, श्वास, मद, वायु, पित्त, मद्यसे उत्पन्न हुए रोग इन सबको नष्ट करनेवाली हैं । छोटी खजूर वड़ी खजूरसे गुणोंमें न्यून है । खजूरके वृक्षोंका रस—मद तथा पित्तकारक, वात और कफको हरनेवाला, रुचिकारक, दीपन और वलवीर्य-वर्धक है ॥ ११६–१२२ ॥

पिण्डखर्जूरभेदः (सुलेमानी) ।

सुनेपाली तु मृदुला दलहीनफला च सा ।
सुनेपाली श्रमभ्रांतिदाहमूर्च्छास्रपित्तहृत् ॥ १२३ ॥

सुनेपाली, मृदुला और दलहीनफला यह सुलेमानी खजूरके नाम है । सुलेमानी खजूर—श्रम, श्रांति, दाह, मूर्च्छा और रक्तपित्तको जीतनेवाली है ॥ १२३ ॥

वातादः ।

वातादो वातवैरी स्यान्नेत्रोपमफलस्तथा ।
वाताद उष्णः सुस्निग्धो वातघ्नः शुक्रकृद्गुरुः १२४
वातादमज्जा मधुरो वृष्यः पित्तानिलापहः ।
स्निग्धोष्णः कफकृन्नेष्टो रक्तपित्तविकारिणाम् १२५

वाताद, वातवैरी और नेत्रोपफल यह वादामके नाम है । इसको हिन्दीमें बादाम, फारसीमें वदामशीरी और अंग्रेजीमें Almond कहते

है । बादाम—गरम, स्निग्ध, वातनाशक, वीर्यवर्धक और भारी है । बादामकी मज्जा—मधुर, वीर्यवर्धक, पित्त तथा वायुको नष्ट करनेवाली, स्निग्ध, गरम, कफकारक और रक्तपित्तविकारियोंको अहितकर हैं ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

सेवम् ।

मुष्टिप्रमाणं वदरं सेवं शिवितिकाफलम् ।
सेवं समीरपित्तघ्नं बृंहणं कफकृद् गुरु ॥ १२६ ॥
रसे पाके च मधुरं शिशिरं रुचिशुक्रकृत् ।

मुष्टिप्रमाण, वदर, सेव, शिवितिकाफल यह सेवके नाम हैं । इसे हिन्दीमें तथा फारसीमें सेव और अंग्रेजीमें Apple कहते है । सेव—वात, पित्तको नष्ट करनेवाला, पुष्टिकारक, कफोत्पादक, भारी, रस और पाकमें मधुर, शीतल और रुचि तथा वीर्यको उत्पन्न करनेवाला है ॥ १२६ ॥

अमृतफलम् ।

अमृतफलं लघु वृष्यं सुस्वादु त्रीन् हरेद्दोषान् १२७
देशेषु मुद्गलानां बहुलं तल्लभ्यते लोकैः ।

अमृतफल (नासपाती अथवा नाख) हलका, वीर्यवर्धक, अत्यन्त स्वादु तथा त्रिदोषनाशक है । अमृतफल प्रायः मुद्गल देशोंमें अधिक मिलता है ॥ १२७ ॥

पीलुः ।

पीलुर्गुडफलः स्रंसी तथा शीतफलोऽपि च ॥१२८॥
पीलु श्लेष्मसमीरघ्नं पित्तलं भेदि गुल्मनुत् ।
स्वादु तिक्तं च यत्पीलु तन्नात्युष्णं त्रिदोषहृत् १२९

पीलु, गुड़फल, स्रंसी और शीतफल यह पीलूके नाम हैं । इसको हिन्दीमें पीलू, फारसीमें दरखते मिस्वाक् और अंग्रेजीम Mustarad tree of scripture कहते है । पीलू—कफ और वातको नष्ट करनेवाला,

पित्तकारक, भेदन और गुलमनाशक है। जो पीलू मधुर तथा तिक्त हो वह किंचित् गरम और त्रिदोषनाशक होता है ॥ १२८ ॥ १२९ ॥

अक्षोटः।

पीलुः शैलभवोऽक्षोटः कंदरालश्च कीर्तितः।
अक्षोटकोऽपि वातादसदृशः कफपित्तकृत् ॥१३०॥

पर्वतोत्पन्न पीलूको अक्षोट कहते हैं। हिन्दीमें अखरोट, फारसीमें बार्तगज, अंग्रेजीमें Walnut नामसे पुकारा जाता है। अक्षोट भी बादामके समान गुणोंवाला और कफ पित्तको करनेवाला है ॥ १३० ॥

बीजपूरम्।

बीजपूरो मातुलुंगो रुचकः फलपूरकः।
बीजपूरफलं स्वादु रसेऽम्लं दीपनं लघु ॥ १३१ ॥
रक्तपित्तहरं कंठजिह्वाहृदयशोधनम्।
श्वासकासारुचिहरं हृद्यं तृष्णाहरं स्मृतम् ॥ १३२ ॥

बीजपूर, मातुलुंग, रुचक, फलपूरक यह बिजौरा निम्बूके नाम हैं। इसे हिन्दीमें बिजौरा निम्बु, फारसीमें तुरुंब, अंग्रेजीमें Sitres कहते है। बिजौरा नीम्बू–स्वादु, रसमें खट्टा, दीपन, हलका, रक्तपित्तनाशक, हृदयको प्रिय, तृष्णाको हरनेवाला और कण्ठ, जिह्वा और हृदय इनको शुद्ध करता है तथा श्वास, कास, अरुचि इनको दूर करनेवाला है ॥१३१॥१३२॥

बीजपूरभेदः।

बीजपूरोऽपरः प्रोक्तो मधुरो मधुकर्कटी।
मधुकर्कटिका स्वाद्वी रोचनी शीतला गुरुः॥१३३॥
रक्तपित्तक्षयश्वासकासहिक्काभ्रमापहा।

दूसरी प्रकारके बीजपूरको मधुर और मधुकर्कटी कहते हैं। इसको देशभाषामें चकोतरा कहते हैं। चकोतरा–स्वादु, रुचिकारक, शीतल,

भारी और रक्तपित्त, क्षय, श्वास, कास, हिक्का और श्रम इनको दूर करता है ॥ १३३ ॥

जंबीरद्वयम् ।

स्याज्जंबीरो दंतशठो जंभजंभीरजंभलाः ॥ १३४ ॥
जंबीरमुष्णं गुर्वम्लं वातश्लेष्मविबंधनुत् ।
शूलकासकफोत्क्लेशच्छर्दितृष्णामदोषजित् ॥१३५॥
आस्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमांद्यकृमीन्हरेत् ।
स्वल्पजंबीरिका तद्वत्तृष्णाच्छर्दिनिवारणी ॥ १३६ ॥

जम्बीर, दन्तशठ, जंभ, जंभीर, जंभल यह जम्भीरी निम्बूके नाम हैं । इस को हिन्दीमें जंभीरी नीबू, फारसीमें लिमुने तुर्श और अंग्रेजीमें Lemen कहते हैं । जम्बीर–गरम, भारी, खट्टा, वात, कफ और विबन्धको जीतनेवाला, मुखकी विरसताको हरनेवाला तथा शूल, कास, कफोत्क्लेश, वमन, प्यास; आमके दोष, अग्निकी मन्दता तथा कृमियोंको नष्ट करनेवाला है । उसके समान ही स्वल्पजंभीरिका भी तृष्णा तथा वमनको निवारण करती है ॥ १३४–१३६ ॥

निंबूकम् ।

निंबूः स्त्री निंबुकं क्लीबे निंपाकमपि कीर्तितम् ।
निंबूकमम्लं वातघ्नं दीपनं पाचनं लघु ॥ १३७ ॥

निम्बू यह शब्द स्त्रीलिङ्ग तथा निंबुक यह नपुंसक लिङ्गमें होता है । निंबू, निंबुक, निपाक यह कागजी निंबूके नाम हैं । कागजी निंबू–खट्टा, वातनाशक, दीपन, पाचन और हलका है ॥ १३७ ॥

मिष्टनिंबूकम् ।

मिष्टनिंबूफलं स्वादु गुरु मारुतपित्तनुत् ।

गलरोगविषध्वंसि कफोत्क्लेशि च रक्तहृत् ॥ १३८॥
शोषारुचितृषाच्छर्दिहरं बल्यं च बृंहणम् ।

मिष्टनिंबूफल, मीठेनींबू अथवा सर्बती नीबूको कहते हैं। मीठा नीबू-स्वादिष्ठ, भारी, वात तथा पित्तको जीतनेवाला, कफोत्क्लेशकारक, रक्तको हरनेवाला, बलकारक, धातुओंको पुष्ट करनेवाला तथा गलके रोग, विष, शोष, अरुचि, तृषा और वमनको दूर करनेवाला है ॥ १३८ ॥

कर्मरंगम् ।

कर्मरंगं हिमं ग्राहि स्वाद्वम्लं कफवातहृत् ॥ १३९॥

कर्मरंगको हिन्दीमें करमख और अंग्रेजीमें Carmb ola कहते हैं। करमख-शीतल, ग्राही, खट्टा, स्वादु और कफ-वातका नाश करनेवाला है ॥ १३९ ॥

अम्लिका ।

अम्लिका चुक्रिकाऽम्ली च चुक्रा दंतशठापि च ।
अम्ला च चिंचिका चिंचा तिंतिडीका च तिंतिडी ॥
अम्लिकाम्ला गुरुर्वातहरी पित्तकफास्रकृत् ।
पक्वा तु दीपनी रूक्षा सरोष्णा कफवातनुत् १४१॥

अम्लिका, अम्ली, चुक्रिका, चुक्रा, दन्तशठा, अम्ला, चिंचिका, चिंचा, तिंतिडीका और तिंतिडी यह इमलीके नाम हैं। इसको अंग्रेजीम Tamerined कहते हैं। इमली-खट्टी, भारी, वातनाशक और पित्त, कफ तथा रक्तविकार-को करनेवाली है। पकी हुई इमली-दीपन, रूक्ष, दस्तावर और कफ तथा वातको हरनेवाली है ॥ १४०॥१४१ ॥

अम्लवेतसम् ।

स्यादम्लवेतसं चुक्रं शतवेधि सहस्रभित् ।
अम्लवेतसमत्यम्लं भेदनं लघु दीपनम् ॥ १४२ ॥

हृद्रोगशूलगुल्मघ्नं पित्तलं लोमहर्षणम् ।
रूक्षं विण्मूत्रदोषघ्नं प्लीहोदावर्तनाशनम् ॥१४३॥
हिक्कानाहारुचिश्वासकासाजीर्णवमिप्रणुत् ।
कफवातामयध्वंसिच्छागमांसद्रवत्वकृत् ॥ १४४ ॥
चणकाम्लगुणं ज्ञेयं लोहसूचीद्रवत्वकृत् ।

अम्लवेतस, चुक्र, शतवेधि, सहस्रभित् यह अम्लवेतके नाम है । इसको हिन्दीमें अमलवेत, फारसीमें तुर्षक और अंग्रेजीमें Common Soral कहते हैं । अम्लवेत—अत्यन्त खट्टा, भेदन, लघु, दीपन, पित्तकारक, लोमहर्षण करनेवाला, बकरीके मांस तथा लोहेकी सूईके पिघलानेवाला, चणकके क्षारके समान गुणोंवाला और हृदयके रोग, शूल, गुल्म, विष्ठा और मूत्रके दोष, प्लीहा, उदावर्त, हिचकी, आनाह. अरुचि, श्वास, कास, अजीर्ण, वमन और कफ तथा वायुके रोगोंको दूर करता है ॥१४२—१४४॥

वृक्षाम्लम् ।

वृक्षाम्लं तिंतिडीकं च चुक्रं स्यादम्लवृक्षकम् १४५॥
वृक्षाम्लमाममम्लोष्णं वातघ्नं कफपित्तलम् ।
पक्वं तु गुरु संग्राहि कटुकं तुवरं लघु ॥ १४६ ॥
अम्लोष्णं रोचनं रूक्षं दीपनं कफवातहृत् ।

वृक्षाम्ल, तिन्तिडीक, चुक्र और अम्लवृक्ष यह अम्लवृक्ष (अम्लवेत) के नाम है। इसे हिन्दीमें अम्लवेत और अंग्रेजीमें Kokam Balter tree कहते हैं।

कच्चा अम्लवृक्ष—खट्टा, गरम, वातनाशक, कफ और पित्तको बढानेवाला होता है । पका हुआ—भारी, ग्राही, कटु, कषाय, हलका, खट्टा, गरम, रुचिकारक, रूक्ष, अग्निदीपक तथा कफ और वातको हरनेवाला है ॥ १४५ ॥ ॥ १४६ ॥

चतुरम्लं पंचाम्लम् ।

अम्लवेतसवृक्षाम्लबृहज्जंबीरनिंबुकैः ॥ १४७ ॥
चतुरम्लं हि पंचाम्लं बीजपूरयुतैर्भवेत् ।

अम्लवेत, अम्लवृक्ष, वडा जम्भीरीनींबू तथा कागजी नीबू इन चारोंको मिलानेसे चतुरम्ल और इन चारोंमें बिजौरा नीम्बू मिलानेसे पंचाम्ल बन जाता है ॥ १४७ ॥

परिभाषा ।

फलेषु परिपक्कं यद्गुणवत्तदुदाहृतम् ॥ १४८ ॥
बिल्वादन्यत्र विज्ञेयमामं तद्धि गुणाधिकम् ।
फलेषु सरसं यत्स्याद्गुणवत्तदुदाहृतम् ॥ १४९ ॥
द्राक्षाबिल्वशिवादीनां फलं शुष्कं गुणाधिकम् ।
फलतुल्यगुणं सर्वं मज्जानामपि निर्दिशेत् ॥ १५० ॥
फलं हिमाग्निदुर्वातव्यालकीटादिदूषितम् ।
अकालजं कुभूमीजं पाकातीतं न भक्षयेत् ॥ १५१

इति फलवर्गः ।

बेलके अतिरिक्त शेष सब फल पके हुए ही अधिक गुणवाले है । परन्तु बेल तो कच्चा ही अधिक गुणोंवाला होता है । दाख, बेल और हरड आदिके सूखे फल अधिक गुणोंवाले हैं । जो गुण फलोंमें कहे है सो गुण उनकी मज्जामें भी जानने । जो फल बरफ, अग्नि, दूषितपवन, सर्प अथवा कीडा आदिसे दूषित हो, विना समय उत्पन्न हुआ हो, बुरी भूमिमें उत्पन्न हुआ हो अथवा पककर खराब हो गया हो वह कदापि नहीं खाना चाहिये ॥ १४८-१५१ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज-विद्यालङ्कार-शिवशर्मवैद्यकृत-शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ फलवर्गः समाप्तः ॥ ५ ॥

वटादिवर्गः ६.



तत्रादौ वटस्य नामानि गुणाश्च।

वटो रक्तफलः शृंगी न्यग्रोधः स्कन्धजो ध्रुवः।
क्षीरी वैश्रवणावासो बहुपादो वनस्पतिः॥ १॥
वटः शीतो गुरुर्ग्राही कफपित्तव्रणापहः।
वर्ण्यो विसर्पदाहघ्नः कषायो योनिदोषहृत्॥ २॥

प्रथम वटके नाम तथा गुणोंको कहते हैं:—

वट, रक्तफल, शृंगी, न्यग्रोध, स्कन्धज, ध्रुव, क्षीरी, वैश्रवणावास, बहुपाद और वनस्पति यह बडके नाम हैं। इसे हिन्दीमें बड़ अथवा बरौटा, फारसीमें दरखतरेशा और अंग्रेजीमें Banian Tree कहते हैं। बड़—शीत, भारी, ग्राही, वर्णको उत्तम करनेवाला, कसैला तथा कफ, पित्त, व्रण, विसर्प, दाह और योनिदोष इनको दूर करता है॥ १॥ २॥

अश्वत्थः।

बोधिद्रुः पिप्पलोऽश्वत्थश्चलपत्रो गजाशनः।
पिप्पलो दुर्जरः शीतः पित्तश्लेष्मव्रणास्रजित्॥ ३॥
गुरुस्तुवरको रूक्षो वर्ण्यो योनिविशोधनः।

बोधिद्रु, पिप्पल, अश्वत्थ, चलपत्र आर गजाशन यह पीपलके नाम हैं। इसे हिन्दीमें पीपल, फारसीमें दरखत लरजां और अंग्रेजीमें Poplar leaved Figtree कहते हैं। पीपल—दुर्जर, शीतल, भारी, कसैला, रूक्ष, वर्णको उत्तम करनेवाला, योनिको शुद्ध करनेवाला और पित्त, कफ व्रण और रक्तविकारको जीतता है॥ ३॥

पिप्पलभेदः।

पारिशोन्यः पलाशश्च फलीशश्च कमण्डलुः ॥४॥
गर्दभांडः कन्दरालकपीतनसुपार्श्वकाः।
पारिषो दुर्जरः स्निग्धः कृमिशुक्रकफप्रदः ॥ ५ ॥
फलेऽम्लो मधुरो मूले कषायः स्वादुमज्जकः।

पारिशोन्य, पलाश, फलीश, कमण्डलु, गर्दभाण्ड, कन्दराल, कपीतन और सुपार्श्वक यह पारिस पीपलके नाम हैं। इसको हिन्दीमें पारिसपीपल, फारसीमें येलासंवेलप और अंग्रेजीम Hiluxus कहते है। पारिसपीपल–दुर्जर, स्निग्ध, फलमें अम्ल, मधुर, मूलमें कषाय, स्वादुमज्जावाला तथा कृमि-रोग, शुक्र और कफको उत्पन्न करनेवाला है ॥ ४ ॥ ५ ॥

अश्वत्थभेदः।

नन्दीवृक्षोऽश्वत्थभेदः प्ररोही गजपादपः ॥ ६ ॥
स्थालीवृक्षः क्षीरितरुः क्षीरी च स्याद्वनस्पतिः।
नन्दीवृक्षो लघुः स्वादुस्तिक्तस्तुवर उष्णकः ॥७॥
कटुपाकरसो ग्राही विषपित्तकफास्रजित्।

नन्दीवृक्ष, अश्वत्थभेद, प्ररोही, गजपादप, स्थालीवृक्ष, क्षीरितरु, क्षीरी और वनस्पति यह वेलिया पीपलके नाम है। इसको हिन्दीमें वेलिया पीपल कहते हैं। नन्दीवृक्ष–हलका, स्वादु, तिक्त, कषाय, गरम, पाक और रसमें कटु, ग्राही तथा विष, पित्त, कफ और रक्तविकारोंको जीतता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

उदुम्बरः।

उदुम्बरो जन्तुफलो यज्ञांगो हेमदुग्धकः ॥ ८ ॥
उदुम्बरो हिमो रूक्षो गुरुः पित्तकफास्रजित्।
मधुरस्तुवरो वर्ण्यो व्रणशोधनरोपणः ॥ ९ ॥

उदुम्बर, जन्तुफल, यज्ञांग और हेमदुग्धक यह गूलरके नाम हैं। इसे

हिन्दीमें गूलर, फारसीमें अंजीरे आदम और अंग्रेजीमें Kigtree कहते है । गूलर—शीतल, रूक्ष, भारी, मधुर, कसैला, वर्णको उत्तम करनेवाला. व्रणका शोधन और रोपण करनेवाला और पित्त कफ तथा रक्तविकारको हरनेवाला है ॥ ८ ॥ ९ ॥

मलयूः ।

काकोदुम्बरिका फल्गुर्मलयूर्जघनेफला ।
मलयूस्तम्भकृत्तिक्ता शीतला तुवरा जयेत् ॥१० ॥
कफपित्तव्रणश्वित्रपांड्वर्शःकुष्ठकामलाः ।

काकोदुम्बरिका, फल्गु, मलयू और जघनेफल यह कैंवरीके नाम है । इसको हिन्दीमें कैंवरी, फारसीमें अंजीरे दस्ती और अंग्रेजीमें Figtree कहते है । कैंवरी—स्तम्भन करनेवाली, तिक्त, शीतल, कसैली तथा कफ, पित्त, व्रण, श्वित्र, पाण्डुता, अर्श, कुष्ठ और कामला इन रोगोंको दूर करनेवाली है ॥ १० ॥

प्लक्षः ।

प्लक्षो जटी पर्पटी च कर्पटी च स्त्रियामपि ॥ ११ ॥
प्लक्षः कषायः शिशिरो व्रणयोनिगदापहः ।
दाहपित्तकफास्रघ्नः शोथहा रक्तपित्तहृत् ॥ १२ ॥

प्लक्ष, जटी, पर्पटी और कर्पटी यह पिलखनके नाम है । पिलखन—कसैली, शीतल, व्रण तथा योनिरोगोंको हरनेवाली, शोथको नष्ट करनेवाली, रक्तपित्तको दूर करनेवाली तथा दाह, पित्त. कफ और रक्तविकारोंको दूर करनेवाली है ॥ ११ ॥ १२ ॥

शिरीषः ।

शिरीषो भंडिलो भंडी भंडीरश्च कपीतनः ।
शुकपुष्पः शुकतरुर्मृदुपुष्पः शुकप्रियः ॥ १३ ॥

शिरीषो मधुरोऽनुष्णस्तिक्तश्च तुवरो लघुः ।
दोषशोथविसर्पघ्नः कासव्रणविषापहः ॥ १४ ॥

शिरीष, भंडिल, भण्डी, भण्डीर, कपीतन, शुकपुष्प, शुकतरु, मृदुपुष्प और शुकप्रिय यह शिरीषके नाम हैं। इसको हिन्दीमें शिरीह तथा सिरिस और फारसीमें दरख्ते जकरिया कहते हैं। शिरीष–मधुर, शीतल, तिक्त, कसैला, हलका तथा त्रिदोष, शोथ, विसर्प, कास और व्रणोंको दूर करता है ॥ १३ ॥ १४ ॥

क्षीरिवृक्षाः पंचवल्कलाः ।

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थपारिषप्लक्षपादपाः ।
पंचैते क्षिरिणो वृक्षास्तेषां त्वक् पंचवल्कलम् ॥ १५ ॥
केचित्तु पारिषस्थाने शिरीषं वेतसं परे ।
क्षीरिवृक्षा हिमा वर्ण्या योनिरोगव्रणापहाः ॥ १६ ॥
रूक्षाः कषाया मेदोघ्ना विसर्पामयनाशनाः ।
शोथपित्तकफास्रघ्नाःस्तन्या भग्नास्थियोजकाः १७॥
त्वक्पंचकं हिमं ग्राहि व्रणशोथविसर्पजित् ।
तेषां पत्रं हिमं ग्राहि कफवातास्रनुल्लघु ॥ १८ ॥
विष्टंभाध्मानजित्तिक्तं कषायं लघु लेखनम् ।

बड, गूलर, पीपल, पारसीपीपल और प्लक्ष यह पांच क्षीरिवृक्ष (दूधवाले वृक्ष) कहलाते हैं। उनकी छालको पंचवल्कल कहते हैं। कोई पारसी पीपल के स्थानमें सिरस अथवा वेतसको क्षीरिवृक्षोंमें गिनते हैं। परंतु सिरीष और वेतस दोनोंमें दूध नहीं होता है, इसलिये पारस पीपल ही लेना चाहिये। क्षीरिवृक्ष–शीतल, वर्णको उत्तम करनेवाले, रूक्ष, कसैले, दूधको वढाने-वाले, टूटी हुई हड्डीको जोडनेवाले तथा योनिरोग, व्रण, मेद, विसर्प रोग, शोथ, पित्त, कफ तथा रक्तविकारको जीतनेवाले है।

पञ्चवल्कल–ग्राही, शीतल, तथा व्रण, शोथ और विसर्पको जीतनेवाला है । उनके पत्ते–शीतल, ग्राही, हलके, तिक्त, कसैले, किंचित् लेखन और कफ, वात, रक्तविकार, विष्टम्भ तथा आध्मानको जीतनेवाले हैं ॥ १५–१८ ॥

शालः ।

शालस्तु सर्जकार्श्याश्वकर्णकाः सस्यसंवरः ॥ १९ ॥
अश्वकर्णः कषायः स्याद्व्रणस्वेदकफक्रिमीन् ।
ब्रध्नविद्रधिबाधिर्य्ययोनिकर्णगदान्हरेत् ॥ २० ॥

शाल, सर्ज, कार्श्य, अश्वकर्णक और सस्यसंवर यह शालके नाम हैं । इस को अंग्रेजीमें Salhel कहते है । शाल–कसैला तथा व्रण, स्वेद, कफ, कृमि, ब्रध्न, विद्रधि, बधिरता, योनिरोग और कर्णरोग इनको दूर करनेवाला है ॥ १९ ॥ २० ॥

शालभेदः ।

सर्जकोऽन्योऽजकर्णः स्याच्छालो मरिचपत्रकः ।
अजकर्णः कटुस्तिक्तः कषायोष्णो व्यपोहति ॥ २१ ॥
कफपांडुश्रुतिगदान्मेहकुष्ठविषव्रणान् ।

अन्य प्रकारके शालको अजकर्ण, शाल और मरिचपत्रक कहते है । अजकर्ण–कटु, तिक्त, कसैला गरम तथा कफ, पाण्डुरोग, कर्णरोग, प्रमेह, कुष्ठ, विष और व्रणोंको नष्ट करता है ॥ २१ ॥

शल्लकी ।

शल्लकी गजभक्षा च सुवहा सुरभी रसा ।
महेरुणा कुंदुरुकी वल्लकी च बहुस्रवा ॥ २२ ॥

शल्लकी तुवरा शीता पित्तश्लेष्मातिसारजित् ।
रक्तपित्तव्रणहरी पुष्टिकृत्समुदीरिता ॥ २३ ॥

शल्लकी, गजभक्षा, सुवहा, सुरभी, रसा, महेरुणा, कुंदरुकी, वल्लकी और वहुस्रवा यह सालई या छलके नाम हैं । सालई—कसैली, शीतल, पुष्टिकारक तथा पित्त, कफ, अतिसार, रक्तपित्त और व्रणोंको हरनेवाली है ॥ २२ ॥ २३ ॥

शिंशिपा ।

शिंशिपा पिच्छिला श्यामा कृष्णसारा च सा गुरुः ।
कपिला सैव मुनिभिर्भस्मगर्भेति कीर्तिता ॥ २४ ॥
शिंशिपा कटुका तिक्ता कषाया शोथहारिणी ।
उष्णवीर्य्या हरेन्मेदःकुष्ठश्वित्रवमिक्रिमीन् ॥ २५ ॥
वस्तिरुग्व्रणदाहास्रबलासान् गर्भपातिनी ।

शिंशिपा, पिच्छिला, श्यामा और कृष्णसारा यह शीशमके नाम हैं । कापिल शीशमको मुनियोंने भस्मगर्भा कहा है । इसको देशभाषामें टाहली तथा सीसम और अंग्रेजीमें Black woods tree कहते हैं ।

सीसम—कटु, तिक्त, कसैली, शोथको हरनेवाली, उष्णवीर्य, गर्भको गिरानेवाली तथा मेद, कुष्ठ, श्वित्र, वमन, कृमि, वास्तिरोग, व्रण, दाह, रक्तविकार और कफको नष्ट करनेवाली है ॥ २४ ॥ २५ ॥

ककुभः ।

ककुभोऽर्जुननामा स्यान्नदीसर्जश्च कीर्तितः ॥ २६ ॥
इंद्रद्रुर्वीरवृक्षश्च वीरश्च धवलः स्मृतः ।
ककुभो शीतलो हृद्यः क्षतक्षयविषास्रजित् ॥ २७ ॥
मेदोमेहव्रणान् हंति तुवरः कफपित्तहृत् ।

ककुभ, नदीसर्ज, इन्द्रद्रु, वीर, धवल यह और अर्जुनके सम्पूर्ण नाम

यह कोहके नाम है । ककुभ—शीतल, हृदयको प्रिय, कसैला तथा क्षत, क्षय, विष, रक्तविकार, मेद, प्रमेह, कफ और पित्तको हरनेवाला है ॥ २६ ॥ २७ ॥

असनः ।

बीजकः पीतसारश्च पीतशालक इत्यपि ॥ २८ ॥
बंधूकपुष्पः प्रियकः सर्जकश्चासनः स्मृतः ।
बीजकः कुष्ठवीसर्पश्वित्रमेहगदक्रिमीन् ॥ २९ ॥
हंति श्लेष्मास्रपित्तं च त्वच्यः केश्यो रसायनः ।

बीजक, पीतसार, पीतशालक, बन्धूकपुष्प, प्रियक, सर्जक और असन यह विजयसारके नाम है । इसे फारसीमें कमर कस और अंग्रेजीमें Indian Kinstree कहते है । बीजक—त्वचाके लिये हितकारी, केशवर्धक, रसायन तथा कुष्ठ, विसर्प, श्वित्र, प्रमेह और कृमि इनको नष्ट करता है ॥ २८ ॥ २९ ॥

खदिरः ।

खदिरो रक्तसारश्च गायत्री दंतधावनः ॥ ३० ॥
कंटकी बालपत्रश्च बहुशल्यश्च यज्ञियः ।
खदिरः शीतलो दन्त्यः कंडुकासारुचिप्रणुत् ३१ ॥
तिक्तः कषायो मेदोघ्नः कृमिमेहज्वरव्रणान् ।
श्वित्रशोथामपित्तास्रपांडुकुष्ठकफान् हरेत् ॥ ३२ ॥

खदिर, रक्तसार, गायत्री, दन्तधावन, कंटकी, बालपत्र, बहुशल्य और यज्ञिय यह खैरके नाम है । खर—शीतल, दन्तोंके लिये हितकारी, तिक्त, कसैला तथा कण्डु, कास, अरुचि, मेद, कृमि, प्रमेह, ज्वर, व्रण, श्वित्र, शोथ, आम, पित्त, रक्तविकार कुष्ठ और कफ इनको नष्ट करनेवाली है ॥ ॥ ३०–३२ ॥

श्वेतखदिरः।

खदिरः श्वेतसारोऽन्यः कदरः सोमवल्कलः।
खदिरो विशदो वर्ण्यो मुखरोगकफास्रजित् ॥३३॥

श्वेतखदिर, श्वेतसार, कदर और सोमवल्कल यह खैर वृक्षके नाम है। श्वेत खदिर—स्वच्छ, वर्णको उत्तम करनेवाला तथा मुखरोग, कफ और रक्त-विकारको जीतनेवाला है ॥ ३३ ॥

इरिमेदः।

इरिमेदो विट्खदिरः कालस्कंधोऽरिमेदकः।
इरिमेदः कषायोष्णो मुखदन्तगदास्रजित् ॥ ३४ ॥
हंति कण्डूविषश्लेष्मकृमिकुष्ठविषव्रणान्।

इरिमेद, विट्खादिर, कालस्कन्ध आर अरिमेदक यह दुर्गन्ध खैरके नाम है। इसको अंग्रेजीमें Spanj tree कहते हैं। इरिमेद—कसैला, उष्ण तथा मुखरोग, खासी, रक्तविकार, कण्डू, विष, कफ, कृमि, कुष्ठ, गरदोष और व्रणोंको हरनेवाला है ॥ ३४ ॥

रोहीतकः।

रोहीतको रोहितको रोहि दाडिमपुष्पकः ॥ ३५ ॥
रोहीतकः प्लीहघाती रुच्यो रक्तप्रसादनः।

रोहीतक, रोहितक, रोही और दाडिमपुष्पक यह रोहेडेके नाम हैं। रोहेडा—प्लीहाको नष्ट करनेवाला, रुचिकारक तथा रक्तको शुद्ध करनेवाला है ॥ ३५ ॥

किंकिरातः।

बबूलः किंकिरातः स्यात्किकराटः सपीतकः ॥३६॥

स एव कथितस्तज्ज्ञैराभाषट्पदमोदनी ।
बबूलः कफनुद्ग्राही कुष्ठकृमिविषापहः ॥ ३७ ॥

बबूल, किकिरात, किंकराट, सपीतक और आभाषट्पदमोदनी यह कीकरके नाम हैं । इसको अंग्रेजीमें Acacia tree कहते हैं । कीकर–कफनाशक, ग्राही तथा कुष्ठ, कृमि और विषको दूर करनेवाली है ॥ ३७ ॥

अरिष्टकः ।

अरिष्टकस्तु मांगल्यः कृष्णवर्णोऽर्थसाधनः ।
रक्तबीजः पीतफेनः फेनिलो गर्भपातनः ॥ ३८ ॥
अरिष्टकस्त्रिदोषघ्नो ग्रहजिद्गर्भपातनः ।

अरिष्टक, मांगल्य, कृष्णवर्ण, अर्थसाधन, रक्तबीज, पीतफेन, फेनिल, गर्भपातन यह रीठेके नाम है । इसे हिन्दीमें रीठा, फारसीमें फिदक और अंग्रेजीमें Soapberri Soapnut कहते है । रीठा–त्रिदोषनाशक, ग्रहोंको जीतनेवाला और गर्भको गिरानेवाला है ॥ ३८ ॥

पुत्रजीवः ।

पुत्रजीवो गर्भकरो यष्टिपुष्पोर्थसाधकः ॥ ३९ ॥
पुत्रजीवो गुरुर्वृष्यो गर्भदः श्लेष्मवातहृत् ।
सृष्टमूत्रमलो रूक्षो हिमः स्वादुः पटुः कटुः ॥ ४० ॥

पुत्रजीव, गर्भकर, यष्टिपुष्प और अर्थसाधक यह जियापोताके नाम हैं । इसको हिन्दीमें जियापोता कहते है । जियापोता–भारी, वीर्यवर्द्धक, गर्भदायक, कफ तथा वातको हरनेवाला, मूत्र और मल लानेवाला, रूक्ष, शीतल, मधुर, लवणरसयुक्त तथा कटु है ॥ ३९ ॥ ४० ॥

इंगुदः ।

इंगुदोंगारवृक्षश्च तिक्तकस्तापसद्रुमः ।

इंगुदः कुष्ठभूतादिग्रहव्रणविषक्रिमीन् ॥ ४१ ॥
हंत्युष्णः श्वित्रशूलघ्नस्तिक्तकः कटुपाकवान् ।

इंगुद, अंगारवृक्ष, तिक्तक और तापसद्रुम यह हिंगोटके नाम हैं । इसे हिन्दीमें हिगोट और अंग्रेजीमें Daliel कहते हैं । हिगोट–गरम, तिक्त, पाकमें कटु, तथा कुष्ठ, भूतादिग्रह, व्रण, विष, कृमि, श्वित्र और शूलको नष्ट करता है ॥ ४१ ॥

जिंगिनी ।

जिंगिनी झिंगिणी झिंगी सनिर्य्यासा प्रमोदिनी ४२
जिंगिनी मधुरा सोष्णा कषाया योनिशोधिनी ।
कटुका व्रणहृद्रोगवातातीसारहृत्पटुः ॥ ४३ ॥

जिगिनी, झिंगिणी, झिगी, सनिर्यासा और प्रमोदिनी यह जिगनीके नाम हैं । जिङ्गनी–मधुर, गरम, कसैली, योनिको शुद्ध करनेवाली, कटु, लवणरसयुक्त तथा व्रण, हृदयके रोग, वात, अतिसार इनको हरती है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

तमालः ।

तमालः शालवद्वेद्यो दाहविस्फोटहृत्पुनः ।

तमालके गुण शालके समान होते हैं किन्तु यह विशेषतः है कि दाह और विस्फोटकको हरता है ।

तुणी ।

तुणी तुन्नक आपीतस्तुणिकः कच्छपस्तथा ॥ ४४ ॥
कुठेरकः कांतलको नदीवृक्षश्च नंदकः ॥
तुणीरुक्तः कटुः पाके कषायो मधुरो लघुः ॥ ४५ ॥
तिक्तो ग्राही हिमो वृष्यो व्रणकुष्ठास्रपित्तजित् ।

तुणी, तुन्नक, आपीत, तुणिक, कच्छप, कुठेरक, कांतलक, नन्दीवृक्ष और नन्दक यह तुनके नाम हैं ।

तुन–पाकमें कटु, कसैली, मधुर, हलकी, तिक्त, ग्राही, शीतल, वीर्यवर्धक तथा व्रण, कुष्ठ, रक्तपित्त इनको जीतती है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

भूर्जपत्रः ।

भूर्जपत्रः स्मृतो भूर्जश्चर्मी बहुलवल्कलः ॥ ४६ ॥
भूर्जो भूतग्रहश्लेष्मकर्णरुक्पित्तरक्तजित् ।
कषायो राक्षसघ्नश्च मेदोविषहरः परः ॥ ४७ ॥

भूर्जपत्र, भूर्जचर्मी और बहुलवल्कल यह भोजपत्रके नाम हैं । इसको अंग्रेजीमें Jacquemontri कहते हैं । भोजपत्र–कसैला, राक्षसनाशक तथा भूतग्रह, कफ, कानकी पीड़ा, पित्त, रक्तविकार, मेद और विषको हरनेवाला है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

पलाशः ।

पलाशः किंशुकः पर्णो याज्ञिको रक्तपुष्पकः ।
क्षारश्रेष्ठो वातहरो ब्रह्मवृक्षः समिद्वरः ॥ ४८ ॥
पलाशो दीपनो वृष्यः सरोष्णो व्रणगुल्मजित् ।
कषायः कटुकस्तिक्तः स्निग्धो गुदजरोगजित् ॥ ४९ ॥
भग्नसंधानकृद्दोषग्रहण्यर्शःकृमीन् हरेत् ।

पलाश, किंशुक, पर्ण, याज्ञिक, रक्तपुष्पक, क्षारश्रेष्ठ, वातहर, ब्रह्मवृक्ष और समिद्वर यह ढाकके नाम हैं । इसको अंग्रेजीमें Jakin mot कहते हैं ।

ढाक–दीपन, वीर्यवर्धक, दस्तावर, गरम, व्रण और गुल्मको जीतनेवाला, कसैला, कटु, तिक्त, स्निग्ध, गुदाके रोगोंको जीतनेवाला, टूटे हुएको जोडनेवाला तथा त्रिदोष, ग्रहणी, अर्श और कृमियोंको नष्ट करनेवाला है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

शाल्मली ।

शाल्मलिस्तु भवेन्मोचा पिच्छिला पूरणीति च ५०
रक्तपुष्पा स्थिरायुश्च कंटकाढ्या च तूलिनी ।
शाल्मलिः शीतला स्वाद्वी रसे पाके रसायनी ५१॥
श्लेष्मला पित्तवातास्रहारिणी रक्तपित्तजित् ।

शाल्मलि, मोचा, पिच्छिला, पूरणी, रक्तपुष्पा, स्थिरायु, कण्टकाढ्या और तूलिनी यह सेमलके नाम हैं। उसको अंग्रेजीमें Silk cotton tree कहते है।

शाल्मलि—शीतल, रस और पाकमें मधुर, रसायन, कफकारक तथा पित्त, वात, रक्तविकार और रक्तपित्तको दूर करती है॥ ५० ॥ ५१ ॥

मोचरसः ।

निर्यासः शाल्मलेःपिच्छाशाल्मलिर्वेष्टकोऽपि च ५२
मोचास्रावो मोचरसो मोचनिर्य्यास इत्यपि ।
मोचास्रावो हिमो ग्राही स्निग्धो वृष्यः कषायकः ५३
प्रवाहिकातीसारामकफपित्तास्रदाहनुत् ।

शाल्मलिनिर्यास, पिच्छा, शाल्मलि, वेष्टक, मोचास्राव, मोचरस और मोचनिर्यास यह मोचरसके नाम हैं। मोचरस—शीतल, ग्राही, स्निग्ध, वीर्यवर्धक, कषाय तथा प्रवाहिका, अतिसार, आमविकार, कफ, पित्त, रक्त और दाहका नाश करता है॥ ५२ ॥ ५३ ॥

कूटशाल्मलिः ।

कुत्सिता शाल्मलिः प्रोक्ता रोचना कूटशाल्मलिः ५४
कूटशाल्मलिका तिक्ता कटुका कफवातनुत् ।
भेद्युष्णा प्लीहजठरयकृद्गुल्मविषापहा ॥ ५५ ॥
भूतानाहविबन्धास्रमेदःशूलकफापहा ।

कुत्सितशाल्मलि, रोचन और कूटशाल्मलि यह कूटसिंवलके नाम हैं।

कूटशाल्मलि–तिक्त, कटु, कफवातनाशक, उष्ण, भेदन करनेवाली तथा प्लीहा, जठर, यकृत्विकार, गुल्म और विषको हरनेवाली है। एवं भूत-बाधा, अफारा, विबन्ध, रक्त, मेद, शूल और कफको हरनेवाली है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

धवः ।

धवो धटो नंदितरुः स्थिरो गौरो धुरंधरः ॥ ५६ ॥
धवः शीतः प्रमेहार्शःपांडुपित्तकफापहः ।
मधुरस्तुवरस्तस्य फलं च मधुरं मनाक् ॥ ५७ ॥

धव, धट, नन्दितरु, स्थिर गौर धुरन्धर यह धवके नाम है। धव–शीतल है तथा प्रमेह, अर्श, पाण्डु, पित्त और कफको हरनेवाला है। मधुर और कसैला है, इसका फल किञ्चित् मीठा होता है ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

धन्वंगः ।

धन्वंगस्तु धनुर्वृक्षो गोत्रवृक्षस्तु तेजनः ।
धन्वंगः कफपित्तास्रकासहृत्तुवरो लघुः ॥ ५८ ॥
बृंहणो बलकृद्रूक्षः संधिकृद्व्रणरोपणः ।

धन्वंग, धनुर्वृक्ष, गोत्रवृक्ष और तेजन यह धन्वंगके नाम है। हिन्दी भाषामें धामन और ढामन कहते है। धामन–कफ, पित्त, रक्त और खांसीको हरता है। कसैला, हलका, पुष्टिकारक, बलवर्द्धक, रूक्ष, संधानकारक और रोपण है ॥ ५८ ॥

करीरः ।

करीरः क्रकरोऽपत्रो ग्रंथिलो मरुभूरुहः ॥ ५९ ॥
करीरः कटुकस्तिक्तः स्वेद्युष्णो भेदनः स्मृतः ।
दुर्नामकफवातामगरशोथव्रणप्रणुत् ॥ ६० ॥

करीर, क्रकर, अपत्र, ग्रंथिल और मरुभूरुह यह करीरके नाम हैं। करीर–कटु, तिक्त, स्वेदजनक, उष्ण और भेदन है। तथा अर्श, कफ, वात,

आम, गर, शोथ और व्रणको दूर करता है । इसके फलोंको टीड और डेले भी कहते हैं । अंग्रेजीमें Aper कहते हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शाखोटः ।

शाखोटः पीतफलको भूतावासः खरच्छदः ।
शाखोटो रक्तपित्तार्शोवातश्लेष्मातिसारजित् ॥६१॥

शाखोट, पीतफल, भूतावास, खरच्छद यह शाखोटके नाम हैं । इसको सहोडा वृक्ष भी कहते है । शाखोट—रक्तपित्त, अर्श, वात, कफ और अतिसारको दूर करता है ॥ ६१ ॥

वरुणः ।

वरुणो वरणः सेतुस्तिक्तशाकः कुमारकः ।
कषायो मधुरस्तिक्तः कटुको रूक्षको लघुः ॥ ६२ ॥

वरुण, वरण, सेतु, तिक्तशाक, कुमारक यह वरुण वृक्षके नाम है । इसको वसा और अरनावरना भी कहते है । वरुण—कषाय, मधुर, तिक्त, कटु, रूक्ष और हलका होता है ॥ ६२ ॥

कटभी ।

कटभी स्वादुपुष्पा च मधुरेणुः कटंभरा ।
कटुभी तु प्रमेहार्शोनाडीव्रणविषक्रिमीन् ॥ ६३ ॥
अत्युष्णा कफकुष्ठघ्नी कटू रूक्षा च कीर्तिता ।
तत्फलं तुवरं ज्ञेयं विशेषात्कफशुक्रहृत् ॥ ६४ ॥

कटभी, स्वादुपुष्पा, मधुरेणु यह कटभीके नाम है । कटभी—प्रमेह, अर्श, नाडीव्रण, विष और कृमियोंको नष्ट करती है । अत्यंत उष्ण है । कफ और कुष्ठको हरनेवाली है, कटु है और रूक्ष है । इसके फल कसैले होते हैं । विशेष कर कफ और वीर्य्यका नाश करते है ॥ ६३ ॥६४॥

गोलीढः।

मोक्षस्तु मोक्षकोऽपि स्याद्गोढीलो गोलिहस्तथा।
क्षारश्रेष्ठः क्षारवृक्षो द्विविधः श्वेतकृष्णकः॥ ६५॥
मोक्षकः कटुकस्तिक्तो ग्राह्युष्णः कफवातहृत्।
विषमेदोगुल्मकंडूवस्तिरुक्क्रिमिशुक्रनुत्॥ ६६॥

मोक्ष, मोक्षक, गोलीढ, गोलिह, क्षारश्रेष्ठ, क्षारवृक्ष ये मोक्ष (मोखावृक्ष) के नाम हैं। यह सफेद और काला दो प्रकारका होता है। मोखा—कडवा, चरपरा, ग्राही, गरम, कफ, वात, विष, मेद, गुल्म, खुजली, वस्तिरोग, कृमि तथा वीर्य्यको नष्ट करता है॥ ६५॥ ६६॥

अंबुशिरीषिका।

शिरीषिका ढिंढिणिका दुर्बलांबुशिरीषिका।
त्रिदोषविषकुष्ठार्शोहरी वारिशिरीषिका॥ ६७॥

शिरीषिका, ढिण्ढिणिका, दुर्बलाम्बुशिरीषिका यह जलसिरिसके नाम हैं। जलसिरिस—काटेदार और सिरिससे छोटा पेड होता है। जलसिरिस—त्रिदोष, विष, कुष्ठ और ववासीरको दूर करता है॥ ६७॥

शमी।

शमी सक्तुफला तुंगा केशहंतृफलाशिवा।
मंगल्या च तथालक्ष्मीःशमीरासालिपका स्मृता ६८
शमी तिक्ता कटुः शीता कषाया रेचनी लघुः।
कफकासभ्रमश्वासकुष्ठार्शःक्रिमिजित्स्मृता॥ ६९॥

शमी, सक्तुफला, तुंगा, केशहंतृफला, शिवा, मंगल्या, लक्ष्मी, शमी, रासालिपका, यह शमी वृक्षके नाम हैं। पंजाबमें इसको जण्डी कहते है। अंग्रेजीमें Sponge Tree कहते है।

शमी—तिक्त, कटु, शीत, कषाय, रेचनी तथा हल्की है। और कफ, कास, भ्रम, श्वास, कुष्ठ, अर्श, कृमि इनको दूर करती है ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

सप्तपर्णः ।

सप्तपर्णो विशालत्वक् शारदो विषमच्छदः ।
सप्तपर्णो व्रणश्लेष्मवातकुष्ठास्रजंतुजित् ॥ ७० ॥
दीपनः श्वासगुल्मघ्नः स्निग्धोष्णस्तुवरः सरः ।

सप्तपर्ण, विशालत्वक्, शारद, विषमच्छद, यह सप्तपर्णके नाम है। इसको हिन्दी भाषामें सतौना और सतवन कहते है। इसका लेटिन नाम Alstonia Scholaris है। सतौना—व्रण, कफ, वात, कुष्ठ, रक्त और कृमियोंको दूर करनेवाला है। तथा दीपन है एवं श्वास और गुल्मको दूर करनेवाला, स्निग्ध, उष्ण, कसैला और दस्तावर है ॥ ७० ॥

तिनिशः ।

तिनिशः स्यंदनो नेमी रथद्रुर्वंजुलस्तथा ॥ ७१ ॥
तिनिशः श्लेष्मपित्तास्रमेदःकुष्ठप्रमेहजित् ।
तुवरः श्वित्रदाहघ्नो व्रणपांडुकृमिप्रणुत् ॥ ७२ ॥

तिनिश, स्यन्दन, नेमी, रथद्रु, वंजुल यह तिनिशवृक्षके नाम है। इसको तिरिच्छ भी कहते है। तिरिच्छ—कसैला, कफ, पित्त, रक्त, मेद, कुष्ठ, प्रमेह, श्वित्र, दाह, व्रण, पाण्डु और कृमियोंको दूर करनेवाला है। इसको अंग्रेजीमें Emgeniadal Bargia oides कहते है ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

भूमिसहः ।

भूमिसहो द्वारदा तु शरद्भानुः खरच्छदः ।
भूमिसहस्तु शिशिरो रक्तपित्तप्रसादनः ॥ ७३ ॥

इति वटादिवर्गः ।

भूमिसह, द्वारदा, शरद्भानु, खरच्छद यह भूमिसहाके नाम हैं। इसे

अंग्रेजीमें Indian Teak Tree कहते हैं । सागोन शीतल और रक्तपित्तको शुद्ध करता है ॥ ७२ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज–विद्यालंकारशिवशर्म-
वैद्यशास्त्रिकृत–शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-
निघण्टौ वटादिवर्गः समाप्तः ॥ ६ ॥

अथ धातुवर्गः ७.

तत्र धातूनां लक्षणानि गुणाश्च ।

स्वर्णं रूप्यं च ताम्रं च वंगं यसदमेव च ।
सीसं लोहं च सप्तैते धातवो गिरिसंभवाः ॥ १ ॥
वलीपलितखालित्यं कार्श्याऽबल्यजरामयान् ।
निवार्य्य देहं दधति नृणां तद्धातवो मताः ॥ २ ॥

सोना, चांदी, तांवा, वंग, जस्त, सीसा और लोह यह सात धातुएँ पर्वतोंमें होती है । यह धातुएँ वली (त्वचाका सुकड़ना), पलित (सफेद वाल हो जाना), खालित्य (गंजापन), कृशता, निर्बलता, वृद्धता और रोगको हरकर मनुष्यके शरीरको धारण करती है, इसलिये इनको धातु कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

सुवर्णोत्पत्तिनामलक्षणगुणाश्च ।

पुरा निजाश्रमस्थानां सप्तर्षीणां जितात्मनाम् ।
पत्नीर्विलोक्य लावण्यलक्ष्मीसंपन्नयौवनाः ॥ ३ ॥
कंदर्पदर्पविध्वस्तचेतसो जातवेदसः ।
पतितं यद्धरापृष्ठे रेतस्तद्धेमतामगात् ॥ ४ ॥

स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम् ।
तपनीयं च गांगेयं कलधौतं च कांचनम् ॥ ५ ॥
चामीकरं शातकुंभं भर्म कार्तस्वरं च तत् ।
जांबूनदं जातरूपं महारजतमित्यपि ॥ ६ ॥
रुक्मं लोहवरं चाग्निबीजं चांपेयकर्बुरे ।
अष्टापदं च रसजं तैजसं चापि कीर्तितम् ॥ ७ ॥
प्राकृतं सहजं वह्निसंभूतं खनिसंभवम् ।
रसेंद्रवेधसंजातं स्वर्णं पंचविधं स्मृतम् ॥ ८ ॥
दाहे रक्तं सितं छेदे निषेके कुंकुमप्रभम् ।
तारशुल्बोज्झितं स्निग्धं कोमलं गुरु हेम सत् ॥९॥
तच्छ्वेतं कठिनं रूक्षं विवर्णं समलं दलम् ।
दाहे छेदे सितं श्वेतं कषे त्याज्यं लघु स्फुटम्॥१०॥
सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनम् ।
स्वादु तिक्तं च तुवरं पाके तु स्वादु पिच्छिलम् ११
पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् ।
हृद्यमायुष्करं कांतिवाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत् ॥ १२ ॥
विषद्वयं क्षयोन्मादत्रिदोषज्वरशोषजित् ॥ १३ ॥
बलं सवीर्य्यं हरते नराणां रोगव्रजान्पोषयतीह काये ।
असौख्यकार्य्येव सदा सुवर्णमशुद्धमेतन्मरणंच कुर्य्यात्
असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलं वीर्य्यं च नाशयेत् ।
करोति रोगान् मृत्युं च तद्धन्याद्यत्नतस्ततः ॥१५॥

अपने आश्रममें ठहरे हुए जितेन्द्रिय सप्त ऋषियोंकी लावण्य लक्ष्मी,

और यौवनसंपन्न स्त्रियोंको देखकर कामदेवसे पीडित चित्तवाले, अग्निका जो शुक्र पृथ्वीपर गिरा, वह सुवर्ण बन गया। स्वर्ण, सुवर्ण, कनक, हिरण्य, हेम, हाटक, तपनीय, गांगेय, कलधौत, कांचन, चामीकर, शातकुंभ, भर्म, कार्तस्वर, जाम्बूनद, जातरूप, महारजत, रुक्म, लोहवर, अग्निबीज, चांपेय, कर्बुर, अष्टापद, रसज, तैजस यह सोनेके नाम हैं। फारसीमें इसे तिला, और अंग्रेजीमें Gold कहते हैं। प्राकृत, सहज, वह्निसंभूत, खनिसंभव तथा रसेंद्रवेधसंजात इन भेदोंसे पांच प्रकारका स्वर्ण होता है। जो स्वर्ण तपानेमें लाल, काटनेसे सफेद, कसौटीपर केशरका वर्ण देनेवाला, ताम्र और चांदी रहित, स्निग्ध, कोमल और भारी हो वह स्वर्ण उत्तम होता है। जो सोना सफेद, कठोर, रूखा, बुरे वर्णवाला, मलसहित, गांठके सदृश, तपाने और काटनेमें सफेद, कसौटीपर सफेद, हलका और चोटसे फूट जानेवाला हो, वह स्वर्ण त्याग देना चाहिये। स्वर्ण—शीतल, वीर्यवर्धक, बलकारक, भारी, रसायन, मधुर, तिक्त, कषाय, पाकमें मधुर, स्निग्ध, पवित्र, बृंहण, नेत्रोंको हितकर, बुद्धि, स्मृति और मतिको देनेवाला, हृदयको प्रिय, आयुष्य, कांति और वाणीको स्वच्छ बनानेवाला, स्थिरता देनेवाला, दोनों प्रकारके विष (स्थावर, जंगम) तथा क्षय, उन्माद, त्रिदोष, ज्वर और शोथ इनको जीतनेवाला है। अशुद्ध स्वर्ण—बल वीर्यको हरनेवाला, कायामें रोगोंके समूहको बढानेवाला और शरीरके सुखका नाश करता है। तथा मृत्युको करनेवाला होता है। इसी प्रकार ठीक भस्मित न किया हुआ (अधमरा) स्वर्ण बल और वीर्यका नाश करता है। तथा रोगों और मृत्युको करनेवाला है। इसलिये सुवर्णको विधिपूर्वक शुद्ध करके उत्तम भस्म बना लेना चाहिये ॥ ३–१५ ॥

रजतम्।

त्रिपुरस्य वधार्थाय निर्निमेषैर्विलोचनैः।
निरीक्षयामास शिवः क्रोधेन परिपूरितः ॥

अग्निस्तत्कालमपतत्तस्यैकस्माद्विलोचनात् ॥ १६॥
ततो रुद्रः समभवद्वैश्वानर इव ज्वलन् ।
द्वितीयादपतन्नेत्रादश्रुबिंदुस्तु वामकात् ॥ १७ ॥
तस्माद्रजतमुत्पन्नमुक्तकर्मसु योजयेत् ।
रजतं त्रिविधं प्रोक्तं सहजं खनिजकृत्रिमे ॥ १८ ॥
कृत्रिमं च भवेत्तद्धि वंगादिरसयोगतः ।
रूप्यं तु रजतं तारं चन्द्रकांतिसितप्रभम् ॥ १९ ॥
वसूत्तमं च कुप्यं च खर्जूरं रंगबीजकम् ।
गुरु स्निग्धं मृदु श्वेतं दाहे छेदे घनक्षमम् ॥ २० ॥
वर्णाढ्यं चन्द्रवत्स्वच्छं रूप्यं नवगुणं शुभम् ।
कठिनं कृत्रिमं रूक्षं रक्तं पीतदलं लघु ॥ २१ ॥
दाहच्छेदघनैर्नष्टं रूप्यं दुष्टं प्रकीर्तितम् ।
रूप्यं तिक्तं कषायाम्लं स्वादु पाकरसं सरम् ॥२२॥
वयसः स्थापनं स्निग्धं लेखनं वातपित्तजित् ।
प्रमेहादिकरोगांश्च नाशयत्यचिराद्ध्रुवम् ॥ २३ ॥
तारं शरीरस्यकरोति तापंविड्बंधनं यच्छति शुक्रनाशम् ।
वीर्यंबलंहंतितनोस्तुपुष्टिंमहागदान्पोषयतिह्यशुद्धम्॥२४

जब त्रिपुरासुर दैत्यके वध करनेके लिये महादेवने क्रोधसे परिपूर्ण होकर निर्निमेष नेत्रोंसे देखा, तो उनके एक नेत्रसे अग्नि तो निकली और वह अग्निकी भांति प्रज्वलित शरीरवाले हुए, और उनके वाम नेत्रसे आंसू की बूंद गिरी, उससे रजत उत्पन्न हुआ, जो अनेक कर्मोंमें प्रयोग करना चाहिये। रजत (चांदी) तीन प्रकारकी होती है—एक सहज, दूसरी खनिज, तीसरी

कृत्रिम इनमें कृत्रिम चांदी, वंग पारेके योगसे बनाई जाती है। चांदी, रूप्य, रजत, तार, चन्द्रकांती, सितप्रभ, वसूत्तम, कुप्य, खर्जूर और रंगवीजक इन नामोंवाली है । जो चांदी भारी, चिकनी, नरम, श्वेत, दाह और छेदनमें भी सफेद, चोटसे न टूटनेवाली, वर्ण करके युक्त और चन्द्रमा जैसी स्वच्छ इन नौ गुणोंवाली चांदी उत्तम कही जाती है। तथा जो चांदी कठोर, बनावटी, रूक्ष, लालवर्णकी, पीत दलवाली, हलकी, दाहमें और छेदनमें विवर्ण और घनकी चोट लगनेसे नष्ट हो जाय ऐसी चांदीको दुष्ट चांदी कहते हैं। रूप्य (चांदी) तिक्त, कषाय, अम्ल, पाक और रसमें मधुर और दस्तावर है । तथा उमरको स्थापन करनेवाली, स्निग्ध, लेखन, वात पित्तको जीतनेवाली और प्रमेहादि रोगोंको शीघ्र नष्ट करनेवाली है । यदि अशुद्ध चांदीका सेवन किया जाय तो ताप, विबंध, शुक्रनाश, बलकी हानि और अनेक रोगोंको उत्पन्न करनेवाली होती है ॥ १५–२४ ॥

ताम्रम् ।

शुक्रं यत्कार्तिकेयस्य पतितं धरणीतले ।
तस्मात्ताम्रं समुत्पन्नमिदमाहुः पुराविदः ॥ २५ ॥
ताम्रमौदुंबरं शुल्बमुदुंबरमपि स्मृतम् ।
रविप्रियं म्लेच्छमुखं सूर्य्यपर्यायनामकम् ॥ २६ ॥
जपाकुसुमसंकाशं स्निग्धं मृदु घनक्षमम् ।
लोहं नागोज्झितं ताम्रं मारणाय प्रशस्यते ॥ २७॥
कृष्णं रूक्षमतिस्तब्धं श्वेतं चापि घनासहम् ।
लोहनागयुतं चेति शुल्बं दुष्टं प्रकीर्तितम् ॥ २८ ॥
ताम्रं कषायं मधुरं च तिक्तमम्लं च पाके कटु सारकं च
पित्तापहं श्लेष्महरं च शीतं तद्रोपणं स्याल्लघुलेखनं च २९

पांडूदराशोंज्वरकुष्ठकासश्वासक्षयान्पीनसमम्लपित्तम्।
शोथं कृमिं शूलमपाकरोति प्राहुः परे बृंहणमल्पमेतत् ३०
न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं तु विषमुच्यते।
एको दोषो विषे ताम्रे त्वष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः ॥३१॥
दाहः स्वेदोऽरुचिर्मूर्च्छा क्लेदो रेको वमिर्भ्रमः।

स्वामि कार्तिकका शुक्र पतित होकर जो पृथ्वीपर गिरा उससे ताम्र बन गया, ऐसा ऋषि कहते हैं। ताम्र, औदुंबर, शुल्व, उदुंबर, रविप्रिय, म्लेच्छ-मुख, और सूर्य्यके वाचक सब शब्द तांबेके नाम हैं। इसे फारसीमें मिख और अंग्रेजीमें Copper कहते हैं। तांबा जपाकुसुमके समान लाल वर्ण-वाला. चिकना, नरम और घनकी चोटसे न टूटनेवाला है। लोह और सीसे आदिके अंशसे रहित, ऐसा स्वच्छ शुद्ध ताम्र भस्मके लिये अच्छा होता है।

जो ताम्र काले वर्णका, रूखा, अत्यन्त कठोर, श्वेत, घनकी चोटसे टूटे जानेवाला, लोह और सीसा युक्त, वह दूषित ताम्र सेवन करनेके योग्य नहीं होता। ताम्र–कषाय, मधुर, तिक्त और अम्ल होता है। एवं पाकमें कटु होता है। तथा सारक, पित्तनाशक, कफनाशक, शीतल, रोपण, हलका, लेखन है। पाण्डुरोग, उदररोग, अर्श, ज्वर, कुष्ठ, खांसी, श्वास, क्षय, पीनस, अम्लपित्त, शोथ, कृमि और शूलको दूर करता है। तथा किंचित् शरीरको पुष्ट भी करता है। विष ही केवल विष नहीं, ताम्र महाविष कहा जाता है। क्यों कि विषमें एक ही दोष है, ताम्रमें–दाह, स्वेद, अरुचि, मूर्च्छा, क्लेद, रेचन, वमन और भ्रम यह आठ दोष कहे हैं। इस लिये ताम्रको अत्यन्त शुद्ध और भस्मित करके सेवन करना चाहिये ॥ २५–३१ ॥

वंगम्।

रंगं वंगं त्रपु प्रोक्तं तथा पिच्चटमित्यपि ॥३२॥

खुरकं मिश्रकं चापि द्विविधं वंगमुच्यते ।
उत्तमं खुरकं तत्र मिश्रकं त्ववरं मतम् ॥ ३३ ॥
रंगं लघु सरं रूक्षमुष्णं मेहकफक्रिमीन् ।
निहंति पांडुं सश्वासं चक्षुष्यं पित्तलं मनाक् ॥ ३४ ॥
सिंहो यथा हस्तिगणं निहंति तथैव वंगोऽखिलमेहवर्गम् ।
देहस्य सौख्यं प्रबलेंद्रियत्वं नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम् ॥ ३५ ॥

रंग, वंग, त्रपु, पिच्चट, यह वंगके नाम हैं । वंग—खुरक और मिश्रक भेद-से दो प्रकारका होता है । खुरक बंग—गुणमें उत्तम होता है और मिश्रक—न्यून होता है । हिन्दीमें कलई और फारसीमें अर्जीज कहते हैं । वंग—हलकी, दस्तावर, रूखी, उष्ण तथा प्रमेह, कफ, कृमि, पाण्डु और श्वासको नष्ट करनेवाली है, नेत्रोंको हितकारी, किंचित् पित्तकारक है । जैसे प्रबल सिंह हाथियोंके समूहको नाश कर देता है, वैसे वंगभस्म सम्पूर्ण प्रमेह रोगोंको नष्ट करके देहको सुख देता है और पुष्ट करता है । तथा संपूर्ण इंद्रियोंको बलवान् करता है ॥ ३२–३५ ॥

यसदम् ।

यसदं रंगसदृशं रीतिहेतुश्च तन्मतम् ।
यसदं तुवरं तिक्तं शीतलं कफपित्तहृत् ॥ ३६ ॥
चक्षुष्यं परमं मेहान्पांडुं श्वासं च नाशयेत् ।

यशद, रंगसदृश और रीतिहेतु यह जस्तेके नाम हैं । इसे फारसीमें रूरा तूतिया और अंग्रेजीमें zinc कहते हैं । किसी किसी ग्रंथमें यसदको खर्पर और रसक नामसे भी लिखा है । आज कल वैद्य स्वर्णमालिनी वसन्तमें खर्परकी जगह इसकी भस्मका प्रयोग करते हैं । यशद—कसैला, तिक्त, शीतल, कफपित्त—नाशक, नेत्रोंको परम हितकारी तथा प्रमेह, पाण्डु और श्वासको नष्ट करता है ॥ ३६ ॥

सीसकम् ।

दृष्ट्वा भोगिसुतां रम्यां वासुकिस्तु मुमोचयत् ॥३७

वीर्य्यं जातस्ततो नागः सर्वरोगापहो नृणाम् ।
सीसं वर्ध्रं च वप्रं च योगेष्टं नागनामकम् ।
सीसं वंगगुणं ज्ञेयं विशेषान्मेहनाशनम् ॥ ३८ ॥
नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति
व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति ।
वह्निं प्रदीपयति कामबलं करोति
मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितस्सः ॥ ३९ ॥
पाकेन हीनौ किल वंगनागौ
कुष्ठानि गुल्मांश्च तथातिकष्टान् ।
पांडुप्रमेहानलसादशोथ-
भगंदरादीन् कुरुतः प्रभुक्तौ ॥ ४० ॥

सर्पराजकी कन्याको देखकर वासुकी नागका जो वीर्य्यपतन हुआ, उससे मनुष्योंके सब रोगोंके दूर करनेवाला सीसा उत्पन्न हुआ । इसके सीस, वर्ध्र, वप्र, योगेष्ट और नागके जितने पर्य्यायवाचक शब्द हैं, यह संस्कृत नाम है । हिन्दीमें सिक्का या शीशा, फारसीमें सुर्ब और अंग्रेजीम Lead कहते है। सीसेमें सम्पूर्ण गुण वंगके समान हे। विशेषतासे प्रमेहोंको नाश करता है। सीसेकी उत्तम बनी हुई भस्म विधिवत् सेवन करनेसे शरीरमें हाथियों के समान बल आता है। व्याधियें दूर होती है। आयु बढती है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है, कामदेवका बल बढता है, और मृत्युका भी नाश होता है। यदि वंग और नागको बिना विधिवत् भस्म किये कच्ची भस्मका सेवन किया जाय तो अतिकष्टदायक, कुष्ठ, गुल्म, पाण्डु, प्रमेह, मंदाग्नि, शोथ और भगंदर आदि रोगोंको करती है ॥ ३७–४० ॥

लोहम् ।

पुरा लोमिनदैत्यानां निहतानां सुरैर्युधि ।
उत्पन्नानि शरीरेभ्यो लोहानि विविधानि च॥ ४१॥
लोहोऽस्त्री शस्त्रकं तीक्ष्णं पिंडं कालायसायसी ।
गुरुता दृढतोत्क्लेदकश्मलं दाहकारिता ॥ ४२ ॥
अश्मदोषः सुदुर्गंधो दोषाः सप्तायसस्य तु ।
लोहं तिक्तं सरं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ ४३ ॥
रूक्षं वयस्यं चक्षुष्यं लेखनं वातलं जयेत् ।
कफपित्तं गरं शूलं शोथार्शः प्लीहपांडुताः ।
मेदोमेहकृमीन्कुष्ठं तत्किट्टं तद्वदेव हि ॥ ४४ ॥
षंडत्वकुष्ठामयमृत्युदं भवेद्धृद्रोगशूलौ कुरुतेऽश्मरीं च ।
नानारुजानांच तथाप्रकोपंकरोतिहृल्लासमशुद्धलोहम्॥४५
जीवहारि मदकारि चायसं चेदशुद्धिमदसंस्कृतं ध्रुवम् ।
पाटवं न तनुते शरीरकेदारुणं हृदि रुजां च यच्छति ४६
कूष्मांडं तिलतैलं च माषान्नं राजिकां तथा ।
मद्यमम्लरसं चापि त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥ ४७ ॥

पहिले युद्धमें देवताओंसे निहत हुए, लोमिन दैत्योंके शरीरमेंसे जो पृथ्वीपर रक्त गिरा, उससे अनेक जातिके लोह उत्पन्न हुए। लोह स्त्रीलिंग वाचक नहीं। इसके शस्त्रक, तीक्ष्ण, पिण्ड, कलायस, आयस यह संस्कृत नाम हैं। इसे हिंदीमें लोहा, फारसीमें आहन व फौलाद, अंग्रेजीमें Iron कहते है। लोहेमें भारीपन, दृढता, उत्क्लेद, कश्मल, दाहकारिता, अश्मदोष और दुर्गंध यह सात दोष रहते है। इस लिये भस्म करनेसे पहिले शोधन करते समय यह सब दोष निकाल देने चाहिये। लोह—तिक्त, सर,

शीतल, मधुर, कसैला, भारी, रूखा, वयस्थापक, नेत्रोंको हितकारी, लेखन और वातकारक है । तथा कफ, पित्त, गर, शूल, सूजन, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, मेदरोग, प्रमेह, कृमि और कुष्ठको दूर करता है । लोहेका किट्ट, अर्थात् मण्डूर भी लोहके समान ही गुणवाला है । अशुद्ध लोहके सेवन करनेसे नपुंसकता, कुष्ठरोग, मृत्यु, हृद्रोग, शूल, पथरी, हृल्लास और अनेक प्रकारके रोगोंका प्रकोप होता है । विना शुद्ध संस्कार किये हुए लोह भस्मके सेवन करनेसे जीवनका नाश, मद, जडता और हृदयमें दारुण पीडा उत्पन्न होती है । लोहभस्मके सेवन करनेवाले मनुष्यको कूष्माण्ड (कद्दू) तिलतैल, उडदकी दाल, राई, मद्य और खट्टे रसोंको सर्वथा त्याग करदेना चाहिये ॥४१-४७

लोहसारम् ।

क्ष्माभृच्छिखराकाराण्यंगान्यम्लेन लेपिते ।
लोहे स्युर्यत्र सूक्ष्माणि तत्सारमभिधीयते ॥ ४८ ॥
लोहं साराह्वयं हन्याद् ग्रहणीमतिसारकम् ।
अर्द्धं सर्वाङ्गजं वातं शूलं च परिणामजम् ॥ ४९ ॥
छर्दिं च पीनसं पित्तं श्वासं कासं व्यपोहति ॥५०॥

जिस लोहेके चौडे टुकडे पर खट्टे रसके लेप करनेसे पर्वतके शिखरके आकारके बारीक २ चौहर चमकने लगें, उसको सारलोह कहते हैं । सारनामक लोह—संग्रहणी, अतिसार, अर्द्धांगवात, सर्वांगवात, परिणामशूल, छर्दी, पीनस, पित्त, श्वास और खांसीको दूर करता है ॥ ४८-५० ॥

कांतलोहम् ।

पात्रे यस्मिन् प्रसरति जले तैलबिंदुर्निषिक्तो
विद्धं गंधं त्यजति च निजं हृपितं निंबकल्कैः ।

तप्तं दुग्धं भवति शिखराकारकं नैति भूमिं
कृष्णांगःस्यात्सजलचणकः कांतलोहं तदुक्तम् ५१ ॥
गुल्मोदरार्शःशूलाममामवातं भगंदरम् ।
कामलाशोथकुष्ठानि क्षयं कांतमयो हरेत् ॥ ५२ ॥
प्लीहानमम्लपित्तं च यकृच्चापि शिरोरुजम् ।
सर्वान् रोगान्विजयते कांतलोहं न संशयः ॥ ५३ ॥
बलं वीर्य्यं वपुःपुष्टिं कुरुतेऽग्निं विवर्द्धयेत् ॥ ५४ ॥

जिस लोहके पात्रमें पानी भर कर उसमें तेलकी बून्द डाली हुई न फैले, हींग अपनी गंधको त्याग देवे, नीमका पत्र कडवापन छोड दे, दूध उबल कर शिखराकार खडा हो जाय पर नीचे न गिरे, तथा जल भर कर चने डालनेसे चने काले दिखाई देने लगें, उस पात्रवाले लोहको कांत-लोह कहते है। कान्त लोह—गुल्म, उदररोग, अर्श, आमशूल, आमवात, भगन्दर, कामला, शोथ, कुष्ठ, क्षय, प्लीहा, अम्लपित्त, यकृतविकार और शिरोरोग इन सबको दूर करता है। कान्तलोह बल, वीर्य्य और शरीरको पुष्ट करता है, जठराग्निको बलवान करता है इसमें संदेह नहीं ॥ ५१—५४ ॥

मंडूरम् ।

धमायमानस्य लोहस्य मलं मंडूरमुच्यते ।
लोहसिंहानिका किट्टी सिंहानं च निगद्यते ॥५५॥
यल्लोहं यद्गुणं प्रोक्तं तत्किट्टमपि तद्गुणम् ।

भट्टीमें धमाए हुए लोहका जो मल गिरता है उसको मण्डूर कहते है। इसके लोहसिंहानिका, किट्टि, सिंहान आदि नाम है। लोहभस्मके जो गुण है लोहकिट्टकी भस्मके भी वही गुण है ॥ ५५ ॥

सप्तोपधातवः ।

सप्तोपधातवः स्वर्णमाक्षिकं तारमाक्षिकम् ॥ ५६ ॥

तुत्थं कांस्यं च रीतिश्च सिंदूरश्च शिलाजतु ।
उपधातुषु सर्वेषु तत्तद्धातुगुणा अपि ॥ ५७ ॥
संति किं तेषु ते गौणास्तत्तदंशाल्पभावतः ।

स्वर्णादि धातुओंकी सात उपधातुएँ होती है । जैसे सोनामक्खी, रूपामक्खी, तुत्थ, कांसी, पित्तल, सिंदूर और शिलाजीत । इन सातों उपधातुओंमें इनकी असली धातुओंकेसे गुण रहते हैं । क्योंकि गौण रूपसे उनही धातुओंका अल्प भावसे अंश इनमें रहता है इसलिये अल्प भावसे यह उनकासा ही गुण करती है । हमारे मतमें कांसी और पीतलको उपधातु नहीं मानना चाहिये, क्योंकि दो दो शुद्ध धातुओंसे कांसी और पीतल बनाई जाती है । तांबे और वंगके मिलानेसे कांसी, तांबा और जस्तके मिलानेसे पीतल बनता है । इसलिये इनको कृत्रिम या संयोगज धातु मानना चाहिये ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

स्वर्णमाक्षिकम् ।

स्वच्छं माक्षिकमाख्यातं तापीजं मधुमाक्षिकम् ५८॥
ताप्यं माक्षिकधातुश्च मधुधातुश्च स स्मृतः ।
किंचित्सुवर्ण साहित्यात्स्वर्णमाक्षिकमीरितम् ॥५९॥
उपधातुः सुवर्णस्य किंचित्स्वर्णगुणान्वितः ।
तथा च कांचनाभावे दीयते स्वर्णमाक्षिकम् ॥६०॥
किंतु तस्यानुकल्पत्वात् किंचिदूनगुणं ततः ।
न केवलं स्वर्णगुणो वर्तते स्वर्णमाक्षिके ॥ ६१ ॥
द्रव्यांतरस्य संसर्गात्संत्यन्येऽपि गुणा यतः ।
सुवर्णमाक्षिकं स्वादु तिक्तं वृष्यं रसायनम् ॥६२ ॥
चक्षुष्यं वस्तिरुक्कुष्ठपांडुमेहविषोदरान् ।
अर्शः शोथं विषं कंडुं त्रिदोषमपि नाशयेत् ॥६३॥

मंदानलत्वं बलहानिमुग्रां विष्टंभतां नेत्रगदान्सकुष्ठान् ।
तथैव मालां व्रणपूर्विकां च करोति तापीजमशुद्धमेतत् ६४

स्वच्छ, माक्षिक, तापीज, मधुमाक्षिक, ताप्यक, माक्षिक धातु और मधुर-धातु यह सोनामक्खीके नाम हैं । सोनामक्खी सुवर्णकेसे वर्णवाली होनेके कारण सोनामक्खी कही जाती है, किञ्चित् स्वर्णके गुणोंवाली होनेसे इसे स्वर्णकी उपधातु कहते है । यद्यपि कुछ लोग स्वर्णके अभावमें इसका प्रयोग करते है परन्तु इसमें स्वर्णसे बहुत न्यून गुण हैं । तथा गंधक आदि अन्य द्रव्योंके संसर्गसे अन्य गुणोंका इसमें समावेश है । सोनामक्खी—मधुर, तिक्त, वृष्य, रसायन, नेत्रोंको हितकारी तथा वस्तिपीडा, कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, विष-विकार, उदररोग, अर्श, शोथ, खुजली आर त्रिदोषको नाश करनेवाली है । अशुद्ध सोनामक्खीके खानेसे अग्निमांद्य, बलकी हानि,अत्यन्त विष्टंभ, नेत्ररोग, कुष्ठ, गण्डमाला आदि दारुण रोग उत्पन्न होते हैं ॥ ५८–६४ ॥

तारमाक्षिकम् ।

तारमाक्षिकमन्यत्तु तद्भवेद्रजतोपमम् ।
किंचिद्रजतसाहित्यात्तारमाक्षिकमीरितम् ॥ ६५ ॥
अनुकल्पतया तस्य ततो हीनगुणं स्मृतम् ।
न केवलं रूप्यगुणा वर्तते तारमाक्षिके ॥ ६६ ॥
द्रव्यांतरस्य संसर्गात्संत्यन्येऽपि गुणा यतः ॥ पूर्ववत् ॥

तारमाक्षिक और रजतोपम यह रूपामक्खीके नाम है । किञ्चित् रजतका वर्ण होनेसे इसको रूपामक्खी कहते है । यह रजतसे अत्यन्त हीन गुणोंवाली है । यद्यपि कुछ लोग इसका रजतके अभावमें प्रयोग करते हैं किन्तु इसमें केवल रजतके गुण नही है, जिन अन्य द्रव्योंका संसर्ग इसमें है उनके गुण भी इसमें है । इसके गुण प्रायः स्वर्णमाक्षिकके गुणोंसे मिलते हैं ॥६५॥६६॥

तुत्थम् ।

तुत्थं वितुन्नकं चापि शिखिग्रीवं मयूरकम् ॥६७॥

तुत्थं ताम्रोपधातुर्हि किंच ताम्रेण तद्भवेत् ।
किंचित्ताम्रगुणं तस्माद्वक्ष्यमाणगुणं च तत् ॥६८॥
तुत्थकं कटुकं क्षारं कषायं वामकं लघु ।
लेखनं भेदनं शीतं चक्षुष्यं कफपित्तहृत् ॥ ६९ ॥
विषाश्मकुष्ठकंडूघ्नं खर्परं चापि तद्गुणम् ।

तुत्थ, वितुन्नक, शिखिग्रीव और मयूरक यह नीलेथोथेके नाम हैं । नीलाथोथा ताम्रका उपधातु है और ताम्रसे ही उत्पन्न होता है। उसमें ताम्रकेसे गुण होते हैं तथा तुत्थ—कटु,क्षार,कषाय,वामक,हल्का, लेखन, भेदन, शीतल, नेत्रोंको हितकारी कफ, पित्तके हरनेवाला, विष, पथरी, कुष्ठ और कण्डु इनको हरनेवाला है और तुथई खपरियेके भी यही गुण है ॥ ६७–६९ ॥

कांस्यम् ।

ताम्रत्रपुजमाख्यातं कांस्यं घोषं च कांसकम्॥७०॥
उपधातुर्भवेत्कांस्यं द्वयोस्तरणिरंगयोः ।
कांस्यस्य तु गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः७१॥
संयोगजप्रभावेण तस्यान्येऽपि गुणाः स्मृताः ।
गुरु नेत्रहितं रूक्षं कफपित्तहरं परम् ॥ ७२ ॥

ताम्रत्रपुज, कांस्य, घोष, कांसक यह कांसीके नाम हैं । कांसी तांबे और रंगके योगसे उत्पन्न होती है । यद्यपि कांसीमें तांबे और रंगके समान ही गुण हैं परन्तु संयोगज प्रभावसे इसमें गुरु, नेत्रहितकर, रूक्ष और कफ पित्त के हरनेवाले गुण विशेष रूपसे हैं ॥ ७०–७२ ॥

पित्तलम् ।

पित्तलं त्वारकूटं स्यादारो रीतिश्च कथ्यते ॥७३ ॥
राजरीतिर्ब्रह्मरीतिः कपिला पिंगलापि च ।

रीतिरप्युपधातुः स्यात्ताम्रस्य यसदस्य च ॥ ७४ ॥
पित्तलस्य गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः ।
संयोगजप्रभावेण तस्यान्येऽपि गुणाः स्मृताः॥७५॥
रीतिकायुगलं रूक्षं तिक्तं च लवणं रसे ।
शोधनं पांडुरोगघ्नं कृमिघ्नं नातिलेखनम् ॥ ७६॥

पित्तल, आरकूट, आर, रीति, राजरीति, ब्रह्मरीति, कपिला और पिंगल यह पीतलके नाम हैं । पीतल तांबे और जशदके संयोगसे उत्पन्न होती है. इस लिये इसमें तांबे और जस्तकेसे गुण होते है । परन्तु संयोगज प्रभाव- से इसमें और भी गुण आजाते हैं । जैसे यह रूक्ष, तिक्त, लवणरसयुक्त, शोधन, पांडुरोगहर, कृमिघ्न तथा अत्यंत लेखनकर्त्ता है ॥ ७३–७६ ॥

सिंदूरम् ।

सिंदूरं रक्तरेणुश्च नागगर्भं च सीसकम् ।
सीसोपधातुः सिंदूरं गुणैस्तत्सीसवन्मतम् ॥ ७७ ॥
सिंदूरमुष्णंवीसर्पकुष्ठकंडूविषापहम् ।
भग्नसंधानजननं व्रणशोधनरोपणम् ॥ ७८ ॥

सिंदूर, रक्तरेणु, नागगर्भ, सीसक और सीसोपधातु यह सिंदूरके नाम है । सिंदूर सीसेके समान गुणोंवाला है तथा उष्ण है । विसर्प, कुष्ठ, कंडू और विषको हरनेवाला है । कटे हुएके जोडनेवाला तथा व्रणोंको शोधन और रोपण करनेवाला है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

शिलाजतु ।

निदाघे घर्मसंतप्ता धातुसारं धराधराः ।
निर्यासवत्प्रमुंचंति तच्छिलाजतु कीर्तितम् ॥७९॥

सौवर्णं राजतं ताम्रमायसं तच्चतुर्विधम् ।
शिलाजत्वद्रिजतु च शैलनिर्यास इत्यपि ॥ ८० ॥
गैरेयमश्मजं चापि गिरिजं शैलधातुजम् ।
शिलाजं कटुतिक्तोष्णं कटुपाकं रसायनम् ॥ ८१ ॥
छेदि योगवहं हंति कफमेदोश्मशर्कराः ।
मूत्रकृच्छ्रं क्षयं श्वासं वाताशांसि च पांडुताम् ८२॥
अपस्मारं तथोन्मादं शोथकुष्ठोदरक्रिमीन् ।
सौवर्णं तु जपापुष्पवर्णं भवति तद्रसात् ॥ ८३ ॥
मधुरं कटु तिक्तं च शीतलं कटुपाकि च ।
राजतं पाण्डुरं शीतं कटुकं स्वादुपाकि च ।
ताम्रं मयूरकण्ठाभं तीक्ष्णमुष्णं च जायते ॥ ८४ ॥
लौहं जटायुपक्षाभं तिक्तकं लवणं भवेत् ।
विपाके कटुकं शीतं सर्वश्रेष्ठमुदाहृतम् ॥ ८५ ॥

ग्रीष्मऋतुमें सूर्य्यकी तीक्ष्ण किरणोंसे तपायमान पर्वत धातुओंके निर्य्यासके समान जिस उपधातुका स्राव करते है उसे शिलाजतु कहते हैं । यह शिलाजतु सौवर्ण, राजत, ताम्र और आयस भेदसे चार प्रकारकी होती है । शिलाजतु, अद्रिज, शैलनिर्य्यास, गैरेय, अश्मज, गिरिज और शैलधातुज यह शिलाजतुके नाम हैं । शिलाजित–कटु, तिक्त, उष्ण, कटुपाकी, रसायन, छेदी और योगवाही है । तथा कफ, मेद, पथरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, श्वास, वात, अर्श, पांडु, अपस्मार, उन्माद, शोथ, कुष्ठ, उदररोग, कृमिरोग इन सबको दूर करती है । सुवर्णवाले पहाड़की शिलाजतु जपापुष्पके वर्णवाली, रसमें मधुर, कटु और तिक्त होती है तथा शीतल और कटुपाकी होती है । रजतवाली पाण्डुवर्णकी शीतल, कटु और स्वादुपाकी होती है । ताम्रवाली शिलाजित–मोरके कण्ठके समान वर्णवाली, तीक्ष्ण और

उष्ण होती है । लोहेवाले पहाडकी शिलाजीत–जटायुके पक्षके समान काली, तिक्त और लवणानुरस होती है । विपाकमें कटु शीतल और सबमें श्रेष्ठ, शिलाजीत मानी जाती है ॥ ७९–८५ ॥

रसः ।

रसायनार्थिभिर्लोके पारदो रस्यते यतः ।
ततो रस इति प्रोक्तः स च धातुरपि स्मृतः ॥ ८६ ॥

रसायनक्रियाके करनेवाले लोग जिस लिये पारदको रसन करते हैं, इस लिये पारदको रस कहते हैं और धातु भी कहते हैं ॥ ८६ ॥

पारदम् ।

शिवांगात्प्रच्युतं रेतः पतितं धरणीतले ।
तद्देहसारजातत्वाच्छुक्लमच्छमभूच्च तत् ॥ ८७ ॥
क्षेत्रभेदेन विज्ञेयं शिववीर्य्यं चतुर्विधम् ।
श्वेतं रक्तं तथा पीतं कृष्णं तत्तु भवेत् क्रमात् ॥ ८८ ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च खलु जातितः ।
श्वेतं शस्तं रुजां नाशे रक्तं किल रसायने ॥ ८९ ॥
धातुवेधे तु तत्पीतं खे गतौ कृष्णमेव च ।
पारदो रसधातुश्च रसेन्द्रश्च महारसः ॥ ९० ॥
चपलः शिववीर्यश्च रसः सूतः शिवाह्वयः ।
पारदः षड्रसः स्निग्धस्त्रिदोषघ्नो रसायनः ॥ ९१ ॥
योगवाही महावृष्यः सदा दृष्टिबलप्रदः ।
सर्वामयहरः प्रोक्तो विशेषात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ ९२ ॥
स्वस्थो रसो भवेद्ब्रह्मा बद्धो ज्ञेयो जनार्दनः ।
रंजितः क्रामितश्चापि साक्षाद्देवो महेश्वरः ॥ ९३ ॥

मूर्च्छितो हरति रुजं बन्धनमनुभूय खेगतिं कुरुते ।
अजरीकरोति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात् ९४
असाध्यो यो भवेद्रोगो यस्य नास्ति चिकित्सितम् ।
रसेंद्रो हंति तं रोगं नरकुंजरवाजिनाम् ॥ ९५ ॥
मलं विषं वह्निगिरित्वचापलं नैसर्गिकं दोषमुशंति पारदे
उपाधिजौ द्वौ त्रपुनागयोगजौ दोषौ रसेंद्रे कथितौ मुनीश्वरैः
मलेन मूर्च्छां मरणं विषेण दाहोऽग्निना कष्टतरः शरीरे ।
देहस्य जाड्यं गिरिणा सदा स्या-
च्चांचल्यतो वीर्य्यहतिश्च पुंसाम् ॥ ९७ ॥
वंगेन कुष्ठं भुजगेन गंडो भवेत्ततो
ऽसौ परिशोधनीयः ॥ ९८ ॥
वह्निर्विषं मलं चेति मुख्या दोषास्त्रयो रसे ।
एते कुर्वंति संपातं मृतिं मूर्च्छां नृणां क्रमात् ॥ ९९ ॥
अन्येऽपि कथिता दोषा भिषग्भिः पारदे यदि ।
तथाप्येते त्रयो दोषा हरणीया विशेषतः ॥ १०० ॥
संस्कारहीनं खलु सूतराजं यस्सेवते तस्य करोति बाधाम्
देहस्य नाशं विदधाति नूनं कुष्ठांश्च रोगाञ्जनयेन्नराणाम् ॥

शिवके अंगसे पतित हुआ वीर्य्य जो पृथ्वीपर गिरा, वह देहका सारभूत होनेसे स्वच्छ और सफेद होकर पारदके नामसे प्रसिद्ध हुआ । यह शिववीर्य क्षेत्रके भेदसे चार प्रकारका होगया । श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण, यह जातिभेदसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामसे प्रसिद्ध हुआ । इनमें श्वेत पारद सब रोगोंको नाश करनेके लिये, लाल पारद रसायन-

कर्म्ममें, पीला पारद धातुवेधनमें और काला पारद आकाशगमनमें श्रेष्ठ माना जाता है ।

पारद, रसधातु, रसेन्द्र, महारस, चपल, शिववीर्य्य, रस, सूत और जितने शिवजीके नाम हैं वह पारेके संस्कृत नाम हैं । हिन्दीमें पारा, फारसीमें सीमाब और अंग्रेजीमें Mercury कहते है । पारद छे रसोंवाला, स्निग्ध, त्रिदोषघ्न, रसायन, योगवाही, अत्यन्त पुरुषार्थवर्द्धक, दृष्टिको बल देनेवाला, सब रोगोंको हरनेवाला और विशेष कर संपूर्ण कुष्ठोंको दूर करता है ।

स्वस्थावस्थामें पारा ब्रह्मा, बद्धहुआ पारा जनार्दन, रंजित और कामित पारा साक्षात् महादेव होता है । कज्जली आदिमें मूर्छित पारा—रोगोंको हरता है । खेचरी गुटिकाके रूपमें बँधा हुआ पारा आकाशगमनकी शक्ति देता है । और मारा हुआ पारद उमरको बढ़ानेवाला रसायन होता है । इस लिये पारेके समान कृपा करनेवाला दूसरा द्रव्य नही है, जिस रोगकी कोई चिकित्सा नही है, जो रोग सर्वथा असाध्य है उनको पाराही नाश कर सकता है । चाहे वह रोग मनुष्य या हाथी घोड़े आदि पशुको भी हो !

पारेमें स्वभावसे ही मल, विष, वह्नि, गिरि और चपलता यह दोष रहते हैं । और नाग तथा वंग यह दो दोष पारेमें संसर्गसे आते हैं । इनमें मलदोषसे मूर्च्छा, विषसे मृत्यु, अग्निदोषसे शरीरमें अत्यंत दाह, गिरिदोषसे शरीरका जकड जाना, चांचल्यसे वीर्य्यनाश, वंगदोषसे कुष्ठ और नाग दोषसे गंडमाला, आदि विकार उत्पन्न होते हैं । इसलिये इन सात दोषोंको दूर करनेके लिये पारदको स्वेदन, पातन आदि संस्कारों द्वारा शोधन कर लेना चाहिये । इन सब दोषोंमें भी वह्नि, विष और मल यह तीन दोष प्रधान माने जाते हैं । यह पारेके तीनों दोष संताप, मृत्यु और मूर्च्छाको उत्पन्न करते हैं । यद्यपि पारेके संपूर्ण तीनों दोष निकाल देना अत्यावश्यक है परन्तु वह्नि, विष और मल इनको तो विशेष रूपसे निकाल देना ही चाहिये । जो मनुष्य विना संस्कार किये हुए पारे

का सेवन करता है, उसके शरीरमें अनेक रोग, कुष्ठ तथा देहका नाश तक हो जाते है ॥ ८७–१०१ ॥

उपरसाः।

गंधो हिंगुलमभ्रतालकशिलाः स्रोतोंजनं टंकणं,
राजावर्तकचुंबकौ स्फटिकया शंखः खटीगैरिकम्।
कासीसं रसकं कपर्दसिकताबोलाश्च कंकुष्ठकं,
सौराष्ट्री च मता अमीउपरसाःसूतस्यकिंचिद्गुणैः १०२

गंधक, हिंगुल, अभ्रक, हरिताल, मनसिल, स्रोतोऽञ्जन, टंकण, राजावर्त, चुंबक, स्फटिक (फटाकिरी), शंख, खडिया, गेरू, कसीस, रसक, कौडियें, वाल, बोल, कंकुष्ठ और गजनी यह सब उपरस कहे जाते हैं। क्योंकि किसी अंशमें सूक्ष्म रूपसे इनमें भी रसके गुण होते हैं ॥ १०२ ॥

गन्धकम्।

श्वेतद्वीपे पुरा देव्याः क्रीडंत्या रजसाप्लुतम्।
दुकूलं तेन वस्त्रेण स्नातायाः क्षीरनीरधौ ॥ १०३॥
प्रसृतं यद्रजस्तस्माद्गंधकः समभूत्तदा।
गंधको गंधिकश्चापि गंधपाषाण इत्यपि ॥१०४॥
सौगंधिकश्च कथितो बलिर्बलवसापि च।
चतुर्धा गन्धकःप्रोक्तो रक्तःपीतःसितोऽसितः॥१०५॥
रक्तो हेमक्रियासूक्तः पीतश्चैव रसायने।
व्रणादिलेपने श्वेतः कृष्णः श्रेष्ठः सुदुर्लभः ॥१०६॥
गन्धकः कटुकस्तिक्तो वीर्योष्णस्तुवरः सरः।
पित्तलः कटुकः पाके कण्डुवीसर्पजन्तुजित् ॥१०७॥
हंति कुष्ठक्षयप्लीहकफवातान् रसायनः ॥ १०८ ॥

अशोधितो गंधक एक कुष्टं करोति तापं विषमं शरीरे ।
सौख्यंचरूपंचबलंतथौजःशुक्रं निहंत्येव करोति चामम्

पूर्वकालमें श्वेतद्वीपमें क्रीडा करती हुई पार्वतीका मासिक रजसे भरा हुआ वस्त्र स्नान करते हुए जो क्षीर सागरमें गिरा, उसमेंसे निकले हुए पार्वतीके रजसे गंधक उत्पन्न हुई । गंधक, गंधिक, गंधपाषाण, सौगंधिक, बली, बलवसा यह गंधकके नाम हैं. । अंग्रेजीमें इसे Sulphur कहते हैं । यह रक्त, पीत, श्वेत और कृष्ण भेदसे चार प्रकारकी होती है । लाल गंधक स्वर्ण बनानेमें काम आती है । पीली रसायन कर्म्ममें और श्वेत व्रणादि लेपनोंमें काम आती है । कृष्ण सबमें श्रेष्ठ है, परन्तु मुशकिलसे मिलती है । गंधक—कटु, तिक्त, उष्णवीर्य्य,दस्तावर, पित्तवर्द्धक, कटुपाकी तथा खुजली, विसर्प, कृमि, कुष्ठ, क्षय, प्लीहा, कफ और वात विकारोंको नाश करती है । तथा रसायन है, विना शोधन की हुई गंधक खानेसे कुष्ठ, विषमज्वर, बल, वर्ण, वीर्य्य और ओजकी हानी तथा अनेक प्रकारके आमविकार, आदि विकारोंको करती है ॥ १०३–१०९ ॥

हिंगुलम् ।

हिंगुलं दरदं म्लेच्छमिंगुलं चूर्णपारदम् ।
मर्क्षिरंगं सुरंगं च नाम्ना कर्मारबंधनम् ॥
दरदस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मारः शुकतुंडकः ॥ ११० ॥
हंसपादस्तृतीयः स्याद्गुणवानुत्तरोत्तरम् ।
चर्मारः शुक्लवर्णः स्यात्स पीतःशुकतुंडकः॥ १११ ॥
जपाकुसुमसंकाशो हंसपादो महोत्तमः ।
तिक्तं कषायं कटु हिंगुलं स्यान्नेत्रामयघ्नं कफपित्तहारि ।
हृल्लासकुष्टज्वरकामलाश्चप्लीहामवातौचगरंनिहंति॥

ऊर्ध्वपातनयुक्त्या तु डमरूयन्त्रपाचितम् ।
हिंगुलं तस्य सूतं तु शुद्धमेव न शोधयेत् ॥११३॥

हिंगुल, दरद, म्लेच्छ इंगुल, पूर्णपारद, मार्क्षिरंग, सुरंग और करमारबंधन यह शिगरफके नाम हैं। शिंगरफ तीन प्रकारका होता है-१ चर्मार, २ शुकतुण्डक, ३ हंसपाद यह तीनों एकसे दूसरा उत्तरोत्तर विशेष गुणवाला है। चर्मार सफेद वर्णवाला, शुकतुण्ड कुछ पीला और हंसपाद जपाकुसुमके समान लाल वर्णवाला सबमें उत्तम होता है। शुद्ध हिंगुल—तिक्त, कषाय, कटु, नेत्ररोगहर, कफपित्त नाशक, हृल्लास, कुष्ठ, ज्वर, कामला, प्लीहा, आमवात और गरविकारको दूर करता है।

हिंगुलको नीबूके रसमें पीसकर ऊर्ध्वपातन यन्त्रमें उड़ा लिया जाय तो इसमेंसे शुद्ध पारद निकल आता है। साधारण रसोंमें उपयोग करनेके लिये इसको और शोधन करनेकी आवश्यकता नही है ॥ ११०-११३ ॥

अभ्रकम् ।

पुरा वधाय वृत्रस्य वज्रिणा वज्रमुद्धृतम् ।
विस्फुलिंगास्ततस्तस्माद्गगने परिसर्पिताः ॥११४॥
ते निपेतुर्घनध्वानाः शिखरेषु महीभृताम् ।
तेभ्य एव समुत्पन्नं तत्तद्गिरिषु चाभ्रकम् ॥ ११५॥
तद्वज्रं वज्रपातत्वादभ्रमभ्ररवोद्भवात् ।
गगनात्स्खलितं यस्माद्गगनं च ततो मतम् ॥११६॥
विप्रक्षत्रियविट्शूद्रभेदात्तस्माच्चतुर्विधः ।
क्रमेणैव सितं रक्तं पीतं कृष्णं च वर्णतः ॥११७॥
प्रशस्यते सितं तारे रक्तं तत्तु रसायने ।
पीतं हेमनि कृष्णं तु गदेषु द्रुतयेऽपि च ॥ ११८ ॥

पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रं चेति चतुर्विधम् ।
मुंचत्यग्नौ विनिक्षिप्तं पिनाकं दलसंचयम् ॥ ११९ ॥
अज्ञानाद्भक्षणं तस्य महाकुष्ठप्रदायकम् ।
दर्दुरं त्वग्निनिक्षिप्तं कुरुते दर्दुरध्वनिम् ॥ १२० ॥
गोलकान् बहुशः कृत्वा स स्यान्मृत्युप्रदायकः ।
नागं तु नागवद्वह्नौ फूत्कारं परिमुंचति ॥ १२१ ॥
तद्भक्षितमवश्यं तु विदधाति भगंदरम् ।
वज्रन्तु वज्रवत्तिष्ठेत्तन्नाग्नौ विकृतिं व्रजेत् ॥ १२२ ॥
सर्वाभ्रेषु वरं वज्रं व्याधिवार्द्धक्यमृत्युहृत् ।
अभ्रमुत्तरशैलोत्थं बहुसत्त्वं गुणाधिकम् ॥ १२३ ॥
दक्षिणाद्रिभवं स्वल्पसत्त्वमल्पगुणप्रदम् ॥ १२४ ॥

पूर्वकालमें वृत्रासुरको मारनेके लिये जब इन्द्रने वज्र उठाया तो उसमें से चिंगारियाँ निकल कर इधर उधर फैल गईं । फिर वह चिंगारियां मेघोंमें फैल कर पहाडोंके शिखरों पर गिर गईं । उनसे उन उन पहाडोंमें अभ्रक उत्पन्न हो गया । यह वज्रमेंसे गिरनेके कारण वज्र मेघों द्वारा आनेसे अभ्रक, गगनसे गिरनेके कारण गगन नामसे प्रसिद्ध हुआ, फिर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चार जातियोंवाला क्रमसे श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण इन चार वर्णोंमें विभक्त हुआ है । इनमें चांदी बनानेके काममें श्वेत, रसायनमें लाल, स्वर्ण क्रियामें पीला, सर्व रोग निवृत्तिके लिये, तथा द्रुति कर्म्मके लिये कृष्ण अभ्रक अच्छा होता है । कृष्णाभ्रक, पिनाक, दुर्दर, नाग और वज्र इन भेदोंसे चार प्रकारका होता है । जो अभ्रक अग्निमें डालकर धमानेसे अपने दलके संचयको त्यागता है, उसको पिनाक कहते है । यदि इसको अज्ञानसे खा लिया जाय, तो महाकुष्ठोंको उत्पन्न करता है । जो अभ्रक अग्निमें डालकर तपानेसे

मेंढककी तरह टर्र २ के शब्द करता है इसे दर्दुर कहते हैं । इसके सेवनसे शरीरमें ग्रंथियां उत्पन्न होकर मृत्यु होती है । जो अभ्रक अग्निमें तपानेसे सांपके समान फुंकार करे, उसको नाग कहते हैं । नागाभ्रक खानेसे भगन्दर आदि दारुण रोग उत्पन्न होते है । जो अभ्रक अग्निमें तपानेसे विकृति को प्राप्त न हो और वज्रके समान वैसा ही स्थिर रहे उसे वज्राभ्रक कहते हैं । वज्राभ्रक सब अभ्रकोंमें श्रेष्ठ है तथा व्याधि, वार्द्धक्य और मृत्युको हरने- वाला है । उत्तरके पहाड़ोंसे उत्पन्न हुआ अभ्रक बहुत सतवाला और गुणमें अधिक होता है । दक्षिणके पहाड़ोंमें उत्पन्न हुआ अभ्रक अल्प सत्व और अल्प गुणवाला होता है ॥ ११४–१२४ ॥

अभ्रं कषायं मधुरं सुशीतमायुःकरं धातुविवर्द्धनं च ।
हन्यात्त्रिदोषं व्रणमेहकुष्ठं प्लीहोदरं ग्रंथिविषक्रिमींश्च ॥
रोगान् हंति दृढयति वपुर्वीर्य्यवृद्धिं विधत्ते
तारुण्याढ्यं रमयति शतं योषितां नित्यमेव ।
दीर्घायुष्काञ्जनयति सुतान् विक्रमैः सिंहतुल्या-
न्मृत्योर्भीतिं हरति सततं सेव्यमानं मृताभ्रमम् १२६
पीडांविधत्ते विविधां नराणां कुष्ठं क्षयं पांडुगदं च शोथम्
हृत्पार्श्वपीडां च करोत्यशुद्धमभ्रंत्वसिद्धं गुरुतापदंस्यात्

अभ्रक–कषाय, मधुर, शीतल, आयुवर्द्धक और धातुओंको पुष्ट करने- वाला है । तथा त्रिदोष, व्रण, प्रमेह, कुष्ठ, प्लीहा, उदररोग, ग्रंथि, विष आर कृमियोंको दूर करता है । वज्राभ्रककी उत्तम भस्म बनाकर खानेसे संपूर्ण रोग दूर होते है । शरीर दृढ होता है । वीर्यकी वृद्धि होती है और सैकडों स्त्रियोंके संगकी शक्ति हो जाती है । तथा तारुण्य आ जाता है और इस के प्रभावसे सिंहतुल्य पराक्रमवाले पुत्र उत्पन्न होते है । तथा मृत्युका भय दूर होता है । यह उत्तम भस्मित वज्राभ्रकके गुण हैं । यदि विना शुद्ध किये हुए चंद्रिकायुक्त अभ्रकका सेवन किया जाय तो कुष्ठ, क्षय, पाण्डु,

शोथ, हृत्पीडा, पार्श्वपीडा और शरीरमें भारीपन आदि अनेक प्रकारकी पीडाओंको उत्पन्न करता है ॥ १२५-१२७ ॥

हरितालम् ।

हरितालं तु तालं स्यादालं तालकमित्यपि ।
हरितालं द्विधा प्रोक्तं पत्राख्यं पिंडसंज्ञकम्॥१२८॥
तयोराद्यं गुणैः श्रेष्ठं ततो हीनगुणं परम् ।
स्वर्णवर्णं गुरु स्निग्धं सपत्रं चाभ्रपत्रवत् ॥ १२९ ॥
पत्राख्यं तालकं विद्याद्गुणाढ्यं तद्रसायनम् ।
निष्पत्रं पिंडसदृशं स्वल्पसत्त्वं तथा गुरु ॥१३०॥
स्त्रीपुष्पहारकं स्वल्पगुणं तत्पिण्डतालकम् ।
हरितालं कटु स्निग्धं कषायोष्णं हरेद्विषम् ।
कंडुकुष्ठास्यरोगास्रकफपित्तकचव्रणान् ॥ १३१ ॥
हरति च हरितालं चारुतां देहजातां
सृजति च बहुतापानंगसंकोचपीडाम् ।
वितरति कफवातौ कुष्ठरोगं विदध्या-
दिदमशितमशुद्धं मारितं चाप्यसम्यक् ॥ १३२ ॥

हरिताल, ताल, आल और तालक यह हरितालके नाम है । हरिताल (पत्राख्य वर्की) और पिण्ड इन भेदोंसे दो प्रकारकी होती है। इनमें वर्की हरताल गुणोंमें श्रेष्ठ होती है । और पिण्ड गुणोंमें हीन होती है । जो हरिताल स्वर्णके वर्णवाली, भारी, चिकनी, अभ्रकके समान पत्रोंवाली होती है उसको पत्रहरिताल कहते है । यह अनेक गुणोंसे युक्त और रसायन है। पत्रोंसे रहित पिण्डके समान पिण्डहरिताल होती है, यह अल्पसत्व, भारी, स्त्रियोंके मासिक धर्मको रोकनेवाली और अल्पगुणवाली पिण्डहरिताल

होती है । हरिताल—कटु, स्निग्ध, कषाय और उष्ण होती है । तथा विष, कण्डू, कुष्ठ, मुखरोग, रक्तविकार, कफ, पित्त, केश और व्रणोंको नष्ट करती है ।

अशुद्ध और विना अच्छी भस्म वनाये सेवन की हुई हडताल, देहके सौन्दर्यको नष्ट करती है, शरीरमें तापको उत्पन्न करती है, कामशक्तिको नष्ट करती है । कफ, वात और कुष्ठ आदि रोगोंको उत्पन्न करती है । इस लिये अशुद्ध और विना उत्तम भस्म वनाये हडतालका सेवन नही करना चाहिये ॥ १२८–१३२ ॥

मनःशिला ।

मनःशिला मनोगुप्ता मनोह्वा नागजिह्विका ।
नैपाली कुनटी गोला शिला दिव्यौषधिः स्मृता॥१३३॥
मनःशिला गुरुर्वर्ण्या सरोष्णा लेखनी कटुः ।
तिक्ता स्निग्धा विषश्वासकासभूतकफास्रनुत् ॥ १३४ ॥
मनःशिला मंदबलं करोति जंतुं ध्रुवं शोधनमंतरेण ।
मलानुबंधं किल मूत्ररोधं सशर्करं कृच्छ्रगदं च कुर्यात्॥

मनःशिला, मनोगुप्ता, मनोह्वा, नागजिह्विका, नैपाली, कुनटी, गोला, शिला और दिव्यौषधि यह मैनसिलके नाम हैं । अंग्रेजीमें इसे Realgar कहते है ।

मैनसिल—भारी, वर्णकारक, दस्तावर, उष्ण, लेखन, कटु, तिक्त और स्निग्ध है । तथा विष, श्वास, कास, भूतबाधा, कफ और रक्तविकारको नाश करनेवाला है ।

विना शोधन किया हुआ मैनसिल—वलहानिकारक, विबन्धकारक, मूत्ररोधक, मूत्रकृच्छ्र और शर्करा रोगको करनेवाला होता है ॥ १३३–१३५ ॥

अंजनं, सौवीरम् ।

अंजनं यामुनं चापि कापोतांजनमित्यपि ।

तत्तु स्रोतोंजनं कृष्णं सौवीरं श्वेतमीरितम् ॥१३६॥
वल्मीकशिखराकारं भिन्नमंजनसन्निभम् ।
घृष्टं तु गैरिकाकारमेतत्स्रोतोंजनं स्मृतम् ॥ १३७॥
स्रोतोंजनसमं ज्ञेयं सौवीरं तत्तु पांडुरम् ।
स्रोतोंजनं स्मृतं स्वादु चक्षुष्यं कफपित्तनुत्॥१३८॥
कषायं लेखनं स्निग्धं ग्राहि च्छर्दिविषापहम् ।
सिध्मक्षयास्रहृच्छीतं सेवनीयं सदा बुधैः ॥१३९॥
स्रोतोंजनगुणाः सर्वे सौवीरेऽपि मता बुधैः ।
किंतु द्वयोरंजनयोः श्रेष्ठं स्रोतोंजनं स्मृतम् ॥१४०॥

अंजन, यामुन, कापोतांजन, स्रोतोऽञ्जन यह अञ्जनके नाम हैं । स्रोतोञ्जन और सौवीरांजन भेदसे यह दो प्रकारका होता है। स्रोतोऽञ्जन काला और सौवीरांजन सफेद रंगका होता है। स्रोतोञ्जन बम्बीके शिखरके आकारका, तोडनेसे काले अञ्जनके समान और घिसनेसे गेरूके समान कठोर होता है । सौवीरांजन स्रोतोञ्जनके समान ही होता है परन्तु किञ्चित् पाण्डुपन लिये होता है । स्रोतोञ्जन–स्वादु, नेत्रहितकर, कफ पित्त नाशक, कषाय, लेखन, स्निग्ध, ग्राही, वमन और विषको हरनेवाला, सीप, क्षय, रक्तविकारको हरनेवाला और शीतल स्वभाववाला है । विद्वानोंको नित्य यह अञ्जन नेत्रोंमें डालना चाहिये । स्रोतोञ्जनके समान ही सब गुण सौवीरांजनमें है । किन्तु दोनोंमें स्रोतोञ्जन श्रेष्ठ माना जाता है ॥ १३६–१४० ॥

टंकणम् ।

टंकणोऽग्निकरो रूक्षः कफघ्नो वातपित्तकृत् ।

टंकण (सुहागा) अग्निकारक, रूक्ष, कफनाशक और वात पित्तकारक है ।

स्फटिका।

स्फटी च स्फटिका प्रोक्ता श्वेता च शुभरंगदा ॥१४१॥
दृढरंगा रंगदृढा दृढा रंगापि कथ्यते।
स्फटिका तु कषायोष्णा वातपित्तकफव्रणान् ॥१४२॥
निहंति श्वित्रवीसर्पान् योनिसंकोचकारिणी।

स्फटी, स्फटिका, श्वेता, शुभरंगदा, दृढ़रंगा, रंगदढ़ा, दृढ़ारंगा यह फटकड़ीके नाम हैं। इसे फारसीमें जाकसफेद और अंग्रेजीमें Alum कहते हैं।

फटकड़ी—कषाय, उष्ण, और योनिसंकोच करनेवाली है। तथा वात, पित्त, कफ, व्रण, श्वित्र और विसर्पको नष्ट करनेवाली है॥ १४१ ॥१४२॥

राजावर्तः।

राजावर्तः कटुस्तिक्तः शिशिरः पित्तनाशनः॥१४३॥
राजावर्तः प्रमेहघ्नश्छर्दिहिक्कानिवारणः।

राजावर्त—कटु, तिक्त, शीतल, पित्तनाशक, प्रमेह, छर्दी और हिचकीको दूर करनेवाला है॥ १४३ ॥

चुंबकः।

चुंबकः कांतपाषाणोऽयस्कांतो लोहवर्षकः ॥१४४॥
चुंबको लेखनः शीतो मेदोविषगरापहः।

चुंबक, कांतपाषाण, अयस्कान्त और लोहकर्षक यह चुंबकके नाम है। चुंबक लेखन, शीतल, मेद, विष और गरको दूर करनेवाला है॥ १४४ ॥

गैरिकम्।

गैरिकं रक्तधातुश्च गैरेयं गिरिजं तथा ॥ १४५ ॥
स्वर्णगैरिकमन्यत्तु ततो रक्ततरं हि तत्।

गैरिकद्वितयं स्निग्धं मधुरं तुवरं हिमम् ॥ १४६ ॥
चक्षुष्यं दाहपित्तास्रकफहिक्काविषापहम् ।

गैरिक, रक्तधातु, गैरेय और गिरिज यह गेरूके नाम हैं । दूसरा स्वर्ण गैरिक होता है वह गेरूसे अत्यन्त लाल होता है । दोनों प्रकारके गेरू-स्निग्ध, मधुर, कसैले, शीतल, नेत्रोंको हितकारी तथा दाह, पित्त, रक्त, हिचकी और विषको हरनेवाले हैं ॥ १४५ ॥ १४६ ॥

खटी गौरखटी ।

खटिका कठिनी चापि लेखनी च निगद्यते॥१४७॥
खटिका दाहजिच्छीता मधुरा विषशोथजित् ।
लेपादेते गुणाः प्रोक्ता भक्षिता मृत्तिकासमा॥१४८॥
खटी गौरखटी द्वे च गुणैस्तुल्ये प्रकीर्तिते ।

खटिका, कठिनी और लेखनी यह खडिया मट्टीके नाम हैं । खडिया मिट्टी लेप करनेसे दाहको जीतती है । शीतल, मधुर तथा विष और सूजनको दूर करनेवाली है । परन्तु खानेसे मिट्टीके समान हानिकारक है । इसका भेद एक गौरखटी होती है । गुणमें दोनों खटिका तुल्या होती हैं ॥ १४७॥ १४८

वालुका ।

वालुका सिकता प्रोक्ता शर्करा रेतजापि च ॥१४९॥
वालुका लेखनी शीता व्रणोरःक्षतनाशिनी ।

वालुका, सिकता, शर्करा, रेतजा यह बालू रेतके नाम हैं । बालूरेत, लेखन, शीतल, व्रण और उरःक्षतका नाश करती है ॥ १४९ ॥

खर्परम् ।

खर्परं तुत्थकं तुत्थादन्यत्तद्रसकं स्मृतम् ॥ १५० ॥
ये गुणास्तुत्थके प्रोक्तास्ते गुणा रसके स्मृताः ।

खर्पर, तुत्थक यह खपरियेके नाम हैं । तांबेसे उत्पन्न होनेवाला खप-

रिया, तुथई खपरिया होता है । जस्तसे उत्पन्न होनेवाला खपरिया रसक नामका खपरिया होता है । दोनों खपरिया गुणोंमें प्रायः समान होते हैं ॥ १५० ॥

कासीसम् ।

कासीसं धातुकासीसं पांशुकासीसमित्यपि ॥१५१॥
तदेव किंचित्पीतं तु पुष्पकासीसमुच्यते ।
कासीसमम्लमुष्णं च तिक्तं च तुवरं तथा ॥१५२॥
वातश्लेष्महरं केश्यं नेत्रकंडूविषप्रणुत् ।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीश्वित्रनाशनं परिकीर्तितम् ॥१५३ ॥

कासीस, धातुकासीस, पांशुकासीस यह कासीसके नाम है। वही किंचित् पीला होनेसे पुष्पकासीस कहा जाता है । कासीस अम्ल, उष्ण, तिक्त, कसैला, वात कफको हरनेवाला, केशोंको हितकारी, नेत्रोंकी खुजली तथा विप विकारको हरनेवाला, मूत्रकृच्छ्, पथरी और श्वित्रको दूर करनेवाला है ॥ १५१-१५३ ॥

सौराष्ट्री ।

सौराष्ट्री तुवरी कांक्षी मृत्तालकसुराष्ट्रजा ।
आढकी चापि साख्याता मृत्स्ना च सुरमृत्तिका १५४
स्फटिकाया गुणाः सर्वे सौराष्ट्र्या अपि कीर्तिताः ।

सौराष्टी, तुवरी, कांक्षी, मृत्तालक, सुराष्ट्रजा, आढकी, मृत्स्ना, सुरमृत्तिका यह गजनी मिट्टीके नाम हैं । इसके सब गुण फटकड़ीके समान है ॥१५४॥

कृष्णमृत्तिका ।

कृष्णामृत्क्षतदाहास्रप्रदरश्लेष्मपित्तनुत् ॥ १५५ ॥

कृष्णमृत्तिका क्षत, दाह, रक्त,प्रदर,कफ तथा पित्तका नाश करती है॥१५५

कपर्दकम् ।

कपर्दको वराटश्च कपर्दी च वराटिका ।
कपर्दिका हिमा नेत्रहिता स्फोटक्षयापहा ॥ १५६॥
कर्णस्रावाग्निमांद्यघ्नी पित्तास्रकफनाशिनी ।

कपर्दक, वराट, कपर्दी और वराटिका यह कौडियोंके नाम हैं । कौडियाँ–शीतल, नेत्रहितकारी, फोडे, क्षय, कर्णस्राव, मंदाग्नि, पित्त, रक्त और कफको दूर करनेवाली हैं । इसे अंग्रेजीमें Cowries कहते है ॥१५६॥

शंखः ।

शंखः समुद्रजः कम्बुः सुनादः पावनध्वनिः॥१५७॥
शंखो नेत्र्यो हिमः शीतो लघुः पित्तकफास्रजित् ।

शंख, समुद्रज, सुनाद, पावनध्वनि यह शंखके नाम हैं । शंख नेत्रोंको हितकारी, ठण्डा, शीतल, लघु, पित्त, कफ और रक्तको जीतनेवाला है ॥ १५७ ॥

बोलम् ।

बोलं गंधरसं प्राणपिंडगोपरसाः स्मृताः ॥ १५८ ॥
बोलं रक्तहरं शीतं मेध्यं दीपनपाचनम् ।
मधुरं कटुतिक्तं च दाहस्वेदत्रिदोषजित् ॥ १५९ ॥
ज्वरापस्मारकुष्ठघ्नं गर्भाशयविशुद्धिकृत् ।

बोल, गंधरस, प्राणपिण्ड और गोपरस यह बोलके नाम है । बोल रक्तको हरनेवाला, शीतल, बुद्धिवर्द्धक, दीपन, पाचन, मधुर, कटु, तिक्त तथा दाह, स्वेद, त्रिदोष, ज्वर, अपस्मार और कुष्ठको हरनेवाला एवं गर्भाशयको शुद्ध करनेवाला है ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

कंकुष्ठम् ।

तत्रैकं गलकाख्यं स्यात्तदन्यद्रेणुकं स्मृतम् ॥१६०॥

हिमवत्पादशिखरे कंकुष्ठमुपजायते।
तत्रैकं रक्तकालं स्यादन्यद्धेमप्रभं स्मृतम् ॥१६१॥
पीतप्रभं गुरु स्निग्धं श्रेष्ठं कंकुष्ठमादिशेत् ।
श्यामं रक्तं लघु त्यक्तसत्त्वं नेष्टं हरेणुकम् ॥ १६२॥
कंकुष्ठं काककुष्ठं च वरांगं रंगदायकम् ।
कंकुष्ठं रेचनं तिक्तं कटूष्णं वर्णकारकम् ॥ १६३ ॥
कृमिशोथोदराध्मानगुल्मानाहकफापहम् ।

कंकुष्ठ दो प्रकारका होता है, एक नलक और दूसरा रेणुक । कंकुष्ठ हिमवान पहाडके शिखरोंमें उत्पन्न होता है । इनमें एक कंकुष्ठ लाल वर्णका होता है । दूसरा स्वर्णकीसी कांतिवाला होता है। इनमें सुवर्णकीसी कांतिवाला पीला भारी और चिकना कंकुष्ठ श्रेष्ठ होता है । तथा श्याम रक्त वर्णवाला हल्का, सत्त्वरहित हरेणुक अच्छा नहीं होता । कंकुष्ठ, काककुष्ठ, वरांग और रंगदायक यह कंकुष्ठके नाम हैं । कंकुष्ठ,—रेचक, तिक्त, कटु, उष्ण और व्रणकारक है । तथा कृमि, शोथ, उदर, आध्मान, गुल्म, अफारा और कफके हरनेवाला है । १६०—१६२ ॥

रत्ननिरुक्तिः ।

धनार्थिनो जनाः सर्वे रमंतेऽस्मिन्नतीव यत् ॥१६४॥
ततो रत्नमिति प्रोक्तं शब्दशास्त्रविशारदैः ।

धनकी इच्छावाले लोग हर समय इनमें अत्यन्त रमण करते हैं, इस लिये शब्दशास्त्रके जाननेवालोंने इनको रत्न कहा है ॥ १६४ ॥

रत्ननाम ।

रत्नं क्लीबे मणिः पुंसि स्त्रियामपि निगद्यते १६५॥
तत्तु पाषाणभेदोऽस्ति मुक्तादि च तदुच्यते । अमरः।

रत्नं मणिर्द्वयोरश्मजातौ मुक्तादिकेऽपि च ॥१६६॥
वज्रं गारुत्मतं पुष्परागो माणिक्यमेव च ।
इंद्रनीलश्च गोमेदं तथा वैदूर्य्यमित्यपि ॥ १६७ ॥
मौक्तिकं विद्रुमश्चेति रत्नान्युक्तानि वै तव ।

विष्णुधर्मोत्तरेऽपि ।

मुक्ताफलं हीरकश्च वैदूर्य्यं पद्मरागकम् ॥ १६८ ॥
पुष्पराजं च गोमेदं नीलं गारुत्मतं तथा ।
प्रवालयुक्तान्येतानि महारत्नानि वै नव ॥ १६९ ॥

नपुंसकमें रत्न पुँल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्गमें मणि शब्दका प्रयोग होता है। वह रत्न पत्थरके भेद और मोती आदि है अमरकोशमें भी लिखा है कि मणि शब्द हीरा आदि पत्थर और मुक्ता आदि हड्डी विशेषके वाचक हैं। वज्र (हीरा), गारुत्मत (पन्ना), पुष्पराज (पुखराज), माणिक्य (माणक) इन्द्रनील (नीलम), गोमेद, वैडूर्य्य, मोती और मूँगा यह नव रत्न हैं। विष्णुधर्मोत्तर पुराणमें भी मुक्ताफल, हीरा, वैडूर्य्य, पद्मराग, पुष्पराज, गोमेद, नीलम, गारुत्मत और मूँगा यह नौ महारत्न कहे है ॥ १६५-१६९ ॥

हीरकम् ।

हीरकः पुंसि वज्रोऽस्त्री चन्द्रो मणिवरश्च सः ।
स तु श्वेतः स्मृतो विप्रो लोहितः क्षत्रियः स्मृतः १७०
पीतो वैश्योऽसितः शूद्रः चतुर्वर्णात्मकश्च सः ।
रसायनो मतो विप्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ १७१॥
क्षत्रियो व्याधिविध्वंसी जरामृत्युहरः स्मृतः ।
वैश्यो धनप्रदः प्रोक्तस्तथा देहस्य दार्ढ्यकृत् ॥१७२
शूद्रो नाशयति व्याधीन् वयःस्तंभं करोति च ।

पुंस्त्रीनपुंसकानीह लक्षणीयानि लक्षणैः ॥ १७३ ॥
सुवृत्ताः फलसंपूर्णास्तेजोयुक्ता बृहत्तराः ।
पुरुषास्ते समाख्याता रेखाबिंदुविवर्जिताः ॥१७४॥
रेखाबिन्दुसमायुक्ताः षडस्रास्ते स्त्रियः स्मृताः ।
त्रिकोणाश्च सुदीर्घास्ते विज्ञेयाश्च नपुंसकाः॥१७५॥
तेषु स्युः पुरुषाः श्रेष्ठा रसबंधनकारिणः ।
स्त्रियः कुर्वंति कायस्य कांतिं स्त्रीणां सुखप्रदाः १७६॥
नपुंसकास्त्ववीर्य्याः स्युरकामाः सत्त्ववर्जिताः ।
स्त्रियः स्त्रीभ्यःप्रदातव्याः क्लीबं क्लीबे प्रयोजयेत् १७७
सर्वेभ्यः सर्वदा देया पुरुषा वीर्य्यवर्द्धनाः।
अशुद्धं कुरुते वज्रं कुष्ठं पार्श्वव्यथां तथा ॥१७८॥
पांडुतां पंगुरत्वं च तस्मात्संशोध्य मारयेत् ।
आयुः पुष्टिं बलं वीर्य्यं वर्णं सौख्यं करोति च १७९
सेवितं सर्वरोगघ्नं मृतं वज्रं न संशयः ।

हीरक शब्द पुँल्लिंग, वज्र पुँल्लिंग और नपुंसक लिग है। चन्द्र और मणिवर तथा वज्र यह हीरेके नाम है। श्वेतवर्णका हीरा ब्राह्मण, लालवर्णका क्षत्री, पीतवर्णका वैश्य और कृष्णवर्णका शूद्र कहा जाता है। रसायन कर्ममें ब्राह्मण वर्णका हीरा काम आता है और सब प्रकारकी सिद्धियोंके देनेवाला है। क्षत्री वर्णका हीरा व्याधियोंको नाश करता है। तथा जरा और मृत्युको दूर करता है। वैश्य वर्णका हीरा धनको देनेवाला और देहको दृढ करनेवाला कहा है। शूद्र वर्णका हीरा व्याधियोंको दूर करता है और आयुको बढाने-वाला है। हीरेमें पुरुष, स्त्री और नपुंसक जातियें इन लक्षणोंसे जाननी चाहिये। जो हीरा गोल, सब ओरसे एक जैसे फलोंवाला तेजयुक्त बहुत बडा

रेखा और बिंदुओंसे रहित हो वह पुरुषसंज्ञक होता है। रेखा बिन्दुयुक्त छै कोनेवाला स्त्रीसंज्ञक होता है। तीन कोनेवाला और बहुत लम्बा नपुंसक संज्ञक होता है। इनमें पुरुष हीरा सबसे श्रेष्ठ है, इससे बंधन होता है। स्त्रीजातिका हीरा शरीरको सुंदर करनेवाला और स्त्रियोंको सुखदायक है। नपुंसक जाति-का हीरा अवीर्य्य, अकाम और शक्तिरहित होता है। स्त्री जातिका हीरा स्त्रीकी नपुंसक जातिका नपुंसकको और पुरुष जातिका पुरुषको देना चाहिये। पुरुष जातिका हीरा वीर्य्यवर्द्धक है। अशुद्ध हीरा कोढ, पसलीकी पीडा, पांडुरोग तथा लंगडापनको करता है। इस लिये हीरेको शोध कर मारना चाहिये। मारा हुआ हीरा आयुष्य, पुष्टिकारक, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, वर्णको सुन्दर करने-वाला, सुखदायक और सर्वरोगनाशक है। इसे फारसीमें इल्माश और अंग्रेजीमें Diamond कहते हैं॥ १७०-१७९ ॥

हरितम् ।

गारुत्मतं मरकतमश्मगर्भो हरिन्मणिः ॥ १८० ॥

गारुत्मत, मरकत, अश्मगर्भ, हरिन्मणि यह पन्नेके नाम है। इसको फार-सीमें जुमरईद और अंग्रेजीमें Emerald कहते है ॥ १८० ॥

माणिक्यम् ।

माणिक्यं पद्मरागः स्याच्छोणरत्नं च लोहितम् ।

माणिक्य, पद्मराग, शोणरत्न और लोहित यह माणिकके नाम हैं। इसे फार-सीमें लाल वद्पशानि और अंग्रेजीमें Tapuby कहते है ।

पुष्परागः ।

पुष्परागो मंजुमणिः स्याद्वाचस्पतिवल्लभः ॥१८१॥

पुष्पराग, मंजुमणि, वाचस्पतिवल्लभ यह पुखराजके नाम है। इसे अंग्रेजीमें Onyz कहते है ॥ १८१ ॥

इंद्रनीलं गोमेदः ।

नीलं तथेंद्रनीलं च गोमेदः पीतरत्नकम् ।

नील, इन्द्रनील, गोमेद, पीतरत्नक यह नीलमके नाम हैं । अंग्रेजीमें इसे onyx कहते हैं ॥

वैदूर्य्यम् ।

वैदूर्य्यं दूरजं रत्नं स्यात्केतुग्रहवल्लभम् ॥ १८२ ॥

वैदूर्य्य, दूरज, रत्न, केतुग्रहवल्लभ यह वैडूर्य्यमणिके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Catseye कहते हैं ॥ १८२ ॥

मौक्तिकम् ।

मौक्तिकं शौक्तिकं मुक्ता तथा मुक्ताफलं च तत् ।
शुक्तिः शंखो गजः क्रोडः फणिर्मत्स्यश्च दर्दुरः १८३
वेणुरेते समाख्यातास्तज्ज्ञैर्मौक्तिकयोनयः ।
मौक्तिकं शीतलं वृष्यं चक्षुष्यं बलपुष्टिदम् ॥१८४॥

मौक्तिक, शौक्तिक, मुक्ता, मुक्ताफल यह मोतीके नाम है । इसे फारसीमें मरवारीद और अंग्रेजीमें Pearl कहते हैं ।

मोतीके मिलनेके स्थान–सीप, शंख, हाथी सूअर, सर्प, मत्स्य, मेंढक और वांस हैं । मोती–शीतल, वीर्य्यवर्द्धक, नेत्रहितकर, बल तथा पुष्टिकारक है ॥ १८३ ॥ १८४ ॥

प्रवालः ।

पुंसि क्लीबे प्रवालः स्यात्पुमानेव तु विद्रुमः ।

प्रवाल पुँल्लिंग और स्त्रीलिंगमें, विद्रुम पुँल्लिगमें ही होता है । हिंदीमें उसे मूँगा, फारसीमें मिरजान् और अंग्रेजीमें Red CoraL कहते हैं ॥

अथ रत्नानां गुणाः ।

रत्नानि भक्षितानि स्युर्मधुराणि सराणि च ॥१८५॥

चक्षुष्याणि च शीतानि विषघ्नानि धृतानि च ।
मंगल्यानि मनोज्ञानि ग्रहदोषहराणि च ॥ १८६ ॥

रत्न–खानेमें मधुर, दस्तावर, चाक्षुष्य, शीत, विषघ्न तथा धारण किये हुए मंगलकारक, मनोज्ञ और ग्रह दोषोंको हरनेवाले होते है ॥ १८५ ॥ १८६ ॥

किं रत्नं कस्य ग्रहस्य प्रीतिकरमित्युक्तं रत्नमालायाम् ।

माणिक्यं तरणेः सुजातममलं मुक्ताफलं शीतगो–
र्माहेयस्य तु विद्रुमो निगदितः सौम्यस्य गारुत्मतम् ।
देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्य्यस्य वज्रं शने–
र्नीलं निर्मलमन्ययोर्निगदिते गोमेदवैदूर्यके ॥ १८७ ॥

सूर्य्यके लिये माणिक, चंद्रमाके लिये अमल मोती, मंगलके लिये विद्रुम, बुधके लिये गारुत्मत, बृहस्पतिके लिये पुखराज, शुक्रके लिये हीरा, शनिके लिये नीलम, राहुके लिये गोमेद और केतुके लिये वैदूर्य्यक धारण किये जाते है ॥ १८७ ॥

उपरत्नानि ।

उपरत्नानि काचश्च कर्पूराश्मा कपर्दिका ।
मुक्ताशुक्तिस्तथा शंख इत्यादीनि बहून्यपि १८८ ॥

कांच, कर्पूराश्मा, कपर्दिका, मुक्ताशुक्ति तथा शंख इत्यादि बहुतसे उपरत्न कहलाते है ॥ १८८ ॥

उपरत्नत्वादिमौ कपर्दशंखौ पुनरुक्तौ ।

गुणा यथैव रत्नानामुपरत्नेषु ते तथा ।
किंतु किंचित्ततो हीना विशेषोऽयमुदाहृतः॥ १८९ ॥

उपरत्नोंमें रत्नों जैसे गुण हैं । अन्तर इतना ही है कि इनमें कुछ न्यून गुण है ॥ १८९ ॥

विषम् ।

विषं तु गरलं क्ष्वेडस्तस्य भेदानुदाहरे ।
वत्सनाभः स हारिद्रः शक्तुकश्च प्रदीपनः ॥१९०॥
सौराष्ट्रिकः शृंगिकश्च कालकूटस्तथैव च ।
हालाहलो ब्रह्मपुत्रो विषभेदा अमी नव ॥ १९१ ॥

विष गरल और क्ष्वेड यह विपके नाम है । वत्सनाभ, हारिद्रक, शक्तुक, प्रदीपन, सौराष्ट्रिक, शृंगिक, कालकूट, हालाहल और ब्रह्मपुत्र यह नौ विषके भेद है ॥ १९० ॥ १९१ ॥

वत्सनाभः ।

सिंधुवारसदृक्पत्रो वत्सनाभ्याकृतिस्तथा ।
यत्पार्श्वे न तरोर्वृद्धिर्वत्सनाभः स भाषितः॥१९२॥
(हारिद्रः)-हरिद्रा तुल्यमूलो यो हारिद्रः स उदाहृतः।
(शक्तुकः)यद्ग्रंथिः शक्तुकेनेवपूर्णमध्यः सशक्तुकः१९३

वत्सनाभ विपके संभालूकी तरहके पत्र होते हैं । वत्सकी नाभीके आकारका मूल होता है । और उसके समीप कोई भी वृक्ष बडे आकारका नही हो सकता, यह लक्षण वत्सनाभके हैं ।

हारिद्रक विपका मूल हल्दीकी गांठके समान निकलता है ।

जिस विषकंदका मध्यभाग कणकेदार ग्रंथियोंसे भरा हुआ होता है उसे सक्तुक कहते है ॥ १९२ ॥ १९३ ॥

प्रदीपनः ।

वर्णतो लोहितो यः स्याद्दीप्तिमान् दहनप्रभः ।
महादाहकरः पूर्वैः कथितः स प्रदीपनः ॥ १९४ ॥
(सौराष्ट्रिकः)सुराष्ट्रविषयेयः स्यात्स सौराष्ट्रिक उच्यते

जो विषकंद वर्णमें लाल, अग्निके समान दीप्तिमान और महादाहके करनेवाला होता है उसको प्रदीपन कहते है ॥ १९४ ॥

शृंगिकः ।

यस्मिन् गोशृंगके बद्धे दुग्धं भवति लोहितम् १९५
स शृंगिक इति प्रोक्तो द्रव्यतत्त्वविशारदैः ।

सौराष्ट्रिक देशमें उत्पन्न होनेवाला विष सौराष्ट्रिक कहलाता है ।

जिस विषके गौके सींगमें बांधनेसे दूधका लाल वर्ण हो जाय उसको द्रव्यतत्त्वके जाननेवालोंने शृंगिक विष कहा है ॥ १९५ ॥

कालकूटः ।

देवासुररणे देवैर्हतस्य पृथुमालिनः ॥ १९६ ॥
दैत्यस्य रुधिराज्जातस्तरुरश्वत्थसन्निभः ।
निर्यासः कालकूटोऽस्य मुनिभिः परिकीर्तितः १९७॥
सोऽहिक्षेत्रे शृंगबेरे कोंकणे मलये भवेत् ॥ १९८ ॥

देवताओंके और असुरोंके संग्राममें देवताओंसे मारे हुए पृथुमालि दैत्यके रुधिरसे पीपलके समान विषका वृक्ष उत्पन्न हुआ उस वृक्षके निर्य्यास (गोंद) को ऋषि लोगोंने कालकूट कहा है । यह कालकूट अहिक्षेत्र, शृंगबेर पर्वत, कोंकण और मलयाचलमें उत्पन्न होता है ॥ १९६–१९८॥

हालाहलः ।

गोस्तनाभफलो गुच्छस्तालपत्रच्छदस्तथा ॥१९९॥
तेजसा यस्य दह्यन्ते समीपस्था द्रुमादयः ।
असौ हालाहलो ज्ञेयः किष्किंधायां हिमालये२००
दक्षिणाब्धितटे देशे कोंकणेऽपि च जायते ।

हालाहल विषके वृक्षमें ताडके पत्रके समान पत्र होते है । द्राक्षा फलके समान फलोंके गुच्छे लगते हैं । इसके समीपके वृक्ष इसके तेजसे फुक जाते है । इसके वृक्ष किष्किन्धा, हिमालय, दक्षिण समुद्रके किनारेके पहाडों पर और कोंकणमें होते है ॥ १९९ ॥ २०० ॥

ब्रह्मपुत्रः ।

वर्णतः कपिलो यः स्यात्तथा भवति सारतः २०१॥
ब्रह्मपुत्रः स विज्ञेयो जायते मलयाचले ।
ब्राह्मणः पांडुरस्तेषु क्षत्रियो लोहितप्रभः ॥ २०२॥
वैश्यः पीतोऽसितः शूद्रो विष उक्तश्चतुर्विधः ।
रसायने विषं विप्रं क्षत्रियं देहपुष्टये ॥ २०३ ॥
वैश्यं कुष्ठविनाशाय शूद्रं दद्याद्वधाय हि ।
विषं प्राणहरं प्रोक्तं व्यवायि च विकाशि च २०४॥
आग्नेयं वातकफहृद्योगवाहि मदावहम् ।
तदेव युक्तियुक्तं तु प्राणदायि रसायनम् ॥ २०५ ॥
योगवाहि त्रिदोषघ्नं बृंहणं वीर्यवर्द्धनम् ।
ये दुर्गुणा विषेऽशुद्धे ते स्युर्हीना विशोधनात् २०६
तस्माद्विषं प्रयोगेषु शोधयित्वा प्रयोजयेत् ।

ब्रह्मपुत्र विष—कपिल वर्णका होता है और मलयाचलमें उत्पन्न होता है। इसकी चार जातियां होती हैं।उनमें ब्राह्मण पाण्डु वर्णका, क्षत्री लाल वर्णका, वैश्य पीतवर्णका और शूद्र कृष्ण वर्णका होता है ॥ रसायन कर्ममें ब्राह्मण, देहपुष्टिके लिये क्षत्री, कुष्ठ दूर करनेके लिये वैश्य और मारण क्रियामें शूद्र विषका प्रयोग करना चाहिये । (इसको वैद्यलोग संखिया या पाषाण-विष कहते हैं) ॥

विष—प्राणोंको नष्ट करनेवाला, व्यवायी, विकाशी, अग्निगुणसूयिष्ठ, वात कफ नाशक, योगवाही और मदके करनेवाला होता है । वही विष यदि युक्तिपूर्वक प्रयोग किया जाय तो प्राणदायक, रसायन, योगवाही, त्रिदोषनाशक, बृंहण और वीर्य्यवर्द्धक हो जाता है ।

अशुद्ध विषमें जितने दुर्गुण होते हैं वह शोधन करनेसे हीन पड जाते है और गुण रह जाते हैं । इसलिये विषोंको सब योगोंमें शोधन करकेही डालना चाहिये ॥ २०१-२०६ ॥

उपविषाणि ।

अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लांगलीकरवीरकौ ॥ २०७ ॥
गुञ्जाहिफेनो धत्तूरः सप्तोपविषजातयः ॥ २०८ ॥

एषां गुणास्तत्रतत्र द्रष्टव्याः ।

इति धातुवर्गः ।

आकका दूध, थोहरका दूध, लांगली कंद, कनेर, घुंघची, अफीम और धतूरा यह खास उपविष कहे जाते हैं ॥ २०७ ॥ २०८ ॥

इति श्रीवैद्यरत्न पं०—रामप्रसादात्मजविद्यालंकार—शिवशर्म्मवैद्यकृत-शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ धातुवर्गः समाप्तः ॥ ७ ॥

धान्यवर्गः ८.



शालिधान्यं व्रीहिधान्यं शूकधान्यं तृतीयकम् ।
शिंबीधान्यं क्षुद्रधान्यमित्युक्तं धान्यपंचकम् ॥१॥
शालयो रक्तशाल्याद्या व्रीहयः षष्टिकादयः ।
यवादिकं शूकधान्यं मुद्गाद्यं शिंबिधान्यकम् ॥ २ ॥
कंग्वादिकं क्षुद्रधान्यं तृणधान्यं च तत्स्मृतम् ।
कण्डनेन विना शुक्ला हैमंताः शालयः स्मृताः ॥ ३ ॥

शालिधान्य, व्रीहिधान्य, शूकधान्य और क्षुद्रधान्य यह धान्यकी पांच जातियॉं है। इनमें लाल शालि चावलादि शालिधान्य कहे जाते हैं । सट्ठी

आदि व्रीहि कहे जाते हैं। यव आदि शूकधान्य कहे जाते है। मूंग मटर आदि फलियोंसे निकलनेवाले द्विदल शिंबि धान्य कहे जाते हैं। और कंगुनी आदि क्षुद्र धान्य और तृणधान्य कहे जाते है।

जो चावल विना ही छडनेसे श्वेत हो उनको शालिधान्य कहते हैं॥ १–३॥

शालिः।

रक्तशालिः स कलमः पांडुकः शकुनाहृतः।
सुगंधकः कर्दमको महाशालिश्च दूषकः॥ ४॥
पुष्पांडकः पुंडरीकस्तथा महिषमस्तकः।
दीर्घशूकः कांचनको हायनो लोध्रपुष्पकः॥ ५॥
इत्याद्याः शालयस्संति बहवो बहुदेशजाः।
ग्रंथविस्तारभीतेस्ते समास्ता नात्र भाषिताः॥ ६॥

शालिधान्योंकी अनेक जाति हैं जिनमें रक्तशालि, कलम, पांडुक, शकुनाहृत, सुगंधक, कर्दमक, महाशालि, दूषक, पुष्पांडक,पुण्डरीक, महिषमस्तक, दीर्घशूक, कांचन, हायन, लोध्रपुष्पक, आदि शालि धान्य कहे जाते है। चहोडा वासमती आदि शालिधानोंके अंतर्गत है। शालिधानोंकी अनेक देशोंमें उत्पन्न होनेसे अनेक प्रकारकी जातियां होती है। जिनको ग्रंथके वहुत वढ जानेके भयसे यहां पर नही लिखा॥ ४–६॥

शालिधान्यगुणाः।

शालयो मधुराः स्निग्धा बल्या बद्धाल्पवर्चसः।
कपाया लघवो रुच्याः स्वर्या वृष्याश्च बृंहणाः॥७॥
अल्पानिलकफाः शीताः पित्तघ्ना मूत्रलास्तथा।
शालयो दग्धमृज्जाताः कपाया लघुपाकिनः॥ ८॥
सृष्टमूत्रपुरीषाश्च रूक्षाः श्लेष्मापकर्षणाः।
कैदारा वातपित्तघ्ना गुरवः कफशुक्रलाः॥ ९॥

कषाया अल्पवर्चस्का मेध्याश्चैव बलावहाः ।
स्थलजाः स्वादवः पित्तकफघ्ना वातवह्निदाः॥१०॥
किंचित्तिक्ताः कषायाश्च विपाके कटुका अपि ।
वापिता मधुरा वृष्या बल्याः पित्तप्रणाशनाः ११॥
श्लेष्मलाश्चाल्पवर्चस्काः कषाया गुरवो हिमाः ।
वापितेभ्यो गुणैः किंचिद्धीनाः प्रोक्ताअवापिताः॥१२
रोपितास्तु नवा वृष्याः पुराणा लघवः स्मृताः ।
तेभ्यस्तु रोपिता भूयः शीघ्रपाका गुणाधिकाः॥१३॥
छिन्नरूढा हिमा रूक्षा बल्याः पित्तकफापहाः ।
बद्धविट्काःकषायाश्च लघवश्चाल्पतिक्तकाः ॥१४॥

शालिधान्य—मधुर, स्निग्ध, बलकारक, किंचित् मलको बाँधनेवाले, कसैले, हल्के, रुचिकारक, स्वरको ठीक करनेवाले, वीर्यवर्द्धक, शरीरपुष्टिकारक, किंचित् वातकफ प्रधान, शीतल, पित्तनाशक और किंचित् मूत्रके करनेवाले होते है । जो शालिधान्य, दग्ध की हुई मिट्टीमें उत्पन्न होते है वह कसैले, लघुपाकी, मलमूत्रके निकालनेवाले, रूक्ष और कफनाशक होते हैं । जो धान्य पानीकी क्यारियोंमें होते है वह वात पित्त नाशक, भारी, कफ और शुक्रवर्द्धक होते है । कषाय—अल्प मलकारक, बुद्धिवर्द्धक और बलको बढानेवाले है । जो धान्य विना पानीकी क्यारियोंके साधारण खेतोंमें उत्पन्न होते है वह स्वादु, पित्तकफनाशक, वातकारक, अग्निको चैतन्य करनेवाले, किंचित् तिक्त, कषाय, और विपाकमें कटु होते हैं । जो धान एक क्षेत्रसे उखाड कर दूसरे क्षेत्रमें लगाए जाते हैं उनको वापित या आरोपित धान्य कहते हैं । आरोपित धान्य—मधुर, वृष्य, बलकारक, पित्तनाशक, कफवर्द्धक, अल्पमलके करनेवाले, कषाय, भारी, शीतल होते है । जो धान्य उखाड कर नही लगाए जाते, उनको अवापित कहते है । अवापित धान्य वापितोंसे गुणोंमें कुछ हीन होते हैं । जो धान्य रोपित हैं एक जगहसे

उखाड कर दूसरी जगह लगाए जाते है। वह नये तो वीर्यवर्द्धक होते हैं। पुराने होनेसे हल्के हो जाते है। परन्तु सब प्रकारके धान्योंमें रोपित धान्य शीघ्र पाकी और गुणोंमें अधिक होते हैं। जो धान्य एक वार काटलेनेसे फिर उनकी जडोंमें उत्पन्न हो जाते हैं वह रूक्ष, शीतल, बलकारक, पित्त कफनाशक, मलको बाँधनेवाले, हल्के और किंचित् तिक्त होते है ॥७-१४॥

रक्तशालिः ।

रक्तशालिर्वरस्तेषु बल्यो वर्ण्यस्त्रिदोषजित् ।
चक्षुष्यो मूत्रलः स्वर्य्यः शुक्रलस्तृड्ज्वरापहः १५॥
विषव्रणश्वासकासदाहनुद्वह्निपुष्टिदः ।
तस्मादल्पांतरगुणाः शालयो महदादयः ॥ १६ ॥

सब धानोंमें रक्तशालि अच्छे, बलदायक, वर्णकारक, त्रिदोषनाशक, चक्षुष्य, मूत्रवर्द्धक, स्वरकारक, वीर्य्यकारक, प्यास, ज्वर, विष, व्रण, श्वास कास और दाहको मारनेवाला, अग्निदीपक और पुष्टिकारक होते हैं। दूसरे महाशाली इससे गुणोंमें न्यून है ॥ १५ ॥ १६ ॥

व्रीहिधान्यम् ।

वार्षिकाः कंडिताः शुक्का व्रीहयश्चिरपाकिनः ।
कृष्णव्रीहिः पाटलश्च कुक्कुटांडक इत्यपि ॥१७ ॥
शालामुखी जतुमुख इत्याद्या व्रीहयः स्मृताः ।
कुक्कुटांडाकृतिर्व्रीहिः कुक्कुटांडक उच्यते ॥ १८ ॥
कृष्णव्रीहिः स विज्ञेयो यः कृष्णतुषतंडुलः ।
पाटलः पाटलापुष्पवर्णको व्रीहिरुच्यते ॥ १९ ॥
शालामुखः कृष्णशूकः कृष्णतंडुल उच्यते ।
लाक्षावर्णं मुखं यस्य ज्ञेयो जतुमुखस्तु सः॥ २० ॥

व्रीहयः कथिता पाके मधुरा वीर्य्यतो हिताः ।
अल्पाभिष्यंदिनो बद्धवर्चस्काः षष्टिकैः समाः ॥२१॥
कृष्णव्रीहिर्वरस्तेषां तस्मादल्पगुणाः परे ।

वर्षा ऋतुमें पकनेवाले, छडनेमें सफेद और देरमें पकनेवाले व्रीहि धान्य कहलाते है । कृष्णव्रीहि, पाटल, कुक्कुटांडक, शालामुखी, जतुमुख इत्यादि धान्य होते है, मुर्गेके अंडेके आकारवाले कुक्कुटांडक व्रीहि होते है । काले तुषोंवाला चावल कृष्णव्रीहि होता है। पाटलके फूल जैसे रंगवाले पाटल व्रीहि होते है । जिसका शूक और तण्डुल काले हों उसे शालामुख कहते है । जिसके मुखका रंग लाखके सदृश हो उसे जतुमुख कहते है । व्रीहि धान्य पाकमें मधुर, वीर्य्यवर्द्धक, हितकर, अल्पाभिष्यन्दी, मलको बांधनेवाले और साठीके समान होते है । कृष्ण व्रीहि इनमें सबसे श्रेष्ठ है । दूसरे सब अल्प गुणवाले है ॥ १७–२१ ॥

षष्टिकम् ।

गर्भस्था एव ये पाकं यांति ते षष्टिका मताः ॥२२॥
षष्टिकः शतपुष्पश्च प्रमोदकमुकुन्दकौ ।
महाषष्टिक इत्याद्याः षष्टिकाः समुदाहृताः ॥ २३ ॥
एतेऽपि व्रीहयः प्रोक्ता व्रीहिलक्षणदर्शनात् ।
षष्टिका मधुरा शीता लघवो बद्धवर्चसः ॥ २४ ॥
वातपित्तप्रशमनाः शालिभिः सदृशा गुणैः ।
षष्टिका प्रवरा तेषां लघ्वी स्निग्धा त्रिदोषजित् ॥२५
स्वाद्वी मृद्वी ग्राहणी च बलदा ज्वरहारिणी ।
रक्तशालिगुणैस्तुल्यास्ततः स्वल्पगुणाः परे ॥ २६ ॥

जो गर्भस्थ ही पक जाते है उन्हें साठी धान्य कहते है । षष्टिक, शतपुष्प, प्रमोदक, मुकुन्दक और महाषष्टिक इत्यादि साठीके भेद है । व्रीहिके

लक्षण दिखानेसे यह भी व्रीहि कहाते हैं। साठी धान्य-मधुर, शीतल, हल्के, मलरोधक, वातपित्तनाशक और शालिधान्यके समान ही गुणवाले होते है। परन्तु साठी चावल इनमें श्रेष्ठ, हल्के, स्निग्ध, त्रिदोपनाशक, मृदु, स्वादु, ग्राही, बलदायक और ज्वरनाशक है। प्रायः रक्तशालिके समान गुणवाले है। अन्य सब प्रकारके चावल इनसे गुणोंमें न्यून होते है॥ २२-२६॥

यवः।

अनुयवो निःशूकः स्यात्कृष्णारुणवर्णो यवः।
निःशूकोऽपि यवः प्रोक्तो धवलाकृतिको महान् २७
यवस्तु शितशूकः स्यान्निःशूकोऽनुयवः स्मृतः।
तोक्मस्तद्वत्सहरितस्ततः स्वल्पश्च कीर्तितः॥२८॥
यवः कपायो मधुरः शीतलो लेखनो मृदुः।
व्रणेषु तिलवत्पथ्यो रूक्षो मेधाग्निवर्द्धनः॥ २९॥
कटुपाकोऽनभिष्यंदी स्वर्य्यो बलकरो गुरुः
बहुवातमलो वर्णस्थैर्य्यकारी च पिच्छिलः॥३०॥
कण्ठत्वगामयश्लेष्मपित्तमेदःप्रणाशनः।
पीनसश्वासकासोरुस्तंभलोहिततृट्प्रणुत्॥ ३१॥
अस्मादनुयवो न्यूनस्तोक्मो न्यूनतरस्ततः।

अनुयव, निःशूक, कृष्णयव और अरुणयव, यह यवोंकी जातियाँ है। इनमें निःशूक यव श्वेत और बड़े आकार वाले होते है, साधारण यव सित शूकवाले होते है। निःशूक यवोंको अनुयव भी कहते है, जो किंचित् हरे वर्णके और छोटे आकारवाले हैं उनको तोक्म कहते है,। यव-कषाय, मधुर, शीतल, लेखन, मृदु, व्रणोंमें तिलोंके समान पथ्य, रूक्ष, मेधा और

अग्निवर्द्धक, कटुपाकी, अनभिष्यन्दि, स्वरकारक, बलवर्द्धक. भारी. वातप्रधान, बलकारक, वर्ण और स्थैर्य्यके करनेवाले, पिच्छल, तथा कण्ठ और त्वचाके रोग, कफ, पित्त, मेद, पीनस, श्वास, कास, ऊरुस्तंभ, रक्तविकार और प्यासको दूर करते हैं । जवोंसे अनुभव न्यून गुणवाले होते हैं । तोक्म अत्यन्त न्यून गुणवाले होते हैं ॥ २७–३१ ॥

गोधूमः ।

गोधूमः सुमनोऽपि स्यात्त्रिविधः स च कीर्तितः ॥३२॥
महागोधूम इत्याख्यः पश्चाद्देशात्समागतः ।
मधुली तु ततः किंचिदल्पा सा मध्यदेशजा ॥३३॥
निःशूको दीर्घगोधूमः क्वचिन्नंदीमुखाभिधः ।
गोधूमो मधुरः शीतो वातपित्तहरो गुरुः ॥ ३४ ॥
कफशुक्रप्रदो बल्यः स्निग्धः संधानकृत्सरः ।
जीवनो बृंहणो वर्ण्यो वण्र्यो रुच्यः स्थिरत्वकृत् ३५
कफप्रदो नवीनो न तु पुराणः ।
मधूली शीतला स्निग्धा पित्तघ्नी मधुरा लघुः ३६
शुक्रला बृंहिणी पथ्या तद्वन्नंदीमुखः स्मृतः ।

गोधूम, सुमन, मधूली यह गोधूमके नाम हैं । गोधूम तीन प्रकारकी होती है । पश्चिमदेशसे आई हुई बडे आकारवाली गेहूंको महा गोधूम कहते है । मध्यदेशमें उत्पन्न होनेवाली किंचित् छोटे आकारकी मधूली कही जाती है । किसी देशमें शूकरहित लम्बी गोधूमको नन्दीमुख कहते हैं गेहूं (कणक) मधुर, शीत, वातपित्तनाशक, कफ और शुक्रको बढानेवाली, बलकारक, स्निग्ध, संधानकारी, सर, जीवन, बृंहण, वर्णकारक, व्रणोंको भरनेवाली, रुचिकारक तथा आयुवर्द्धक है । नवीन गेहूँ कफवर्द्धक होता है, परन्तु एक वर्षके अनन्तर कफकारक गुण इसमें नहीं रहता है ।

मधूली गेहूं—शीतल, स्निग्ध, पित्तनाशक, मधुर, हल्की, वीर्य्यवर्धक और बृंहण होती है। यही गुण नन्दीमुखमे भी हैं ॥ ३२—३६ ॥

शिंबीगुणाः।

शमीजाःशिंबिजाःशिंबिभवाःसूपाश्च वैदलाः॥३७॥
वैदला मधुरा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः।
वातलाः कफपित्तघ्ना बद्धमूत्रमला हिमाः॥ ३८॥
ऋते मुद्गमसूराभ्यामन्ये त्वाध्मानकारिणः।

शमीज, शिंबिज, शिंबिभव, सूप और वैदल यह दो दालवाले मूंग, माष, चणक, मटरादिकोंके नाम हैं। वैदल—मधुर, रूक्ष, कषाय, कटुपाकी, वातकारक, कफपित्तनाशक, मलमूत्रको बाँधनेवाले और शीतल होते है। इनमें मूंगी और मसूरके सिवाय सब द्विदल पेटमें हवाको भरनेवाले होते है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

मुद्गम्।

मुद्गो रूक्षो लघुर्ग्राही कफपित्तहरो हिमः॥ ३९ ॥
स्वादुरल्पानिलो नेत्र्यो ज्वरघ्नो वनजस्तथा
मुद्गो बहुविधः श्यामो हरितः पीतकस्तथा ॥ ४०॥
श्वेतो रक्तश्च तेषां तु पूर्वः पूर्वो लघुः स्मृतः।
सुश्रुतेन पुनः प्रोक्तो हरितः प्रवरो गुणैः ॥ ४१ ॥
चरकादिभिरप्युक्त एष ह्येव गुणाधिकः।

मूंगी—रूक्ष, लघु, ग्राही, कफ—पित्तनाशक, शीतल, स्वादु, अल्पवात, नेत्रोंको हितकारी और ज्वरनाशक होती है। वनमूंगके भी यही गुण है। मूंगी—श्याम, हरित, पीत, श्वेत और रक्तभेदसे बहुत प्रकारकी होती है। इनमें क्रमपूर्वक पहली पहली विशेष हल्की होती है। किन्तु सुश्रुत और चरक

आदिकोंने हरी मूंगीको विशेष गुणोंवाली कहा है । इसे अंग्रेजीमें Green Gram कहते हैं ॥ ३९–४१ ॥

माषः ।

माषो गुरुः स्वादुपाकः स्निग्धो रुच्योऽनिलापहः ॥ ४२ ॥
स्रंसनस्तर्पणो बल्यः शुक्रलो बृंहणः परः ।
छिन्नमूत्रमलः स्तन्यो मेदःपित्तकफप्रदः ॥ ४३ ॥
गुदकीलार्दितश्वासपक्तिशूलानि नाशयेत् ।
कफपित्तकरो माषः कफपित्तकरं दधि ॥ ४४ ॥
कफपित्तकरा मत्स्या वृंताकं कफपित्तकृत् ।

माष (उडद) गुरु, स्वादुपाकि, स्निग्ध, रुचिकारक, वातनाशक, स्रंसन, तर्पण, वलकारक, वीर्य्यवर्धक और शरीरको मोटा वनानेवाले, मल मूत्रको निकालनेवाले, स्तनोंमें दूध उत्पन्न करनेवाले, मेद, पित्त और कफको बढाने-वाले तथा अर्श, श्वास और परिणामशूलको दूर करते हैं । माष, दधी, मछली और वैगन यह चारों ही पृथक् सेवन करनेसे, या मिलाकर सेवन करनेसे पित्त और कफको विशेष रूपसे वढाते हैं । इसे अंग्रेजीमें Kidney Bean कहते है ॥ ४२–४४ ॥

राजमाषः ।

राजमाषो महामाषश्चपलश्च बलः स्मृतः ॥ ४५ ॥
राजमाषो गुरुः स्वादुस्तुवरस्तर्पणः सरः ।
रूक्षो वातकरो रुच्यः स्तन्यो भूरिमलप्रदः ॥ ४६ ॥
श्वेतो रक्तस्तथा कृष्णस्त्रिविधः स प्रकीर्तितः ।
यो महांस्तेषु भवति स एवोक्तो गुणाधिकः ॥ ४७ ॥

राजमाष, महामाष, चपल और वल यह राजमाषके नाम है । इसे हिन्दी में लोभिया खांगण भी कहते है । इसका अंग्रेजी नाम Chinessp Dolicos

है । राजमाष–गुरु, स्वादु, कसैला, तर्पण, सर, रूक्ष, वातकर, रुचिकारक, स्तन्यवर्द्धक, मलको बढानेवाला होता है । राजमाष–श्वेत, लाल और काले वर्णभेदसे तीन प्रकारके हैं । इनमें जो आकारमें सबसे बडा है वही गुणमें भी अधिक कहा जाता है ॥ ४५–४७ ॥

निष्पावः ।

निष्पावो राजशिंबी स्याद्वेल्लकः श्वेतशिंबकः ।
निष्पावो मधुरो रूक्षो विपाकेऽम्लोगुरुःसरः ॥४८॥
कषायः स्तन्यपित्तास्रमूत्रवातविबंधकृत् ।
विदाह्युष्णो विषश्लेष्मशोथहृच्छुक्रनाशनः ॥४९॥

निष्पाव, राजशिंबी, वेल्लक, श्वेतशिवक यह बडे मटरोंके नाम है । मटर–मधुर, रूक्ष, विपाकमें अम्ल, गुरु, दस्तावर, कषाय, स्तन्यवर्द्धक, पित्त, रक्त, मूत्र, वात और विबन्धके करनेवाले, विदाहि, उष्ण, विष, कफ, शोथको हरनेवाले और वीर्य्यको नष्ट करनवाले हैं ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

मकुष्ठम् ।

मकुष्ठो वनमुद्गः स्यान्मुकुष्टकमपुष्टकौ ।
मकुष्ठो वातलो ग्राही कफपित्तहरो लघुः ॥ ५० ॥
वांतिजिन्मधुरः पाके कृमिकृज्ज्वरनाशनः ।

मकुष्ठ, वनमुद्ग, मुकुष्ठक, अपुष्टक यह मोठके नाम है । इसे अंग्रेजीमें Aconite Leaved KidneyBean कहते हैं । मोठ–वातकारक,ग्राही,कफ पित्तनाशक,हलके,वमनहर,पाकमें मधुर, कृमिकारक और ज्वरनाशक है ॥५०॥

मसूरः ।

मांगल्यको मसूरः स्यान्मांगल्या च मसूरिका ५१॥

मसूरो मधुरः पाके संग्राही शीतलो मधुः ।
कफपित्तास्रजिद्रूक्षो वातलो ज्वरनाशनः ॥ ५२ ॥

मांगल्यक, मसूर, मांगल्य, मसूरिका यह मसूरके नाम हैं । इसका अंग्रेजी नाम Lentin है मसूर–पाकमें मधुर, संग्राही, शीतल, हलका, कफ, पित्त और रक्तनाशक, रूक्ष, वातकारक और ज्वरनाशक है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

आढकी ।

आढकी तुवरी चापि सा प्रोक्ताशनपुष्पिका ।
आढकी तुवरा रूक्षा मधुरा शीतला लघुः ॥५३॥
ग्राहिणी वातजननी वर्ण्या पित्तकफास्रजित् ।

आढकी, तुवरी, शतपुष्पिका यह अरहर (हरहर) के नाम है । इसका अंग्रेजी नाम Pigeon Pea है। आढकी–कसैली, रूक्ष, मधुर, शीतल, हल्की, ग्राही, वातकारक, वर्णकारक, पित्त, कफ और रक्तविकारको नाश करनेवाली है ॥ ५३ ॥

चणकः ।

चणको हरिमंथः स्यात्सकलप्रिय इत्यपि ॥ ५४ ॥
चणकः शीतलो रूक्षः पित्तरक्तकफापहः ।
लघुः कषायो विष्टंभी वातलो ज्वरनाशनः ॥ ५५ ॥
स चांगारेण संभृष्टस्तैलभृष्टश्च तद्गुणः ।
आर्द्रभृष्टो बलकरो रोचनश्च प्रकीर्तितः ॥ ५६ ॥
शुष्कभृष्टोऽतिरूक्षः स्याद्वातपित्तप्रकोपनः ।
स्विन्नः पित्तकफं हन्यात्सूपः क्षोभकरो मतः ॥५७॥
आर्द्रोऽतिकोमलो रुच्यः पित्तशुक्रहरो हितः ।
कषायो वातलो ग्राही कफपित्तहरो लघुः ॥ ५८ ॥

चणक, हरिमंथ, सकलप्रिय यह चनेके नाम है । इसे अंग्रेजीमें Gram

कहते हैं । चना—शीतल, रूक्ष, पित्त, रक्तविकार और कफनाशक, हल्का, कषाय, विष्टंभी, वातकारक, ज्वरनाशक है । अग्नि या तेलमें भुने हुए चनोंके भी यही गुण हैं । गीले भुने हुए चने बलकारक और रुचिकारक हैं । सूखे भूने हुए चने अतिरूक्ष, वात पित्तको कोप करनेवाले होते हैं । छौंके हुए चने पित्त और कफको नाश करते हैं । चनेका सूप क्षोभकारक है । गीले चने—कोमल, रुचिकारक, पित्त और शुक्रनाशक, हितकारक, कसैला, वातकारक, ग्राही, कफ पित्तनाशक और हल्के होते हैं ॥ ५४—५८ ॥

कलायः ।

कलायो वर्तुलः प्रोक्तः सतीनश्च हरेणुकः ।
कलायो मधुरः स्वादुः पाके रूक्षश्च शीतलः ॥५९॥

कलाय, वर्तुल, सतीन, हरेणुक यह मटरके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Field Pea कहते हैं । मटर—मधुर, मधुरपाकी, रूखा तथा शीतल है ॥५९

त्रिपुटः ।

त्रिपुटः कंटकोऽपि स्यात्कथ्यंते तद्गुणा अमी ।
त्रिपुटो मधुरस्तिक्तस्तुवरो रूक्षणो भृशम् ॥ ६० ॥
कफपित्तहरो रुच्यो ग्राहको शीतलस्तथा ।
किंतु खंजत्वपंगुत्वकारी वातातिकोपनः ॥ ६१ ॥

त्रिपुट, और कंटक यह त्रिपुटके नाम हैं, अंग्रेजीमें इसे Chickiling Vetch कहते हैं । त्रिपुट—मधुर, तिक्त, कषाय, रूक्ष, उष्ण, कफपित्तनाशक, रुचिकारक और शीतल है । किन्तु खंजत्व और लंगडापनको करनेवाली तथा वातको अत्यन्त कुपित करनेवाली है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

कुलत्थः ।

कुलत्थिका कुलत्थश्च कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
कुलत्थः कटुकः पाके कषायः पित्तरक्तकृत् ॥ ६२॥

लघुर्विदाही वीर्योष्णः श्वासकासकफानिलान् ।
हंति हिक्काश्मरीशुक्रदाहानाहान्सपीनसान् ॥ ६२ ॥
स्वेदसंग्राहको मेदोज्वरक्रिमिहरः परः ।

कुलत्थिका और कुलत्थ यह कुलथीके नाम हैं । इसे अंग्रेजीमें Two flowered Dolicos कहते है । कुलथी–पाकमें कटु, कषाय, पित्तरक्तको करनेवाली, हल्की, विदाही, उष्ण. वीर्य्य, श्वास, कास. कफ और वायुको हरनेवाली तथा हिचकी, पथरी, शुक्र, दाह, अफारा. पीनस, मेद, ज्वर और कृमियोको नष्ट करती है । और पसीनेको रोकनेवाली है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

तिलः ।

तिलः कृष्णः सितो रक्तः स वन्योऽल्पतिलःस्मृतः ६४
तिलो रसे कटुस्तिक्तो मधुरस्तुवरो गुरुः ।
विपाके कटुकः स्वादुः स्निग्धोष्णःकफपित्तनुत् ६५
बल्यः केश्यो हिमस्पर्शस्त्वच्यः स्तन्यो व्रणे हितः ।
दंत्योऽल्पमूत्रकृद्ग्राही वातघ्नोऽग्निमतिप्रदः ॥ ६६ ॥
कृष्णः श्रेष्ठतमस्तेषु शुक्लो वै मध्यमः स्मृतः ।
अन्यो हीनतरः प्रोक्तस्तज्ज्ञै रक्तादिकस्तिलः ॥ ६७ ॥

तिल–काले, सफेद और लाल होते है । जंगलमें होनेवाले तिलोंको अल्पतिल कहते है । तिल–रसमें कटु, तिक्त, मधुर, कसैले और भारी होते है । विपाकमें कटु तथा मधुर, स्निग्ध, उष्ण. कफपित्तनाशक, बलकारी, केशवर्द्धक, शीतल, त्वचाको उत्तम बनानेवाले, स्तन्यवर्द्धक, व्रणमें हितकारी, दांतोंको मजबूत बनानेवाले, मूत्रको कम करनेवाले, किंचित् ग्राही, वातनाशक, अग्नि और बुद्धिको वढानेवाले होते हैं । इनमें काले तिल अत्यन्त श्रेष्ठ,सफेद मध्यम और अन्य लाल आदि तिल गुणोंमें हीन होते है ॥ ६४–६७ ॥

अतसी।

अतसी नीलपुष्पं च पार्वती स्यादुमा क्षुमा।
अतसी मधुरा तिक्ता स्निग्धा पाके कटुर्गुरुः ॥६८॥
अतसी शुक्रवातघ्नी कफपित्तविनाशिनी।

अतसी, नीलपुष्पी, पार्वती, उमा और क्षुमा यह अलसीके नाम है। अलसी मधुर, तिक्त, स्निग्ध, पाकमें कटु, भारी, शुक्रनाशक, वात, कफ और पित्तको नाश करनेवाली है। इसका अंग्रेजी नाम Linseed है॥ ६८॥

तुवरी।

तुवरी ग्राहिणी प्रोक्ता लघ्वी कफविषास्रजित् ॥६९
तीक्ष्णोष्णा वह्निदा कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमिप्रणुत्।

तुवरी—ग्राही, हलकी, कफ विपरक्तको जीतनेवाली, तीक्ष्ण, उष्ण, अग्निवर्द्धक तथा खाज, कुष्ठ, कोठ और कृमियोंको नष्ट करनेवाली है। इसको तारामीरा भी कहते है॥ ६९॥

गौरसर्षपः।

सर्षपः कटुकः स्नेहस्तंतुभश्च कदम्बकः ॥ ७० ॥
गौरस्तु सर्षपः प्राज्ञैः सिद्धार्थ इति कथ्यते।
सर्षपस्तु रसे पाके कटुःस्निग्धः सतिक्तकः॥ ७१ ॥
तीक्ष्णोष्णः कफवातघ्नो रक्तपित्ताग्निवर्द्धनः।
रक्षोहरो जयेत्कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमिग्रहान् ॥ ७२ ॥
यथा रक्तस्तथा गौरः किंतु गौरो वरो मतः।

सर्षप—कटुक, स्नेह, तंतुभ और कदंबक यह सरसोंके नाम है। पीली सरसोंको सिद्धार्थ भी कहते है। इसका अंग्रेजीमें नाम SinaPis alba हैं। सरसों रस और पाकमें कटु, स्निग्ध, तीक्ष्ण, उष्ण, कफ वातनाशक, रक्त

पित्तवर्द्धक, अग्निवर्धक, राक्षसोंके भयको दूर करनेवाली तथा कण्डू, कुष्ठ, कोठ, कृमि और ग्रहबाधाको दूर करती है ।

श्वेत सरसोंमें भी रक्त सरसोंके समान ही गुण हैं । किन्तु श्वेत सरसों श्रेष्ठ मानी जाती हैं ॥ ७०-७२ ॥

राजिका ।

राजी तु राजिका तीक्ष्णगन्धा क्षुज्जनकासुरी॥७३॥
क्षवः क्षुधाभिजनकः कृष्णिका कृष्णसर्षपः ।
राजिका कफपित्तघ्नी तीक्ष्णोष्णा रक्तपित्तकृत् ७४
किंचिद्रूक्षाग्निदा कंडूकुष्ठकोष्ठक्रिमीन् हरेत् ।
अतितीक्ष्णा विशेषेण तद्वत्कृष्णापि राजिका॥७५॥
तथा हिमो गुरुर्ग्राही तत्पुष्पं प्रदरास्रजित् ।

राजी, राजिका, तीक्ष्णगन्धा, क्षुज्जनक, आसुरी, क्षव, क्षुधाभिजनक, कृष्णिका और कृष्णसर्षप, यह राईके नाम है । इसका अंग्रेजी नाम Rustasd suo है । राई—कफपित्तनाशक, तीक्ष्ण, उष्ण, रक्तपित्तकारक, किंचित् रूक्ष तथा कण्डू, कुष्ठ, कोठ और कृमियोंको हरनेवाली है । काली राई विशेष रूपसे तीक्ष्ण होती है । तथा उसके फूल—शीतल, भारी और ग्राही है । रक्त-प्रदरको जीतनेवाले है ॥ ७३-७५ ॥

क्षुद्रधान्यम् ।

क्षुद्रधान्यं कुधान्यं च तृणधान्यमिति स्मृतम् ७६॥
क्षुद्रधान्यमनुष्णं स्यात्कषायं लघु लेखनम् ।
मधुरं कटुकं पाके रूक्षं च क्लेदशोषकम् ॥ ७७ ॥
वातकृद्बद्धविट्कं च पित्तरक्तकफापहम् ।

क्षुद्रधान्य, कुधान्य, तृणधान्य यह क्षुद्रधान्योंके नाम हैं । क्षुद्रधान्य—अनुष्ण, कषाय, लघु, लेखन, मधुर, पाकमें कटु, रूक्ष, क्लेदशोषक,

वातकारक, मलको बांधनेवाले तथा पित्त, रक्त और कफको हरनेवाले है ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

कंगुः।

स्त्रियां कंगुप्रियंगू द्वे कृष्णरक्ता सिता तथा ॥७८॥
पीता चतुर्विधा कंगुस्तासां पीता वरा स्मृता।
कंगुस्तु भग्नसंधानवातकृद्बृंहणी गुरुः ॥ ७९ ॥
रूक्षा श्लेष्महराऽतीव वाजिनां गुणकृद् भृशम्।

कंगु और प्रियंगु यह दोनों शब्द स्त्रीलिङ्गवाचक है। कंगुनी—काली, लाल, सफेद और पीली इन भेदोंसे चार प्रकारकी होती है। इनमें पीली कंगुनी श्रेष्ठ मानी जाती है। कंगुनी भग्नसंधानकारक (टूटे हुएको जोडने-वाली) वातवर्द्धक, बृंहणी, भारी, रूक्ष, कफनाशक और घोडोंको अत्यन्त गुण करनेवाली होती है ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

चीनकः।

चीनकः कंगुभेदोस्ति स ज्ञेयः कंगुवद् गुणैः ॥८०॥

कंगुनीका भेद चीनक (चीना) होता है। इसका अंग्रेजी नाम illet है। यह भी गुणोंमें कंगुनीके समान है ॥ ८० ॥

श्यामाकः।

श्यामाकः शोषणो रूक्षो वातलः कफपित्तहृत्॥८१॥

श्यामक (सौफके चावल) शोषण, रूक्ष, वातकारक और कफ-पित्तनाशक है ॥ ८१ ॥

कोद्रवः।

कोद्रवः कोरदूषः स्यादुद्दालो वनकोद्रवः।
कोद्रवो वातलो ग्राही हिमः पित्तकफापहः।
उद्दालस्तु भवेदुष्णो ग्राही वातकरो भृशम् ॥ ८२॥

कोद्रव और कोरदूष यह कोद्देके नाम है । वनकोद्रवको उद्दाल कहते

है । कोद्रव—वातकारक, ग्राही, शीतल और पित्तकफनाशक है । उद्दाल उष्ण, ग्राही और वातकारक होता है ॥ ८२ ॥

शरबीजम् ।

चारुकः शरबीजं स्यात्कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
चारुको मधुरो रूक्षो रक्तपित्तकफापहः ॥ ८३ ॥
शीतो लघुरवृष्यश्च कषायो वातकोपनः ।

चारुक, शरबीज यह सरपतेके बीजोंके नाम है । चारुक—मधुर, रूक्ष, रक्तपित्त-नाशक, कफघ्न, शीतल, हलका, वीर्य्यनाशक, कषाय और वातकोपकारक होताहै ८३

वंशबीजम् ।

यवा वंशभवा रूक्षाः कषायाः कटुपाकिनः ॥८४॥
बद्धमूत्राः कफघ्नाश्च वातपित्तकराः सराः ।

बांसके जौ—रूखे, कसैले, कटुपाकी, मूत्रघ्न, कफनाशक, वातपित्तकारक और दस्तावर होते है ॥ ८४ ॥

कुसुम्भबीजम् ।

कुसुम्भबीजं वरटा सैव प्रोक्ता वराटिका ॥ ८५ ॥
वरटा मधुरा स्निग्धा रक्तपित्तकफापहा ।
कषाया शीतला गुर्वी स्यादवृष्यानिलापहा ॥८६॥

कुसुंभबीज, वरट, वराटिका और करड यह कुसुंभके बीजोंका नाम है । करड—मधुर, स्निग्ध, रक्तपित्तनाशक, कफघ्न, कषाय, शीतल, भारी, अवृष्य और वायुको हरनेवाले होते है ॥ ८५ ॥ ८६ ॥

गवेधुः ।

गवेधुका तु विद्वद्भिर्गवेधुः कथिता स्त्रियाम् ।
गवेधुः कटुका स्वाद्वी कार्श्यकृत्कफनाशिनी ॥८७॥

गवेधुका—स्त्रीलिंगवाचक है । गवेधु—कटु, स्वादु, कृश करनेवाली और कफनाशक है ॥ ८७ ॥

नीवारः ।

प्रसाधिका तु नीवारस्तृणान्नमिति च स्मृतम् ।
नीवारः शीतलो ग्राही पित्तघ्नः कफवातकृत् ॥८८॥

प्रसाधिका, नीवार और तृणान्न यह नीवारके नाम है । नीवार—शीतल, ग्राही, पित्तनाशक और कफवातकारक है ॥ ८८ ॥

यवनालः ।

यवनालो हिमः स्वादुर्लोहितः श्लेष्मपित्तजित् ।
अवृष्यस्तुवरो रूक्षः क्लेदकृत्कथितो लघुः ॥८९ ॥

यवनाल घासके बीज—शीतल,स्वादु, रक्त, कफ और पित्तको जीतनेवाले, वीर्य्यशोषक, कसैले, रूक्ष, हल्के और क्लेदकारक है ॥ ८९ ॥

शणः ।

शणः प्रोक्तो मातुलानी जन्तुतंतुर्महाशना ।
शणो हिमो लघुर्ग्राही तत्पुष्पं प्रदरास्रजित् ॥९०॥

शण, मातुलानी, जंतुतंतु, महाशना यह सनके नाम हैं । शणबीज-शीतल, हलके और ग्राही होते हैं । इसके पुष्प रक्तप्रदरको दूर करते है ॥९०॥

नवधान्यादिः ।

धान्यं सर्वं नवं स्वादु गुरु श्लेष्मकरं स्मृतम् ।
तत्तु वर्षोषितं पथ्यं यतो लघुतरं हितम् ॥ ९१ ॥
वर्षोषितं सर्वधान्यं गौरवं परिमुंचति ।
न तु त्यजति वीर्य्यं स्वं क्रमान्मुंचत्यतः परम्॥९२
एतेषु यवगोधूमतिलमाषा नवा हिताः ।
पुराणा विरसा रूक्षा न तथा गुणकारिणः ॥९३ ॥

इति धान्यवर्गः ।

सब प्रकारके नवीन धान्य—स्वादु, भारी और कफकारक होते हैं । वही धान्य एक वर्षके अनन्तर हलके, श्रेष्ठ और पथ्य हो जाते है क्यों कि एक

वर्षके बाद सब धान अपने भारीपनको त्याग देते हैं, परन्तु अपने वीर्यको नहीं छोड़ते । दूसरे वर्षके अनंतर इनके विर्य्यादि भी कम होने लग जाते हैं । इनमें बल पुष्टिके लिये यव, गेहूं, तिल और माषादि नवीन ही हितकारक होते हैं । पुराने होने पर रूक्ष और विरस होनेसे वैसे गुणकारी नहीं रहते ॥ ९१-९३ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज-विद्यालंकारशिवशर्म-
वैद्यशास्त्रिकृत-शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-
निघण्टौ धान्यवर्गः समाप्तः ॥ ८ ॥

शाकवर्गः ९.

पत्रं पुष्पं फलं नालं कंदं संस्वेदजं तथा ।
शाकं षड्विधमुद्दिष्टं गुरु विद्याद्यथोत्तरम् ॥ १ ॥
प्रायः शाकानि सर्वाणि विष्टंभीनि गुरूणि च ।
रूक्षाणि बहुवर्चांसि सृष्टविण्मारुतानि च ॥ २ ॥
शाकं भिनत्ति वपुरस्थि निहंति नेत्रं,
वर्णं विनाशयति रक्तमथापि शुक्रम् ।
प्रज्ञाक्षयं च कुरुते पलितं च नूनं,
हंति स्मृतिं गतिमिति प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥ ३ ॥
शाकेषु सर्वेषु वसंति रोगास्ते हेतवो देहविनाशनाय ।
तस्माद्बुधःशाकविवर्जनं तु कुर्य्यात्तथाम्लेषुसएवदोषः॥

पत्र, फूल, फल, नाल, कंद और संस्वेदज इन भेदोंसे शाक छः प्रकारके कहे हैं । इनमें पहलेसे दूसरा उत्तरोत्तर क्रमसे भारी माना जाता है । प्रायः

सब शाक विष्टंभी, भारी, रूक्ष, बहुत मलके कारनेवाले, मलमूत्रको पैदा करनेवाले होते हैं। शाक प्रायः शरीर और अस्थिको भेदन करनेवाले, नेत्रोंकी ज्योति कम करनेवाले, वर्ण, रक्त और वीर्य्यको हरनेवाले, बुद्धिका क्षय करनेवाले, बालोंको सफेद बनानेवाले, स्मरणशक्तिको बिगाड़नेवाले और गतिको हनन करनेवाले होते हैं। प्रायः सब पत्रशाकोंमें देहनाशक रोग होते है और खटाईमें भी यही दोष है। इसलिये बुद्धिमानोंको शाक और खटाई कम खाना चाहिये। यह उपरोक्त दोष सामान्यरूपसे कह गये है परन्तु पत्र फल और कंदआदि शाकोंमें विशेष गुण भी पाए जाते हैं। इतने दोष प्रायः सब शाकोंमें नही होते, यह सामान्य वाक्य विशेष गुणोंके बाधक नही है ॥ १-४ ॥

एतानि शाकनिंदकवचनानि सामान्यानि ।

पत्रशाकं वास्तुकद्वयम् ।

वास्तूकं वास्तुकं च स्यात्क्षारपत्रं च शाकराट् ।
तदेव तु बृहत्पत्रं रक्तं स्याद्गौडवास्तुकम् ॥ ५ ॥
प्रायशो यवमध्ये स्याद्यवशाकमतः स्मृतम् ।
वास्तूकद्वितयं स्वादु क्षारं पाके कटूदितम् ॥ ६ ॥
दीपनं पाचनं रुच्यं लघु शुक्रबलप्रदम् ।
सरं प्लीहाऽस्रपित्तार्शःकृमिदोषत्रयापहम् ॥ ७ ॥

वास्तूक, वास्तुक, क्षारपत्र और शाकराट् यह बथुएके नाम है। लाल रंगका बडे पत्तोंवाला बाथू गौड़वास्तुक कहा जाता है। उसे अंग्रेजीमें white Goose foot अथवा purple goose foot कहते हैं।

बाथू-प्रायः यवोंके खेतके मध्यमें होता है । इसलिये इसको यवशाक भी कहते हैं। दोनों बाथू-स्वादु, खारे, पाकमें कटु, दीपन, पाचन, रुचिकारक, हल्के, वीर्य और बलको देनेवाले, सारक तथा तिल्ली, रक्तपित्त, अर्श, कृमि और त्रिदोषको हरनेवाले हैं ॥ ५-७ ॥

पोतकी ।

पोतक्युपोदिका सा तु मालवाऽमृतवल्लरी ।
पोतकी शीतला स्निग्धा श्लेष्मला वातपित्तनुत् ॥ ८ ॥
अकंठ्या पिच्छिला निद्राशुक्रदा रक्तपित्तजित् ।
बलदा रुचिकृत्पथ्या बृंहणी तृप्तिकारिणी ॥ ९ ॥

पोतकी, उपोदिका, मालवा, अमृतवल्लरी यह पोईके शाकके नाम हैं। इसका अंग्रेजीमें नाम Red malabar Night Ghods है

पोई—शीतल, स्निग्ध, कफकारक, वात पित्तनाशक, स्वरको बिगाड़नेवाली, पिच्छल, निद्राजनक, वीर्यवर्धक, रक्तपित्तनाशक,बलवर्धक, रुचिकारक, पथ्य, बृंहण और तृप्तिकारक है ॥ ८ ॥ ९ ॥

श्वेतरक्तमारिषः ।

मारिषो वाष्पिको मर्षः श्वेतो रक्तश्च स स्मृतः ।
मारिषो मधुरः शीतो विष्टंभी पित्तनुद्गुरुः ॥ १० ॥
वातश्लेष्मकरो रक्तपित्तनुद्विषमाग्निजित् ।
रक्तमर्षो गुरुर्नाति स क्षारो मधुरः सरः ॥ ११ ॥
श्लेष्मलः कटुकः पाके स्वल्पदोष उदीरितः ।

मारिष, वाष्पिक और मर्श यह मर्सेके सागके नाम है । इसको शलिका साग भी कहते हैं। यह श्वेत और रक्त भेदसे दो प्रकारका होता है। मारिष शाक—मधुर, शीतल, विष्टंभी, पित्तनाशक, भारी, वात कफकारक, रक्तपित्तनाशक, अग्निवैषम्यको दूर करनेवाला होता है। लाल रंगका माहिष—बहुत भारी नहीं है। खारा, मधुर, सर, कफकारक, पाकमें कटु और अल्प दोषवाला कहा है ॥ १० ॥ ११ ॥

तंडुलीयः ।

तंडुलीयो मेघनादः कांडेरस्तंडुलेरकः ॥ १२ ॥
भंडीरस्तंडुलीबीजो विषघ्नश्चाल्पमारिषः ।

तण्डुलीयो लघुः शीतो रूक्षःपित्तकफास्रजित्॥१३॥
सृष्टमूत्रमलो रुच्यो दीपनो विषहारकः।
पानीयतंडुलीयो यस्तत्कंचटमुदाहृतम् ॥ १४ ॥
कचटं तिक्तकं रक्तपित्तानिलहरं लघु।

तंडुलीय, मेघनाद, कांडेर, तण्डुलेरक, मंडीर, तण्डुलीबीज, अल्पमारिष यह चौलाईके नाम है। इसका अंग्रेजी नाम Hermaphrodite Amaranth है। चौलाई—हल्की, शीतल, रूक्ष,पित्त, कफ और रक्तविकारको जीतनेवाली, मूत्र मलको निकालनेवाली, रुचिकारक, दीपन और विषहर है। पानीयतंडुल और कचट यह जल चौलाईके नाम है। कचट—तिक्त, हल्की तथा रक्तपित्त और वातको हरनेवाली है॥ १२–१४॥

पालिक्या।

पालिक्या वास्तुकाकारा छदिका चीरितच्छदा १५
पालिक्या वातला शीताश्लेष्मला भेदनी गुरुः।
विष्टंभनी मदश्वासपित्तरक्तकफापहा ॥ १६ ॥

पालिक्या, वास्तुकाकारा, छादिका, चीरितच्छदा यह पालकके नाम है। इसे अंग्रेजीमें Spinase कहते है। पालक—शीतल, वात कफकारक, चिकने स्वभाववाली, भेदनी, भारी, विष्टंभी तथा मद, श्वास, पित्त, रक्त—विकार और कफनाशक है॥ १५॥ १६॥

कालशाकम्।

नाडीकं कालशाकं च श्राद्धशाकं च कालकम्।
कालशाकं सरं रुच्यं वातकृत्कफशोथहृत् ॥१७॥
बल्यं रुचिकरं मेध्यं रक्तपित्तहरं हिमम्।

नाडीक, कालशाक, श्राद्धशाक और कालका यह नाडीके नाम हैं। नाडीक—सारक, रुचिकारक, वातकारक, कफ और सूजननाशक, बलकारक, रुचिकारक, मेध्य, रक्तपित्तनाशक और शीतल है॥ १७॥

पट्टशाकः।

पट्टशाकस्तु नाडीको नाडीशाकश्च स स्मृतः ॥१८
नाडीको रक्तपित्तघ्नो विष्टंभी वातकोपनः ।

पट्टशाक, नाडीक और नाडीशाक यह पट्टशाकके नाम है । पट्टशाक रक्तपित्तनाशक, विष्टभी और वातके कोपको करनेवाला है ॥ १८ ॥

कलंबी ।

कलंबी शतपर्वा च कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ १९ ॥
कलंबी शुक्रदा प्रोक्ता मधुरा स्तन्यकारिणी ।

कलंबी, शतपर्वा यह कलमी शाकके नाम है । कलंबी–वीर्य्यवर्द्धक, मधुर और स्तन्यकारक है ॥ १९ ॥

लोनी (णी) बृहल्लोनी च ।

लोणा लोणी च कथिता बृहल्लोणी तु घोटिका२०
लोणी रूक्षा स्मृता गुर्वी वातश्लेष्महरी पटुः ।
अर्शोघ्नी दीपनी चाम्ला मन्दाग्निविषनाशिनी २१
घोटिकाम्ला सरा चोष्णा वातकृत्कफपित्तहृत् ।
वाग्दोषव्रणगुल्मघ्नी श्वासकासप्रमेहनुत् ॥ २२॥
शोथे लोचनरोगे च हिता तज्ज्ञैरुदाहृता ।

लोणा और लोणी यह नोनियेके तथा बृहल्लोणी और घोटिका यह बडे नोनियेके नाम है । नोनिया–रूक्ष, भारी, वातकफनाशक, खारी, अर्शघ्न, दीपनी, अम्ल, मंदाग्नि तथा विषनाशक है । घोटिका–अम्ल, दस्तावर, उष्ण, वातकारक, कफपित्तनाशक तथा वाणिके दोष, गुल्म, व्रण, श्वास, कास, प्रमेह, शोथको और नेत्ररोगको दूर करनेवाली है ॥ २०–२२ ॥

चांगेरी ।

चांगेरी चुक्रिका दंतशठांबष्ठाम्ललोणिका ॥ २३ ॥

अश्मंतकस्तु शफरी कुशला चाम्लपत्रिका।
चांगेरी दीपनी रुच्या रूक्षोष्णा कफवातनुत् २४ ॥
पित्तलाम्ला ग्रहण्यर्शःकुष्ठातीसारनाशिनी।

चांगेरी, चुक्रिका, दंतशठा, अम्बष्ठा, अम्ललोणिका, अश्मंतक, शफरी, कुशला और अम्लपत्रिका यह चांगेरीके नाम हैं। हिंदीमें खटमिट्ठी और चांगेरी भी कहते हैं। अंग्रेजीमें इसे Wood Sorrel कहते है। चांगेरी-दीपनकर्ता, रुचिकारक, रूक्ष, उष्ण, कफवातनाशक, खट्टी तथा ग्रहणी, ववासीर, कुष्ठ और अतिसारको नाश करती है ॥ २३ ॥ २४ ॥

चुक्रा।

चुक्रिका स्याच्चु पत्राम्ला रोचनी शतवेधनी ॥२५॥
चुक्रा त्वम्लतरा स्वाद्वी वातघ्नी कफपित्तकृत्।
रुच्या लघुतरा पाके वृंताकेनातिरोचनी ॥ २६ ॥

चुक्रिका, पत्राम्ला, रोचनी और शतवेधनी यह खट्टी चूकके नाम है। चूक—अत्यन्त खट्टी, मधुर, वातनाशक, कफपित्तकारक, रुचिकारक और लघुपाकी होती है। इसकी डंडियां विशेप रुचिकारक नही होती॥२५॥२६॥

चिंचुः।

चिंचुश्चुचूश्चंचुकी च दीर्घपत्रा सतिक्तका।
चुञ्चूः शीता सरा रुच्या स्वाद्वी दोषत्रयापहा२७॥
धातुपुष्टकरी बल्या मेध्या पिच्छिलिका स्मृता।

चिचु, चुचु, चञ्चुकी, दीर्घपत्रा, सातिक्तका यह चंचुके नाम है। चंचुकी शाक—शीतल, दस्तावर, रुचिकारक, मधुर, त्रिदोषनाशक, धातुपुष्टकारी, वलवर्धक, बुद्धिवर्धक और पिच्छल होता है ॥ २७ ॥

हिलमोचका।

ब्रह्मी शंखदराचारी ब्राह्मी च हिलमोचिका ॥२८॥
शोथं कुष्ठं कफं पित्तं हरते हिलमोचिका।

ब्रह्मी, शंखदरा, आचारी, ब्राह्मी और हिलमोचिका यह हुलहुलके नाम हैं। हुलहुल–शोथ, कुष्ठ, कफ और पित्तको हरनेवाली है ॥ २८ ॥

शितिवारः।

शितिवारः शितिवरः स्वस्तिकः सुनिषण्णकः २९ ॥
श्रीवीरकः सूचीपत्रः पर्णकः कुक्कुटः शिखी।
चांगेरीसदृशः पत्रैश्चतुर्दल इतीरितः ॥ ३० ॥
शाको जलान्विते देशे चतुष्पत्रीति चोच्यते।
सुनिषण्णो हिमो ग्राही मोहदोषत्रयापहा ॥ ३१ ॥
अविदाही लघुः स्वादुः कषायो रूक्षदीपनः ॥३२॥
वृष्यो रुच्यो ज्वरश्वासमेहकुष्ठभ्रमप्रणुत्।

शितिवार, शितिवर, स्वस्तिक, सुनिषण्णक, श्रीवीरक, सूचीपत्र, पर्णक, कुक्कुट और शिखी यह शितिवारके नाम है। इसके चांगेरीके सनान चार पत्र होते हैं। इसको चौपतिया और शिरियारी भी कहते है। यह जलवाले स्थानमें होता है ॥

सुनिषण्णक (चौपतिया) शीतल, ग्राही, मोह और त्रिदोषको हरनेवाला, अविदाही, हलका, मधुर, कषाय, रूक्ष, दीपन, वृष्य, रुचिकारक तथा ज्वर, श्वास, प्रमेह, कुष्ठ और भ्रमको दूर करता है ॥ २९–३२ ॥

मूलकम्।

पांचनं लघु रुच्योष्णं पत्रं मूलकजं नवम्।
स्नेहसिद्धं त्रिदोषघ्नमसिद्धं कफपित्तकृत् ॥ ३३ ॥

मूलीके नरम पत्र–पाचन, हलके, रुचिकारी और उष्ण होते है। यदि

इनको घृत या तेलमें छौंक दिया जाय तो त्रिदोषनाशक होते है और विना पकाए कफपित्तकारक होते है ॥ ३३ ॥

द्रोणपुष्पी ।

द्रोणपुष्पीदलं स्वादु रूक्षं गुरु च पित्तकृत् ।
भेदनं कामलाशोथमेहज्वरहरं कटु ॥ ३४ ॥

द्रोणपुष्पीके पत्र—स्वादु, रूक्ष, गुरु, पित्तकारक, भेदन और कटु हैं तथा कामला, शोथ, प्रमेह और ज्वरको दूर करते हैं ॥ ३४ ॥

यवानी ।

यवानी शाकमाग्नेयं रुच्यं वातकफप्रणुत् ।
उष्णं कटु च तिक्तं च पित्तलं लघु शूलहृत् ॥३५॥

यवानीके पत्रोंका शाक—गर्म, रुचिकारक, वातकफनाशक, उष्ण, कटु, तिक्त, पित्तकारक, हलका और शूलनाशक है ॥ ३५ ॥

दद्रुघ्नम् ।

दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नमम्लं वातकफापहम् ।
कण्डूकासकृमिश्वासदद्रुकुष्ठप्रणुल्लघु ॥ ३६ ॥

दद्रुघ्न (पनवाड) के पत्र दोषघ्न, अम्ल, वात—कफनाशक, हलके तथा खुजली, कास, कृमि, श्वास, दाद और कुष्ठको हरनेवाले हैं ॥ ३६ ॥

सेहुंडम् ।

सेहुण्डस्य दलं तीक्ष्णं दीपनं रेचनं हरेत् ।
आध्मानाष्ठीलिकागुल्मशूलशोथोदराणि च ॥३७॥

थोहरके पत्र—तीक्ष्ण, दीपन और रेचक होते हैं । एवम् आध्मान, अष्ठीला, गुल्म, शूल, शोथ और उदर रोगको दूर करते है ॥ ३७ ॥

पर्पटम् ।

पर्पटो हंति पित्तास्रज्वरतृष्णाकफभ्रमान् ।
संग्राही शीतलस्तिक्तो दाहनुद्वातलो लघुः ॥ ३८ ॥

पापडा—पित्त, रक्त, ज्वर, प्यास, कफ, भ्रम और दाहको नाश करता है । तथा ग्राही, शीतल, तिक्त, वातकारक और हलका है ॥ ३८ ॥

गोजिह्वा ।

गोजिह्वा कुष्ठमेहास्रकृच्छ्रज्वरहरी लघुः ।

गोजियाके पत्र—कुष्ठ, मेह, रक्त, कृच्छ्र और ज्वरको जीतने है तथा हलके है ।

पटोलम् ।

पटोलपत्रं पित्तघ्नं दीपनं पाचनं लघु ॥ ३९ ॥
स्निग्धं वृष्यं तथोष्णं च ज्वरकासकृमिप्रणुत् ।

पटोलपत्र—पित्तघ्न, दीपन, पाचन, हलके, स्निग्ध, वृष्य और उष्ण होते हैं तथा ज्वर, कास और कृमियोंको दूर करते है ॥ ३९ ॥

गुडूची ।

गुडूचीपत्रमाग्नेयं सर्वज्वरहरं लघु ॥ ४० ॥
कषायं कटु तिक्तं च स्वादु पाके रसायनम् ।
बल्यमुष्णं च संग्राहि हन्याद्दोषत्रयं तृषाम् ॥ ४१ ॥
दाहप्रमेहवातासृक्कामलाकुष्ठपांडुताः ।

गिलोयके पत्र—अग्निवर्धक, सर्व ज्वरनाशक, हलके, कषाय, कटु, तिक्त, पाकमें स्वादु, रसायन, बलकारक, उष्ण, संग्राही, त्रिदोषनाशक तथा प्यास, दाह, प्रमेह, वातरक्त, कामला, कुष्ठ और पांडु रोगको दूर करते है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

कासमर्दम्।

कासमर्दोऽरिमर्दश्च कासारिः कर्कशस्तथा ॥ ४२ ॥
कासमर्ददलं रुच्यं वृष्यं कासविषास्रनुत्।
मधुरं कफवातघ्नं पाचनं कंठशोधनम् ॥ ४३ ॥
विशेषतः कासहरं पित्तघ्नं ग्राहकं लघु।

कासमर्द, अरिमर्द, कासारि, कर्कश यह कसौंदीके नाम है। कसौंदीके पत्र रुचिकारक, वृष्य, कासघ्न, विषनाशक, रक्तजित्, मधुर, कफवातनाशक, पाचन, कण्ठशोधक, पित्तनाशक, ग्राही, हल्के और विशेषतासे खांसीको दूर करते है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

चणकम्।

रुच्यं चणकशाकं स्याद्दुर्जरं कफवातकृत् ॥ ४४ ॥
अम्लं विष्टंभजनकं पित्तनुद्दंतशोथहृत्।

चनेके पत्रोंका साग रुचिकारक, दुर्जर, कफवातवर्द्धक, अम्ल, विष्टंभ-कारी, पित्तनाशक और दांतोंकी सूजनको हरनेवाला है ॥ ४४ ॥

कलायः।

कलायशाकं भेदि स्याल्लघुतिक्तत्रिदोषजित् ॥ ४५ ॥

कलायशाक—भेदी, हल्का, तिक्त और त्रिदोषनाशक होता है ॥ ४५ ॥

सार्षपम्।

कटुकं सार्षपं शाकं बहुमूत्रमलं गुरु।
अम्लपाकं विदाहि स्यादुष्णं रूक्षं त्रिदोषकृत् ॥ ४६ ॥
सक्षारं लवणं तीक्ष्णं स्वादु शाकेषु निंदितम्।

सरसोंका साग—कटु, मलमूत्रवर्द्धक, भारी, अम्लपाकी, विदाही, उष्ण, रूक्ष, त्रिदोपकारक, क्षारयुक्त, लवणानुरस, तीक्ष्ण और स्वादु होता है। सरसोंका शाक सबशाकोंमें निन्दित है ॥ ४६ ॥

इति पत्रशाकानि।

पुष्पशाकम् अगस्तिकम् ।

अगस्तिकुसुमं शीतं चातुर्थिकनिवारणम् ॥ ४७ ॥
नक्तांध्यनाशनं तिक्तं कषायं कटुपाकि च ।
पीनसश्लेष्मपित्तघ्नं वातघ्नं मुनिभिर्मतम् ॥ ४८ ॥

अगस्त्यके फूल—शीतल, चातुर्थिक ज्वरनाशक, नक्तांध्यको दूर करनेवाले, तिक्त, कषाय, कटुपाकी तथा पीनस, कफ, पित्त और वातको हरनेवाले हैं ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

कदली ।

कदल्याः कुसुमं स्निग्धं मधुरं तुवरं गुरु ।
वातपित्तहरं शीतं रक्तपित्तक्षयप्रणुत् ॥ ४९ ॥

कदलीके फूल—स्निग्ध, मधुर, कसैले, भारी, वातपित्तनाशक, शीतल, रक्त, पित्त और क्षयको दूर करनेवाले होते है ॥ ४९ ॥

शिग्रु ।

शिग्रुपुष्पं तु कटुकं तीक्ष्णोष्णं स्नायुशोथकृत् ।
कृमिहृत्कफवातघ्नं विद्रधिप्लीहगुल्मजित् ॥ ५० ॥
मधुशिग्रोस्त्वक्षिहितं रक्तपित्तप्रसादनम् ।

सोहांजनेके फूल—कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, नाडियोंमें शोथकारक, कृमिनाशक, कफवातनाशक तथा विद्रधि, प्लीहा और गुल्मको नाश करते है । मीठा सोहांजना नेत्रोंके लिये हितकारी, रक्त और पित्तको प्रसन्न करनेवाला है ॥ ५० ॥

शाल्मली ।

शाल्मलीपुष्पशाकं तु घृतसैंधवसाधितम् ॥ ५१ ॥
प्रदरं नाशयत्येव दुःसाध्यं च न संशयः ।

रसे पाके च मधुरं कषायं शीतलं गुरु ॥ ५२ ॥
कफपित्तास्रजिद् ग्राहि वातलं च प्रकीर्तितम् ।

सेंबलके फूलोंका शाक घी और सेंधेनमकसे सिद्ध किया जाने पर स्त्रियोंके दुःसाध्य प्रदरको भी नाश करता है । सेंबलके फूल—रस और पाकमें मधुर, कषाय, शीतल, भारी, ग्राही, वातकारक और कफ, पित्त तथा रक्तको जीतनेवाले हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

फलशाकं कूष्मांडम् ।

कूष्मांडं स्यात्पुष्पफलं पीतपुष्पं बृहत्फलम् ॥ ५३ ॥
कूष्मांडं बृंहणं वृष्यं गुरु पित्तास्रवातनुत् ।
बालं पित्तापहं शीतं मध्यमं कफकारकम् ॥ ५४ ॥
वृद्धं नातिहिमं स्वादु सक्षारं दीपनं लघु ।
वस्तिशुद्धिकरं चेतोरोगहृत्सर्वदोषजित् ॥ ५५ ॥

कूष्माण्ड, पुष्पफल, पीतपुष्प और बृहत्फल यह कुम्भडेके नाम है । इसे अंग्रेजीमें Pumpkin कहते है ।

पेठा—शरीरको पुष्ट करनेवाला, वीर्य्यवर्द्धक, भारी, पित्त, रक्त और वायुको जीतनेवाला होता है । कच्चा पेठा—पित्तनाशक और शीतल होता है । मध्यावस्थाका पेठा—कफकारक होता है । पका हुआ पेठा—अत्यन्तशीतल नही होता, मधुर, क्षारयुक्त, दीपन, हल्का, वस्तिको शुद्ध करनेवाला, मनके रोगोंको हरनेवाला और सब दोषोंको जीतनेवाला होता है ॥ ५३–५५ ॥

कूष्मांडी ।

कूष्मांडी तु भृशं लघ्वी कर्कारुरपि कीर्तिता ।
कर्कारुर्ग्राहिणी शीता रक्तपित्तहरी गुरुः ॥ ५६ ॥
पक्वा तिक्ताग्निजननी सक्षारा कफवातनुत् ।

कूष्माण्डी (कद्दू) और कर्कारु ये कद्दूके नाम है । इसको काशीफल

भी कहते हैं । यह कच्चा-अत्यन्त हल्का, ग्राही, शीतल, रक्तपित्तनाशक और भारी होता है । पका हुआ कद्दू-तिक्त, अग्निवर्द्धक, क्षार और कफवातको हरनेवाला होता है ॥ ५६ ॥

मिष्टतुम्बी ।

अलाबुः कथिता तुंबी द्विधा दीर्घा च वर्त्तुला ५७॥
मिष्टतुंबीफलं हृद्यं पित्तश्लेष्मापहं गुरु ।
वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं धातुपुष्टिविवर्द्धनम् ॥ ५८ ॥

मीठा तुंबा दो प्रकारका होता है । १ गोल और दूसरा लंबा । गोलको तुंबा, लंबेको घिया कहते है । मीठे तुंबेका फल हृदयको हितकारी, पित्त-कफनाशक, भारी, वीर्य्यवर्द्धक, रुचिकारक और धातुओंको पुष्ट करनेवाला होता है । इसे अंग्रेजीमें White Gourd कहते है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

कटुतुंबी ।

इक्ष्वाकुः कटुतुंबी स्यात्सा तुंबी च बृहत्फला ।
कटुतुंबी हिमा हृद्या पित्तकासविषापहा ॥ ५९ ॥
तिक्ता कटुर्विपाके च वातपित्तज्वरांतकृत् ।

इक्ष्वाकु, कटुतुंवी, तुंवी, बृहत्फला यह कड़वी तुंबीके नाम है । कड़वी तुंवी-शीतल, हृद्य, पित्त, कास और विषको हरनेवाली, तिक्त, कटुपाकी, वात, पित्त और ज्वरके नाश करनेवाली होती है । इसे अंग्रेजीमें Bottle Gourd कहते है ॥ ५९ ॥

कर्कटी ।

एर्वारुः कर्कटी प्रोक्ता कथ्यंते तद्गुणा अथ ॥ ६० ॥
कर्कटी शीतला रूक्षा ग्राहिणी मधुरा गुरुः ।
रुच्या पित्तहरा सामा पक्वा तृष्णाग्निपित्तकृत्॥६१॥

एर्वारु, कर्कटी यह ककड़ीके नाम है । यह शीतल, रूक्ष, ग्राही, मधुर, भारी. रुचिकारक, पित्तनाशक होती है, यह कच्ची काकड़ीके गुण है । पक्की

ककड़ी प्यास अग्नि और पित्तको बढ़ाती है । इसे अंग्रेजीमें Cucumber कहते है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

चिचिंडा ।

चिंचिडा श्वेतराजिः स्यात्सुदीर्घा गृहकूलकः ।
चिंचिडो वातपित्तघ्नो बल्यः पथ्यो रुचिप्रदः॥६२॥
शोषिणोऽतिहितः किंचिद्गुणैर्न्यूनः पटोलतः ।

चिचिण्डा, श्वेतराजि, सुदीर्घा और गृहकूलक यह चचिण्डेके नाम है । चचिण्डा–वात–पित्तनाशक, बलकारक, पथ्य, रुचिकारक, शोषके लिये अत्यन्त हितकारी, पटोलसे गुणोंमें किंचित् न्यून होता है ॥ ६२ ॥

कारवेल्लम् ।

कारवेल्लं कठिल्लं स्यात्कारवेल्ली ततो लघुः ॥६३॥
कारवेल्लं हिमं भेदि लघु तिक्तामवातलम् ।
ज्वरपित्तकफास्रघ्नं पांडुमेहकृमीन् हरेत् ॥ ६४ ॥
तद्गुणा कारवेल्ली स्याद्विशेषाद्दीपनी लघुः ।

कारवेल्ल, कठिल्ल यह बड़े करेलेके नाम है । छोटे करेलेको कारवेल्ली कहते है । इसे अंग्रेजीमे Hairy Mordica कहते है । करेला–शीतल, भेदी, हलका, तिक्त, आमवातकारक, ज्वर, कफ, रक्तविकार, पाण्डु, प्रमेह और कृमिको दूर करनेवाला होता है । करेलीमें भी यही गुण है । विशेष कर अग्निको दीपन करती है और हलकी है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

महाकोशातकी ।

महाकोशातकी ज्योत्स्ना हस्तिघोषा महाफला ६५॥
धामार्गवो घोषकश्च हस्तिपर्णश्च स स्मृतः ।
महाकोशातकी स्निग्धा रक्तपित्तानिलापहा ॥६६ ॥

महाकोशातकी, ज्योत्स्ना, हस्तिघोषा, महाफला, धामार्गव, घोषक और

हस्तिपर्ण यह बडी तोरीके नाम है। बडी तोरी—स्निग्ध, रक्तपित्त और वायुको दूर करती है। इसको रामतोरी भी कहते हैं॥ ६५॥ ६६॥

राजकोशातकी।

धामार्गवः पीतपुष्पो जालनी कृतवेधनः।
राजकोशातकी चेति तथोक्ता राजिमत्फला ॥६७॥
राजकोशातकी शीता मधुरा कफवातला।
पित्तघ्नी दीपनी श्वासज्वरकासकृमिप्रणुत् ॥ ६८॥

धामार्गव, पीतपुष्प, जालनी, कृतवेधन, राजकोशातकी और राजिमत्फला यह धारीदार कालीतोरीके नाम है। राजतुरईको अंग्रेजीमें Bitter Luffa कहते है। यह शीतल, मधुर, कफ—वातकारक, पित्तनाशक, दीपनी एवं श्वास, ज्वर, कास और कृमियोंका नाश करती है॥ ६७॥ ६८॥

पटोलः।

पटोलः कूलकस्तिक्तः पांडुकः कर्कशच्छदः।
राजीफलः पांडुफलो राजेयश्चामृताफलः ॥ ६९॥
बीजगर्भः प्रतीकश्च कुष्टहा कासभंजनः।
पटोलं पाचनं हृद्यं वृष्यं लघ्वग्निदीपनम् ॥ ७०॥
स्निग्धोष्णं हंति कासास्रज्वरदोषत्रयक्रिमीन्।
पटोलस्य भवेन्मूलं विरेचनकरं सुखात् ॥ ७१॥
नालं श्लेष्महरं पत्रं पित्तहारि फलं पुनः।
दोषत्रयहरं प्रोक्तं तद्वत्तिक्तपटोलकम् ॥ ७२॥

पटोल, कूलक, तिक्त, पाण्डुक, कर्कशच्छद, राजीफल, पाण्डुफल, राजेय, अमृतफल, बीजगर्भ, प्रतीक, कुष्ठहा और कासभंजन यह पटोलके नाम है। पटोल (पोल) पाचन, हृदयको हितकारी, वृष्य, हलका, दीपन,

स्निग्ध, उष्ण, कासहर तथा रक्तविकार, ज्वर, त्रिदोष और कृमियोंको दूर करता है । पटोलकी बेलकी जड सुखपूर्वक विरेचन करनेवाली है । नाल कफनाशक है, पत्र पित्तको दूर करनेवाले हैं और फल त्रिदोषनाशक है । इसीके समान कड़वे पटोलके भी गुण है ॥ ६९-७२ ॥

बिंबी ।

बिंबी रक्तफला तुंडी तुंडिकेरी च बिंबिका ।
ओष्ठोपमफला प्रोक्ता पीलुपर्णी च कथ्यते ॥ ७३॥
बिंबीफलं स्वादु शीतं गुरुपित्तास्रवातजित् ।
स्तंभनं लेखनं रुच्यं विबंधाध्मानकारकम् ॥ ७४ ॥

बिंबी, रक्तफला, तुण्डी, तुण्डिकेरी, बिम्बिका, ओष्ठोपमफला, पीलुपर्णी यह कंदूरीके नाम है । कंदूरी-स्वादु, शीत, भारी, पित्त, रक्त और वातविकारको जीतनेवाली है । एवं स्तंभन, लेखन, रुचिकारक और विबंध तथा आध्मानको करनेवाली है ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

शिंबीद्वयम् ।

शिंबी शिबिः पुस्तशिंबी तथा पुस्तकशिंबिका ।
शिंबीद्वयं च मधुरं रसे पाके हिमं गुरु ॥ ७५ ॥
बल्यं दाहकरं प्रोक्तं श्लेष्मलं वातपित्तजित् ।
कोलशिंबी कृष्णफला तथा पर्य्यंकपादिका ॥ ७६
कोलशिंबी समीरघ्नी गुर्व्युष्णा कफपित्तकृत् ।
शुक्राग्निसादकृद्वृष्या रुचिकृद्बद्धविड् गुरुः ॥७७॥

शिंबी, शिबि, पुस्तशिंबी और पुस्तकशिंबिका यह दोनों प्रकारकी सेमफलियोंके नाम है । दोनों प्रकारकी सेमफली-रस और पाकमें मधुर, शीतल, भारी, बलकारक, दाह करनेवाली, कफवर्द्धक और वात पित्तके जीतनेवाली है ।

कालेरंगकी सेमफलीको कोलशिंबी, कृष्णफला और पर्यंकपादिका भी कहते है। कोलशिंबी—वातनाशक, भारी, उष्ण, कफ—पित्तकारक, वीर्य्यवर्द्धक, मंदाग्निकारक, वृष्य, रुचिकारक, विबंधकारक और भारी होती है ॥७५—७७॥

सौभांजनम् ।

सौभांजनफलं स्वादु कषायं कफपित्तनुत् ।
शूलकुष्ठक्षयश्वासगुल्मह्रद्दीपनं परम् ॥ ७८ ॥

सोहांजनेकी फलियां स्वादु, कषाय, कफ—पित्तनाशक, अत्यन्त दीपन एवं शूल, कुष्ठ, क्षय, श्वास और गुल्मको हरनेवाली है ॥ ७८ ॥

वृंताकम् ।

वृंताकं स्त्री तु वार्ताकुर्भंटाकी भंटकापि च ।
वृंताकं स्वादु तीक्ष्णोष्णं कटुपाकमपित्तलम् ॥७९॥
ज्वरवातबलासघ्नं दीपनं शुक्रलं लघु ।
तद्बालं कफपित्तघ्नं वृद्धं पित्तकरं लघु ॥ ८० ॥
वृंताकं पित्तलं किंचिदंगारपरिपाचितम् ।
कफमेदोऽनिलामघ्नमत्यर्थं लघु दीपनम् ॥ ८१ ॥
तदेव हि गुरु स्निग्धं सतैललवणान्वितम् ।
अपरं श्वेतवृंताकं कुक्कुटांडसमं भवेत् ॥ ८२ ॥
तदर्शस्सु विशेषेण हितं हीनं च पूर्वतः ।

वृंताक, वार्ताकु, स्त्रीलिङ्गमें भण्टाकी, भण्टाका यह बैगनके नाम है। इसको वैगन, वताऊं और भण्टा भी कहते है। इसे अंग्रेजीमें Brinjal कहते है। वैगन—स्वादु, तीक्ष्ण, उष्ण, कटुपाकी, पित्तको न वढानेवाले ज्वरनाशक, वात—कफनाशक, दीपन, वीर्य्यवर्द्धक और हल्के होते है। वैंग-नके वालफल कफ—पित्त—नाशक होते है और पके हुए पित्तकारक तथा हल्के होते है। अंगारोंमें भुने हुए वैगनका फल कफ, मेद, वायु और आमको

हरनेवाला होता है तथा हल्का और दीपन होता है। वही यदि लवण और तैल करके युक्त कर लिया जाय तो स्निग्ध और भारी हो जाता है। एक दूसरे सफेद बैंगन होते हैं जो देखनेमें मुर्गीके अण्डे समान होते हैं, वह बवासीरमें विशेष हितकर होते हैं। अन्य गुणोंमें पहले बैंगनसे हीन गुण होते है॥ ७९-८२ ॥

तिंडिशः।

तिंडिशो रोमशफलो मुनिनिर्मित इत्यपि॥ ८३ ॥
तिंडिशो रुचिकृद्भेदी पित्तश्लेष्मापहः स्मृतः।
सशीतो वातलो रूक्षो मूत्रलश्चाश्मरीहरः ॥ ८४ ॥

तिण्डिश, रोमशफल और मुनिनिर्मित यह टिंडसोंके नाम हैं। टिंडस-रुचिकारक, भेदी, पित्तकफनाशक, शीतल, वातकारक, रूक्ष, मूत्रको लानेवाले और पथरीको दूर करते हैं॥ ८३॥ ८४ ॥

पिंडारम्।

पिंडारं शीतलं बल्यं पित्तघ्नं रुचिकारकम्।
पाके लघु विशेषेण विषशांतिकरं स्मृतम् ॥ ८५ ॥

पिण्डार–शीतल, बलकारक, पित्तनाशक, रुचिकारक, पाकमें हल्का, विशेष कर विषविकारकी शांति करता है॥ ८५॥

कर्कोटकी।

कर्कोटकी पीतपुष्पा महाजालीति चोच्यते।
कर्कोटक्याः फलं कुष्ठहृल्लासारुचिनाशनम् ॥८६ ॥
श्वासकासज्वरान् हंति कटुपाकं च दीपनम्।

कर्कोटकी, पीतपुष्पा, महाजाली यह ककोड़ेके नाम है। ककोड़ेके फल-कुष्ठ. हृल्लास, अरुचि, श्वास, कास और ज्वरोंको दूर करते है तथा कटु-पाकी और दीपन है॥ ८६ ॥

डोंडिका ।

डोंडिका विषमुष्टिश्च डोंडीत्यपि सुमुष्टिका ॥८७॥
डोंडिका पुष्टिदा वृष्या रुच्या वह्निप्रदा लघुः ।
वातपित्तकफार्शांसि कृमिगुल्मविषामयान् ॥ ८८ ॥

डोंडिका, विषमुष्टि, डोंडी और सुमुष्टिका यह डोंडीके फलोंके नाम हैं । डोंडी–पुष्टिकारक, वृष्य, रुचिकारक, अग्निवर्द्धक और हल्के हैं । एवं वात, पित्त, कफ, अर्श, कृमि, गुल्म और विषके विकारोंको दूर करते हैं॥८७॥८८॥

कंटकारी ।

कंटकारीफलं तिक्तं कटुकं दीपनं लघु ।
रूक्षोष्णं श्वासकासघ्नं ज्वरानिलकफापहम् ॥८९॥

कंटकारीके फल-तिक्त, कटु, दीपन, हलके, रूक्ष, उष्ण, श्वासकासनाशक तथा ज्वर, वात और कफको हरनेवाले है ॥ ८९ ॥

नालशाकम् ।

तीक्ष्णोष्णं सार्षपं नालं वातश्लेष्मव्रणापहम् ।
कंडूवमिहरं दद्रुकुष्टघ्नं रुचिकारकम् ॥ ९० ॥

सरसोंकी गंदलोंका शाक–वात–कफ–नाशक,व्रणोंको दूर करनेवाला, खाज, वमन, दद्रु और कुष्ठको हरनेवाला तथा रुचिकारक है ॥ ९० ॥

मूलकम् ।

भवेन्मूलकनालं तु विष्टंभि कफकारकम् ।
वातपित्तहरं रुच्यं सुशुष्कं तद्गुणाधिकम् ॥ ९१ ॥

मूलीकी गंदल–विष्टंभी, कफकारक, वातपित्तनाशक और रुचिकारक होती है । सूखी हुई गंदलें अधिक गुण करनेवाली है ॥ ९१ ॥

कंदशाकम् । सूरणम् ।

सूरणः कंद औलश्च कण्डूलोर्शोघ्न इत्यपि ।
सूरणो दीपनो रूक्षः कषायः कण्डुकृत्कटुः॥ ९२ ॥
विष्टंभी विशदो रुच्यः कफार्शःकृन्तनो लघुः ।
विशेषादर्शसां पथ्यः प्लीहगुल्मविनाशनः ॥ ९३ ॥
सर्वेषां कन्दशाकानां सूरणः श्रेष्ठ उच्यते ।
दद्रूणां रक्तपित्तानां कुष्ठिनां न हितो हि सः ॥९४॥
संधानयोगं संप्राप्तः सूरणो गुणकृत्परः ।

सूरण, कन्द, औल, कन्डूल, अर्शोघ्न यह जिमिकंदके नाम है। सूरणकन्द-दीपन, रूक्ष, कषाय, खाजकारक, कटु, विष्टंभी, विशद, रुचिकारक, कफ और अर्शनाशक और हल्का होता है। जिमिकन्द-बवासीरमें विशेषरूपसे पथ्य है। प्लीहा और गुल्मको नाश करता है। और सब कन्द-शाकोंमें श्रेष्ठ माना जाता है। परन्तु दद्रु रोगवालेको, रक्तपित्तवाले और कुष्ठियोंको यह हानिकारक होता है! सूरणकन्दकी कांजी विशेष गुणकारी होती है॥ ९२-९४ ॥

अलुकम् ।

आरुकं वीरसेनं च वीरं वीरारुकं तथा ॥ ९५ ॥
आलुकं शीतलं सर्वं विष्टंभि मधुरं गुरु ।
सृष्टमूत्रमलं रूक्षं दुर्जरं रक्तपित्तनुत् ॥ ९६ ॥
कफानिलकरं बल्यं वृष्यं स्वल्पाग्निवर्धनम् ।

आरुक, वीरसेन, वीर, वीरारुक और आलुक यह आलुओंके नाम है। सब प्रकारके आलू-शीतल, विष्टंभी, मधुर, भारी, मूत्रमलको बढानेवाले, रूक्ष, दुर्जर, रक्तपित्तनाशक, कफवातकारक, बलवीर्य्यवर्धक और किंचित् अग्निको बढानेवाले हैं। इन्हें अंग्रेजीमें Sweet Potatoe कहते है॥ ९५ ॥ ९६॥

रक्तालुभेदः ।

रक्तालुभेदो या दीर्घा तन्वी च प्रथितालुकी ॥९७॥
आलुकी बलकृत्स्निग्धा गुर्वी हृत्कफनाशिनी ।
विष्टंभकारिणी तैले तालतोऽतिरुचिप्रदा ॥ ९८ ॥

लम्बे आकारका रक्तवर्ण कन्द रक्तालू होता है। रक्तालू, दीर्घा, आलुकी, तन्वी यह रतालूके नाम है। रतालू—बलकारक, स्निग्ध, भारी, हृदयके कफको दूर करनेवाला, और विष्टंभकारी होता है। यदि इसको तेलमें तलकर बनाया जाय तो अत्यन्त रुचिकारक होता है ॥ ९७ ॥ ९८ ॥

मूलकम् ।

मूलकं द्विविधं प्रोक्तं तत्रैकं लघुमूलकम् ।
शालामर्कटकं विस्रशालेयं मरुसंभवम् ॥ ९९ ॥
चाणक्यमूलकं तीक्ष्णं तथा मूलिकपोतिका ।
नेपालमूलकं चान्यत्तद्भवेद्गजदंतवत् ॥ १०० ॥
लघुमूलं कटूष्णं स्याद्रुच्यं लघु च पाचनम् ।
दोषत्रयहरं स्वर्य्यं ज्वरश्वासविनाशनम् ॥ १०१ ॥
नासिकाकण्ठरोगघ्नं नयनामयनाशनम् ।
महत्तदेव रूक्षोष्णं गुरुदोषत्रयप्रदम् ॥ १०२ ॥
स्नेहसिद्धं तदेव स्याद्दोषत्रयविनाशनम् ।

मूलक दो प्रकारकी होती है। उनमें छोटी मूलीको शालामर्कट, विस्रशालेय, मरुसंभव, चाणक्यमूलक, मूली और कपोतिका कहते है। जो हाथीदांतके समान बड़ी मूली हो उसको नेपालमूलक कहते है। अंग्रेजीमें इसे Radish कहते है। दोनों प्रकारकी मूलियां कच्ची अवस्थामें कटु, उष्ण, रुचिकारक, हलकी, पाचन, त्रिदोषनाशक, स्वरकारक, ज्वरनाशक, एवं श्वास,

नासिकाके रोग, कण्ठके रोग और नेत्ररोगोंको दूर करती है। पक जाने पर बडी मूली—रूक्ष, उष्ण, भारी और त्रिदोषकारक हो जाती है। घृत तैल में सिद्ध किया हुवा कच्ची मूलीका शाक त्रिदोषनाशक होता है ॥९९-१०२॥

गाजरम्।

गाजरं गर्जरी प्रोक्ता तथा नारंगवर्णकम् ॥ १०३ ॥
गाजरं मधुरं तीक्ष्णं तिक्तोष्णं दीपनं लघु।
संग्राहि रक्तपित्तार्शोग्रहणीकफवातजित् ॥ १०४ ॥

गाजर, गर्जरी और नारंगवर्णक यह गाजरके नाम हैं। गाजर—मधुर, तीक्ष्ण, तिक्त, उष्ण, दीपन, हलकी, संग्राही एव रक्तपित्त, अर्श, ग्रहणी, कफ और वायुको जीतती है। अंग्रेजीमें इसे Carrat और फारसीमें जर्दक कहते है॥१०३॥१०४

कदली।

शीतलः कदलीकंदो बल्यः केश्योऽम्लपित्तजित्।
वह्निकृद्दाहहारी च मधुरो रुचिकारकः ॥ १०५ ॥

केलेका कन्द—बलकारक, केशवर्द्धक, अम्लपित्तनाशक, जठराग्निको चैतन्य करनेवाला, दाहनाशक, मधुर और रुचिकारक होता है ॥ १०५ ॥

मानकः।

मानकः स्यान्महापत्रः कथ्यंते तद्गुणा अथ।
मानकः शोथहृच्छीतः पित्तरक्तहरो लघुः ॥ १०६ ॥

मानकन्दको महापत्र भी कहते हैं। मानकन्द—शोथनाशक, शीतल, रक्त-पित्तनाशक और हलका होता है ॥ १०६ ॥

वाराही।

वाराही पित्तला बल्या कटुतिक्ता रसायना।
आयुःशुक्राग्निकृन्मेहकफकुष्ठानिलापहा ॥ १०७ ॥

वाराहीकन्द—पित्तकारक, बलवर्धक, कटु, तिक्त, रसायन, आयुवर्धक, वीर्य्यवर्द्धक, अग्निकारक एवं प्रमेह, कुष्ठ और वायुको हरनेवाला है ॥ १०७॥

हस्तिकर्णी ।

गजकर्णी तु तिक्तोष्णा तथा वातकफौ जयेत् ।
शीतज्वरहरी स्वादुः पाके तस्यास्तु कंदकः ॥ १०८ ॥
पांडुशोथकृमिप्लीहगुल्मानाहोदरापहा ।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नो घनसूरणकंदवत् ॥ १०९ ॥

गजकर्णी हस्तिकर्णकन्दको कहते हैं। हस्तिकर्ण—तिक्त, उष्ण, वातकफनाशक, शीतज्वरनाशक, पाकमें मधुर तथा पाण्डु, शोथ, कृमि, प्लीहा, गुल्म, अफारा, उदररोग, ग्रहणी और बवासीरको दूर करता है। इसका कंद वनसूरण कंदके समान होता है। शिमलेके पहाडमें इसको गणौरा कहते हैं ॥ १०८ ॥ १०९

केंबुकम् ।

केंबुकं कटुकं पाके तिक्तं ग्राहि हिमं लघु ।
दीपनं पाचनं हृद्यं कफपित्तज्वरापहम् ॥ ११० ॥
कुष्ठकासप्रमेहास्रनाशनं वातलं कटु ।

केंबुक, केमुक यह केउवा कन्दके नाम है । केउवा कंद—कटुपाकी, तिक्त, ग्राही, शीतल, हलका, दीपन, पाचन, हृद्य, वातकारक, कटु, एवं कफ, पित्त, ज्वर, कुष्ठ, कास, प्रमेह और रक्तविकारको दूर करता है ॥ ११० ॥

कसेरुकम् ।

कसेरु द्विविधं तत्तु महद्राजकसेरुकम् ॥ १११ ॥
मुस्ताकृति लघुः स्याद्या तच्चिचोडमिति स्मृतम् ।
कसेरुकद्वयं शीतं मधुरं तुवरं गुरु ॥ ११२ ॥
पित्तशोणितदाहघ्नं नयनामयनाशनम् ।
ग्राहि शुक्रानिलश्लेष्मरुचिस्तन्यकरं स्मृतम् ॥ ११३ ॥

कसेरू दो प्रकारके होते है एक बड़े जिनको कसेरू कहते है। दूसरे नागरमोथेके समान छोटे होते है उनको चिचोड़ कहते है। दोनों कसेरू

शीतल, मधुर, कसैले, भारी, एवं पित्त, रक्त, दाह और नेत्ररोगोंको दूर करते हैं। तथा ग्राही, शुक्रवर्द्धक, वातकफकारक, रुचिकारक और स्तनोंमें दूधको बढ़ाते हैं ॥ १११–११३ ॥

शालूकम्।

पद्मादिकंदः शालूकं करहाटश्च कथ्यते।
मृणालमूलं भिस्साडं लाजलूकं च कथ्यते ॥११४
शालूकं शीतलं वृष्यं पित्तास्रदाहनुद्गुरु।
दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम् ॥११५॥
संग्राहि मधुरं रूक्षं भिस्साडमपि तद्गुणम्।

कमलकी सब जातियोंके कंदको शालूक और करहाट कहते है। कमलकी डंडीके मूलको भिस्साड़ और लाजलूक कहते हैं। इनको हिंदीमें भिसे कहते हैं। शालूक—शीतल, वृष्य, रक्तपित्तनाशक, दाहनाशक, भारी, दुर्जर, स्वादुपाकी, स्तन्यवर्द्धक, वातकफकारक, संग्राही, मधुर और रूक्ष होता है। भिसोंके भी यही गुण हैं ॥ ११४ ॥ ११५ ॥

वर्जनीयम्।

बालं ह्यनार्त्तवं जीर्णं व्याधितं कृमिभक्षितम् ११६॥
कंदं विवर्जयेत्सर्वं यद्वाग्न्यादिविदूषितम्।
अतिजीर्णमकालोत्थं रूक्षसिद्धमदेशजम् ॥११७॥
कर्कशं कोमलं चातिशीतं व्यालादिदूषितम्।
संशुष्कं सकलं शाकं नाश्नीयान्मूलकं विना ११८

बहुत कच्चे कन्द, विना ऋतुसे उत्पन्न हुए, पुराने, रोगयुक्त, कृमियोंसे भक्षित, जो वायु या अग्निसे दूषित हो, ऐसे कन्द नहीं खाने चाहिये।

अत्यन्त पुराने, विना समयके पैदा हुए, रूक्ष, बुरे स्थानमें पैदा हुए, कर्कश, अत्यन्तशीत, व्यालादिसे दूषित और सम्पूर्ण सूखे शाक त्याग देने योग्य होते है । किन्तु केवल मूलीका शाक सूखा हुआ त्यागने योग्य नहीं होता ॥ ११६-११८ ॥

संस्वेदजम् ।

उक्तं संस्वेदजं शाकं भूमिच्छत्रं शिलींद्रजम् ।
क्षितिगोमयकाष्ठेषु वृक्षादिषु च तद्भवेत् ॥ ११९ ॥
सर्वे संस्वेदजाः शीता दोषलाः पिच्छिलाश्च ते ।
गुरवश्छर्द्यतीसारज्वरश्लेष्मामयप्रदाः ॥ १२० ॥
श्वेताः श्वभ्रस्थलीकाष्ठवंशगोव्रजसंभवाः ।
नातिदोषकरास्ते स्युः शेषास्तेभ्यो विगर्हिताः १२१

संस्वेदजाः छाता इति लोके ।

इति शाकवर्गः ।

संस्वेदज, भूमिच्छत्र, शिलीन्द्रज यह संस्वेदज शाकके नाम है । संस्वेदज शाक वर्षाऋतुमें गोबर, पुरानी लकड़ियां, पृथ्वी और वृक्षादिकोंपर उत्पन्न होते है । यह शाक पंजाबमें खुम्भ और गुच्छियें आदि नामोंसे प्रसिद्ध है । इसे अंग्रेजीमें Mushroom कहते है । सब संस्वेदज शाक शीतल, दोषवर्द्धक, पिच्छल और भारी होते है । तथा वमन, अतिसार, ज्वर और कफरोगोंको उत्पन्न करते है । परन्तु श्वेत पवित्रस्थानकी लकड़ी या बांसके ऊपर और गोचर भूमिमें उत्पन्न हुए अत्यन्त दोषकारी नही होते । शेष गंदे स्थानोंमें उत्पन्न हुए निन्दित होते है ॥ ११९-१२१ ॥

इति श्रीवैद्यरत्न पं०—रामप्रसादात्मजविद्यालङ्कार—शिवशर्म्मवैद्यकृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ शाकवर्गः समाप्तः ॥ ९ ॥

वारिवर्गः १०.



पानीयं सलिलं नीरं कीलालं जलमंबु च ।
आपो वार्वारिकं तोयं पयः पाथस्तथोदकम् ॥ १ ॥
जीवनं वनमंभोर्णोऽमृतं घनरसोऽपि च ॥ २ ॥
पानीयं श्रमनाशनं क्लमहरं मूर्छापिपासापहं
तंद्राछर्दिविबंधहृद्बलकरं निद्राहरं तर्पणम् ।
हृद्यं गुप्तरसं ह्यजीर्णशमकं नित्यं हितं शीतलं
लघ्वच्छं रसकारणान्निगदितं पीयूषवज्जीवनम् ॥३॥

तद्भेदाः ।

पानीयं मुनिभिः प्रोक्तं दिव्यं भौममिति द्विधा॥४॥
दिव्यं चतुर्विधं प्रोक्तं धाराजं करकाभवम् ।
तौषारं च तथा हैमं तेषु धारं गुणाधिकम् ॥ ५ ॥

पानीय, सलिल, नीर, कीलाल, जल, अम्बु, आप, वार, वारि, तोय, पय, पाथ, उदक, जीवन, वन, अम्भ, अर्ण, अमृत और घनरस यह जलके नाम है। इसे फारसीमें आब तथा अंग्रेजीमें water कहते है।

जल—परिश्रमको नष्ट करनेवाला, ग्लानिको हरनेवाला, मूर्छा तथा प्यासको दूर करनेवाला, बलकारक, निद्राको हरनेवाला, तृप्तिकारक, हृदयको प्रिय, गुप्तरसवाला, अजीर्णको शमन करनेवाला, नित्य हितकारी, शीतल, हलका, स्वच्छ, अमृतके समान जीवन देनेवाला और तन्द्रा, वमन और विबन्धको हरनेवाला है ।

जल दिव्य और भौम इन भेदोंसे मुनियोंने दो प्रकारका कहा है। दिव्य जल—धाराज, करकाभव, तौषार और हैम इन भेदोंसे चार प्रकारका है॥१—५

धाराजलम् ।

धाराभिः पतितं तोयं गृहीतं स्फीतवाससा ।
शिलायां वसुधायां वा धौतायां पतितं च तत् ॥६॥
सौवर्णे राजते ताम्रे स्फाटिके काचनिर्मिते ।
भाजने मृण्मये वापि स्थापितं धारमुच्यते ॥ ७ ॥
धारानीरं त्रिदोषघ्नमनिर्देश्यरसं लघु ।
सौम्यं रसायनं बल्यं तर्पणं ह्लादि जीवनम् ॥ ८ ॥
पाचनं मतिकृन्मूर्च्छातन्द्रादाहश्रमक्लमान् ।
तृष्णां हरति तत्पथ्यं विशेषात्प्रावृषि स्मृतम् ॥ ९ ॥

धारारूपमें, पत्थरोंपर अथवा धोई हुई पृथ्वीपर गिरा हुआ जल यदि छानकर सुवर्ण, चान्दी, तांवा, स्फाटिक अथवा मट्टीके वर्त्तनमें भर लिया जावे. तो उसे धाराजल कहते है ।

धाराजल– त्रिदोपनाशक, अनिर्वचनीय रसवाला, हलका, सौम्य. रसायन, वलकारक, प्रसन्न करनेवाला, जीवन देनेवाला, पाचन करनेवाला, वुद्धिवर्धक तथा मूर्छा, तन्द्रा, दाह, श्रम, ग्लानि और तृष्णाको दूर करता है । प्रावट् ऋतुमें वह विशेषतः पथ्य है ॥ ६–९ ॥

तद्भेदाः ।

धाराजलं च द्विविधं गंगासामुद्रभेदतः ।
आकाशगंगासंबंधि जलमादाय दिग्गजाः ॥ १० ॥
मेघैरंतरिता वृष्टिं कुर्वतीति वचः सताम् ।
गांगमाश्वयुजे मासि प्रायो वर्षति वारिदः ॥ ११ ॥
सर्वथा तज्जलं देयं तथैव चरके वचः ।
स्थापितं हेमजे पात्रे राजते मृण्मयेपि वा ॥ १२ ॥

शाल्यन्नं येन संसिक्तं भवेदक्लेदि वर्णवत् ।
तद्गांगं सर्वदोषघ्नं ज्ञेयं सामुद्रमन्यथा ॥ १३ ॥
तत्तु सक्षारलवणं शुक्रदृष्टिबलापहम् ।
विस्रं च दोषलं तीक्ष्णं सर्वकर्मसु गर्हितम् ॥ १४ ॥
सामुद्रं त्वाश्विने मासि गुणैर्गांगवदादिशेत् ॥
अगस्त्यस्य तु देवर्षेरुदयात्सकलं जलम् ॥ १५ ॥
निर्मलं निर्विषं स्वादु शुक्रलं स्याददोषलम् ।

अत एवाह ।

फूत्कारविषवातेननागानां व्योमचारिणाम् ॥ १६ ॥
वर्षासु सविषं तोयं दिव्यमप्याश्विनं विना ।

गांग और सामुद्र यह दोनों धाराजलके भेद है। दिग्गज, आकाशगंगाके जलको लेकर बादलोंमें छिप कर वृष्टिको करते है, यह सत्पुरुष कहते है। विशेषकरके जो जल आश्विनमासमें बरसता है वह गांग समझना चाहिये। वह जल सुवर्णके, रजतके अथवा मट्टीके बर्तनमें रक्खा हुआ, रोगियोंको देना चाहिये । ऐसे ही चरकमें भी कहा है। जिस जलके डालनेसे चावल जैसे हों वैसे ही दिखाई दें वह जल गांग होता है और वह त्रिदोषनाशक है। जो ऐसा न हो वह सामुद्र होता है ।

सामुद्रजल—क्षारयुक्त, लवण रसवाला, शुक्र, दृष्टि और बलको हरनेवाला, दुर्गन्धयुक्त, दोषोंको बढानेवाला, तीक्ष्ण और सब कामोंमें निन्दित है। आश्विन मासमें बरसे हुए सामुद्रजलमें गांगके समान गुण होते है क्योंकि देवर्षि अगस्त्यके उदय हो जानेसे सब जल निर्मल, विषरहित, स्वादु, वीर्यवर्धक और दोषरहित हो जाते है। इसी कारण कहा है कि आकाशमें घूमनेवाले नागादियोंके विषयुक्त पवनसे वर्षा ऋतुमें दिव्य जल भी विषैला हो जाता है। परन्तु आश्विन मासमें विषरहित होता है ॥१०–१६॥

अनार्त्तवम् ।

अनार्तवं प्रमुंचंति वारि वारिधरास्तु यत् ॥ १७ ॥

तत्त्रिदोषाय सर्वेषां देहिनां परिकीर्त्तितम् ।

करकाजलम् ।

दिव्यवाय्वग्निसंयोगात्संहताः खात्पतंति याः ॥ १८ ॥
पाषाणखंडवच्चापस्ताः कारक्योऽमृतोपमाः ।
करकाजं जलं रूक्षं विशदं गुरु चास्थिरम् ॥ १९ ॥
दारुणं शीतलं सांद्रं पित्तहृत्कफवातकृत् ।

विना ऋतुके जो जल धारारूपमें बरसता है वह त्रिदोषकारक है । आकाशकी वायु और अग्निके संयोगसे जो जल पत्थरके टुकड़ोंके समान बन्धा हुआ ओलोंके रूपमें गिरता है वह करकाभव होता है । करकाभव जल—अमृतसमान, रूक्ष, स्वच्छ, भारी, अस्थिर, दारुण, शीतल, चांद्र, पित्तनाशक और कफ तथा वातको नष्ट करनेवाला है ॥ १७–१९ ॥

तौषारम् ।

अपि नद्यः समुद्रांते वह्निरापश्च तद्भवाः ॥ २० ॥
धूमावयवनिर्मुक्तास्तुषाराख्यास्तु ताः स्मृताः ।
अपथ्याः प्राणिनां प्रायो भूरुहाणां तु ता हिताः ॥ २१ ॥
तुषारांबु हिमं रूक्षं स्याद्वातलमपित्तलम् ।
कफोरुस्तंभकंठाग्निमेदोगंडादिरोगकृत् ॥ २२ ॥

नदीसे लेकर समुद्र पर्य्यन्त जलमें अग्नि होती है, उस अग्निसे उत्पन्न हुआ तथा धूमके अवयवोंसे रहित जो जल होता है उसे तुषार कहते हैं । तुषारजल—प्रायः प्राणियोंके लिय हानिकारक तथा वृक्षोंके लिये लाभदायक है । तथा शीतल, रूक्ष, वातकारक, पित्तनाशक और कफ, ऊरुस्तम्भ, कण्ठरोग, अग्नि, मेद और गण्डादि रोगोंको करनेवाला है ॥ २०–२२ ॥

हैमजलम् ।

हिमवच्छिखरादिभ्यो द्रवीभूयाभिवर्षति ।
यत्तदेव हिमं हैमं जलमाहुर्मनीषिणः ॥ २३ ॥

हिमांबु शीतं पित्तघ्नं गुरु वातविवर्द्धनम् ।
हिमं तु शीतलं रूक्षं दारुणं सूक्ष्ममित्यपि ॥ २४॥
न तद्दूषयते वातं न च पित्तं न वा कफम् ।

हिमालय आदि पर्वतशिखरों परसे पिघल कर हिमका जो जल गिरता है उसको हैम कहते है। हिमांबु-शीतल, पित्तनाशक, भारी, वातवर्धक, रूक्ष, दारुण, सूक्ष्म तथा वात, पित्त और कफ इनको दूषित नही करता ॥ २३ ॥ २४ ॥

भौमम् ।

भौममंबु निगदितं प्रथमं त्रिविधं बुधैः ॥ २५ ॥
जांगलं च तथानूपं ततः साधारणं क्रमात् ।
अल्पोदकोऽल्पवृक्षश्च पित्तरक्तामयान्वितः ॥ २६ ॥
ज्ञातव्यो जांगलो देशस्तत्रत्यं जांगलं जलम् ।
बह्वम्बुर्बहुवृक्षश्च वातश्लेष्मामयान्वितः ॥ २७ ॥
देशोऽनूप इति ख्यात आनूपं तद्भवं जलम् ।
मिश्रचिह्नस्तु यो देशः स हि साधारणः स्मृतः२८॥
तस्मिन्देशे यदुदकं तत्तु साधारणं स्मृतम् ।
जागलं सलिलं रूक्षं लवणं लघु पित्तनुत् ॥ २९ ॥
वह्निहृत्कफकृत्पथ्यं विकारान्कुरुते बहून् ।
आनूपं वार्य्यभिष्यंदि स्वादु स्निग्धं घनं गुरु॥३०॥
वह्निहृत्कफकृन्नित्यं विकारान्कुरुते बहून् ।
साधारणं तु मधुरं दीपनं शीतलं लघु ॥ ३१ ॥
तर्पणं रोचनं तृष्णादाहदोषत्रयप्रणुत् ।

भौम जल विद्वानोंने तीन प्रकारका कहा है। जांगल, अनूप और साधारण

इन भेदोंसे जिस देशमें थोड़े वृक्ष हों और पित्त तथा रक्तसम्बन्धि रोग हों उसको जांगल देश कहते हैं और वहांके जलको जांगल कहते है। जो देश बहुत जलवाला, बहुत वृक्षोंवाला तथा वात और कफके रोगोंवाला होता है उसे अनूप देशके लक्षण मिश्रित हों उसे साधारण देश तथा वहांके जलको साधारण जल कहते है। जांगल जल रूक्ष, लवणरसयुक्त,हलका, पित्तनाशक वह्निको हरनेवाला, कफको बढानेवाला, पथ्य और बहुतसे विकारोंको करनेवाला है। आनूपजल--अभिष्यंदि, स्वादु, स्निग्ध, गाढा, भारी. वह्नि-को हरनेवाला, कफकारक और नित्य विकारोंको उत्पन्न करनेवाला होता है। साधारण जल--मधुर, दीपन, शीतल, हलका, तृप्तिकारक, रुचिकारक तथा तृष्णा, दाह और त्रिदोषको नष्ट करनेवाला है॥ २५--३१ ॥

भौमनादेयम्।

नद्या नदस्य वा नीरं नादेयमिति कीर्तितम् ॥३२॥
नादेयमुदकं रूक्षं वातलं लघु दीपनम्।
अनभिष्यंदि विशदं कटुकं कफपित्तनुत् ॥ ३३ ॥
नद्यः शीघ्रवहा लघ्व्यः सर्वा याश्चामलोदकाः।
गुर्व्यः शैवलसंछन्नाः मंदगाः कलुषाश्च याः ॥३४ ॥
हिमवत्प्रभवाः पथ्या नद्योश्माहतपाथसः।
गंगाशतद्रुसरयूयमुनाद्या गुणोत्तमाः ॥ ३५ ॥
सह्यशैलभवा नद्यो वेणीगोदावरीमुखाः।
कुर्वंति प्रायशः कुष्ठमीषद्वातकफावहाः ॥ ३६ ॥
नदीसरस्तडागस्थे कूपप्रस्रवणादिजे।
उदके देशभेदेन गुणान्दोषांश्च लक्षयेत् ॥ ३७ ॥

नदी या नदके जलको नादेय कहते है। नदीका जल--रूक्ष, वातका-

रक, हल्का, दीपन, अभिष्यन्दको न करनेवाला, विशद, कटु और कफ तथा पित्तको दूर करनेवाला है। जो नदियें शीघ्र वहनेवाली तथा निर्मल जलवाली होती है वह हलके जलवाली होती है। जो नदियें मन्द २ बहनेवाली, शैवाल (काई) से ढकी हुई तथा मलीन है उनका जल भारी होता है। जो गंगा, शतद्रु, सरयू, यमुना आदि नदियां हिमालयसे उत्पन्न होती हैं, तथा मार्गमें पत्थरोंसे आहत होती हैं, उनका जल पथ्य तथा गुणमें उत्तम है। सह्याद्रिसे उत्पन्न हुई वेणी, गोदावरी आदि नदियें कुष्ठको, किंचित् वात तथा कफको करती हैं। नदी, तालाब, सरोवर, कूप अथवा झरने आदिके जलके गुण और दोष उस स्थानके अनुसार जानने ॥ २२-२७॥

औद्भिदम्।

विदार्य भूमिं निम्नां यन्महत्या धारया स्रवेत्।
तत्तोयमौद्भिदं नाम वदंतीति महर्षयः॥ ३८॥
औद्भिदं वारि पित्तघ्नमविदाह्यतिशीतलम्।
प्रीणनं मधुरं बल्यमीषद्वातकरं लघु॥ ३९॥

जो जल नीचेकी भूमिको विदीर्ण करके बडी धारामें वहे उसको महर्षि औद्भिद कहते है। औद्भिद—पित्तनाशक, दाहको न करनेवाला, अत्यन्त शीतल, तृप्ति करनेवाला, बलकारक, वायुको किंचित् कुपित करनेवाला और हलका होता है॥ ३८॥ ३९॥

नैर्झरम्।

शैलसानुस्रवद्वारिप्रवाहो निर्झरो झरः।
स तु प्रस्रवणश्चापि तत्रत्यं नैर्झरं जलम्॥ ४०॥
नैर्झरं रुचिकृन्नीरं कफघ्नं दीपनं लघु।
मधुरं कटुपाकं च वातलं स्यादपित्तलम्॥ ४१॥

जो जलका प्रवाह पर्वतकी चोटियोंपरसे झरता है उसको निर्झर और प्रस्रवण कहते है। वहांके जलको निर्झर कहते है। निर्झर जल—रुचिकारक

कफनाशक, दीपन, हल्का, मधुर, पाकमें कटु, वातनाशक और पित्तको न करनेवाला है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

सारसम् ।

नद्याः शैलादिरुद्धाया यत्र संश्रुत्य तिष्ठति ।
तत्सरोजदलच्छन्नं तदंभः सारसं स्मृतम् ॥ ४२ ॥
सारसं सलिलं बल्यं तृष्णाघ्नं मधुरं लघु ।
रोचनं तुवरं रूक्षं बद्धमूत्रमलं स्मृतम् ॥ ४३ ॥

पर्वत आदिसे रुका हुआ जहाँ नदीका जल झर २ कर इकट्ठा होता है और वह कमलके पत्रोंसे ढका हुआ हो उस स्थानके जलको सारस कहते है । सारस जल—बलकारक, तृष्णानाशक, मधुर, हलका, रुचिकारक, कसैला, रूक्ष और मूत्र तथा मलको बाँधनेवाला होता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

तडागम् ।

प्रशस्तभूमिभागस्थो बहुसंवत्सरोषितः ।
जलाशयस्तडागः स्यात्ताडागं तज्जलं स्मृतम् ॥४४॥
ताडागमुदकं स्वादु कषायं कटुपाकि च ।
वातलं बद्धविण्मूत्रमसृक्पित्तकफापहम् ॥ ४५ ॥

अनेक वर्षोंका पुराना और उत्तम स्थानपर बना हुआ तालाव तडाग होता है । तडागका जल—स्वादु, कसैला, कटुपाकी, वातकारक, मल तथा मूत्रको बाँधनेवाला और रक्तविकार, पित्त तथा कफको नष्ट करनेवाला है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

वापी ।

पाषाणैरिष्टकाभिर्वा बद्धः कूपो बृहत्तरः ।
ससोपाना भवेद्वापी तज्जलं वाप्यमुच्यते ॥ ४६ ॥

वाप्यं वारि यदि क्षारं पित्तकृत्कफवातहृत् ।
तदेव मिष्टं कफकृद्वातपित्तहरं भवेत् ॥ ४७ ॥

पत्थर और ईंटोंसे बने हुए पौडियोंवाले बहुत बडे कुएँको वापी (बावली) कहते हैं । वापीका जल यदि क्षार हो तो पित्तकारक और कफवातनाशक होता है । और यदि मधुर हो तो कफकारक और वात तथा पित्तको हरनेवाला होता है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

कौपम् ।

भूमौ खातोल्पविस्तारो गंभीरो मण्डलाकृतिः ।
बद्धोऽबद्धः स कूपः स्यात्तदंभः कौपमुच्यते ॥४८॥
कौपं पयो यदि स्वादु त्रिदोषघ्नं हितं लघु ।
तत्क्षारं कफवातघ्नं दीपनं पित्तकृत्परम् ॥ ४९ ॥

पृथ्वीमें अल्प विस्तारवाला, अत्यन्त गहारा तथा गोल आकारका खोदा हुआ गढ़ा कूप (कुआँ) कहलाता है । कुएँका जल यदि मधुर हो तो त्रिदोषनाशक, हितकारक तथा हलका है। यदि क्षार हो तो कफ वातको नष्ट करनेवाला, दीपन और अत्यन्त पित्तकारक है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

चौंड्यम् ।

शिलाकीर्णं स्वयं श्वभ्रं नीलांजनसमोदकम् ।
लतावितानसंछन्नं चौंड्यमित्यभिधीयते ॥ ५० ॥
अश्मादिभिरबद्धं यत्तच्चौंड्यमिति वापरे ।
तत्रत्यमुदकं चौंड्यं मुनिभिस्तदुदाहृतम् ॥ ५१ ॥
चौंड्यं वह्निकरं नीरं रूक्षं कफहरं लघु ।
मधुरं पित्तनुद्रुच्यं पाचनं विशदं स्मृतम् ॥ ५२ ॥

शिलाओंसे ढका हुआ स्वयं श्वेत, नील अञ्जनके समान जलवाला तथा लताके समूहोंसे ढका हुआ जो गढ़ा हो उसको चौंड्य कहते

हैं। अन्य आचार्योंके मतमें जो गढ़ा शिला आदिसे बद्ध न हो वह चौंड्य कहलाता है। चौंड्यका जल—अग्निदीपक, रूक्ष, कफनाशक, हलका, मधुर, पित्तनाशक, रुचिकारक पाचन और विशद होता है ॥ ५०–५२ ॥

पाल्वलम्।

अल्पं सरः पल्वलं स्याद्यत्र चन्द्रर्क्षगे रवौ।
तत्तिष्ठति जलं किंचित्तत्रत्यं वारि पाल्वलम् ५३॥
पाल्वलं वार्य्यभिष्यंदि गुरु स्वादु त्रिदोषकृत्।

जिस छोटे तालावमें सूर्यके मृगशिर नक्षत्रमें आने पर जल न रहे उसको पल्वल कहते हैं। पल्वलका जल—अभिष्यन्दि, भारी, स्वादु तथा त्रिदोषकारक है ॥ ५३ ॥

विकरम्।

नद्यादिनिकटे भूमिर्या भवेद्वालुकामयी ॥ ५४ ॥
उद्भाव्यते यत्तोयं तु तज्जलं विकरं विदुः।
विकरं शीतलं स्वच्छं निर्दोषं लघु च स्मृतम् ५५
तुवरं स्वादु पित्तघ्नं क्षारं तत्पित्तलं मनाक्।

नद्यादिके समीपकी रेतेवाली पृथ्वीमेंसे खोद कर जो जल निकाला जाय उसको विकर कहते है। विकर जल—शीतल, स्वच्छ, निर्दोष, हलका, कसैला, स्वादु, पित्तनाशक, सक्षार और किंचित् गरम है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

केदारम्।

केदारं क्षेत्रमुद्दिष्टं कैदारं तज्जलं स्मृतम् ॥ ५६ ॥
कैदारं वार्य्यभिष्यंदि मधुरं गुरु दोषकृत्।

खेतको केदार कहते हैं। केदारका जल—अभिष्यन्दि, मधुर, भारी और दोषोंको करनेवाला है ॥ ५६ ॥

वृष्टिजलम् ।

वार्षिकं तदहर्वृष्टं भूमिस्थमहितं जलम् ॥ ५७ ॥
त्रिरात्रमुषितं तत्तु प्रसन्नममृतोपमम् ।

आश्विनमें वर्षाका जल भूमिपर गिरा हुआ जिस दिन वरसा हो उस दिन हानिकारक है । तीन दिनके अनन्तर वह स्वच्छ होकर अमृतके समान होता है ॥ ५७ ॥

विहितजलम् ।

हेमन्ते सारसं तोयं ताडागं वा हितं स्मृतम् ॥ ५८ ॥
हेमन्ते विहितं तोयं शिशिरेऽपि प्रशस्यते ।
वसन्तग्रीष्मयोः कौपं वाप्यं वा नैर्झरं जलम् ॥ ५९
नादेयं वारि नादेयं वसंतग्रीष्मयोर्बुधैः ।
विषवद्वनवृक्षाणां पत्राद्यैर्दूषितं यतः ॥ ६० ॥
औद्भिदं चांतारिक्षं वा कौपं वा प्रावृषि स्मृतम् ।
शस्तं शरदि नादेयं नीरमंशूदकं परम् ॥ ६१ ॥
दिवा रविकरैर्जुष्टं निशि शीतकरांशुभिः ।
ज्ञेयमंशूदकं नाम स्निग्धं दोषत्रयापहम् ॥ ६२ ॥
अनभिष्यंदि निर्दोषमांतारिक्षजलोपमम् ।
बल्यं रसायनं मेध्यं शीतं लघु सुधासमम् ॥ ६३ ॥

हेमन्त ऋतुमें सारस और ताडाग जल हितकारी है। हेमन्तमें विहित जल शिशिरमें भी प्रशस्त है । वसन्त और ग्रीष्ममें कौप (कुएका) वाप्य (वावलीका) और निर्झर जल देना योग्य है । विद्वानोंको वसन्त और ग्रीष्ममें नदीका जल प्रयोगमें नहीं लाना चाहिये; क्योंकि इन ऋतुओं में विषैले वनके वृक्षोंके पत्रोंसे वह जल दूषित हो जाता है । प्रावृट् ऋतुमें

औद्भिद और आन्तरिक्ष अर्थात् आकाशका और कूपका जल पीना योग्य है ॥ शरद ऋतुमें नादेय और अंशूदक पीना योग्य है। जिस जलके ऊपर दिनमें सूर्य्यकी तथा रात्रिमें चन्द्रमाकी किरणें गिरें उसे अंशूदक कहते हैं । अंशूदक–स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, अनभिष्यन्दी, दोषरहित, आकाशके जलके समान, बलकारक, रसायन, बुद्धिवर्धक, शीत, लघु और अमृतके समान होता है ॥ ५८--६३ ॥

सुश्रुतः ।

पौषे वारि सरोजातं माघे तत्तु तडागजम् ।
फाल्गुने कूपसंभूतं चैत्रे चौंड्या हिमं मतम् ॥ ६४ ॥
वैशाखे नैर्झरं नीरं ज्येष्ठे शस्तं तथोद्भिदम् ।
आषाढे शस्यते कौपं श्रावणे दिव्यमेव च ॥ ६५ ॥
भाद्रे कौपं पयः शस्तमाश्विने चौंड्यमेव च ।
कार्तिके मार्गशीर्षे च जलमात्रं प्रशस्यते ॥ ६६ ॥

सुश्रुत कहते है पौषमासमें सरोवरका, माघमें तड़ागका, फाल्गुनमे कूपका, चैत्रमें चौण्ड्याका, वैशाखमें निर्झर (झरने) का, ज्येष्ठमें औद्भिद, आषाढमें कुएँका, श्रावणमें दिव्य (आकाशका) भाद्रपदमें कूपका, आश्विनमें चौण्ड्याका और कार्तिक तथा मार्गशीर्षमें सर्व प्रकारका जल पीना योग्य है ॥ ६४--६६ ॥

जलग्रहणकालः ।

भौमानामंभसां प्रायो ग्रहणं प्रातरिष्यते ।
शीतत्वं निर्मलत्वं च यतस्तेषां मता गुणाः ॥ ६७ ॥

भौम अर्थात् पृथ्वीके जलको प्रातःकाल ग्रहण करना चाहिये क्योंकि भौम जल उस समय शीतल और निर्मल होते है ॥ ६७ ॥

जलपानम् ।

अत्यंबुपानान्न विपच्यतेऽन्नं निरंबुपानाच्चसएवदोषः ।
तस्मान्नरो वह्निविवर्धनाय मुहुर्मुहुर्वारिपिवेदभूरि ६८

जलके बहुत पीनेसे अन्न नहीं पचता और जलके बिल्कुल न पीनेसे अन्न नहीं पचता. इस कारण अग्निको बढानेके लिये थोडा २ तथा कई वार जल पीना चाहिये ॥ ६८ ॥

शीतलजलम् ।

मूर्छादिपित्तदाहेषु विषे रक्ते मदात्यये ।
श्रमे भ्रमे विदग्धेऽन्ने तमके क्षवथौ तथा ॥ ६९ ॥
ऊर्द्धगे रक्तपित्ते च शीतमंबु प्रशस्यते ।

मूर्छा, पित्त, दाह, विष, रक्तविकार, मदात्यय, श्रम, भ्रम, तमकश्वास, क्षवथु (छींक) और ऊर्ध्वगत रक्तपित्तमें तथा जिनको विदग्धाजीर्ण हो उनको शीतल जल पीना योग्य है ॥ ६९ ॥

तन्निषेधः ।

पार्श्वशूले प्रतिश्याये वातरोगे गलग्रहे ॥ ७० ॥
आध्मानोस्तमिते कोष्ठे सद्यःशुद्धौ नवज्वरे ।
अरुचिग्रहणीगुल्मश्वासकासेषु विद्रधौ ॥ ७१ ॥
हिक्कायां स्नेहपाने च शीतांबु परिवर्जयेत् ।

पसलीके शूलमें, प्रतिश्यायमें, वातरोगमें, गलग्रहमें, आध्मानमें, कोठेकी शुद्धिके लिये विरेचन करानेपर, नवीन ज्वरमें, अरुचिमें, ग्रहणीमें, गुल्ममें, श्वासमें, कासमें, विद्रधिमें, हिचकीमें तथा स्नेहके पीनेके अनन्तर शीत जल नहीं देना चाहिये ॥ ७० ॥७१ ॥

अल्पजलम् ।

अरोचके प्रतिश्याये मंदेऽग्नौ श्वयथौ क्षये ॥ ७२ ॥

मुखप्रसेके जठरे कुष्ठे नेत्रामये ज्वरे ।
व्रणे च मधुमेहे च पिबेत्पानीयमल्पकम् ॥ ७३॥

अरुचि, प्रतिश्याय, अग्निमान्द्य, शोथ, क्षय, मुखप्रसेक (मुहँसे जलका बहना), उदररोग, कुष्ठ, नेत्ररोग, ज्वर, व्रण और मधुमेहमें पानी थोडा पीना चाहिये ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

आवश्यकता ।

जीवनं जीविनां जीवो जगत्सर्वं तु तन्मयम् ।
अतोऽत्यंतनिषेधेऽपि न क्वचिद्वारि वार्य्यते ॥७४ ॥

सम्पूर्ण प्राणियोंका जीवन जल है, सम्पूर्ण जगत् जलमय है इस लिये जिन रोगोंमें अत्यन्त निषेध भी है उनमें भी सर्वथा जलका त्याग नही करना चाहिये ॥ ७४ ॥

हारीतः ।

तृष्णा गरीयसी घोरा सद्यः प्राणविनाशिनी ।
तस्माद्देयं तृषार्ताय पानीयं प्राणधारणम् ॥ ७५ ॥
तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुंचति ।
अतः सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्वारि वर्जयेत् ॥७६ ॥

हारीतने भी कहा है तृष्णा अत्यन्त भयंकर और शीघ्र ही प्राणोंको नष्ट कर देनेवाली होती है, इस लिये तृषार्तको प्राण धारण करनेके लिये जल अवश्य देना चाहिये । तृषित मनुष्य मोहको प्राप्त होता है और मोहको प्राप्त हुआ मनुष्य प्राणोंको छोड देता है इस लिये सब अवस्थामें जलका कहीं भी सर्वथा त्याग न करे ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

प्रशस्तजलम् ।

अगंधमव्यक्तरसं सुशीतं तर्षनाशनम् ।
स्वच्छं लघु च हृद्यं च तोयं गुणवदुच्यते ॥ ७७ ॥

गन्धरहित, जिसमें कोई रस प्रगट न हो, अत्यन्त शीतल, प्यासको

नष्ट करनेवाला, स्वच्छ, लघु और हृदयको प्रिय लगनेवाला जल उत्तम होता है ॥ ७७ ॥

निंदितम्।

पिच्छिलं कृमिलं क्लिन्नं पर्णशैवालकर्दमैः।
विवर्णं विरसं सांद्रं दुर्गंधं न हितं जलम् ॥ ७८ ॥
कलुषं छन्नमंभोजपर्णनीलीतृणादिभिः।
दुःस्पर्शनमसंस्पृष्टं सौरचांद्रमरीचिभिः ॥ ७९ ॥
अनार्तवं वार्षिकं तु प्रथमं तच्च भूमिगम्।
व्यापन्नं परिहर्तव्यं सर्वदोषप्रकोपनम् ॥ ८० ॥
तत्कुर्य्यात्स्नानपानाभ्यः तृष्णाध्मानचिरज्वरान्।
कासाग्निमांद्याभिष्यंदकंडुगंडादिकं तथा ॥ ८१ ॥

जो जल पिच्छिल, कीडोंवाला, पत्ते शैवाल और कीचड़ आदिसे खराब, बुरे वर्णवाला, रसरहित, गाढा तथा दुर्गंधित हो वह जल अहितकर होता है। एवं मलीन, कमलके पत्ते, शैवाल, तृण आदिसे ढका हुआ, बुरे स्पर्शवाला, सूर्य तथा चन्द्रमाकी किरणोंसे असंस्पृष्ट, विना ऋतु वरसा हुआ और पृथ्वी पर गिरा हुआ तथा खराब जल नहीं पीना चाहिये, क्योंकि वह सर्व दोषोंको प्रकुपित करता है। ऐसे जलका पीना तथा स्नान, तृष्णा, आध्मान, जीर्णज्वर कास, अग्निकी मंदता, अभिष्यन्द, कण्डु और गण्डरोगादिकोंको करता है ॥ ७८-८१ ॥

शोधनम्।

निंदितं चापि पानीयं क्वथितं सूर्य्यतापितम्।
सुवर्णं रजतं लोहं पाषाणं सिकतामपि ॥ ८२ ॥
भृशं संताप्य निर्वाप्य सप्तधा साधितं तथा।
कर्पूरजातिपुन्नागपाटलादिसुवासितम् ॥ ८३ ॥

शुचि सांद्रपटस्रावि क्षुद्रजंतुविवर्जितम्।
स्वच्छं कनकमुक्ताद्यैः शुद्धं स्याद्दोषवर्जितम् ॥८४॥
पर्णमूलबिसग्रंथिमुक्ताकतकशैवलैः।
गोमेदेन च वज्रेण कुर्य्यादंबुप्रसादनम् ॥ ८५ ॥
पीतं जलं जीर्य्यति यामयुग्मा-
द्यामैकमात्राच्छृतशीतलं च।
तदर्द्धमात्रेण शृतं कदुष्णं
पयःप्रपाके त्रय एव कालाः ॥ ८६ ॥

इति वारिवर्गः।

दूषित जल—उबालनेसे, सूर्य्यकी किरणों द्वारा तपानेसे, सुवर्ण, चांदी. लाह. पत्थर और रेतेको तपा कर सात वार बुझानेसे, कपूर, जाति, पुन्नाग (केशर) और पाढ़ल आदिसे सुवासित करनेसे, सफेद और गाढे कपड़ेमें छानने द्वारा क्षुद्रजन्तुओंको निकाल देनेसे और सुवर्ण तथा मोती आदिसे स्वच्छ करनेपर निर्दोष हो जाता है। पत्ते जड़ और बिससे तथा मुक्ता निर्मलिफल शैवल जल पिया हुआ दो याममें, गरम जल एक याम तथा किंचित् गरम जल चार घडीमें पच जाता है। जलके पचनेके यह तीन ही समय है ॥ ८२–८६ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज—विद्यालंकारशिवशर्म-
वैद्यशास्त्रिकृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-
निघण्टौ वारिवर्गः समाप्तः ॥ १० ॥

दुग्धवर्गः ११.



दुग्धम्।

दुग्धं क्षीरं पयः स्तन्यं बालजीवनमित्यपि।
दुग्धं समधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं परम् ॥ १ ॥
सद्यःशुक्रकरं पीतं सात्म्यं सर्वशरीरिणाम्।
जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजिकरं परम् ॥ २ ॥
वयःस्थापनमायुष्यं संधिकारि रसायनम्।
विरेकवांतिवस्तीनां तुल्यमोजोविवर्द्धनम् ॥ ३ ॥
जीर्णज्वरे मनोरोगे शोषमूर्च्छाभ्रमेषु च।
ग्रहण्यां पांडुरोगे च दाहे तृषि हृदामये ॥ ४ ॥
गर्भस्रावे च सततं हितं मुनिवरैः स्मृतम्।
बलवृद्धक्षतक्षीणक्षुद्व्यवायकृशाश्च ये ॥ ५ ॥
तेभ्यः सदातिशयितं हितमेतदुदाहृतम्।

दुग्ध, क्षीर, पय, स्तन्य तथा बालजीवन यह दूधके नाम है। दूधको फारसीमें शीरे और अंग्रेजीमें milk कहते है। दूध–मधुर, स्निग्ध, वातपित्त को हरनेवाला, वीर्यको जल्दी उत्पन्न करनेवाला, सर्व प्राणियोंके लिये हितकर, जीवनदायक, पुष्टिकारक, बल तथा बुद्धिको बढानेवाला, वाजी-करण, वायुको स्थापन करनेवाला तथा बढानेवाला, जोडनेवाला, रसायन और विरेचन, वमन और वस्तिक्रियावालोंके लिये हितकारी तथा ओजको बढानेवाला है। जीर्णज्वरमें, मनके रोगमें, शोष, मूर्छा तथा भ्रममें, ग्रहणीमें, पाण्डुरोगमें, दाहमें तृषामें, हृदयके रोगमें दूध अत्यन्त हितकर है यह मुनियोंने कहा है। बालक, वृद्ध, क्षतरोगवाला, क्षीण पुरुष इनको

तथा जो भूखसे अथवा मैथुनसे कृश हो गये है, उनको सर्वदा अत्यन्त हितकारी है ॥ १–५ ॥

गोदुग्धम् ।

गव्यं दुग्धं विशेषेण मधुरं रसपाकयोः ॥ ६ ॥
शीतलं स्तन्यकृत् स्निग्धं वातपित्तास्रनाशनम् ।
दोषधातुमलस्रोतःकिंचित्क्लेदकरं गुरु ॥ ७ ॥
जरासमस्तरोगाणां शांतिकृत्सेविनां सदा ।
कृष्णाया गोर्भवं दुग्धं वातहारि गुणाधिकम् ॥८॥
पीताया हरते पित्तं तथा वातहरं भवेत् ।
श्लेष्मलं गुरु शुक्लाया रक्ताचित्रातिवातहृत् ॥ ९ ॥
बालवत्सविवत्सानां गवां दुग्धं त्रिदोषकृत् ।
बष्कयिण्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत्पयः ॥ १० ॥

गायका दूध–रस और पाकमें अत्यन्त मधुर, शीतल, स्तनोंमें दूधको बढानेवाला, स्निग्ध, वात पित्त तथा रक्तविकारको नष्ट करनेवाला, दोष धातु मल तथा नाडियोंको किंचित् गीला करनेवाला तथा बुढापेके सब रोगोंको शमन करनेवाला है । काली गायका दूध–वातको हरनेवाला तथा गुणोंमें अधिक है । पीली गायका दूध पित्त तथा वायुको हरता है तथा श्वेत गायका दूध भारी और कफकारक है और लाल तथा चितकबरी गायका दूध वातको अत्यन्त हरनेवाला है । जिस गायका बछडा छोटा हो अथवा मर गया हो उसका दूध त्रिदोषकारक होता है। वष्कयिणी (बाखरी) गायका दूध–त्रिदोषनाशक, तृप्तिकारक तथा बलवर्धक होता है ॥६–१०॥

देशविशेषेण श्रैष्ठ्यम् ।

जांगलानूपशैलेषु चरंतीनां यथोत्तरम् ।
पयो गुरुतरं स्नेहं यथाहारं प्रवर्तते ॥ ११ ॥

जो गायें जागल तथा अनूप देशमें और पर्वतमें चरती हैं उनका दूध

एकसे दूसरा यथोत्तर भारी है। जैसी वस्तुको गाय खाती है उसके अनुसार ही उसका दूध स्निग्ध होता है ॥ ११ ॥

आहारविशेषम् ।

स्वल्पान्नभक्षणाज्जातं क्षीरं गुरु कफप्रदम् ।
तत्तु बल्यं परं वृष्यं स्वस्थानां गुणदायकम् ॥१२॥
पलालतृणकार्पासबीजजातं गुणैर्हितम् ।

थोडा अन्न खानेवाली गायोंका दूध—भारी, कफवर्द्धक, बलकारक,वीर्य्यवर्धक और स्वस्थ मनुष्योंके लिये हितकारी है। जो गायें पलालतृण, कपासके बीज (विनौले आदि) भक्षण करती है, उनका दूध अत्यन्त हितकारी है ॥ १२ ॥

माहिषम् ।

माहिषं मधुरं गव्यात्स्निग्धं शुक्रकरं गुरु ॥ १३ ॥
निद्राकरमभिष्यंदि क्षुधाधिककरं हिमम् ।

भैंसका दूध—मधुर, गायसे अधिक स्निग्ध, वीर्य्यवर्धक, भारी, निद्राकारक, अभिष्यन्दि, भूँखको अधिक लगानेवाला और शीतल है ॥ १३ ॥

छागम् ।

छागं कषायं मधुरं शीतं ग्राहि तथा लघु ॥ १४ ॥
रक्तपित्तातिसारघ्नं क्षयकासज्वरापहम् ।
अजानामल्पकायत्वात्कटुतिक्तनिषेवणात् ॥ १५ ॥
स्तोकांबुपानाद्व्यायामात्सर्वरोगापहं पयः ।

बकरीका दूध—कसैला, मधुर, शीतल, ग्राही, हलका और रक्तपित्त, अतिसार, क्षय, कास और ज्वरको हरनेवाला है। बकरीका छोटा शरीर होनेसे कटु, तिक्त पदार्थोंके सेवन करनेसे, पानी थोडा पीनेसे और अत्यन्त व्यायाम करनेसे उसका दूध सब रोगोंको नष्ट करता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

मृगीदुग्धम् ।

मृगीणां जांगलोत्थानामजाक्षीरगुणं पयः ॥ १६ ॥

जङ्गलकी हरनियोंका दूध भी बकरीके दूधके समान गुणवाला है ॥ १६ ॥

मेषीणाम् ।

आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरिप्रणुत् ।
अहृद्यं तर्पणं वृष्यं शुक्रपित्तकफप्रदम् ॥ १७ ॥
गुरु कासेऽनिलोद्भूते केवले चानिले वरम् ।

भेडका दूध—लवणरस युक्त, स्वादु, स्निग्ध, उष्ण, पथरीको तोडनेवाला, हृदयको अप्रिय, तृप्तिकारक, वृष्य, शुक्र पित्त और कफको बढानेवाला, भारी तथा वातजनित खांसीमें और केवल वातमें हितकारी है ॥ १७ ॥

अश्वीदुग्धम् ।

रूक्षोष्णं वडवाक्षीरं बल्यं शोषानिलापहम् ॥१८॥
अम्लं पटु लघु स्वादु सर्वमैकशफं तथा ।

घोडीका दूध—रूक्ष, गरम, बलकारक, शोष तथा वायुको नष्ट करनेवाला, अम्ल, लवणरसवाला, हलका, स्वादु है । और सब एक खुरवाले पशुओंका दूध इसके समान गुणोंवाला होता है ॥ १८ ॥

उष्ट्रीदुग्धम् ।

उष्ट्रीदुग्धं लघु स्वादु लवणं दीपनं तथा ॥ १९ ॥
कृमिकुष्ठकफानाहशोथोदरहरं सरम् ।

ऊंटनीका दूध—लघु, स्वादु, लवणरसयुक्त, दीपन, दस्तावर तथा कृमि, कुष्ठ, कफ, आनाह, शोथ और उदररोगको हरता है ॥ १९ ॥

हस्तिनीदुग्धम् ।

बृंहणं हस्तिनीदुग्धं मधुरं तुवरं गुरु ॥ २० ॥
वृष्यं बल्यं हिमं स्निग्धं चक्षुष्यं स्थिरताकरम् ।

हस्तिनीका दूध—धातुओंको पुष्ट करनेवाला, मधुर, कसैला, भारी, वीर्य्यवर्धक, वलकारक, शीतल, स्निग्ध, नेत्रोंको हितकारी तथा दृढता करनेवाला है ॥ २० ॥

नारीदुग्धम् ।

नार्य्या लघु पयः शीतं दीपनं वातपित्तजित् ॥ २१ ॥
चक्षुःशूलाभिघातघ्नं नस्याश्चोतनयोर्हितम् ।

स्त्रीका दूध—हलका, शीतल, दीपन, वात और पित्तको जीतनेवाला, नेत्रोंके शूल तथा अभिघातको नष्ट करनेवाला तथा नसवार देनेमें और आश्च्योतन कर्म (आंख तथा नाकमें टपकानेमें) श्रेष्ठ है ॥ २१ ॥

धारोष्णम् ।

धारोष्णं गोः पयो बल्यं लघु शीतं सुधासमम् ॥ २२
दीपनं च त्रिदोषघ्नं तद्धाराशिशिरं त्यजेत् ।
धारोष्णं शस्यते गव्यं धाराशीतं तु माहिषम् ॥ २३
शृतोष्णमाविकं पथ्यं शृतशीतमजापयः ।
आमं क्षीरमभिष्यंदि गुरु श्लेष्मामवर्द्धनम् ॥ २४ ॥
ज्ञेयं सर्वमपथ्यं तु गव्यमाहिषवर्ज्जितम् ।
नारीक्षीरं त्वाममेव हितं न तु शृतं हितम् ॥ २५ ॥
शृतोष्णं कफवातघ्नं शृतशीतं तु पित्तनुत् ।
अर्द्धोदकं क्षीरशिष्टमामाल्लघुतरं पयः ॥ २६ ॥

जलेन रहितं दुग्धमतिपक्वं यथायथा ।
तथातथा गुरु स्निग्धं वृष्यं बलविवर्द्धनम् ॥ २७ ॥

गायका धारोष्ण दूध अर्थात् जो दूध निकालते ही पी लिया जावे वह दूध—बलदायक, लघु, शीतल, अमृतके समान, दीपन, त्रिदोषनाशक है। धारोष्ण दूध ठण्डा हो जानेपर पीने योग्य नही होता। गायका दूध तो धारोष्ण प्रशस्त है और भैसका धाराशीत अर्थात् दुहनेके बाद शीतल हुआ प्रशस्त गुणोंवाला है । भेडका दूध-शीतल तथा बकरीका गरम पथ्य है। कच्चा दूध—अभिष्यन्दि, भारी, कफ और आमको बढानेवाला है इस लिये गाय और भैसके दूधके अतिरिक्त सब कच्चे दूध अपथ्य हैं। स्त्रीका दूध तो कच्चा ही हितकारी है, गरम नही। गरम किया हुआ दूध कफ और वातको नष्ट करता है, गरम करके ठण्डा किया हुआ दूध पित्तको नष्ट करता है तथा बराबरका जल डालकर उबालकर रहा हुआ केवल दूध कच्चे दूधसे भी हलका है। जल रहित दूधको जितना पकाते जावेंगे वह उतना २ भारी, स्निग्ध, वीर्य्य तथा बलवर्धक होता चला जाता है ॥ २२–२७ ॥

पीयूषकिलाटक्षीरशाकतक्रपिंडमोरटाः ।

क्षीरं तत्कालसूताया घनं पीयूषमुच्यते ।
नष्टदुग्धस्य पक्वस्य पिंडः प्रोक्तः किलाटकः॥ २८॥
अपक्वमेव यन्नष्टं क्षीरशाकं हि तत् पयः ।
दध्ना तक्रेण वा नष्टं दुग्धं बद्धं सुवाससा ॥ २९ ॥
द्रवभागेन रहितं यत्तक्रपिंडः स उच्यते ।
नष्टदुग्धभवं नीरं मोरटं जय्यटोऽब्रवीत् ॥ ३० ॥
पीयूषश्च किलाटं च क्षीरशाकं तथैव च ।
तक्रपिंड इमे वृष्या बृंहणा बलवर्द्धनाः ॥ ३१ ॥
गुरवः श्लेष्मला हृद्या वातपित्तविनाशनाः ।

दीप्ताग्नीनां विनिद्राणां विद्रधौ चाभिपूजिताः॥३२॥
मुखशोषतृषादाहरक्तपित्तज्वरप्रणुत् ।
लघुर्बलकरो रुच्यो मोरटः स्यात्सितायुतः ॥ ३३॥

तत्काल प्रसूत गाय आदिके गाढे दूधको पीयूष (खीस) कहते हैं। दूधको नष्ट हो जानेपर जो पिंड रह गया हो उसको किलाट (खोया) कहते हैं। जो दूध विना ही पके सूख गया हो उसे क्षीरशाक कहते हैं। दही या तक्र द्वारा जिस दूधको जमा कर कपडेमें छानकर जलरहित करके पिंडरूप वना दें उसे तक्रपिण्ड कहा जाता है। फटे हुए दूधके पानीको मोरट कहते है, यह जय्यटने कहा है।

पीयूष आदि पांचों प्रकारके दूध—वीर्यवर्धक, बृंहण, वलवर्धक, भारी, कफकारक, हृदयको प्रिय, वात और पित्तको नष्ट करनेवाले तथा जिनकी अग्नि प्रदीप्त है। जिनको नीद नही आती और विद्रधि रोगवालोंको हितकर है। खांड मिलाया हुआ मोरट—हलका, वलवर्धक, रुचिकारक और मुखशोष, तृषा, दाह, रक्तपित्त और ज्वरको दूर करनेवाला है॥ २८—३३ ॥

सन्तानिका (मलाई) आदिगुणाः ।

संतानिका गुरुः शीता वृष्या पित्तास्रपातनुत् ।
तर्पणी बृंहणी स्निग्धा बलासबलशुक्रला ॥ ३४ ॥
खण्डेन सहितं दुग्धं कफकृत्पवनापहम् ।
सितासितोपलायुक्तं शुक्रलं त्रिमलापहम् ॥ ३५ ॥
रात्रौ चन्द्रगुणाधिक्याद्व्यायामाकरणात्तथा ।
प्राभातिकं तदा प्रायः प्रादोषाद्गुरु शीतलम् ॥३६॥
दिवाकरकराघाताद्व्यायामानिलसेवनात् ।
प्राभातिका तु प्रादोषं लघुवातकफापहम् ॥ ३७ ॥

वृष्यं बृंहणमग्निदीपनकरं पूर्वाह्णपीतं पयो
मध्याह्ने बलदायकं कफहरं पित्तापहं दीपनम् ।
बाल्ये वह्निकरं ततो बलकरं वृद्धेषु रेतोवहं
रात्रौ पथ्यमनेकदोषशमनं क्षीरं सदा सेव्यते॥३८॥
वदंति पेयं निशि केवलं पयो
भोज्यं न तेनेह सहौदनादिकम् ।
भवेदजीर्णं यदि न स्वपेन्निशि
क्षीरस्य पीतस्य न शेषमुत्सृजेत् ॥ ३९ ॥
विदाहीन्यन्नपानानि दिवा भुंक्ते हि यन्नरः ।
तद्विदाहप्रशांत्यर्थं रात्रौ क्षीरं सदा पिबेत् ॥ ४० ॥
दीप्तानले कृशे पुंसि बाले वृद्धे पयःप्रिये ।
मतं हिततमं दुग्धं सद्यःशुक्रकरं यतः ॥ ४१ ॥
क्षीरं गव्यमथाजं वा कोष्णं दंडाहतं पिबेत् ।
लघु वृष्यं ज्वरहरं वातपित्तकफापहम् ॥ ४२ ॥
गोदुग्धप्रभवं किं वा छागीदुग्धसमुद्भवम् ।
भवेदेतत्त्रिदोषघ्नं रोचनं बलवर्द्धनम् ॥ ४३ ॥
वह्निवृद्धिकरं वृष्यं सद्यस्तृप्तिकरं लघु ।
अतिसारेऽग्निमांद्ये च ज्वरेऽजीर्णे प्रशस्यते ॥४४ ॥

इति दुग्धवर्गः ।

सन्तानिका अर्थात् मलाई—भारी, शीतल, वीर्य्यवर्धक, पित्त, रक्तविकार और वायुको नष्ट करनेवाली, तृप्तिकारक, बृंहण, स्निग्ध तथा कफ, बल और वीर्यको बढाती है ।

खाण्डवाला दूध—कफकारक और वायुनाशक है । बूरा और सितोपला (मिश्री) युक्त दूध, वीर्य्यवर्धक और त्रिदोषनाशक है ।

रातमें चन्द्रमाके गुणोंकी आधिक्यतासे तथा व्यायाम और परिश्रमके न करनेसे प्रातःकालका दूध-प्रायः शामके दूधसे भारी तथा ठण्डा है। सूर्यकी किरणोंके सम्पर्कसे, वायुके व्यायाम करनेसे, वायुके सेवन करनेसे सायंकालका दूध प्रातःकालके दूधकी अपेक्षा हलका तथा वात और कफको जीतनेवाला है।

पूर्वाह्णमें पिया हुआ दूध-वीर्यवर्धक, धातुओंको पुष्ट करनेवाला और अग्निको वर्धन करनेवाला होता है। मध्याह्नमें पिया हुआ बलदायक, कफनाशक, पित्तको हरनेवाला तथा दीपन होता है। रात्रिमें पिया हुआ बच्चोंके लिये अग्निदीपक तथा बलकारी, वृद्धोंके लिये वीर्योत्पादक, पथ्यकारक अनेक दोषोंको शमन करनेवाला है। कुछ मनुष्योंके मतमें रातको दूध ही पीना चाहिये। उसके साथ अन्न आदि नही खाना चाहिये। क्यों कि यदि रात्रिमें निद्रा नही आवे तो अजीर्ण होनेका भय है तथा वर्तनमें लिया हुआ दूध सब पी जाना चाहिये छोडना नही चाहिये छोडा हुआ दूध दोषयुक्त हो जाता है। मनुष्य दाह करनेवाले जो अन्नपान करता है उनकी शांतिके लिये रातको उसको दूध अवश्य पीना चाहिये। जिनकी अग्नि दीप्त हो उनके लिये तथा कृश, बालक, वृद्ध इनके लिये दूध अत्यन्त हितकारी है। क्यों कि यह शीघ्र ही वीर्यको उत्पन्न कर देता है।

गाय और बकरीके दूधको यदि दण्डसे मथ कर किंचित् गरम करके पीवे तो यह दूध-लघु, वीर्यवर्धक, ज्वरनाशक तथा त्रिदोषनाशक होता है।

गाय और बकरीके दूधकी फेन (झाग) त्रिदोषनाशक, रुचिकारक, बलवर्धक, अग्निवर्धक, वीर्यकारक, शीघ्रही तृप्तिको करनेवाली, हलकी तथा अतिसार, मन्दाग्नि, ज्वर और अजीर्णमें प्रशस्त है॥ ३४-४४॥

निंदितम्।

विवर्णं विरसं चाम्लं दुर्गंधं ग्रथितं पयः।
वर्जयेदम्ललवणयुक्तं बुद्ध्यादिहृद्यतः॥ ४५॥

बुरे वर्णवाले, रसरहित, दुर्गन्धित, फटे हुए तथा अम्ल और लवण रस-

वाले दूधका त्याग कर देना चाहिये क्यों कि यह बुद्ध्यादिके हरने-वाला है ॥ ४५ ॥

इती श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज–विद्यालंकार–श्रीशिवशर्म-वैद्यशास्त्रिकृत–शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-निघण्टौ दुग्धवर्गः समाप्तः ॥ ११ ॥

दधिवर्गः १२.



दधि ।

दध्युष्णं दीपनं स्निग्धं कषायानुरसं गुरु ।
पाकेऽम्लं श्वासपित्तास्रशोथमेदःकफप्रदम् ॥ १ ॥
मूत्रकृच्छ्रे प्रतिश्याये शीतगे विषमज्वरे ।
अतिसारेऽरुचौ कार्श्ये शस्यते बलशुक्रकृत् ॥ २ ॥

दधि–गरम, दीपन, स्निग्ध, कषायानुरस, भारी, पाकमें अम्ल तथा श्वास, पित्त, रक्तविकार, शोथ, मेद और कफको करनेवाली है । मूत्रकृच्छ्रमें, प्रतिश्यायमें शीतयुक्त विषमज्वरमें, अतिसारमें, अरुचिमें और कृशतामें दही अत्यन्त हितकारी तथा बल और वीर्यको बढानेवाला है ॥ १ ॥ २ ॥

तद्भेदः ।

आदौ मन्दं ततः स्वादु स्वाद्वम्लं च ततः परम् ।
अम्लं चतुर्थमत्यम्लं पञ्चमं दधि पञ्चधा ॥ ३ ॥
मन्दं दुग्धवदव्यक्तरसं किंचिद्घनं भवेत् ।
मन्दं स्यात्सृष्टविण्मूत्रदोषत्रयविदाहकृत् ॥ ४ ॥

यत्सम्यग्घनतां यातं व्यक्तस्वादुरसं भवेत् ।
अव्यक्ताम्लरसं तत्तु स्वादु विज्ञैरुदाहृतम् ॥ ५ ॥
स्वादु स्यादत्यभिष्यंदि वृष्यं मेदःकफापहम् ।
वातघ्नं मधुरं पाके रक्तपित्तप्रसादनम् ॥ ६ ॥
स्वाद्वम्लं सांद्रमधुरं कषायानुरसं भवेत् ।
स्वाद्वम्लस्य गुणा ज्ञेयाः सामान्यदधिवज्जनैः ॥७॥
यत्तिरोहितमाधुर्य्यं व्यक्ताम्लत्वं तदम्लकम् ।
अम्लं तु दीपनं पित्तरक्तश्लेष्मविवर्द्धनम् ॥ ८ ॥
तदत्यम्लं दन्तरोमहर्षकण्ठादिदाहकृत् ।
अत्यम्लं दीपनं रक्तवातपित्तकरं परम् ॥ ९ ॥
गव्यं दधि विशेषेण स्वाद्वम्लं च रुचिप्रदम् ।
पवित्रं दीपनं हृद्यं पुष्टिकृत्पवनापहम् ॥ १० ॥
उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम् ।
माहिषं दधि सुस्निग्धं श्लेष्मलं वातपित्तनुत् ॥११॥
स्वादुपाकमभिष्यंदि वृष्यं गुर्वस्रदूषकम् ।
आजं दध्युष्णकं ग्राहि लघु दोषत्रयापहम् ॥१२ ॥
शस्यते श्वासकासार्शःक्षयकार्श्येषु दीपनम् ।
पक्वदुग्धभवं रुच्यं दधि स्निग्धगुणोत्तमम् ॥ १३॥
पित्तानिलापहं सर्वधात्वग्निबलवर्द्धनम् ।
असारं दधि संग्राहि शीतलं वातलं लघु ॥ १४ ॥
विष्टंभि दीपनं रुच्यं ग्रहणीरोगनाशनम् ।

गलितं दधि सुस्निग्धं वातघ्नं कफकृद्गुरु ॥ १५ ॥
बलपुष्टिकरं रुच्यं मधुरं नातिपित्तकृत् ।
सशर्करं दधि श्रेष्ठं तृष्णापित्तास्रजित् परम् ॥१६॥
सगुडं वातनुद् वृष्यं बृंहणं तर्पणं गुरु ।
न नक्तं दधि भुञ्जीत न चाप्यघृतशर्करम् ॥ १७॥
नामुद्गसूपं नाक्षौद्रं नोष्णैर्नामलकैर्विना ।
शस्यते दधि नो रात्रौ शस्तं चांबुघृतान्वितम्॥१८॥
रक्तपित्तकफोत्थेषु विकारेषु च नैव तत् ।
हेमन्ते शिशिरे चापि वर्षासु दधि शस्यते ॥ १९॥
शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशस्तद्विगर्हितम् ।
ज्वरासृक्पित्तवीसर्पकुष्ठपाण्ड्वामयभ्रमान् ॥ २० ॥
प्राप्नुयात्कामलां चोग्रां विधिं हित्वा दधिप्रियः ।
दध्नस्तूपरि यो भागो घनः स्नेहसमन्वितः ॥२१॥
स लोके सर इत्युक्तो दध्नो मण्डस्तु मस्त्विति ।

मन्द, स्वादु, स्वाद्वम्ल, अम्ल और अत्यम्ल इन भेदोंसे दही पांच प्रकारका है ।

दूधके समान अव्यक्त रसवाला तथा गाढा जो दही हो उसको मंद कहते है। मंद दही—मूत्र मलको निकालनेवाला तथा त्रिदोष और दाहको करता है ।

जिस दहीमें अम्ल रस व्यक्त न हुआ हो उसको स्वादु कहते हैं। स्वादु दही—अभिष्यन्दि, वीर्यवर्धक, मेद और कफको बढानेवाला, वातनाशक,पाकमें मधुर तथा रक्तपित्तको दूर करनेवाला है ।

जो दही गाढा, मधुर तथा कषायानुरस हो उसको स्वाद्वम्ल कहते है। स्वाद्वम्लके गुण सामान्य दधिके समान ही जानने ।

जिस दहीमें मीठेपनका नाश तथा खटाई व्यक्त हो उसको अम्ल कहते हैं। अम्ल दही–पित्त, रक्तविकार और कफको बढाता है।

जो दही दन्त और रोमोंमें हर्ष तथा कण्ठ आदिमें दाह करता है उसको अत्यम्ल कहते हैं। अत्यम्ल दही–दीपन तथा रक्त, वात और पित्तका अत्यन्त कोप करता है।

गायका दही विशेष करके मीठा, खट्टा, रुचिकारक, पवित्र, दीपन, हृदयको प्रिय, पुष्टिकारक तथा पवननाशक है।

सब दधियोंमें गायका दही ही अधिक गुणोंवाला है।

भैसका दही–अत्यन्त स्निग्ध, कफकारक, वातपित्तनाशक, पाकमें स्वादु, अभिष्यन्दि, वीर्यवर्धक, भारी और रक्तको दूषित करनेवाला है।

बकरीका दही–गरम, ग्राही, हलका, त्रिदोषनाशक तथा श्वास, कास, अर्श, क्षय और कृशतामें हितकारी ह तथा दीपन है।

पके हुए दूधका दही–रुचिकारक, स्निग्ध, उत्तम गुणोंवाला, पित्त तथा वायुको नष्ट करनेवाला तथा सब धातु, अग्नि और बलको बढानेवाला है।

साररहित दूधका दही–ग्राही, शीतल, वातकारक, लघु, विष्टम्भकारक, दीपन, रुचिकारक और ग्रहणी रोगको नष्ट करनेवाला होता है।

गालित अर्थात् वस्त्रमें छना हुआ दही–स्निग्ध, वातनाशक, कफकारक, भारी, बलपुष्टिकारक, रुचिकारक, मधुर और किंचित् पित्तको करनेवाला है।

बूरेवाला दही–श्रेष्ठ तथा तृष्णा, पित्त और रक्तविकारोंको जीतनेवाला है।

गुडवाला दही–वीर्यवर्धक, बृंहण, तृप्तिदायक और भारी है।

रात्रिमें दही खाने योग्य नही यदि खाना भी हो तो बिना घृत और खाण्ड, बिना मूंगकी दालके, बिना मधुके, तथा बिना गरम पदार्थोंके और आमलोंके न खावे। रातको दही खाना उचित नही; यदि खाना हो तो घृत और जल डालकर खावे। एवं रक्त पित्त कफविकारोंमें तो दही खाना ही नही चाहिये।

हेमन्त, शिशिर और वर्षामें दही खाना उत्तम है। शरद्, ग्रीष्म और वसन्तमें प्रायः दही खाना गर्हित है।

जो मनुष्य विधिके विना दही खाता है वह ज्वर, रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ठ, पाण्डु और भ्रमको तथा उग्र कामलाको प्राप्त करता है।

दहीके ऊपरका जो भाग गाढा तथा स्नेहयुक्त होता है उसे सर कहते हैं। और दहीके मण्डको मस्तु कहते हैं ॥ ३–२१ ॥

सरः स्वादुर्गुरुर्वृष्यो वातवह्निप्रणाशनः ॥ २२ ॥
साम्लो वस्तिप्रशमनः पित्तश्लेष्मविवर्द्धनः ।
मस्तु क्लमहरं बल्यं लघुभक्ताभिलाषकृत् ॥ २३ ॥
स्रोतोविशोधनं ह्लादि कफतृष्णानिलापहम् ।
अवृष्यं प्रीणनं शीघ्रं भिनत्ति मलसंचयम् ॥ २४॥

इति दधिवर्गः ।

सर–स्वादु, भारी, वीर्यवर्धक, वात तथा वह्निको नष्ट करनेवाला होता है। तथा खट्टा, वस्तिरोगोंको शमन करनेवाला और पित्त और कफको बढानेवाला होता है।

मस्तु–ग्लानिको हरनेवाला, बलकारक, हलका, अन्नकी इच्छा करनेवाला, नाडियोंका शोधन करनेवाला, आह्लादकारक, अवृष्य, तृप्तिकारक, मल संचयको शीघ्र ही तोडनेवाला और कफ, तृष्णा तथा वायुको नष्ट करता है ॥ २२–२४ ॥

इति श्रीवैद्यरत्न–पं०–रामप्रसादात्मजविद्यालंकार–शिवशर्मवैद्यकृत-शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ दधिवर्गः समाप्तः ॥ १२ ॥

तक्रवर्गः १२.



घोलं तु मथितं तक्रमुदश्विच्छच्छिकापि च ।
ससरं निर्जलं घोलं मथितं त्वसरोदकम् ॥ १ ॥
तक्रं पादजलं प्रोक्तमुदश्वित्त्वर्द्धवारिकम् ।
छच्छिका सारहीना स्यात्स्वच्छा प्रचुरवारिका ॥२॥

तक्र पांचप्रकारका है, घोल, मथित, तक्र, उदश्वित् और छच्छिका। विना जल डाले मलाई सहित विलोये हुए दहीको घोल कहते है। मलाई उतार कर विना जल डाले जो दही विलोया जाय उसे मथित कहते है। जिस दहीमें चतुर्थ भाग जल डालकर विलोया जाय उसको तक्र कहते हैं। जिस दहीमें आधा जल डालकर विलोया जाय उसको उदश्वित् कहते हैं। तथा जिस दहीमेंसे मक्खन निकाल लिया हो और जो स्वच्छ तथा अत्यन्त जलवाला हो उसको छच्छिका कहते है ॥ १ ॥ २ ॥

घोलं तु शर्करायुक्तं गुणैर्ज्ञेयं रसालवत् ।
वातपित्तहरं ह्लादि मथितं कफपित्तनुत् ॥ ३ ॥
तक्रं ग्राहि कषायाम्लं स्वादुपाकरसं लघु ।
वीर्य्योष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम् ॥४॥
ग्रहण्यादिमतां पथ्यं भवेत्संग्राहि लाघवात् ।
किंचित्स्वादुविपाकित्वान्न च पित्तप्रकोपनम् ॥५॥
कषायोष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम् ।
कषायोष्णंविकाशित्वाद्रौक्ष्याच्चापि कफापहम् ॥६॥

खाण्ड डालकर पिया हुआ घोल रसालाके समान गुणोंवाला होता है, तथा वातपित्तनाशक और मनको प्रसन्न करनेवाला होता है।

माथित–कफ पित्तको दूर करनेवाला है ।

तक्र–ग्राही, कसैला, खट्टा, पाक और रसमें स्वादु, हलका, उष्णवीर्य, दीपन, वीर्यवर्धक, तृप्तिकारक, वातनाशक और ग्रहणी आदि रोगवालोंके लिये पथ्य है ।

तक्र–लघु होनेसे ग्राही, पाकमें किंचित् स्वादु होनेसे वातको प्रकुपित न करनेवाला, कषाय, गरम, विकाशी तथा रूक्ष होनेसे कफनाशक होता है २–६

न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्न तक्रदग्धाः प्रभवंति रोगाः ।
यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः ॥
अम्लेन वातं मधुरेण पित्तं कफं कषायेण निहंति सद्यः ।
उदश्वित्कफकृद्बल्यमामघ्नं परमं मतम् ॥ ८ ॥
छच्छिका शीतला लघ्वी पित्तश्रमतृषाहरी ।
वातनुत्कफकृत्सा तु दीपनी लवणान्विता ॥ ९ ॥

तक्रको सेवन करनेवाला मनुष्य रोगी नही होता, तक्रसे नष्ट किये हुए रोग फिर नही आते । जैसे देवताओंके लिये अमृत सुखदायक है वैसे ही मनुष्योंके लिये तक्र है ।

तक्र–अम्लरससे वातको, मधुर रससे पित्तको और कषायसे कफको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

उदश्वित्–कफकारक, बलवर्धक और आमनाशक होता है ।

छच्छिका–शीतल, हलकी, दीपन, लवणरसयुक्त, कफकारक, वातनाशक तथा पित्त, श्रम और तृषाको दूर करती है ॥ ७–९ ॥

उद्धृतघृतस्तोकोद्धृतघृतानुद्धृतघृतानि ।

समुद्धृतं घृतं तक्रं पथ्यं लघु विशेषतः ।
स्तोकोद्धृतघृतं तस्माद् गुरु वृष्यं कफावहम् ॥ १० ॥
अनुद्धृतघृतं सांद्रं गुरु पुष्टिकफप्रदम् ।

जिस तक्रमेंसे सम्पूर्ण मक्खन निकाल लिया हो वह पथ्य और अत्यन्त

लघु होता है। जिसमेंसे थोडा मक्खन निकाल लिया हो वह भारी, वीर्य-वर्धक और कफकारक है। जिसमेंसे घृत नहीं निकाला वह गाढा, भारी और पुष्टि तथा कफकारक होता है॥ १०॥

वातेऽम्लं शस्यते तक्रं शुण्ठीसैंधवसंयुतम्॥ ११॥
पित्ते स्वादु सितायुक्तं सव्योषमधिकं कफे।
हिंगु जीरयुतं घोलं सैंधवेन च संयुतम्॥ १२॥
भवेदतीव वातघ्नमर्शोतीसारहृत्परम्।
सुरुच्यं पुष्टिदं बल्यं वस्तिशूलविनाशनम्॥ १३॥

वातमें सोंठ और सेंधव नमकसे युक्त खट्टा तक्र देना योग्य है। पित्तमें मधुर तथा बूरासे युक्त तक्र देना चाहिये। तथा कफमें सोंठ, मिरच, पीपलयुक्त तक्र देना चाहिये।

हींग जीरा और सैंधव डालकर पिया हुआ घोल—वातको अत्यन्त नष्ट करनेवाला, अर्श तथा अतिसारको जीतनेवाला, रुचिकारक, पुष्टिदायक, बल-वर्धक तथा वास्तिके शूलको दूर करनेवाला होता है॥ ११–१३॥

मूत्रकृच्छ्रे तु सगुडं पांडुरोगे सचित्रकम्।
तक्रमामं कफं कोष्ठे हंति कण्ठे करोति च॥ १४॥
पीनसश्वासकासादौ पक्वमेव प्रयुज्यते।
शीतकालेऽग्निमांद्ये च तथा वातामयेषु च॥ १५॥
अरुचौ स्रोतसां रोधे तक्रं स्यादमृतोपमम्।
तत्तु हंति गरच्छर्दिप्रसेकविषमज्वरान्॥ १६॥
पांडुमेदोग्रहण्यर्शोमूत्रग्रहभगन्दरान्।
मेहं गुल्ममतीसारं शूलप्लीहोदरारुचीः॥ १७॥

श्वित्रकोष्ठगतव्याधीन् कुष्ठशोथतृषाकृमीन् ।
नैव तक्रं क्षते दद्यान्नोष्णकाले न दुर्बले ॥ १८ ॥
न मूर्च्छाभ्रमदाहेषु न रोगे रक्तपित्तजे ।
यान्युक्तानि दधीन्यष्टौ तद्गुणं तक्रमादिशेत् ॥ १९ ॥

इति तक्रवर्गः ।

मूत्रकृच्छ्रमें गुड डालकर पिया हुआ तथा पाण्डुरोगमें चित्रक डालकर पिया हुआ घोल गुणकारी होता है ।

कच्चे दूधका तक्र—कफको कोठेमें हरता है तथा कण्ठमें उत्पन्न कर देता है। अतः पीनस, श्वास, कास, आदिमें पक्के दूधका तक्र ही प्रयुक्त करना चाहिये ।

शीतकालमें, अग्निकी मंदतामें, वातव्याधियोंमें, अरुचिमें, नाडियोंके रोधमें तक्र अमृतके समान होता है । तक्र—विष, वमन, प्रसेक, मूत्रग्रह, भगन्दर, प्रमेह, गुल्म, अतिसार, शूल, प्लीहा, उदररोग, अरुचि, श्वित्रकोढ, कोष्ठगतरोग, कुष्ठ शोथ, तृषा और कृमिरोगको दूर करता है ।

क्षतमें, उष्णकालमें, दुर्बल मनुष्यको, रक्तपित्तजविकारमें तथा मूर्च्छा, भ्रम और दाहमें तक्र देना अच्छा नही है ।

आठ प्रकारकी दहियोंमेंसे जिस २ दहीका जो तक्र है उस २ दहीके गुण उस २ तक्रमें जानने चाहिये ॥ १४--१९ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मजविद्यालङ्कारशिवशर्मवैद्यशास्त्रिकृतशिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ तक्रवर्गः समाप्तः ॥ १३ ॥

नवनीतवर्गः १४.



म्रक्षणं सर्ज्जं हैयंगवीनं नवनीतकम् ।

नवनीतं हितं गव्यं वृष्यं वर्णबलाग्निकृत् ।
संग्राहि वातपित्तासृक्क्षयार्शोऽर्दितकासहृत् ॥ १ ॥
तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः ।
नवनीतं महिष्यास्तु वातश्लेष्मकरं गुरु ॥ २ ॥
दाहपित्तश्रमहरं मेदःशुक्रविवर्द्धनम् ।
दुग्धोत्थं नवनीतं तु चक्षुष्यं रक्तपित्तनुत् ॥ ३ ॥
वृष्यं बल्यमतिस्निग्धं मधुरं ग्राहि शीतलम् ।
नवनीतं तु सद्यस्कं स्वादु ग्राहि हिमं लघु ॥ ४ ॥
मेध्यं किंचित्कषायाम्लमीषत्तक्रांशसंक्रमात् ।
सक्षारकटुकाम्लत्वाच्छर्द्यर्शःकुष्ठकारकम् ॥ ५ ॥
श्लेष्मलं गुरु मेदस्यं नवनीतं चिरन्तनम् ॥ ६ ॥

इति नवनीतवर्गः ।

गायका मक्खन–हितकारी, वीर्यवर्धक, वर्ण, बल, अग्नि इनको बढानेवाला, ग्राही तथा वात, पित्त, रक्तविकार, क्षय, अर्श, अर्दितवात (लकवा), खांसी इनको नष्ट करनेवाला है ।

मक्खन–बालक वृद्ध सबके लिये हितकारी है । विशेष करके बच्चोंको अमृत समान है ।

भैंसका मक्खन–वातकफकारक, भारी, दाह, पित्त और श्रमको हरनेवाला, मेद और वीर्यको बढानेवाला होता है ।

दूधसे निकला हुआ मक्खन–नेत्रोंको हितकारी, रक्तपित्तनाशक, बलकारक, अत्यन्त स्निग्ध, मधुर, ग्राही और शीतल है ।

तत्कालका निकला हुआ मक्खन–स्वादु, ग्राही, शीतल, हलका, बुद्धिवर्द्धक तथा तक्र अंश बीचमें आजानेसे किंचित् कषाय और किंचित् खट्टा होता है ।

वहुत देरका निकला हुआ मक्खन–क्षार, कटु और अम्ल रसवाला होनेके कारण वमन, अर्श और कुष्ठको हरनेवाला, कफवर्द्धक, भारी तथा मेदको बढानेवाला होता है ॥ १–६ ॥

इति श्रीवैद्यरत्न–पंडितरामप्रसादात्मजविद्यालङ्कारश्रीशिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृतायां शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ नवनीतवर्गः समाप्तः ॥ १४ ॥

घृतवर्गः १५.

घृतमाज्यं हविः सर्पिः कथ्यंते तद्गुणा अथ ।
घृतं रसायनं स्वादु चक्षुष्यं वह्निदीपनम् ॥ १ ॥
शीतवीर्य्यं विषालक्ष्मीपापपित्तानिलापहम् ।
अल्पाभिष्यंदिकांत्योजस्तेजोलावण्यबुद्धिकृत् ॥२॥
स्वरस्मृतिकरं मेध्यमायुष्यं बलकृद्गुरु ।
उदावर्तज्वरोन्मादशूलानाहव्रणान् हरेत् ॥ ३ ॥
स्निग्धं कफकरं वृष्यं क्षयवीसर्परक्तनुत् ।
गव्यं घृतं विशेषेण चक्षुष्यं वृष्यमग्निकृत् ॥ ४ ॥
स्वादुपाकरसं शीतं वातपित्तकफापहम् ।

मेधालावण्यकांत्योजस्तेजोवृद्धिकरं परम् ॥ ५ ॥
अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं वयसः स्थापनं गुरु ।
बल्यं पवित्रमायुष्यं सुमंगल्यं रसायनम् ॥ ६ ॥
सुगन्धं रोचकं चारु सर्वाजेषु गुणाधिकम् ।
माहिषं तु घृतं स्वादु पित्तरक्तानिलापहम् ॥ ७ ॥
शीतलं श्लेष्मलं वृष्यं गुरु स्वादु विपच्यते ।
आजमाज्यं करोत्यग्निं चक्षुष्यं बलवर्द्धनम् ॥ ८ ॥
कासे श्वासे क्षये चापि हितं पाके भवेत्कटु ।
औष्ट्रं कटु घृतं पाके शोषक्रिमिविषापहम् ॥ ९ ॥
दीपनं कफवातघ्नं कुष्ठगुल्मोदरापहम् ।
पाके लघ्वाविकं सर्पिः सर्वरोगविनाशनम् ॥ १० ॥
वृद्धिं करोति चास्थीनामश्मरीशर्करापहम् ।
चक्षुष्यमग्निसंधुक्ष्यं वातदोषनिवारणम् ॥ ११ ॥
कफेऽनिले योनिदोषे पित्ते रक्ते च तद्धितम् ।
चक्षुष्यमाज्यं स्त्रीणां वा सर्पिः स्यादमृतोपमम् १२॥
वृद्धिं करोति देहाग्नेर्लघु पाके विषापहम् ।
तर्पणं नेत्ररोगघ्नं दाहनुद्वडवाघृतम् ॥ १३ ॥

घृत, आज्य और हवि यह घीके नाम है। इसके गुणोंको कहते है।

घृत—रसायन, स्वादु, नेत्रको हितकारी, अग्निदीपक, शीतवीर्य, किञ्चित् अभिष्यन्दि, कान्ति—ओज, तेज लावण्य, वुद्धि, स्वर, स्मृति, मेधा, आयु, वल इनको वढानेवाला, भारी, स्निग्ध, कफकारक, वीर्यवर्द्धक तथा वीर्य, अलक्ष्मी,. पाप, पित्त, वायु, उदावर्त्त, ज्वर, उन्माद, शूल, आनाह, व्रण, क्षय तथा विसर्प इनको नष्ट करता है।

गायका घी–विशेष करके नेत्रोंको हितकारी, वीर्यवर्द्धक, अग्निदीपक, पाक और रसमें स्वादु, शीतल, त्रिदोषनाशक, मेधा, लावण्य, कान्ति, तेज, ओज इनकी वृद्धिको करनेवाला, अलक्ष्मी, पाप और राक्षसभयको नष्ट करनेवाला, आयुको स्थापित करनेवाला, भारी, बलवर्द्धक, पवित्र, आयुवर्द्धक, मङ्गलकारक, रसायन, सुगन्धयुत, रुचिकारक सुन्दर तथा सर्वघृतोंसे अधिक गुणकारी है ।

भैसका घी–स्वादु, पित्त, रक्त तथा वायुको दूर करनेवाला, शीतल, कफवर्धक, वीर्यवर्धक भारी तथा पाकमें स्वादु है ।

बकरीका घी–अग्निदीपक, नेत्रोंको हितकारी, बलवर्धक, कटु तथा कास, श्वास और क्षयमें हितकारी है ।

ऊंटनीका घी–पाकमें कटु, दीपन, कफ और वातको नष्ट करनेवाला तथा शोष, कृमि, विष, कुष्ठ, गुल्म और उदररोगको दूर करनेवाला है ।

भेडका घी–पाकमें लघु, सर्वरोगनाशक, अस्थियोंकी वृद्धिको करनेवाला, पथरी तथा शर्कराको नष्ट करनेवाला, नेत्रोंको हितकारी, अग्निदीपक, वातदोषोंका निवारण करनेवाला है ।

नारीका घी--कफ, वात, योनिदोष, वात, रक्तविकारमें हितकारी, नेत्रोंको हितकारी तथा अमृतके समान है ।

घोडीका घी–देहकी अग्निको दीपन करनेवाला है, पाकमें हलका है, विषविकारको दूर करता है, तर्पण है, नेत्ररोगनाशक है तथा दाहको दूर करता है ॥ १–१३ ॥

घृतं दुग्धभवं ग्राहि शीतलं नेत्ररोगहृत् ।
निहंति पित्तदाहास्रमदमूर्छाभ्रमानिलान् ॥ १४ ॥

दूधसे उत्पन्न हुआ घी-ग्राही, शीतल, नेत्ररोगोंको हरनेवाला, पित्त, दाह, रक्तविकार, मद, मूर्छा, भ्रम और वायुको दूर करता है ॥ १४ ॥

हविर्ह्यस्तनदुग्धोत्थं तत्स्याद्धैयंगवीनकम् ।
हैयंगवीनं चक्षुष्यं दीपनं रुचिकृत्परम् ॥ १५ ॥

बलकृद्बृंहणं वृष्यं विशेषाज्ज्वरनाशनम् ।
वर्षादूर्ध्वं भवेदाज्यं पुराणं तत्त्रिदोषनुत् ॥ १६ ॥
मूर्छाकुष्ठविषोन्मादापस्मारतिमिरापहम् ।
यथायथाखिलं सर्पिः पुराणमधिकं भवेत् ॥ १७ ॥
तथातथा गुणैः स्वैःस्वैरधिकं तदुदाहृतम् ।
योजयेन्नवमेवाज्यं भोजने तर्पणे श्रमे ॥ १८ ॥
बलक्षये पांडुरोगे कामलानेत्ररोगयोः ।
राजयक्ष्मणि बाले च वृद्धे श्लेष्मकृते गदे ॥ १९ ॥
रोगे सामे विषूच्यां च विबंधे च मदात्यये ।
ज्वरे च दहने मंदे न सर्पिर्बहु मन्यते ॥ २० ॥

इति घृतवर्गः ।

पहिले दिनके जमाए हुए दूधमेंसे निकाला हुआ घी हैयंगवीन कहा जाता है । हैयंगवीन—नेत्रोंको हितकारी, दीपन, रुचिकारक, बलवर्धक, बृंहण, वृष्य, विशेष कर ज्वरनाशक होता है ।

एक वर्षका पुराना घी—त्रिदोषनाशक, मूर्च्छा, कुष्ठ, विष, उन्माद, अपस्मार और तिमिरको दूर करता है । जैसे जैसे घी अत्यन्त पुराना होता है, वैसे २ रोगनाशक गुणोंमें अधिक होता जाता है । त्रिदोषजनित और विषजनित विकारोंको दूर करनेके लिये पुराने घीकी प्रशंसा है ।

भोजनमें तृप्त करनेके लिये, थकावट दूर करनेके लिये, बलक्षयमें, पाण्डु रोगमें, कामलामें, मन्द दृष्टि होनेपर नेत्ररोगोंमें नवीन घीका ही उपयोग करना चाहिये ।

राजयक्ष्मामें बच्चों और बूढोंके रोगोंमें, कफप्रधान रोगोंमें, साम व्याधि-

यामें, विसूचिकामें, मदात्ययमें, विबन्धमें और मन्दाग्निमें अधिक घृत नहीं खाना चाहिये ॥ १५-२० ॥

इति श्रीवैद्यरत्नरामप्रसादात्मजविद्यालङ्कारशिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृत-
शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ घृतवर्गः समाप्तः ॥ १५ ॥

मूत्रवर्गः १६.



गोमूत्रम् ।

गोमूत्रं कटु तीक्ष्णोष्णं क्षारं तिक्तकफापहम् ।
लघ्वग्निदीपनं मेध्यं पित्तकृत्कफवातहृत् ॥ १ ॥
शूलगुल्मोदरानाहकण्ड्वक्षिमुखरोगजित् ।
किलासगदवातामबस्तिरुक्कुष्ठनाशनम् ॥ २ ॥
कासश्वासापहं शोथकामलापांडुरोगहृत् ॥ ३ ॥
कण्डूकिलासगुदशूलमुखाक्षिरोगान्
गुल्मातिसारमरुदामयमूत्ररोधान् ।
कासं सकुष्ठजठरक्रिमिपांडुरोगान्
गोमूत्रमेकमपि पीतमपाकरोति ॥ ४ ॥

गोमूत्र—कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, क्षार, तिक्त, कफनाशक, हलका, अग्निदीपक, बुद्धिवर्द्धक, पित्तकारक, कफवातनाशक होता है । एवं शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह, कंडु, अक्षिरोग, मुखरोग, किलास, आमवात, बस्तिरोग, कुष्ठ, कास, श्वास, शोथ, कामला, पाण्डुरोग इन सबको दूर करता है ।

कंडू, किलास, अर्श, शूल, मुखरोग, अक्षिरोग, गुल्म, अतिसार, वातरोग,

मूत्रावरोध, कास, कुष्ठ, जठररोग, कृमि और पाण्डुको केवल एक गोमूत्र ही पीनेसे दूर करदेता है ॥ १-४ ॥

सर्वेष्वपि च मूत्रेषु गोमूत्रं गुणतोऽधिकम् ।
अतो विशेषात्कथितं मूत्रं गोमूत्रमुच्यते ॥ ५ ॥
प्लीहोदरश्वासकासशोथवर्चोकफापहम् ।
शूलगुल्मरुजानाहकामलापांडुरोगहृत् ॥ ६ ॥
कषायं तिक्ततीक्ष्णं च पूरणात्कर्णशूलनुत् ॥ ७ ॥

सब मूत्रोंमें गुणोंसे गोमूत्र अधिक गुणवाला कहा है, इस लिये केवल मूत्र शब्दसे गोमूत्रका ही प्रयोग करना चाहिये । गोमूत्र—प्लीहा, उदर, श्वास, कास, शोथ, विबंध, शूल, गुल्म, अनाह, कामला और पाण्डुरोगको दूर करता है । कशाय, तिक्त और गरम करके कानमें डालनेसे कानके शूलको दूर करता है ॥ ५-७ ॥

नरमूत्रं गरं हंति सेवितं तद्रसायनम् ।
रक्तपामाहरं तीक्ष्णं सक्षारं लवणं स्मृतम् ॥ ८ ॥
गोजाविमहिषीणां तु स्त्रीणां मूत्रं प्रशस्यते ।
खरोष्ट्रेभनराश्वानां पुंसां मूत्रं हितं स्मृतम् ॥ ९ ॥

इति मूत्रवर्गः ।

मनुष्यका मूत्र सेवन करनेसे गरदोषको दूर करता है और रसायन है । तथा रक्तविकार और पामाको हरता है, तीक्ष्ण, क्षारयुक्त और नमकीन है । गौ, बकरी, भेड और भैंस इनमें स्त्री—जातिका मूत्र अच्छा होता है । गधा, ऊंट, मनुष्य और घोडा इनमें पुरुष जातिका मूत्र हितकारी होता है ॥ ८ ॥ ९ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मजविद्यालङ्कारशिवशर्मवैद्यशास्त्रि-कृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ मूत्रवर्गः समाप्तः १६ ॥

तैलवर्गः १७.



तिलादिस्निग्धवस्तूनां स्नेहस्तैलमुदाहृतम् ।
तत्तु वातहरं सर्वं विशेषात्तिलसंभवम् ॥ १ ॥
तिलतैलं गुरु स्थैर्य्यबलवर्णकरं सरम् ।
वृष्यं विकाशि विशदं मधुरं रसपाकयोः ॥ २ ॥
सूक्ष्मं कषायानुरसं तिक्तं वातकफापहम् ।
वीर्य्येणोष्णं हिमं स्पर्शे बृंहणं रक्तपित्तकृत् ॥ ३ ॥
लेखनं बद्धविण्मूत्रं गर्भाशयविशोधनम् ।
दीपनं बुद्धिदं मेध्यं व्यवायिव्रणमेहनुत् ॥ ४ ॥
श्रोत्रयोनिशिरःशूलनाशनं लघुतारकम् ।
त्वच्यं केश्यं च चक्षुष्यमभ्यंगे भोजनेऽन्यथा ॥५॥

तिल आदि स्निग्ध वस्तुओंका पीडन करनेसे निकाला हुआ स्नेह तैल कहा जाता है। सब प्रकारके तैल प्रायः वातनाशक होते है । और तिलोंका तेल विशेष रूपसे वातनाशक है । तिलका तैल--भारी, शरीरको दृढ बनानेवाला, बल, वर्णकारक, सारक, वृष्य, विकासी, विशद, रस पाकमें मधुर, सूक्ष्म, काषायानुरस, तिक्त, वातकफनाशक, वीर्य्यमें उष्ण, स्पर्शमें शीतल, बृंहण, रक्तपित्तकारक, लेखन, मलमूत्रको बांधनेवाला, गर्भाशयको शुद्ध करनेवाला, दीपन, बुद्धिवर्द्धक, मेधाजनक, व्यवायी, व्रण और प्रमेहको दूर करनेवाला, कान, योनि और शिरके शूलको नाश करनेवाला, शरीरको हलका बनानेवाला, त्वचा और केशोंको सुंदर बनानेवाला, नेत्रोंको हितकारी, मालिश और भोजनमें हितकारी होता है ॥ १-५ ॥

छिन्नभिन्नच्युतोत्पिष्टमथितक्षतपिच्चिते ।
भग्नस्फुटितविद्धाग्निदग्धविश्लिष्टदारिते ॥ ६ ॥
तथाभिहतनिर्भुग्नमृगव्याघ्रादिविक्षते ।
वस्तौ पानेऽन्नसंस्कारे नस्ये कर्णाक्षिपूरणे ॥ ७ ॥
सेकाभ्यंगावगाहेषु तिलतैलं प्रशस्यते ।
घृतमब्दात्परं पक्वं हीनवीर्य्यं प्रजायते ।
तैलं पक्वमपक्वं वा चिरस्थायि गुणाधिकम् ।

तिलतैल–छिन्न, भिन्न, च्युत, पिष्ट, मथित, क्षत, पिच्चित, भग्न, स्फुटित, विद्ध, अग्निदग्ध, विश्लिष्ट आदि अभिहत स्थानोंपर, निर्भुग्न स्थानमें, मृग और व्याघ्र आदिके किये हुए क्षतपर, वस्तिकर्म्ममें, पीनेमें, अन्नके संस्कारमें, नस्य कर्म्ममें, कान और नेत्रमें भरनेके लिये, सेकमें, मालिशमें और अवगाहनमें तिलतैल सर्वश्रेष्ठ माना जाता है ।

पकाया हुआ घी एक वर्षके बाद हीनवीर्य्य होजाता है । तैल पक्व हो अथवा अपक्व हो, चिरस्थायी होता है और गुणोंमें अधिक होता है॥ ६–८॥

सर्षपतैलगुणाः ।

दीपनं सार्षपं तैलं कटुपाकरसं लघु ॥ ९ ॥
लेखनं स्पर्शवीर्य्योष्णं तीक्ष्णं पित्तास्रदूषकम् ।
कफमेदोनिलाशोघ्नं शिरःकर्णामयापहम् ॥ १० ॥
कण्डुकुष्ठक्रिमिश्वित्रकोठदुष्टक्रिमिप्रणुत् ।
तद्वद्राजिकयोस्तैलं विशेषान्मूत्रकृच्छ्रकृत् ॥ ११ ॥

सरसोंका तेल–रस और पाकमें कटु, हलका, स्पर्श तथा वीर्य्यमें उष्ण, तीक्ष्ण, रक्त और पित्तको दूषित करनेवाला, कफनाशक, मेदनाशक, वायु और अर्शके हरनेवाला, कानके और शिरोंके रोगोंको दूर करनेवाला, तथा कण्डू, कुष्ठ, कृमि, श्वित्र, कोठ और दुष्ट कृमियोंको दूर करता है ।

सरसोंके तेलके समान ही राईके तेलके गुण हैं । किंतु राईका तेल मूत्रकृच्छ्रको करनेवाला है ॥ ९–११ ॥

तुवरीतैलगुणाः ।

तीक्ष्णोष्णं तुवरीतैलं लघु ग्राहि कफास्रजित् ।
वह्निकृद्विषहृत्कण्डुकुष्ठकोठक्रिमिप्रणुत् ।
मेदोदोषापहं चापि व्रणशोथहरं परम् ॥ १२ ॥

तुवरी (तारामीरा) का तेल—अग्निवर्द्धक, तीक्ष्ण, उष्ण, ग्राही, कफ और रक्तविकारको जीतनेवाला, विषविकारको हरनेवाला तथा कण्डू, कुष्ठ, कोठ, कृमि, मेदररोग और व्रण शोथको हरनेवाला है ॥ १२ ॥

अतसीतैलगुणाः ।

अतसीतैलमाग्नेयं स्निग्धोष्णं कफपित्तकृत् ॥ १३ ॥
कटुपाकमचक्षुष्यं बल्यं वातहरं गुरु ।
मलकृद्रसतः स्वादु ग्राहि त्वग्दोषहृद्घनम् ॥ १४ ॥
वस्तौ पाने तथाभ्यंगे नस्ये कर्णास्यपूरणे ।
अनुपानविधौ चापि प्रयोज्यं वातशांतये ॥ १५ ॥

अलसीका तेल—अग्निवर्द्धक, स्निग्ध, उष्ण, कफ, पित्तकारक, कटुपाकी, नेत्रोंको अहितकारी, बलकारक, वातनाशक, भारी, मलकारक, रसमें स्वादु, ग्राही, त्वचाके दोष हरनेवाला, गाढा, तथा वस्तिकर्म्ममें, पीनेमें, अभ्यंगमें, नस्य कर्म्ममें, कर्णपूरणमें, मुखपूरणमें अनुपान विधिसे वायुकी शांतिके लिये प्रयोग किया जाता है ॥ १३–१५ ॥

कुसुम्भतैलगुणाः ।

कुसुम्भतैलमम्लं स्यादुष्णं गुरु विदाहि च ।
चक्षुर्भ्यामहितं वृष्यं रक्तपित्तकफप्रदम् ॥ १६ ॥

कुसुंभेके बीजोंका तेल—अम्ल, उष्ण, भारी, विदाही, नेत्रोंको हानिकारक, वृष्य, रक्त पित्त और कफको वढानेवाला होता है ॥ १६ ॥

खसतैलगुणाः।

तैलं तु खसबीजानां बल्यं वृष्यं गुरु स्मृतम्।
वातहृत्कफहृच्छीतं स्वादुपाकरसं च तत् ॥ १७ ॥

खसखसका तेल बलकारक, वृष्य, भारी, वातनाशक, कफनाशक, शीत, रस और पाकमें मधुर होता है ॥ १७ ॥

एरण्डतैलगुणाः।

एरंडतैलं तीक्ष्णोष्णं दीपनं पिच्छिलं गुरु।
वृष्यं त्वच्यं वयःस्थापि मेदःकांतिबलप्रदम् ॥१८॥
कषायानुरसं सूक्ष्मं योनिशुक्रविशोधनम्।
विस्रं स्वादुरसे पाके सतिक्तं कटुकं सरम् ॥ १९ ॥
विषमज्वरहृद्रोगपृष्ठगुह्यादिशूलनुत्।
हंति वातोदरानाहगुल्माष्ठीलाकटिग्रहान् ॥२० ॥
वातशोणितविड्बंधब्रध्मशोथामविद्रधीन्।
आमवातगजेंद्रस्य शरीरवनचारिणः ॥
एक एव निहन्तायमेरंडस्नेहकेसरी ॥ २१ ॥

एरण्डका तेल–तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, पिच्छिल, भारी, वृष्य, त्वचाके लिये हितकारी, वयस्थापनकर्ता, मेद, कांति और मलके बढानेवाला, कषायानुरस, सूक्ष्म, योनि और वीर्य्यको शुद्ध करनेवाला, विस्र, रस और पाकमें मधुर, किंचित् तिक्त, कटु और दस्तावर है। एवं विषमज्वर, हृद्रोग, पृष्ठशूल, योनिशूल, वातोदर, अफारा, गुल्म, अष्ठीला, कमरका शूल, वातरक्त, मलका विबंध, ब्रध्म, शोथ, आमविकार और विद्रधिको दूर करता है। आमवातरूपी हाथी जो शरीररूपी वनमें मस्त होकर फिरता है उसको एक एरण्डतेलरूपी शेर मार डालता है ॥ १८–२१ ॥

रालतैलगुणाः ।

तैलं सर्ज्जरसोद्भूतं विस्फोटव्रणनाशनम् ।
कुष्ठपामाकृमिहरं वातश्लेष्मामयापहम् ॥ २२ ॥

रालका तेल--विस्फोटक, व्रण, कोढ, खुजली, कृमि, वात और कफके रोगोंको दूर करता है ॥ २२ ॥

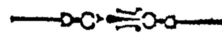
तैलं स्वयोनिगुणकृद्वाग्भटेनाखिलं स्मृतम् ।
अतः शेषस्य तैलस्य गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिवत् २३॥

इति तैलवर्गः ।

वाग्भटने लिखा है जो जो तेल जिन २ द्रव्योंसे उत्पन्न होता है, उस उस तेलका अपने कारण द्रव्यके समान गुण जानना चाहिये ॥ २३ ॥

इति श्रीविद्यालंकारपंडितशिवशर्म्मवैद्यकृतशिवप्रकाशिकाभाषायां
तैलवर्गः समाप्तः ॥ १७ ॥

मधुवर्गः १८.



मधु ।

मधुमाक्षिकमाध्वीकक्षौद्रसारघमीरितम् ।
मक्षिकावरटीभृङ्गवांतं पुष्परसोद्भवम् ॥ १ ॥
मधु शीतं लघु स्वादु रूक्षं ग्राहि विलेखनम् ।
चक्षुष्यं दीपनं स्वर्य्यं व्रणशोधनरोपणम् ॥ २ ॥
सौकुमार्य्यकरं सूक्ष्मं परं स्रोतोविशोधनम् ।
कषायानुरसं ह्लादि प्रसादजनकं परम् ॥ ३ ॥
वर्ण्यं मेधाकरं वृष्यं विशदं रोचनं हरेत् ।

कुष्ठार्शःकासपित्तास्रकफमेहक्लमक्रिमीन् ॥ ४ ॥
मेदस्तृष्णावमिश्वासहिक्कातीसारविड्ग्रहान् ।
दाहक्षतक्षयास्रं तु योगवाह्यल्पवातलम् ॥ ५ ॥

मधु, माक्षिक, माध्वीक, क्षौद्र, सारघ, मक्षिकावान्त, वरटीवान्त, भृंगवान्त और पुष्परसोद्भव यह शहदके नाम हैं। इसका अंग्रेजी नाम Honey है।

मधु—शीतल, हलका, मधुर, रूक्ष, ग्राही, लेखन, नेत्रहितकर, दीपन, स्वरकारक, व्रणको शोधन और रोपण करनेवाला, सुकुमारताको बढानेवाला, सूक्ष्म नाडियोंको शुद्ध करनेवाला, कषायानुरस, आह्लादकारक, प्रसन्न करनेवाला, वर्णको उत्तम करनेवाला, वीर्यवर्द्धक, विशद, रोचन तथा कुष्ठ, अर्श, कास, पित्त, रक्तविकार, कफ, प्रमेह, ग्लानि, कृमि, मेद, प्यास, वमन, श्वास, हिचकी, मलग्रह, दाह, क्षत, क्षय और रक्तविकारको नष्ट करनेवाला है तथा योगवाही और किंचित् वातकारक है ॥ १–५ ॥

अथ मधुभेदाः ।

माक्षिकं भ्रामरं क्षौद्रं पौत्तिकं छात्रमित्यपि ।
आर्घ्यमौद्दालकं दालमित्यष्टौ मधुजातयः ॥६॥

माक्षिक, भ्रामर, क्षौद्र, पौत्तिक, छात्र, अर्घ्य, औद्दालक और दाल मधुके यह आठ भेद हैं ॥ ६ ॥

माक्षिकलक्षणगुणाश्च ।

मक्षिकाः पिंगवर्णास्तु महत्यो मधुमक्षिकाः ।
ताभिः कृतं तैलवर्णं माक्षिकं परिकीर्तितम् ॥ ७॥
माक्षिकं मधुषु श्रेष्ठं नेत्रामयहरं लघु ।
कामलार्शःक्षतश्वासकासक्षयविनाशनम् ॥ ८ ॥

बडी और पिंगलवर्णवाली मक्षिकाको मधुमक्षिका कहते हैं। इनसे बनाया हुआ तथा तेलके वर्णवाला मधु माक्षिक कहलाता है। माक्षिक मधुओंमें

श्रेष्ठ, नेत्ररोगोंको हरनेवाला, हलका तथा कामला, अर्श, क्षत, श्वास, कास, क्षय इनका नाश करनेवाला है ॥ ७ ॥ ८ ॥

किंचित्सूक्ष्मैः प्रसिद्धेभ्यः षट्पदेभ्योऽलिभिश्चितम् ।
निर्मलं स्फटिकाभं यत्तन्मधु भ्रामरं स्मृतम् ॥ ९ ॥
भ्रामरं रक्तपित्तघ्नं मूत्रजाड्यकरं गुरु ।
स्वादुपाकमभिष्यंदि विशेषात्पिच्छिलं हिमम् ॥ १० ॥

प्रसिद्ध भौंरोंसे कुछ छोटे भौंरो द्वारा बनाया हुआ, स्फटिक मणिके समान निर्मल जो मधु हो उसको भ्रामर कहते है ।

भ्रामर-रक्तपित्तनाशक, मूत्र तथा जडताको करनेवाला, भारी. पाकमें, मधुर, अभिष्यन्दि, विशेष करके पिच्छिल और शीतल है ॥ ९ ॥ १० ॥

मक्षिकाः कपिलाः सूक्ष्माः क्षुद्राख्यास्तत्कृतं मधु ।
मुनिभिः क्षौद्रमित्युक्तं तद्वर्णात्कपिलं भवेत् ॥ ११ ॥
गुणैर्माक्षिकवत् क्षौद्रं विशेषान्मेहनाशम् ॥ १२ ॥

कपिल वर्णकी छोटी मक्खियां क्षुद्रा कहलाती है । इन मक्खियोंका बनाया हुआ कपिल वर्णवाला मधु क्षौद्र कहलाता है । क्षौद्रके गुण माक्षिकके समान ही है किन्तु यह विशेपकरके प्रमेहको नष्ट करता है ॥ ११ ॥ १२ ॥

कृष्णा या मशकोपमा लघुतराः प्रायो महापिंडका
बध्नानास्तरुकोटरांतरगताः पुष्पासवं कुर्वते ।
तास्तज्ज्ञैरिह पुत्तिका निगदितास्ताभिः कृतं सापषा
तुल्यं यन्मधु तद्वनेचरजनैः संकीर्तितं पौत्तिकम् ॥ १३ ॥
पौत्तिकं मधु रूक्षोष्णं पित्तदाहास्रवातकृत् ।
विदाहि मेहकृच्छ्रघ्नं ग्रंथ्यादिक्षतशोषिषु ॥ १४ ॥

काली मच्छरके सदृश, बहुत छोटी, बडे पिण्ड बनानेवाली, खोह और

वृक्षोंके अन्दर रहनेवाली जो पुष्पोंका रस लेकर शहद बनावें उसको पूतिका कहते है। उनका घीके सदृश बनाया हुआ जो शहद होता है उसको वनचर लोग पौत्तिक कहते है। पौत्तिक मधु—रूक्ष, उष्ण, विदाहि तथा पित्त, दाह, रक्तविकार वात इनके करनेवाला है और प्रमेह ग्रन्थि आदि रोग, क्षत और शोष इनमें दिया हुआ हितकारी है॥ १३॥ १४॥

छात्रमधुगुणाः।

वरटाः कपिलाः पीताः प्रायो हिमवतो वने॥१५॥
कुर्वंति छत्रकाकारं तज्जं छात्रं मधु स्मृतम्।
छात्रं कपिलपीतं स्यात् पिच्छिलं शीतलं गुरु॥१६
स्वादुपाकं कृमिश्वित्ररक्तपित्तप्रमेहजित्।
भ्रमतृण्मोहविषहृत्तर्पणं च गुणाधिकम्॥ १७॥

हिमालयमे कपिल और पीत वर्णवाली, छत्रके आकारवाली मक्खियां जो मधु बनाती है उसको छात्र कहते है। छात्र—कपिल और पीले वर्णका, पिच्छिल, शीतल, भारी, स्वादुपाकी तथा कृमि, श्वित्र, रक्तपित्त और प्रमेहको जीतनेवाला है। एवं भ्रम, तृषा, मोह और विषको नष्ट करनेवाला और गुणोंमें उत्तम है॥ १५–१७॥

मधूकवृक्षान्निर्यासं जरत्कार्वाश्रमोद्भवाः।
स्रवंत्यार्घ्यं तदाख्यातं श्वेतकं मालवे पुनः॥ १८॥
तीक्ष्णतुंडास्तु याः पीता मक्षिकाः षट्पदोपमाः।
अर्घास्तास्तत्कृतं यत्तु तदार्घ्यमितरे जगुः॥ १९॥
आर्घ्यं मध्वतिचक्षुष्यं कफपित्तहरं परम्।
कषायं कटुकं पाके तिक्तं च बलपुष्टिकृत्॥ २०॥

जरत्कारुके आश्रममें उत्पन्न हुए मधूक (महुएके) वृक्षसे वहते हुए निर्यास (गोंदको) आर्घ्य कहते हैं। मालवेमें इसे श्वेतक कहते है। अन्यों-

के मतमें तीक्ष्ण मुखवाली, भ्रमरके सदृश जो पीली मक्खियां होती हैं उनको अर्घ्य कहते है । इनके बनाये हुए मधुको आर्घ्य कहते हैं । आर्घ्य मधु–नेत्रोंको अत्यन्त हितकारी, कफ और पित्तको हरनेवाला, कसैला, पाकमें कटु, तिक्त तथा बलपुष्टिकारक है ॥ १८–२० ॥

प्रायो वल्मीकमध्यस्थाः कपिलाः स्वल्पकीटकाः ।
कुर्वंति कपिलं स्वल्पं तत्स्यादौद्दालकं मधु ॥२१॥
औद्दालकं रुचिकरं स्वर्य्यं कुष्ठविषापहम् ।
कषायमुष्णमम्लं च कटुपाकं च पित्तकृत् ॥ २२ ॥

प्रायः वम्बीमें रहनेवाले छोटे२पीले कीडे थोडासा पीला मधु बनातेहै उसको औद्दालक कहते है।औद्दालक मधु–रुचिकारक,स्वरकारक,कुष्ठ और विषको नाशकरनेवाला, कसैला,गरम, अम्ल, पाकमें कटु तथा पित्तकारक है॥२१॥ २२

संश्रुत्य पतितं पुष्पाद्यत्तु पत्रोपरि स्थितम् ।
मधुराम्लकषायं च तद्दालं मधुकीर्तितम् ॥ २३ ॥
दालं मधु लघु प्रोक्तं दीपनीयं कफापहम् ।
कषायानुरसं रूक्षं रुच्यं प्रच्छर्दिमेहजित् ॥ २४ ॥
अधिकं मधुरं स्निग्धं बृंहणं गुरु भारिकम् ।

जो मधु पुष्पमें गिरकर पत्ते पर स्थित हो जाता है, उसको दाल मधु कहते है । दाल मधु–अम्ल, कषाय, लघु, दीपन, कफनाशक, कषायानुरस, रूक्ष, रुचिकारक, छर्दि और प्रमेहको नष्ट करनेवाला, अत्यन्त मधुर, स्निग्ध, बृंहण और तोलमें भारी होता है ॥ २३ ॥ २४ ॥

नवं मधु भवेत्पुष्ट्यै नातिश्लेष्महरं सरम् ॥ २५ ॥
पुराणं ग्राहकं रूक्षं मेदोघ्नमतिलेखनम् ।

मधुनः शर्करायाश्च गुडस्यापि विशेषता ॥ २६ ॥
एकसंवत्सरेऽतीते पुराणत्वं स्मृतं बुधैः ।

नया मधु—पुष्टिकारक, कफको किंचित् हरनेवाला, दस्तावर तथा पुराना मधु—ग्राही, रूक्ष, मेदनाशक और अत्यन्त लेखन होता है ।

मधु, खाण्ड और गुड एक वर्ष वीतनेपर पुराने होते हैं । यह विद्वानोंने कहा है ॥ २५ ॥ २६ ॥

विषपुष्पादपि रसं सविषा भ्रमरादयः ॥ २७ ॥
गृहीत्वा मधु कुर्वंति तच्छीते गुणवन्मधु ।
विषान्वयात्तदुष्णं तु द्रव्येणोष्णेन वा सह ॥ २८
उष्णार्तस्योष्णकाले च स्मृतं विषसमं मधु ।

विषैले फूलोंसे रस लेकर विषैले भौरे यदि मधु बनावें तो वह शीतल ही गुणकारक है । विषैले पदार्थका संयोग होनेसे, गरम होनेसे, गरम द्रव्यके साथ संयोग होनेसे अथवा किसी उष्ण रोगसे पीडितको देनेसे यह मधु विषके समान हो जाता है ॥ २७ ॥ २८ ॥

मयनं तु मधूच्छिष्टं मधुशेषं च सिक्थकम् ॥२९ ॥
मध्वाधारो मदनकं मधूषितमपि स्मृतम् ।
मदनं तु मृदु स्निग्धं भूतघ्नं व्रणरोपणम् ॥ ३० ॥
भग्नसन्धानकृद्वातकुष्ठवीसर्परक्तजित् ।

इति मधुवर्गः ।

मयन, मधूच्छिष्ट, मधुशेष, सिक्थक, मध्वाधार, मधूषित यह मोमके नाम है । मोम—मृदु, भूतनाशक, व्रणरोपक, टूटे हुएको जोडनेवाला तथा वात, कुष्ठ, विसर्प और रक्तविकारको जीतनेवाला है ॥ २९ ॥ ३० ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मजविद्यालंकार—शिवशर्म्मवैद्यकृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ मधुवर्गः समाप्तः ॥ १८ ॥

इक्षुवर्गः १९.



इक्षुः ।

इक्षुर्दीर्घच्छदः प्रोक्तस्तथा भूमिरसोऽपि च ।
गुडमूलोऽसिपत्रश्च तथा मधुतृणः स्मृतः ॥ १ ॥
इक्षवो रक्तपित्तघ्ना बल्या वृष्याः कफप्रदाः ।
स्वादुपाकरसाः स्निग्धा गुरवो मूत्रला हिमाः ॥२॥

इक्षु, दीर्घच्छद, भूमिरस, गुडमूल, असिपत्र और मधुतृण यह इक्षु (ईख) के नाम है । इनको हिन्दीमें गन्ना, फारसीमें नेशकर और अंग्रेजीमें Sugar cane कहते है ।

इक्षु–रक्त पित्तनाशक, वल तथा वीर्यको बढानेवाले, कफकारक, रस और पाकमें मधुर, स्निग्ध, भारी, मूत्रल और शीतल है ॥ १ ॥ २ ॥

पौंड्रको भीरुकश्चापि वंशकः शतपोरकः ।
कांतारस्तापसेक्षुश्च काष्टेक्षुः सूचिपत्रकः ॥ ३ ॥
नैपालो दीर्घपत्रश्च नीलपोरोऽप्यकोशकृत् ।
इत्येता जातयस्तेषां कथयामि गुणानपि ॥ ४ ॥

पौण्ड्रक, भीरुक, वंशक, शतपोरक, कान्तार, तापसेक्षु, काष्ठेक्षु, सूचिपत्रक, नैपाल, दीर्घपत्र, नीलपोर और कोशकारक यह इक्षुकी जातियें है । अब इनके गुणोंको कहते है ॥ ३ ॥ ४ ॥

वातपित्तप्रशमनो मधुरो रसपाकयोः ।
सुशीतो बृंहणो बल्यः पौंड्रको भीरकस्तथा ॥ ५ ॥
कोशकारो गुरुः शीतो रक्तपित्तक्षयापहः ।
कांतारेक्षुर्गुरुर्वृष्यः श्लेष्मलो बृंहणः सरः ॥ ६ ॥

दीर्घपोरः सुकठिनः सक्षारो वंशकः स्मृतः ।
शतपोरो भवेत्किंचित्कोशकारगुणान्वितः ॥ ७ ॥
विशेषात्किंचिदुष्णश्च सक्षारः पवनापहः ।
तापसेक्षुर्भवेन्मृद्वी मधुरा श्लेष्मकारिणी ॥ ८ ॥

पौण्ड्रक और भीरुक—शीतल, बृंहण, बलकारक, वातपित्तनाशक और रस पाकमें मधुर होते हैं । कोशकार—भारी, शीतल, रक्तपित्त और क्षयको नष्ट करता है । कान्तार—भारी, वीर्य्यवर्धक, कफकारक, बृंहण और दस्तावर होता है । वंशक—बडी पोरियोंवाला, कठोर और क्षारयुक्त होता है । शत-पोर—कोशकारके कुछ गुणोंवाला विशेष करके किंचित् उष्ण, क्षारयुक्त और वातनाशक होता है । तापसेक्षु—मृदु, मधुर, कफकारक होता है॥५–८॥

काष्ठेक्षुः ।

एवंगुणैस्तु काष्ठेक्षुः स तु वातप्रकोपनः ॥ ९ ॥
सूचीपत्रो नीलपोरो नैपालो दीर्घपत्रकः ।
वातलाः कफपित्तघ्नाः सकषाया विदाहिनः ॥१०॥
मनोगुप्ता वातहरी तृष्णामयविनाशिनी ।
सुशीता मधुरातीव रक्तपित्तप्रणाशिनी ॥ ११ ॥

यही गुण काष्ठेक्षुमें भी है । किंतु वह विशेष करके वातको कुपित करने-वाला है ।

सूचीपत्रक, नैपाल, दीर्घपत्र और नीलपोर यह—वातकारक, कषाय, विदाही तथा कफपित्तनाशक है ।

मनोगुप्ता—वातनाशक, प्याससम्बन्धिरोग, रक्तपित्तको नष्ट करनेवाली, तथा शीतल और मधुर है ॥ ९–११ ॥

बाल इक्षुः कफं कुर्य्यान्मेदोमेहकरश्च सः
युवा तु वातहृत्स्वादुरीषत्तीक्ष्णश्च पित्तनुत् ॥ १२॥

रक्तपित्तहरो वृद्धः क्षयहृद्बलवीर्य्यकृत् ।
मूले तु मधुरोऽत्यर्थं मध्येऽपि मधुरः स्मृतः ॥१३॥

कच्चा गन्ना—कफकारक, मेद और मेहको वढानेवाला है। अधपका गन्ना-वातनाशक, मधुर, किंचित् तीक्ष्ण तथा पित्तनाशक है। पका हुआ गन्ना—बल वीर्यवर्द्धक, क्षय और रक्तपित्तको हरनेवाला है। गन्ना—जडमें अत्यन्त मधुर, मध्यमें मधुर और ऊपरकी पोरियोंमें क्षारयुक्त होता है॥ १२ ॥ १३ ॥

अग्रे ग्रंथिषु विज्ञेय इक्षुः पटुरसो जनैः ।
दन्तनिष्पीडितस्येक्षो रसः पित्तास्रनाशनः ॥ १४॥
शर्करासमवीर्य्यः स्यादविदाही कफप्रदः ।
मूलाग्रजं तु ग्रन्थ्यादिपीडनान्मलसंकरात् ॥१५ ॥
किंचित्कालविधृत्या च विकृतिं याति यांत्रिकः ।
तस्माद्विदाही विष्टंभी गुरुः स्याद्यांत्रिको रसः॥१६॥

दाँतोंसे चूसे हुए गन्नेका रस—पित्त और रक्तविकारका नाश करता है। शर्कराके समान वीर्यवर्द्धक, दाहोत्पादक और कफकारक होता है।

यन्त्र (कुल्हाडी) मेंसे निकाला हुआ गन्नेका रस—मूल, अग्रज तथा गांठ आदिके पीडनेसे मैलके मिल जानेसे और कुछ समय तक रक्खा रहनेके कारण खराब हो जाता है। इस ही कारण कुल्हाडीका निकाला हुआ रस विदाहि, विष्टम्भि और भारी होता है ॥ १४- १६ ॥

रसः पर्य्युषितो नेष्टो ह्यम्लो वातापहो गुरुः
कफपित्तकरः शोषी भेदनश्चातिमूत्रलः ॥ १७ ॥
पक्वो रसो गुरुः स्निग्धः सतीक्ष्णः कफवातनुत् ।
गुल्मानाहप्रशमनः किंचित्पित्तकरः स्मृतः ॥ १८ ॥

गन्नेका बासी रस—अपथ्य, खट्टा, वातनाशक, भारी, कफपित्तकारक, शोषी, भेदन और अत्यन्त मूत्रवर्द्धक है। ईखका पकाया हुआ रस—भारी,

स्निग्ध, तीक्ष्ण, कफ वातनाशक, गुल्म तथा आनाहको नष्ट करनेवाला और किंचित् पित्तकारक है ॥ १७ ॥ १८ ॥

इक्षोर्विकारास्तृड्दाहमूर्च्छापित्तास्रनाशनाः ।
गुरवो मधुरा बल्याः स्निग्धा वातहराः सराः ॥१९॥
वृष्या मोहहराः शीता बृंहणा विषहारिणः ।

ईखके रसके विकार अर्थात् गुड आदि पदार्थ—भारी, मधुर, बलकारक, स्निग्ध, वातनाशक, दस्तावर, वीर्यवर्धक, मोहनाशक, शीतल, बृंहण तथा विष, प्यास, दाह, मूर्च्छा, पित्त और रक्तविकारका नाश करते है ॥ १९ ॥

फाणितम् ।

इक्षो रसस्तु यः पक्वः किंचिद्गाढो बहुद्रवः ॥ २० ॥
स एवेक्षुविकारेषु ख्यातः फाणितसंज्ञया ।
फाणितं गुर्वभिष्यंदि बृंहणं कफशुक्रकृत् ॥ २१ ॥

गन्नेका जो रस—कुछ गाढा, बहुत बहनेवाला और पका हुआ होता है इक्षुविकारोंमें उसको फाणित नामसे पुकारा जाता है । फाणित—भारी, अभिष्यन्दि, बृंहण, कफ और शुक्रको बढानेवाला, वात, पित्त और श्रमको हरनेवाला तथा मूत्र और बस्तिको शुद्ध करनेवाला है ॥ २० ॥ २१ ॥

वातपित्तश्रमान्हंति मूत्रबस्तिविशोधनम् ।
इक्षो रसो यः संपक्वो घनः किंचिद्द्रवान्वितः॥२२॥
मंदं यत्स्यंदते तस्मान्मत्स्यंडीति निगद्यते ।
मत्स्यंडी भेदनी बल्या लघ्वी पित्तानिलापहा॥२३॥
मधुरा बृंहणी वृष्या रक्तदोपापहा स्मृता ।

इक्षुका जो रस—अच्छी तरह पकाया हुआ, गाढा और किंचित् बहनेवाला होता है उसे मत्स्यण्डी (मीजा) कहते है, क्योंकि यह मन्द २ रसता

है। मत्स्यण्डी—भेदन, बलकारक, हलकी, पित्त और वातनाशक, मधुर, बृंहण, वीर्यवर्धक और रक्तदोषनाशक है ॥ २२ ॥ २३ ॥

गुडम्।

इक्षो रसो यः संपक्वो जायते लोष्टवद्दृढम् ॥२४॥
स गुडो गौडदेशे तु मत्स्यंडचैव गुडो मतः।
गुडो वृष्यो गुरुः स्निग्धो वातघ्नो मूत्रशोधनः॥२५
नातिपित्तहरो मेदःकफक्रिमिबलप्रदः।
गुडो जीर्णो लघुः पथ्योऽनभिष्यंद्यग्निपुष्टिकृत्॥२६॥
पित्तघ्नो मधुरो वृष्यो वातघ्नोऽसृक्प्रसादनः।
गुडो नवः कफश्वासकासक्रिमिकरोऽग्निकृत् ॥ २७॥

इक्षुका जो रस—खूब पकानेसे लोष्ठके समान दृढ हो जाय उसको गुड कहते है। गौड देशमें तो मत्स्याण्डिको ही गुड कहते है। गुड—वीर्यवर्द्धक, भारी, वातनाशक, मूत्रशोधक, पित्तको किंचित् हरनेवाला, तथा मेद, कफ, क्रमि और बलको उत्पन्न करनेवाला है।

पुराना गुड—हलका, पथ्यकारक, अभिष्यंदनको करनेवाला, अग्निकारक, पुष्ट करनेवाला, पित्तनाशक, मधुर, वीर्यवर्द्धक, वातनाशक और रक्तको शुद्ध करनेवाला है। नवीनगुड़—कफ, श्वास, कास, क्रमि और बलको बढानेवाला है॥ २४–२७ ॥

श्लेष्माणमाशु विनिहंति सदार्द्रकेण
पित्तं निहंति च तदेव हरीतकीभिः।
शुंठ्या समं हरति वातमशेषमित्थं
दोषत्रयक्षयकराय नमो गुडाय ॥ २८॥

गुड—आर्द्रकके साथ खाया हुआ कफको, हरडके साथ खाया हुआ पित्त-

को और सोंठके साथ खाया हुआ सम्पूर्ण वातको शीघ्र ही नष्ट कर देता है। इस प्रकार त्रिदोषको नष्ट करनेवाले गुडको प्रणाम है ॥ २८ ॥

खंडम् ।

खंडं तु मधुरं वृष्यं चक्षुष्यं बृंहणं हिमम् ।
वातपित्तहरं स्निग्धं बल्यं वांतिहरं परम् ॥ २९ ॥

खाण्ड—मधुर, वीर्यवर्द्धक, नेत्रोंको हितकारी, बृंहण, शीतल, वातपित्त-नाशक, बलकारक तथा वमनको हरनेवाली है ॥ २९ ॥

सिता ।

खंडं तु सिकतारूपं सुश्वेता शर्करा सिता ।
सिता सुमधुरा रुच्या वातपित्तास्रदाहनुत् ॥ ३० ॥
मूर्च्छाछर्दिज्वरान् हंति सुशीता शुक्रकारिणी ॥ ३१ ॥

वालरेतके समान तथा श्वेत खाण्डको सिता अथवा शर्करा कहते है। सिता—अत्यन्त मधुर, रुचिकारक, अत्यन्त शीत, वीर्यवर्धक तथा वात, पित्त-रक्तविकार, दाह, मूर्च्छा, छर्दि और ज्वरको दूर करती है ॥ ३० ॥ ३१ ॥

पुष्पसिता ।

शीता पुष्पसिता वृष्या रक्तपित्तहरी लघुः ॥ ३२ ॥

पुष्पसिता अर्थात् बूरा—वीर्यवर्धक, रक्तपित्तनाशक और हल्की है ॥ ३२ ॥

सितोपला ।

सितोपला सरा लघ्वी वातपित्तहरी हिमा ।
मधुजा शर्करा रूक्षा कफपित्तहरी गुरुः ॥ ३३ ॥
छर्द्यतीसारतृड्दाहरक्तहृत्तुवरा हिमा ।

यथायथा स्यान्नैर्मल्यं मधुरत्वं यथायथा ॥ ३४ ॥
स्नेहलाघवशैत्यानि सरत्वं च तथातथा ।

इति इक्षुवर्गः ।

सीतोपला अर्थात् मिश्री—दस्तावर, हलकी, शीतल तथा वातपित्त-नाशक है ।

मधुसे उत्पन्न हुई शर्करा—रूक्ष, कफ—पित्त—नाशक, भारी, कसैली, शीतल तथा छर्दि, अतिसार, तृष्णा, दाह और रक्तविकारोंको दूर करती है ।

खाण्ड और शर्करा जितनी निर्मल और मधुर अधिक होती है उसमें उतना ही हलकापन, स्नेह और शैत्य अधिक होता है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपंडितरामप्रसादात्मजविद्यालंकारश्रीशिवशर्मकृतशिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ इक्षुवर्गः ॥ १९ ॥

संधानवर्गः २०.



संधितं धान्यमंडादि कांजिकं कथ्यते जनैः ।
कांजिकं भेदि तीक्ष्णोष्णं रोचनं पाचनं लघु ॥ १ ॥
दाहज्वरहरं स्पर्शात्पानाद्वातकफापहम् ।
माषादिवटकैर्युक्तं क्रियते तद्गुणाधिकम् ॥ २ ॥
लघु वातहरं तत्तु रोचनं पाचनं परम् ।
शूलाजीर्णविबंधामनाशनं वस्तिशोधनम् ॥ ३ ॥

मुख बन्द करके किसी पात्रमें रक्खे हुए धान्य मण्डादिको कांजी कहते हैं । कांजी—भेदन, तीक्ष्ण, उष्ण, रोचन, पाचन, हल्की, स्पर्श करनेसे दाह और ज्वरको नष्ट करनेवाली और पीनेसे वात तथा कफको हरती है । उडदोंके बडोंसे युक्त कांजी अधिक गुणवाली, हल्की, वातनाशक, रोचन,

पाचन, वस्तिशोधक तथा शूल, अजीर्ण, विबंध और आमको नष्ट करनेवाली होती है ॥ १–३ ॥

शोषमूर्च्छाभ्रमार्तानां मदकण्डुविशोषिणाम् ।
कुष्ठिनां रक्तपित्तानां कांजिकं न प्रशस्यते ॥ ४ ॥
पांडुरोगे यक्ष्मरोगे तथा शोषातुरेषु च ।
क्षतक्षीणे तथा श्रांते मदज्वरनिपीडिते ॥ ५ ॥

शोष, मूर्च्छा और भ्रमसे पीडितोंको, मदवालोंको, खुजलीवालोंको, जिनका शरीर सूख गया हो उनको, कुष्ठियोंको और रक्त पित्तवालोंको कांजी देनी उचित नहीं। पाण्डुरोग, शोष, क्षतसे हुई दुर्बलता, थकावट और मदज्वरकी पीडामें कांजी देनी अहितकर और दोषोंको कुपित करनेवाली है ॥ ४ ॥ ५ ॥

एतेषां त्वहितं प्रोक्तं कांजिकं दोषकारकम् ।
तुषोदकं यवैरामैः सतुषैः शकलीकृतैः ॥ ६ ॥
तुषांबु दीपनं हृद्यं पांडुक्रिमिगदापहम् ।
तीक्ष्णोष्णं पाचनं पित्तरक्तकृद्वस्तिशूलनुत् ॥ ७ ॥

यदि कच्चे यवोंको तुषों सहित टुकडे करके जलमें डालकर संधान करे तो वह तुषोदक बन जाता है ! तुषोदक—दीपन, हृद्य, तीक्ष्ण, उष्ण, पाचन, पित्तरक्तकारक, वस्तिशूलनाशक तथा पाण्डु और कृमियोंको नष्ट करनेवाला है ॥ ६ ॥ ७ ॥

सौवीरं तु यवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुषैः कृतम् ।
गोधूमैरपि सौवीरमाचार्य्याः केचिदूचिरे ॥ ८ ॥
सौवीरं तु ग्रहण्यर्शःकफघ्नं भेदि दीपनम् ।
उदावर्तांगमर्दास्थिशूलानाहेषु शस्यते ॥ ९ ॥

यदि कच्चे अथवा पक्के यवोंका छिलका उतार कर टुकडे २ करके

उनको संधानरीतिसे जलमें भिगोदे तो उस पानीको सौवीर कहते हैं। किन्हीं आचार्य्योंके मतमें गेहूँको पूर्वोक्त रीतिसे डालनेसे सौवीर बनता है। सौवीर–ग्रहणी, अर्श और कफको नष्ट करनेवाला, भेदन तथा उदावर्त्त, अंगमर्द, अस्थिशूल और आनाह इनमें दिया हुआ हितकारी होता है ॥८॥९

आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः ।
पक्वैर्वा संधितैस्तत्तु सौवीरसदृशो गुणः ॥ १० ॥

कच्ची अथवा पक्की गेहूँकी तुष उतारकर संधान रीतिसे जलमें भिगोदे तो उस जलको आरनाल कहते है। और वह गुणोंमें सौवीरके समान है ॥ १० ॥

धान्याम्लं शालिचूर्णाच्च कोद्रवादिकृतं भवेत् ।
धान्याम्लं धान्ययोनित्वात्प्रीणनं लघु दीपनम् ११॥
अरुचौ वातरोगेषु सर्वेष्वास्थापने हितम् ।

चावलोंके अथवा कोदोंके चूनके द्वारा संधानकी रीतिसे जो पानी बने उसको धान्याम्ल कहते है। धान्याम्ल–कांजी धान्योंसे उत्पन्न होनेके कारण तृप्तिकारक, हल्की, दीपन तथा अरुचि और सब किसमकी आस्थापनवस्ति करनेमें हितकारी है॥ ११ ॥

शंडाकीराजिकायुक्तैः स्यान्मूलकदलद्रवैः ॥ १२ ॥
सर्षपस्वरसैर्वापि शालिपिष्टकसंयुतैः ।
शण्डाकी रोचनी गुर्वी पित्तश्लेष्मकरी स्मृता ॥१३॥

राई और मूलीके पत्तोंको अथवा रसोंके सस्वरस और चावलोंकी पिट्ठीको यदि सन्धान रीतिसे भिगोया जाय तो इनके जलको शंडाकी कहते है। शंडाकी–रोचन, भारी तथा पित्त और कफको करती है ॥ १२ ॥ १३ ॥

कंदमूलफलादीनि सस्नेहलवणानि च ।
यत्र द्रवेऽभिषूयंते तच्छुक्तमभिधीयते ॥ १४ ॥

शुक्तं कफघ्नं तीक्ष्णोष्णं रोचनं पाचनं लघु ।
पांडुक्रिमिहरं रूक्षं भेदनं रक्तपित्तकृत् ॥ १५ ॥

कंदमूल फल आदि तेल और लवण सहित जल या रसमें संधान किये जायँ उसको शुक्त कहते हैं। शुक्त—कफनाशक, तीक्ष्ण, उष्ण, रुचिकारक, पाचन, हल्का, पाण्डु और कृमिको नष्ट करनेवाला, मलका भेदन करनेवाला, रूक्ष और रक्तपित्तकारक है ॥ १४ ॥ १५ ॥

कंदमूलफलाढ्यं यत्तच्च विज्ञेयमासुतम् ।
तद्रुच्यं पाचनं वातहरं लघु विशेषतः ॥ १६ ॥

कंदमूल और फल इनसे बनाई हुई कांजीको आसुत कहते हैं। आसुत-रुचिकारक, पाचन, वातनाशक और विशेष करके हल्का है ॥ १६ ॥

मद्यं तु सीधुमैरेयमिरा च मदिरा सुरा ।
कादंबरी वारुणी च हालापि बलवल्लभा ॥ १७ ॥
पेयं यन्मादकं लोके तन्मद्यमभिधीयते ।
यथारिष्टं सुरासीधुरासवाद्यमनेकधा ॥ १८ ॥
मद्यं सर्वं भवेदुष्णं पित्तकृद्वातनाशनम् ।
भेदनं शीघ्रपाकं च रूक्षं कफहरं परम् ॥ १९ ॥
अम्लं च दीपनं रुच्यं पाचनं चाशुकारि च ।
तीक्ष्णं सूक्ष्मं च विशदं व्यवायि च विकाशि च२०

मद्य, सीधु, मैरेय, इरा, मदिरा, सुरा, कादम्बरी, वारुणी, हाला और बलवल्लभा यह शराबके नाम हैं। लोकमें जो पीनेकी वस्तु मदको करनेवाली हो, उसको मद्य कहते हैं। और ऐसे ही अरिष्ट, सुरा, सीधु, आसव आदि भेदोंसे मद्य कई प्रकारकी है। सर्व प्रकारकी मद्य—गरम, पित्तकारक, वातनाशक, भेदन, शीघ्र पचनेवाली, अत्यन्त कफनाशक, खट्टी, दीपन,

रुचिकारक, पाचन, शीघ्र प्रभाव दिखलानेवाली, तीक्ष्ण, विशद, सूक्ष्म, व्यवायी और विकाशी है ॥ १७-२० ॥

अरिष्टम् ।

पक्वौषधांबुसिद्धं यन्मद्यं तत्स्यादरिष्टकम् ।
अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतश्च गुणाधिकम् ॥ २१ ॥

पकाई हुई औषधियों और जलसे जो मद्य बनाई जाय उसको अरिष्ट कहेत हैं। अरिष्ट–पाकमें लघु और सब प्रकारसे अधिक गुणोंवाला है । जिन द्रव्योंसे अरिष्ट बनाया गया हो उन द्रव्योंमें जो गुण हो वही अरिष्टके होते हैं ॥ २१ ॥

अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः ।
शालिषष्टिकपिष्टाद्यैः कृतं मद्यं सुरा स्मृता ॥ २२॥
सुरा गुर्वी बलस्तन्यपुष्टिमेदःकफप्रदा ।
ग्राहिणी शोथगुल्मार्शोग्रहणीमूत्रकृच्छ्रनुत् ॥ २३ ॥

चावल अथवा साठीके चावलके चूर्ण आदिकोंसे बनाए हुए मद्यको सुरा कहते हैं । सुरा–भारी, ग्राही तथा बल, स्तनोंमें दूध, पुष्टि, मेद और कफ इनको बढाती है । एवं शोथ, गुल्म, अर्श, ग्रहणी और मूत्रकृच्छ्रको हरनेवाली है ॥ २२ ॥ २३ ॥

पुनर्नवाशालिपिष्टिविहिता वारुणी स्मृता ।
संहितैस्तालखर्जूररसैर्या सापि वारुणी ॥ २४ ॥

पुनर्नवा और साठी चावलोंको शिलापर पीसकर जो मद्य बनाई जाय उसको वारुणी कहते हैं । अथवा ताल और खजूरको इकट्ठा करके उनके रससे जो मद्य बनाई जाय उसको भी वारुणी कहते है । वारुणी सुराके समान गुणोंवाली है । किन्तु उससे हल्की और पीनस, आध्मान तथा शूलको नष्ट करनेवाली है ॥ २४ ॥

सुरावद्वारुणी लघ्वी पीनसाध्मानशूलनुत् ।
इक्षोः पक्वरसैः सिद्धः सीधुः पक्वरसश्च सः ॥२५॥
आमस्तैरेव यः सीधुः स च शीतरसः स्मृतः ।
सीधुः पक्वरसः श्रेष्ठः स्वराग्निबलवर्णकृत् ॥२६॥
वातपित्तकरः सद्यः स्नेहनो रोचनो हरेत् ।
विबंधमेदःशोफार्शःशोषोदरकफामयान् ॥ २७ ॥

गन्नोंके पक्के रससे जो मद्य बनाई जाय, उसको पक्वरससीधु और गन्नेके कच्चे रससे बनाई हुई मद्यको शीतलरससीधु कहते है। पक्वरस-सीधु—गुणोंमें श्रेष्ठ, स्वरको उत्तम करनेवाली, अग्नि और बलको बढानेवाली, वर्णको उत्तम करनेवाली, वातपित्तकारक, शीघ्र ही स्निग्धताको दिखानेवाली। रोचन तथा विबन्ध, मेद, सूजन, उदररोग और कफ इन व्याधियोंको नष्ट करती है ॥ २५–२७ ॥

तस्मादल्पगुणः शीतरसः संलेखनः स्मृतः ।
यदपक्वौषधांबुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः ॥ २८ ॥
आसवस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः।

शीतरससीधु उससे अल्प गुणवाली तथा लेखन करनेवाली है। विना पकी औषधियों तथा जलसे बनाई हुई मद्यको आसव कहते है। आसवके गुण जिन पदार्थोंसे आसव बनाया जाय उनके समान ही होते है ॥ २८ ॥

मद्यं नवमभिष्यंदि त्रिदोषजनकं सरम् ॥ २९ ॥
अहृद्यं बृंहणं दाहि दुर्गंधं विशदं गुरु ।
जीर्णं तदेव रोचिष्णु कृमिश्लेष्मानिलापहम् ॥३०॥
हृद्यं सुगंधि गुणवल्लघु स्रोतोविशोधनम् ।

नवीन मद्य—अभिष्यन्दी, त्रिदोषकारक, दस्तावर, हृदयको अप्रिय, बृंहण,

दाहकारक, दुर्गंधयुक्त, विशद तथा भारी होता है । पुराना मद्य—रुचिकारक, हृदयको प्रिय, सुगंधित गुणोंवाला, हल्का, नाडीको शुद्ध करनेवाला तथा कृमि, कफ और वायुको नष्ट करनेवाला होता है ॥ २९ ॥ ३० ॥

सात्त्विके गीतहास्यादि राजसे साहसादिकम् ॥ ३१ ॥
तामसे निंद्यकर्माणि निद्रां च मदिरो चरेत् ।

मदिरा पीकर सात्त्विक मनुष्य गाने तथा हसने लग जाता है । रजोगुणप्रधान मनुष्य साहस आदिको करता है । तथा तमोगुणी मनुष्य निंद्य कर्मोंको करता है ॥ ३१ ॥

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् ॥ ३२ ॥
प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतोपमम् ।

विधिसे ठीक मात्रामें हितकारक अन्नोंके साथ अपने बलके अनुसार जो मनुष्य प्रसन्नतापूर्वक मद्यको पीता है उसके लिये यह अमृतके समान गुणकारी है ॥ ३२ ॥

गंधनाशः ।

मुस्तैलवालगुडजीरकधान्यकेला
यश्चर्वयन् सदसि वाचमभिव्यनक्ति ।
स्वाभाविकं मुखजमुज्झति पूतिगंधं
गंधं च मद्यलशुनादिभवं च नूनम् ॥ ३३ ॥

इति संधानवर्गः ।

नागरमोथा, कवाबचीनी, कुष्ट, जीरा, धनियां और इलायची इनको चबाकर जो मनुष्य सभामें बोलता है तो उसके मुखकी स्वाभाविक तथा मद्य लशुन आदिकोंसे उत्पन्न हुई दुर्गंध नष्ट हो जाती है ॥ ३३ ॥

इती श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज—विद्यालंकार—श्रीशिवशर्म-वैद्यशास्त्रिकृत—शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-निघण्टौ सन्धानवर्गः समाप्तः ॥ २० ॥

द्रव्यपरीक्षा २१.



सूक्ष्मास्थिमांसला पथ्या सर्वकर्मणि पूजिता ।
क्षिप्तांभसि निमज्जेद्या भल्लातक्यस्तथोत्तमाः ॥ १ ॥
वाराहमूर्द्धवत्कंदो वाराहीकंदसंज्ञकः ।
सौवर्चलं तु काचाभं सैंधवं स्फटिकप्रभम् ॥ २ ॥
सुवर्णच्छविकं ज्ञेयं स्वर्णमाक्षिकमुत्तमम् ।
इंद्रगोपप्रतीकाशं मनोह्वा चोत्तमा मता ॥ ३ ॥
श्रेष्ठं शिलाजतु ज्ञेयं प्रक्षिप्तं न विशीर्य्यते ।
तोयपूर्णे कांस्यपात्रे प्रतानेन विवर्द्धते ॥ ४ ॥
कर्पूरस्तुवरः स्निग्ध एला सूक्ष्मफला वरा ।
श्वेतचन्दनमत्यंतं सुगन्धि गुरुपूजितम् ॥ ५ ॥
रक्तचन्दनमत्यंतं लोहितं प्रवरं मतम् ।
काकतुंडनिभः स्निग्धो गुरुः श्रेष्ठोऽगुरुर्मतः ॥ ६ ॥
सुगंधि लघु रूक्षं च सुरदारु वरं मतम् ।
सरलं स्निग्धमत्यर्थं सुगंधि च गुणावहम् ॥ ७ ॥
अतिपीता प्रशस्ता तु ज्ञेया दारुनिशा बुधैः ।
जातीफलं गुरु स्निग्धं समं शुभ्रांतरं वरम् ॥ ८ ॥
मृद्वीका सोत्तमा ज्ञेया या स्याद्गोस्तनसन्निभा ।
करमर्दफलाकारा मध्यमा सा प्रकीर्तिता ॥ ९ ॥

खंडं तु विमलं श्रेष्ठं चन्द्रकान्तिसमप्रभम् ।
गव्याज्यसदृशं गंधं रुच्यं मधु वरं स्मृतम् ॥ १० ॥

हरड सूक्ष्म गुठलीवाली तथा मोटी छालवाली सर्व कर्म्मोंमें श्रेष्ठ होती है। जलमें डालनेसे डूबजानेवाले भिलावे उत्तम हैं। वाराहके मस्तकके समान कंदवाला वाराहीकंद श्रेष्ठ है। कांचके समान वर्णवाला सौवर्चल नमक उत्तम है। स्फटिकके समान कांतिवाला सैंधव नमक अच्छा होता है। स्वर्णके समान कांतिवाला स्वर्णमाक्षिक उत्तम होता है। वीरवहूटीके समान वर्णवाली मैनसिल श्रेष्ठ है। शिलाजीत जलसे भरे हुए कांसीके वर्तनमें डाली हुई न टूटे और जिसमेंसे तारे निकलें वह श्रेष्ठ होती है। कपूर चिकना श्रेष्ठ है। छोटी इलायची श्रेष्ठ है। अत्यन्त सुगंधित और भारी चन्दन श्रेष्ठ होता है। अत्यन्त लाल रक्त चन्दन श्रेष्ठ कहा है। कव्वेके तुण्डके समान कालावाला, स्निग्ध तथा भारी अगर श्रेष्ठ है। सुगंधित, हल्का और रूक्ष देवदारु उत्तम है। अत्यन्त सुगंधित और स्निग्ध सरल गुणकारी है। अत्यन्त पीली दारु हलदी उत्तम है। भारी, स्निग्ध और ऊपरसे सफेद जायफल श्रेष्ठ है। मुनक्का वह उत्तम है जिसका गऊके स्तनके समान आकार हो। कौदेके फलके आकारवाली मध्यम मुनक्का होती है। विमल चन्द्रमाकी कांतिके समान प्रभावाली खांड श्रेष्ठ है। गऊके घीके समान गंधवाला तथा रुचिकारक शहद श्रेष्ठ होता है ॥ १–१० ॥

स्वभावतो हितानि ।

शालीनां लोहिता शाली षष्टिकेषु च षष्टिका ।
शूकधान्येष्वपि यवो गोधूमः प्रवरो मतः ॥ ११ ॥
शिंबिधान्ये वरो मुद्गो मसूरश्चाढकी तथा ।
रसेषु मधुरः श्रेष्ठो लवणेषु च सैंधवम् ॥ १२ ॥
दाडिमामलकं द्राक्षा खर्जूरं च परूषकम् ।
राजादनं मातुलुंगं फलवर्गे प्रशस्यते ॥ १३ ॥

पत्रशाकेषु वास्तूकं जीवंती पोत्तिका वरा ।
पटोलं फलशाकेषु कंदशाकेषु सूरणम् ॥ १४ ॥
एणः कुरंगो हरिणो जांगलेषु प्रशस्यते ।
पक्षिणां तित्तिरी लावो वरो मत्स्येषु रोहितः ॥ १५ ॥
जलेषु दिव्यं दुग्धेषु गव्यमाज्येषु गोभवम् ।
तैलेषु तिलजं तैलमैक्षवेषु सिता हिता ॥ १६ ॥

शालीधान्योंमें रक्तवर्णकी शाली, षष्टिकचावलोंमें साठीके चावल, शूकधान्योंमें जौ तथा गेहूँ श्रेष्ठ हैं। शिम्बी धानोंमें मूँग, मसूर, अरहर उत्तम है। रसोंमें मधुर और लवणोंमें सैंधवलवण श्रेष्ठ है। फलोंमें अनार, आमला, अंगूर, खजूर, फालसा, बडी जामन और बिजौरा श्रेष्ठ है। पत्रशाकोंमें बाथुआका शाक, जीवंतीका शाक तथा पोईका शाक श्रेष्ठ है। फलशाकोंमें पटोल, और कंदशाकोंमें जमींकंद श्रेष्ठ होता है। जंगलके मांसोंमें एण कुरंग तथा हरिणोंका, पक्षियोंमें तित्तर और लवाका तथा मत्स्योंमें रोहित मत्स्यका मांस हितकारक है। जलोंमें आकाशका जल, दूध और घीमें गऊका दूध और घी, तैलोंमें तिलका तेल और इक्षुविकारोंमें मिसिरी हितकारक है ॥ ११–१६ ॥

स्वभावादहितानि ।

शिंबीषु माषान् ग्रीष्मर्तौ लवणेष्वौषरं त्यजेत् ।
फलेषु लकुचं शाके सार्षपं न हितं मतम् ॥ १७ ॥
गोमांसं ग्राम्यमांसेषु न हिता महिषीवसा ।
मेषीपयः कुसुंभस्य तैलं त्याज्यं च फाणितम् ॥ १८

शिबिधान्योंमेंसे ग्रीष्म ऋतुमें माषोंको और लवणोंमेंसे ऊषर नमकको त्याग देना चाहिये । फलोंमें बडहर, शाकोंमें सरसोंके पत्तोंका शाक

हानिकारक है। ग्राम्य मांसोंमें गोमांस और भैंसका मांस, दूधोंमें भेडका दूध, तेलोंमें कुसुंभेका तेल तथा इक्षुविकारोंमें फाणित त्याज्य है ॥१७॥१८॥

संयोगविरुद्धानि।

मत्स्यमानूपमांसं च दुग्धयुक्तं विवर्जयेत्।
कपोतं सर्षपस्नेहभर्जितं परिवर्जयेत् ॥ १९ ॥
मत्स्यानिक्षुविकारेण तथा क्षौद्रेण वर्जयेत्।
सक्तून्मांसपयोयुक्तानुष्णैर्दधि विवर्जयेत् ॥ २० ॥
उष्णं नभांबुना क्षौद्रं पायसं कृशरान्वितम् ॥ २१
दशाहमुषितं सर्पिः कांस्ये मधुघृतं समम्।
कृतान्नं च कषायं च पुनरुष्णीकृतं त्यजेत् ॥२२॥
एकत्र बहुमांसानि विरुध्यंते परस्परम्।
मधु सर्पिर्वसा तैलं पानीयं वा पयस्तथा ॥ २३ ॥

मत्स्य और जलमें होनेवाले जानवरोंके मांसोंको दूधके साथ सेवन नही करना चाहिये। कबूतरके मांसको सरसोंके तेलके साथ, मच्छियोंको शहद और इक्षुविकारोंके साथ तथा सक्तुओंको दूधके साथ सेवन न करे। मांसको ठण्डे दहीसे सेवन न करे। गरम जल तथा आकाशके जलके साथ शहद और खिचड़ीके साथ दूध सेवन नही करना चाहिये। कांसीके बर्त्तनमें दश दिन रक्खा हुआ घृत तथा शहदके बराबर घी मिलाके नहीं खाना चाहिये। पकाया हुआ अन्न और क्वाथ फिर गरम करके नही खाना चाहिये। बहुत मांस इकट्ठे करके नही खाना चाहिये। शहद, घी, चरबी और तेल, पानी और दूधके साथ नही खाने चाहिये ॥ १९-२३ ॥

भेषजसंकेतः।

लवणं सैंधवं प्रोक्तं चन्दनं रक्तचन्दनम्।
चूर्णलेहासवस्नेहाः साध्या धवलचन्दने ॥ २४ ॥

कषायलेपयोः प्रायो युज्यते रक्तचन्दनम्।
अन्तःसम्मार्जने ज्ञेया ह्यजमोदा यवानिका ॥२५॥
बहिःसंमार्जने सैव विज्ञातव्याऽजमोदिका।
पयःसर्पिःप्रयोगेषु गव्यमेव हि गृह्यते ॥ २६ ॥
शकृद्रसो गोमयकं मूत्रं गोमूत्रमुच्यते।

लवण कहनेपर सैंधव और चन्दन कहनेपर रक्त चन्दन लेना चाहिये। चूर्ण, चटनी, आसव और तेल इनमें सफेद चंदन डालना चाहिये। क्वाथ और लेपमें प्रायः रक्त चंदनका प्रयोग होता है। अन्दरके समार्जनके लिये यवानिका (अजवायन) लेनी चाहिये और बाहरके संमार्जनमें अजमोदा लेनी चाहिये। दूध, घी, विष्ठा, रस और मूत्र, इनसे गायका दूध, घी, गोबर और गोमूत्र लेना चाहिये ॥ २४–२६ ॥

प्रतिनिधिः।

चित्रकाभावतो दंती क्षारः शिखरिजोऽथवा ॥ २७॥
अभावे धन्वयासस्य प्रक्षेप्या तु दुरालभा।
तगरस्याप्यभावे तु कुष्ठं दद्याद्भिषग्वरः ॥ २८ ॥
मूर्वाभावे त्वचो ग्राह्या जिंगनीप्रभवा बुधैः।
अहिंस्राया अभावे तु मानकन्दः प्रकीर्तितः ॥२९॥
लक्ष्मणाया अभावे तु नीलकण्ठशिखा मता।
बकुलाभावतो देयं कह्लारोत्पलपंकजम् ॥ ३० ॥
नीलोत्पलस्याभावे तु कुमुदं देयमिष्यते।
जातीपुष्पं न यत्रास्ति लवंगं तत्र दीयते ॥ ३१ ॥
अर्कपर्णादि पयसो ह्यभावे तद्रसो मतः।
पौष्कराभावतः कुष्ठं तथा लांगल्यभावतः ॥ ३२ ॥

स्थौणेयकस्याभावे तु भिषग्भिर्दीयते गदः ।
चविकागजपिप्पल्यौ पिप्पलीमूलवत् स्मृतौ ॥३३॥
अभावे सोमराज्यास्तु प्रपुन्नाटफलं मतम् ।
यदि न स्याद्दारुनिशा तदा देया निशा बुधैः ३४॥
रसांजनस्याभावे तु सम्यग् दार्वी प्रयुज्यते ।
सौराष्ट्र्यभावतो देया स्फटिका तद्गुणा जनैः ॥३५॥

चीतेके अभावमें शिखरीका खार अथवा दंती, जवासेके अभावमें दुरालभा और तगरके अभावमें कूट लेना चाहिये । मूर्वाकी छालके अभावमें जींगणीकी छाल, हींसाके अभावमें मानकन्द, लक्ष्मणाके अभावमें मोरशिखा, नीलोत्पलके अभावमें कुमुद और जावित्रीके अभावमें लवंग लेना चाहिये । आक और पर्ण आदिके दूधके अभावमें उसका रस लेना चाहिये । पोहकरमूल तथा लांगलीके अभावमें कूट, थुणेयकके अभावमें भी कूट ही लिया जाता है । चव्य और गजपिप्पलीके अभावमें पिप्पलीमूल, बावचीके अभावमें पनवाडके बीज, और दारुहलदीके अभावमें हल्दी लेनी चाहिये । रसौत न मिले तो हल्दी और सौराष्ट्री न मिले तो वैसे ही गुणोंवाली फटकरी देनी चाहिये ॥ २७–३५॥

तालीसपत्रकाभावे स्वर्णताली प्रशस्यते ।
भार्ग्यभावे तु तालीसं कण्टकारी जटाथवा ॥३६ ॥
रुचिकाभावतो दद्याल्लवणं पांसुपूर्वकम् ।
अभावे मधुयष्ट्यास्तु धातकीं च प्रयोजयेत् ॥३७॥
अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमिष्यते ।
द्राक्षा यदि न लभ्येत प्रदेयं काश्मरीफलम् ॥३८॥
तयोरभावे कुसुमं बन्धूकस्य मतं बुधैः ।

लवंगकुसुमं देयं नखस्याभावतः पुनः ॥ ३९ ॥
कस्तूर्य्यभावे कक्कोलं क्षेपणीयं विदुर्बुधाः ।
कक्कोलस्याप्यभावे तु जातीपुष्पं प्रदीयते ॥४० ॥
सुगंधिमुस्तकं देयं कर्पूराभावतो बुधैः ।
कर्पूराभावतो देयं ग्रंथिपर्णं विशेषतः ॥ ४१ ॥
कुंकुमाभावतो दद्यात्कुसुम्भकुसुमं नवम् ।
श्रीखण्डचन्दनाभावे कर्पूरं देयमिष्यते ॥ ४२ ॥
अभावे त्वेतयोर्वैद्यः प्रक्षिपेद्रक्तचन्दनम् ।
रक्तचन्दनकाभावे नवोशीरं विदुर्बुधाः ॥ ४३ ॥
मुस्ता चातिविषाभावे शिवाभावे शिवा मता ।
अभावे नागपुष्पस्य पद्मकेसरमिष्यते ॥ ४४ ॥

तालीसपत्रके अभावमें स्वर्णताली, भारंगीके अभावमें तालीस अथवा कंट-कारीजटा, रुचकके अभावमें पांसुलवण, तथा मुलहटीके अभावमें धायेके फूलों-का प्रयोग करना चाहिये । अम्लवेतके अभावमें चुक्र, दाखके अभावमें काश्मरी फल, और इन दोनोंके अभावमें बंधूकका फूल लेना चाहिये। नखके अभावमें लवंगका फूल, कस्तूरीके अभावमें कंकोल और कंकोलके अभावमें जावत्री, कपूरके अभावमें सुगंधित नागरमोथा, तथा विशेष करके ग्रन्थिपर्ण लेना चाहिये । केसरके अभावमें कुसुम्भेका नया फूल, और श्रीखण्ड चन्दनके अभावमें कर्पूर देना चाहिये ।श्रीखण्ड चन्दन तथा कपूरके अभावमें रक्तचन्दन और रक्तचन्दनके अभावमें खस, अतीसके अभावमें नागरमोथा, भूमि आम-लके अभावमें आमला, नागपुष्पके अभावमें पद्मकेशर लेना चाहिये॥ ३६-४४

मेदाजीवककाकोली ऋद्धिद्वंद्वेऽपि चासति ।
वरीविदार्य्यश्वगंधावाराहीश्च क्रमात् क्षिपेत्॥४५॥

वाराह्याश्च तथाभावे चर्मकारालुको मतः ।
वाराहीकंदसंज्ञस्तु पश्चिमे गृष्टिसंज्ञकः ॥ ४६ ॥
वाराहीकन्द एवान्यश्चर्मकारालुको मतः ।
अनूपे स भवेद्देशे वाराह इव लोमवान् ॥ ४७ ॥
भल्लातकीसहत्वे तु रक्तचन्दनमिष्यते ।
भल्लाताभावतश्चित्रं नलश्चक्षोरभावतः ॥ ४८ ॥
सुवर्णाभावतः स्वर्णमाक्षिकं प्रक्षिपेद्बुधः ।
श्वेतं तु माक्षिकं ज्ञेयं बुधै राजतवद्ध्रुवम्॥ ४९ ॥
माक्षिकस्याप्यभावे तु प्रदद्यात् स्वर्णगैरिकम् ।
सुवर्णमथवा रौप्यं मृतं यत्र न लभ्यते ॥ ५० ॥
तत्र कांतेन कर्माणि भिषक्कुर्याद्विचक्षणः ।
कांताभावे तीक्ष्णलोहं योजयेद्वैद्यसत्तमः ॥ ५१ ॥
अभावे मौक्तिकस्यापि मुक्ताशुक्तिं प्रयोजयेत् ।
मधु यत्र न लभ्येत तत्र जीर्णगुडो मतः ॥५२॥
मत्स्यंडचभावतो दद्युर्भिषजः सितशर्कराम् ।
असंभवे सितायास्तु बुधः खंडं प्रयोजयेत् ॥ ५३॥
क्षीराभावे रसो मौद्गो मासूरो वा प्रदीयते ।
अत्र प्रोक्तानि वस्तूनि यानि तेषु च तेषु च ॥५४॥
योज्यमेकतराभावे परं वैद्येन जानता ।
रसवीर्य्यविपाकाद्यैः समं द्रव्यं विचिंत्य च ॥५५॥
युंज्याद्विविधमन्यद्वा द्रव्याणां तु रसादिवित् ।

योगे यदप्रधानं स्यात्तस्य प्रतिनिधिर्मतः ॥ ५६ ॥
यत्तु प्रधानं तस्यापि सदृशं नैव गृह्यते ॥

इति द्रव्यपरीक्षादिवर्गः ।

मेदा और महामेदाके अभावमें सतावर, जीवक और ऋषभकके अभावमें विदारीकन्द, काकोली और क्षीरकाकोलीके अभाममें वाराहीकन्द डालना चाहिये । वाराहीकन्दके अभावमें चर्म्मकराल डालना चाहिये । वाराहीकन्द-काही एक भेद चर्म्मकराल होता है जो अनूप देशोंमें उत्पन्न होताहै । और वाराहकी तरह लोमवाला होता है । भल्लातकीके साथ लाल चन्दन मिलाना चाहिये, लेकिन भिलावोंके अभावमें चित्ता और इक्षुके अभावमें नडा तथा स्वर्णके अभावमें स्वर्णमाक्षिक डालना चाहिये, । चांदीके अभावमें श्वेतमाक्षिक, माक्षिकके अभावमें स्वर्णगैरिक डालना चाहिये, जहां मृतस्वर्ण और चांदी न मिले वहां कान्तलोहसे और कान्तलोहके अभावमें तीक्ष्णलोहसे विचक्षण वैद्यको कार्य्य करना चाहिये । मौक्तिकके अभावमें मुक्ताशुक्तिका, मत्स्यण्डीके अभावमें शर्कराका, सिता (मिसरी) के अभावमें खांडका प्रयोग करना चाहिये । दूधके अभावमें मूंग या मसूरीका यूष दिया जाता है । यहां जो जो वस्तुएँ कही है उनमेंसे किसीके अभाव होनेपर वैद्यको उचित है कि रस वीर्य्य विपाकादिमें समान द्रव्य सोचकर उसकी जगह प्रयोग करे ।

योगमें जो द्रव्य अप्रधान होता है उसका तो प्रतिनिधि लेलिया जाता है परन्तु प्रधान द्रव्य (जैसे च्यवनप्राशमें आमलों और योगराजमें गूगुल) का प्रतिनिधि नहीं लेना चाहिये अर्थात् प्रधान द्रव्य अच्छा और विना बदले के वह प्रधानही द्रव्य लेना चाहिये ॥ ४५–५६ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मज–विद्यालंकारशिवशर्म-
वैद्यशास्त्रिकृत–शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादि-
निघण्टौ द्रव्यपरीक्षादिवर्गः ॥ २१ ॥

अथ मांसवर्गः ।



अथ मांसस्य नामानि ।

मांसं तु पिशितं क्रव्यमामिषं पललं पलम् ।
मांसं वातहरं सर्वं बृंहणं बलपुष्टिकृत् ।
प्रीणनं गुरु हृद्यञ्च मधुरं रसपाकयोः ॥ १ ॥

मांस, पिशित, क्रव्य, आमिष,पलल और पल ये मांसके संस्कृत नाम हैं। गुण–सर्वप्रकारके मांस वातनाशक, पुष्टिकारक,बलवर्द्धक, तृप्तिदायक, भारी, हृदयको प्रिय और रसमें तथा पाकमें मधुर है ॥ १ ॥

अथ मांसभेदः ।

मांसवर्गो द्विधा ज्ञेयो जांगलाऽऽनूपभेदतः ॥ २ ॥

सम्पूर्ण मांस दो प्रकारके है, एक जांगलमांस और दूसरे आनूपमांस ॥२॥

जांगलमांसस्य लक्षणं गुणाश्च ।

मांसवर्गेऽत्र जंघाला बिलस्थाश्च गुहाशयाः ।
तथा पर्णमृगा ज्ञेया विष्किराः प्रतुदास्तथा ॥ ३ ॥
प्रसहा अथ च ग्राम्या अष्टौ जांगलजातयः ।
जांगला मधुरा रूक्षास्तुवरा लघवस्तथा ।
बल्यास्ते बृंहणा वृष्या दीपना दोषहारिणः ॥ ४ ॥
मूकतां मिन्मिनत्वं च गद्गदत्वार्दिते तथा ॥
बाधिर्य्यमरुचिच्छर्दिप्रमेहमुखजान् गदान् ॥
श्लीपदं गलगण्डञ्च नाशयत्यनिलामयान् ॥ ५ ॥

यहा मांसवर्गमें जंघाल, बिलस्थ (बिलेशय), गुहाशय,पर्णमृग, विष्किर, प्रतुद, प्रसह और ग्राम्य ये अठ जांगल जातिमें हैं ।

गुण—जांगल जातिके मांस—मधुर, रूक्ष, कसैले, हलके, बलदायक, पुष्टिकारक, वीर्यवर्द्धक,अग्निको दीपन करनेवाले, दोषनाशक और गूंगापन, मिन्मिनापन, तोतलापन, अर्दितवात (लकवा), बहरापन, अरुचि, वमन,प्रमेह, मुखरोग,श्लीपद, गलगण्ड तथा वातसम्बन्धी रोगोंको नष्ट करते है ॥ ३–५॥

अथ आनूपमांसस्य लक्षणं गुणाश्च ।

कूलेचराः प्लवाश्चापि कोशस्थाः पादिनस्तथा ।
मत्स्या एते समाख्याताः पञ्चधानूपजातयः ॥ ६ ॥
आनूपा मधुराः स्निग्धा गुरवो वह्निसादनाः ।
श्लेष्मलाः पिच्छिलाश्चापि मांसपुष्टिप्रदा भृशम् ।
तथाऽभिष्यन्दिनस्ते हि प्रायःपथ्यतमाःस्मृताः ।७॥

कूलेचर, प्लव, कोशस्थ, पादी और मत्स्य ये पाँच आनूपजातिमें है ।

गुण—आनूपजातिके मांस—मधुर, स्निग्ध, भारी, अग्निको मन्द करनेवाले, कफकारक, पिच्छिल, मांसको बहुत पुष्टिदायक, अभिष्यन्दी और विशेष करके बहुत पथ्य हैं ॥ ६ ॥ ७ ॥

अथ जांगलाः ।

तत्र जंघालगणनाविशिष्टगुणाः ।

हरिणैणकुरंगर्ष्यपृषतन्यंकुशम्बराः ।
राजीवोऽपि च मुण्डी चेत्याद्या जांगलसंज्ञकाः॥८॥
हरिणस्ताम्रवर्णः स्यादेणः कृष्णः प्रकीर्तितः ।
कुरंग ईषत्ताम्रः स्यादेणतुल्याकृतिर्महान् ॥ ९ ॥
ऋष्यो नीलांगको लोके स रोझ इति कीर्तितः ।
पृषतश्चन्द्रबिन्दुः स्याद्धरिणात्किञ्चिदल्पकः ॥१०॥
न्यंकुर्बहुविषाणोथ शम्बरो गवयो महान् ।
राजीवस्तु मृगो ज्ञेयो राजभिः परितो वृतः ॥ ११॥

यो मृगः शृंगहीनः स्यात्स मुण्डीति निगद्यते ।
जंघालाः प्रायशः सर्वे पित्तश्लेष्महराः स्मृताः ।
किञ्चिद्वातकराश्चापि लघवो बलवर्द्धनाः ॥ १२ ॥

हरिण, एण, कुरङ्ग, ऋष्य, पृषत, न्यंकु, शम्बर, राजीव और मुण्डी इत्यादि पशु जंघालसंज्ञक है । जो मृग लाल वर्णका हो उसको हरिण, जो काला हो उसको एण, किंचित् लालवर्णका बडा और एणके सदृश आकृतिवाला हो उसको कुरंग, जो नीले वर्णका हो उसको ऋष्य और लोकमें रोझ जो चन्द्रके सदृश छींटोंवाला और हरिणसे कुछ छोटा हो उसको पृषत, जिसके बहुतसे सीग हों उसको न्यंकु (बारहसिंगा), बडे रोझको शम्बर, जिसके शरीरमें अधिक रेखा पडी हों उसको राजीव और जो मृग सीगरहित होता है उसको मुण्डी कहते हैं । प्रायः सर्व जंघाल–पित्त तथा कफनाशक, कुछ वातकारक, हलके और बलवर्द्धक हैं ॥ ८–१२ ॥

अथ बिलेशयानां (बिलनिवासी प्राणियोंकी) गणना गुणाश्च ।

गोधाशशभुजंगाखुशल्लक्याद्या बिलेशयाः ।
बिलेशया वातहरा मधुरा रसपाकयोः ।
बृंहणा बद्धविण्मूत्रा वीर्योष्णाश्च प्रकीर्तिताः ॥ १३ ॥

गोह, खरगोश, सांप, मूसा और शल्लकी (सेई) इत्यादिक बिलस्थ (मिट्टीमें रहनेवाले) कहाते हैं ।

बिलस्थोंके मांस–वातनाशक, रसमें तथा पाकमें मधुर, पुष्टिकारक, मल तथा मूत्रको बांधनेवाले और उष्णवीर्य हैं ॥ १३ ॥

अथ गुहाशयानां (गुफानिवासी प्राणियोंकी) गणना गुणाश्च ।

सिंहव्याघ्रवृका ऋक्षतरक्षुद्वीपिनस्तथा ।
बभ्रुजम्बूकमार्जारा इत्याद्याः स्युर्गुहाशयाः ॥ १४ ॥

स्थूलपुच्छो रक्तनेत्रो बभ्रुदेहः स नाकुलः ।
गुहाशया वातहरा गुरूष्णा मधुराश्च ते ।
स्निग्धा बल्या हिता नित्यं नेत्रगुह्यविकारिणाम् १५

सिंह, वाघ, भेडिया, रीछ, तरक्षु (चीतल), चीता, बभ्रु (नौला), गीदड और बिलाव इत्यादि जीव गुहाशय (गुफामें रहनेवाले) कहाते है । जो मोटी पूँछवाला और लाल नेत्रोंयुक्त तथा बभ्रके सदृश देहवाला होता है उसको नाकुल (न्यौला) कहते है ।

सम्पूर्ण गुहाशयोंका मांस—वातनाशक, भारी, गरम, मधुर, स्निग्ध, बलदायक और नेत्र तथा गुदाके रोगवालेंको सर्वदा हितकारी है ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ पर्णमृगाणां (पत्ते खानेवाले प्राणियोंकी) गणना गुणाश्च ।

वनौका वृक्षमार्जारो वृक्षमर्कटिकादयः ।
एते पर्णमृगाः प्रोक्ताः सुश्रुताद्यैर्महर्षिभिः ॥ १६ ॥
वनौका वानरः । वृक्षमार्जारी वृक्षबिडालः ।
वृक्षमर्कटिका 'रूपी वानर' इति लोके ।
स्मृताः पर्णमृगा वृष्याश्चक्षुष्याः शोषिणे हिताः ।
श्वासार्शःकासशमनाः सृष्टमूत्रपुरीषकाः ॥ १७ ॥

वानर, वृक्षपर रहनेवाले बिलाव (वनबिलाव) और वृक्षमर्कटी (रूपी) ये सुश्रुतआदि महर्षियोंने पर्णमृग कहे है ।

पर्णमृगोंका मांस—वीर्यवर्द्धक, नेत्रोंको हितकारी, शोष (क्षय), रोगवालोंको हितकारी, मल तथा मूत्रको निकालनेवाला और श्वास, बवासीर तथा खांसीको नष्ट करते हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथ विष्किराणां (विष्किरपक्षियोंकी) गणना गुणाश्च ।

वर्त्तकालाववर्तीरकपिञ्जलकतित्तिराः ।
कुलिंगकुक्कुटाद्याश्च विष्किराः समुदाहृताः ॥ १८॥
विकीर्य भक्षयन्त्येते यस्मात्तस्ताद्धि विष्किराः ।
कपिञ्जल इति प्राज्ञैः कथितो गौरतित्तिरिः ॥ १९॥
विष्किरा मधुराः शीताः कषायाः कटुपाकिनः ।
बल्या वृष्यास्त्रिदोषघ्नाः पथ्यास्ते लघवः स्मृताः२०

वर्त्तक (चित्रविचित्र रंगके पंखोंकी चिडिया), लाव (लवा), वटेर, गौरतीतर, तीतर, घरकी चिडिया और मुरगा आदिक विष्किर कहाते हैं। ये जीव कुरेद कुरेद कर खाते है इससे इनकी विष्किर संज्ञा है। कपिञ्जल अर्थात् गौरतीतर (कबूतर) जानना । विष्किर जीवोंका मांस—मधुर, शीतल, कसैला. पाकमें चरपरा, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, त्रिदोषनाशक, पथ्य और हलका है ॥ १८–२० ॥

अथ प्रतुदानां (चूंचसे खानेवाले पक्षियोंकी) गणना गुणाश्च ।

हारीतो धवलः पाण्डुश्चित्रपक्षो बृहच्छुकः ।
पारावतः खञ्जरीटः पिकाद्याः प्रतुदाः स्मृताः ।
प्रतुद्य भक्षयन्त्येते तुण्डेन प्रतुदास्ततः ॥२१ ॥
हारीतः हरियल इति लोके ।
कपोतो धवलः पाण्डुः शतपुत्रो बृहच्छुकः ॥ २२ ॥
दार्वाघाटः इत्यमरः ।'कटफोरा' इति लोके ।

प्रतुदा मधुराः पित्तकफघ्नास्तुवरा हिमाः ।
लघवो बद्धवर्चस्काः किञ्चिद्वातकराः स्मृताः ॥२३॥

हरियल, पिंडुकिया, चित्रपक्ष (एक प्रकारका तोता) बडा तोता, कबूतर, खंजन और कोयल आदिक प्रतुद कहे है । ये चोंचसे पदार्थको नोच कर खाते हैं इससे इनको प्रतुद कहा है । कबूतर—सफेद और पांडुवर्ण ऐसे दो प्रकारका होता है. शतपत्र यह बडे तोतेहीका नाम है और अमरकोशमें ता कटफोरेको लिखा है ॥

प्रतुदजीवोंका मांस—मधुर, पित्त तथा कफनाशक, कसैला, शीतल,हलका, मलको बांधनेवाला और किंचित् वातकारक है ॥ २१–२३ ॥

अथ प्रसहानां (दूसरेसे छीनकर खानेवाले पक्षियोंकी) गणना गुणाश्च ।

काको गृध्र उलूकश्च चिल्लश्च शशघातकः ।
चाषो भासश्च कुरर इत्याद्याः प्रसहाः स्मृताः॥२४॥

शशघातकः वाज इति लोके। चाषो नीलकण्ठ इति लोके "भासो गृध्रविशेषः स्यात्" । कुररः 'कुरांकुर' इति लोके ।

"प्रसहाः कीर्तिता एते प्रसह्याच्छिद्य भक्षणात्" ।
प्रसहाः खलु वीर्योष्णास्तन्मांसं भक्षयन्ति ये ।
ते शोषभस्मकोन्मादशुक्रक्षीणा भवन्ति हि ॥ २५॥

कौआ, गिद्ध, उल्लू, चील, बाज, वशिकरा, बकुई, नीलकण्ठ, भास (एक प्रकारका गिद्ध) और कुरर (कुञ्ज) इत्यादि प्रसह कहाते है । वे वलात्कारसे छीन खाते है इससे इनका नाम प्रसह है ।

प्रसह जीवोंका मांस—उष्णवीर्य है, इससे जो इनको खाते हैं उनको—शोष भस्मक और उन्मादरोग होता है तथा वीर्य क्षीण होता है ॥ २४ ॥ २५॥

अथ ग्राम्याणां (ग्राम्यपशुओंकी)
गणना गुणाश्च ।

छागमेषवृषाश्वाद्या ग्राम्याः प्रोक्ता महर्षिभिः ।
ग्राम्या वातहराः सर्वे दीपनाः कफपित्तलाः ।
मधुरा रसपाकाभ्यां बृंहणा बलवर्द्धनाः ॥ २६ ॥

बकरी, मेढा, बैल और घोडा इत्यादि जीव ग्राम्य है। ग्राम्य जीवोंका मांस—वातनाशक, अग्निको दीपन करनेवाला, कफ तथा पित्तकारक, पाकमें तथा रसमें मधुर, पुष्टिदायक और बलवर्द्धक है ॥ २६ ॥

अथानूपाः ।
तत्र कूलेचराणां गणना गुणाश्च ।

लुलायगण्डवाराहचमरीवारणादयः ।
एते कूलेचराः प्रोक्ता यतः कूले चरन्त्यपाम् ॥ २७ ॥
लुलायो महिषः। गण्डः खड्गः। चमरी चमरपुच्छी गौः ।
कूलेचरा मरुत्पित्तहरा वृष्या बलावहाः ।
मधुराः शीतलाः स्निग्धा मूत्रलाः श्लेष्मवर्धनाः २८

भैंसा, गेंडा, सुअर, चमरगाय (सुरेगाय) और हाथी आदि कूलेचर (जलके किनारे रहनेवाले) है ।

कूलेचरजीवोंका मांस—वात तथा पित्तनाशक, वीर्यवर्द्धक, बलदायक, मधुर, शीतल, स्निग्ध, मूत्रको बढानेवाला और कफवर्द्धक है ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथ प्लवानां (पंक्तियोंसे आकाशमें उडनेवाले
पक्षियोंकी) गणना गुणाश्च ।

हंससारसकारण्डबकक्रौञ्चशरारिकाः ।
नंदीमुखी सकादम्बा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः ।
प्लवंति सलिले यस्मादेते तस्मात्प्लवाः स्मृताः २९

कारण्डः कपर्दिकाख्यो बृहद्धंसभेदः ।
स्थूला कठोरा वृत्ता च यस्याश्चञ्चूपरि स्थिता ।
गुटिका जम्बुसदृशी प्रोक्ता नन्दीमुखीति सा ३०॥
बलाका वगुली इति लोके ॥
प्लवाः पित्तहराः स्निग्धा मधुरा गुरवो हिमाः ।
वातश्लेष्मप्रदाश्चापि बलशुक्रकराः सराः ॥ ३१ ॥

हंस, सारस, चकवा, वगला, क्रौंच (ढेंक), शरारी (बगलेका भेद), नन्दीमुखी, वत्तक और बलाका आदि जीवोंको प्लव कहा है ये जलमें तैरते हैं, इसकारण इनका नाम प्लव है । जिसकी चोंचके ऊपर मोटी, कठोर, गोल और जम्बूके सदृश गोलाई हो उसको नन्दीमुखी कहते है ।

प्लवजीवोंका मांस—पित्तनाशक, चिकना, मीठा, भारी, शीतल, वात तथा कफको उत्पन्न करनेवाला, बलदायक, वीर्यवर्द्धक और दस्तावर है॥२९–३१

अथ कोशस्थानां (ढक्कनेके मध्यमें रहनवाले प्राणियोंकी) गणना गुणाश्च ।

शंखः शंखनखश्चापि शुक्तिशम्बूककर्कटाः ।
जीवा एवंविधाश्चान्ये कोशस्थाः परिकीर्तिताः ३२
शंखनखः क्षुद्रशंखः ।
कोशस्था मधुराः स्निग्धा वातपित्तहरा हिमाः ।
बृंहणा बहुवर्चस्का वृष्याश्च बलवर्द्धनाः ॥ ३३ ॥

शंख, छोटाशंख, सीप, शम्बूक (जलकी छोटी सीप) और कर्कट केकडा आदिक तथा इसीप्रकारके और भी जीव कोशस्थ कहाते हैं ।

कोशस्थजीवोंका मांस—मधुर, चिकना, वात तथा पित्तनाशक, शीतल, पुष्टिकारक, बहुत मलकर्त्ता, वीर्यवर्द्धक और बलदायक है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

अथ पादिनां (पांवोंके प्राणियोंकी)
गणना गुणाश्च।

कुम्भीरकूर्मनक्राश्च गोधामकरशंकवः ।
घंटिकः शिशुमारश्चेत्यादयः पादिनः स्मृताः ३४ ॥
कुम्भीरो मारको जलजन्तुः । कूर्मः कच्छपः । नक्रः
नाका इति लोके । गोधा गोहिजलजन्तुः । मकरः
मगर इति लोके । शंकुः शाकुच इति लोके ।
घंटिकः घडियाल इति लोके ।
पादिनोऽपि च ये ते तु कोशस्थानां गुणैः समाः ३५

कुम्भीर (मार डालनेवाला जलका जीव), कछुआ, नाका, गोह, मगर, मच्छ, शंकु (शाकुच), घडियाल और शिशुमार (सूस) इत्यादि जलमें रहनेवाले जिनके पाँव होते है उनको पादी कहते है। पादीजीवोंका मांस भी कोशस्थके सदृश गुणकारक है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथ मत्स्यानां (मत्स्योंके) नामानि गुणाश्च ।

मत्स्यो मीनो विकारश्च झषो वैसारिणोऽण्डजः ।
शकुली पृथुरोमा च स सुदर्शन इत्यपि ॥ ३६ ॥
रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मत्स्याः परिकीर्त्तिताः ।
मत्स्याः स्निग्धोष्णमधुरा गुरवः कफपित्तलाः ३७॥
वातघ्ना बृंहणा वृष्याः रोचका बलवर्द्धनाः ।
मद्यव्यवायसक्तानां दीप्ताग्नीनाञ्च पूजिताः ॥ ३८ ॥

मत्स्य, मीन, विकार, झष, वैसारिण, अण्डज, शकुली, पृथुरोमा और सुदर्शन ये मच्छियोंके नाम है। रोहिडा आदिक जो जीव जलमें होते है उनको मछली कहते है।

मछली—चिकनी, गरम, भारी, कफ तथा पित्तकारक, वातनाशक, पुष्टिदायक वीर्यवर्द्धक, रुचिकारक, बलवर्द्धक और मद्य (दारू) तथा मैथुनमें आसक्तोंको तथा प्रदीप्त जठराग्निवालोंको हितकारी है ॥ ३६–३८ ॥

अथ जंघालादीनां (जांघवालोंके) नामानि गुणाश्च ।

तत्र जंघालेषु हरिणस्य गुणाः ।

हरिणः शीतलो बद्धविण्मूत्रो दीपनो लघुः ।
रसे पाके च मधुरः सुगंधिः सन्निपातहा ॥ ३९ ॥

हिरनका मांस—शीतल, मल तथा मूत्रको बांधनेवाला, अग्निप्रदीपक, हलका, रसमें तथा पाकमें मीठा, सुगन्धि और सन्निपातनाशक है ॥ ३९ ॥

अथ एणहरिणः (काला हरिण) ।

एणः कषायो मधुरः पित्तासृक्कफवातहृत् ।
संग्राही रोचनो बल्यो ज्वरप्रशमनः स्मृतः ॥ ४० ॥

एण नामक मृगका मांस—कसैला, मीठा, ग्राही, रुचिकारक, बलदायक और पित्त, रक्तविकार, कफ, वात तथा ज्वरनाशक है ॥ ४० ॥

अथ कुरङ्गः ।

कुरंगो बृंहणो बल्यः शीतलः पित्तहृद्गुरुः ।
मधुरो वातहृद्ग्राही किञ्चित्कफकरः स्मृतः ॥ ४१ ॥

कुरंग नामक मृगका मांस—पुष्टिकारक, बलवर्द्धक, शीतल, पित्तनाशक, भारी, मधुर, वातनाशक, ग्राही और किञ्चित् कफकारक है ॥ ४१ ॥

अथ रोझः ।

ऋष्यो नीलांडकश्चापि गवयो रोझ इत्यपि ।
गवयो मधुरो बल्यः स्निग्धोष्णः कफपित्तलः ४२॥

ऋष्य, नीलाण्डक, गवय और रोझ ये रोझके नाम है ।

रोझका मांस—मधुर, बलदायक, स्निग्ध, गरम और कफ तथा पित्तकारक है ॥ ४२ ॥

अथ पृषतः (चित्तालमृग) ।

पृषतस्तु भवेत्स्वादुर्ग्राहकः शीतलो लघुः ।
दीपनो रोचनः श्वासज्वरदोषत्रयास्रजित् ॥ ४३

पृषत (चित्तल) नामक मृगका मांस—मधुर, ग्राही , शीतल, हलका, अग्निप्रदीपक, रुचिकारक और श्वास, ज्वर, त्रिदोष तथा रक्तविकारनाशक है ॥ ४३ ॥

अथ न्यंकुः (बारहासिंगा) ।

न्यंकुः स्वादुर्लघुर्बल्यो वृष्यो दोषत्रयापहः ॥ ४४ ॥

न्यंकु नामक मृग (बारहासिंगा) का मांस—मधुर, हलका, बलदायक, वीर्यवर्द्धक और त्रिदोषनाशक है ॥ ४४ ॥

अथ सावरम् ।

सावरं पललं स्निग्धं शीतलं गुरु च स्मृतम् ।
रसे पाके च मधुरं कफदं रक्तपित्तहृत् ॥ ४५ ॥
राजीवस्तु गुणैर्ज्ञेयः पृषतेन समो जनैः ।

सावर मृगका मांस—स्निग्ध, शीतल, भारी, रसमें तथा पाकमें मीठा, कफकारक और रक्तपित्तविनाशक है ॥ ४५ ॥ राजीवनामक मृगके मांसके गुण पृषत (चित्तलके) मांसके सदृश ही है ।

अथ मुंडी ।

मुंडी तु ज्वरकासास्रक्षयश्वासापहो हिमः ॥ ४६ ॥

मुण्डी (सींगरहित) मृगका मांस—शीतल और ज्वर, खाँसी, रक्तविकार, क्षय तथा श्वासनाशक है ॥ ४६ ॥

अथ बिलेशयाः ।

तत्र शश (खरगोश) स्य नामगुणाः ।

लम्बकर्णः शशः शूली लोमकर्णो बिलेशयः ।
शशः शीतो लघुर्ग्राही रूक्षः स्वादुः सदा हितः ॥ ४७ ॥

वह्निकृत्कफपित्तघ्नो वातसाधारणः स्मृतः ।
ज्वरातीसारशोषास्रश्वासामयहरश्च सः ॥ ४८ ॥

लम्बकर्ण, शश, शूली, लोमकर्ण और बिलेशय ये खरगोश चौगडाके संस्कृत नाम है ।

खरगोशका मांस—शीतल, हलका, ग्राही, रूखा, स्वादु, सदा हितकारी, अग्निकारक, कफ तथा पित्तनाशक, साधारण वातकारक और ज्वर, अतिसार, शोष, रक्तविकार तथा श्वासको नष्ट करता है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अथ सेधा (सेह, साही) ।

सेधा तु शल्यकः श्वावित्कथ्यन्ते तद्गुणा अथ ।
शल्यकः श्वासकासास्रशोषदोषत्रयापहः ॥ ४९ ॥

सेधा, शल्यक और श्वावित्, ये सेहके संस्कृत नाम है । सेहका मांस—श्वास, खांसी, रक्तविकार, शोप तथा त्रिदोषनाशक है ॥ ४९ ॥

अथ पक्षिणां (पक्षियोंके) नामानि गुणाश्च ।

पक्षी खगो विहंगश्च विहगश्च विहंगमः ।
शकुनिर्विः पतत्री च विष्किरो विकिरोऽण्डजः ॥ ५० ॥
धान्यांकुरचरा येऽत्र तेषां मांसं लघूत्तमम् ।
आनूपं बलकृन्मांसं स्निग्धं गुरुतरं स्मृतम् ॥ ५१ ॥

पक्षी, खग, विहङ्ग, विहग, विहंगम, शकुनि, वि, पतत्री, विष्किर, विकिर और अण्डज ये पक्षीके संस्कृत नाम है । जो पक्षी धान्य तथा अंकुर खानेवाले हैं इससे उनका मांस हलका और उत्तम है । जो पक्षी जलमें रहनेवाले हैं उनका मांस—स्निग्ध, बलदायक और बहुत भारी है ॥ ५० ॥ ५१ ॥

अथ तेषु विष्किरेषु वर्तकः (बटेर) ।

वर्तीको वर्त्तकश्चित्रस्ततोऽन्या वर्त्तका स्मृता ।

वर्त्तकोऽग्निकरः शीतो ज्वरदोषत्रयापहः ।
सुरुच्यः शुक्रदो बल्यो वर्त्तिकाल्पगुणा ततः ॥५२॥

वर्त्तीक, वर्तक और चित्र, ये बटेरके नाम हैं। इसकी जातिके दूसरे पक्षियोंको वर्त्तका कहते हैं।

बटेरका मांस–अग्निकारक, शीतल, रुचिकारी, वीर्यवर्द्धक, बलदायक और ज्वर तथा त्रिदोषनाशक है। वर्त्तकामें इससे हीन गुण हैं॥ ५२ ॥

अथ लावः (लवा)

लावा विष्किरवर्गेषु ते चतुर्धा मता बुधैः ।
पांशुलो गौरकोऽन्यस्तु पौण्ड्रको दर्भरस्तथा ॥५३॥
लावा वह्निकराः स्निग्धा गरघ्ना ग्राहिका हिताः ।
पांशुलः श्लेष्मलस्तेषु वीर्योष्णोऽनिलनाशनः ॥५४॥
गौरो लघुतरो रूक्षो वह्निकारी त्रिदोषजित् ।
पौण्ड्रकः पित्तकृत्किञ्चिल्लघुर्वातकफापहः ।
दर्भरो रक्तपित्तघ्नो हृदामयहरो हिमः ॥ ५५ ॥

विष्किरवर्गमें लवा भी है,वह पांशुल, गौरक, पौण्ड्रक और दर्भर इस भांति चार प्रकारका होता है।

लवेका मांस–अग्निकारक, स्निग्ध,विषनिनाशक, ग्राही और हितकारी है। पांशुलजातिका लवा–कफकारक, उष्णवीर्य और वातनाशक है।

गौरकजातिका लवा–अत्यन्त हलका,रूक्ष,अग्निकारक और त्रिदोषनाशक है। पौड्रकजातिका लवा पित्तकर्ता, किंचित् हलका और वात तथा कफनाशक है। दर्भरजातिका लवा–रक्तपित्तनाशक, हृदयरोगनाशक और शीतल है॥ ५३–५५ ॥

अथ वार्तीकः (वगेरा बटेरा) ।

वालीको वर्तिचटको वार्तीकश्चैव स स्मृतः ।
वालीको मधुरः शीतो रूक्षश्च कफपित्तनुत् ॥५६॥

वालीक, वर्तिचटक और वार्तीक ये वगरेके संस्कृत नाम है ।

वगेरेका मांस—शीतल, रूक्ष और कफ तथा पित्तनाशक है ॥ ५६ ॥

अथ कृष्णतित्तिरिगौरतित्तिरी (तीतर) ।

तित्तिरिः कृष्णवर्णः स्याच्चित्रोऽन्यो गौरतित्तिरिः ।
तित्तिरिर्वलदो ग्राही हिक्कादोषत्रयापहः ।
श्वासकासज्वरहरस्तस्माद्गौरोऽधिको गुणैः ॥ ५७ ॥

जो तीतर काले रंगका हो वह काला तीतर और जो चित्र विचित्र वर्णका हो वह गौर तीतर कहाता है ।

तीतरका मांस—वलदायक, ग्राही और हिचकी, त्रिदोष, श्वास, खांसी तथा ज्वरनाशक है।काले तीतरकी अपेक्षा गौर तीतरके मांसमें अधिक गुण हैं॥५७॥

अथ चटकः (गवरैया चिडा) ।

चटकः कलविंकः स्यात्कुलिंगः कालकण्ठकः ।
कुलिंगः शीतलः स्निग्धः स्वादुः शुक्रकफप्रदः ।
सन्निपातहरो वेश्मचटकश्चातिशुक्रलः ॥ ५८ ॥

चटक, कलविंक, कुलिग और कालकण्ठक, ये चिडेके संस्कृत नाम है ।

चिडेका मांस—शीतल,स्निग्ध, मधुर,वीर्य तथा कफवर्द्धक और सन्निपात-नाशक है । घरोंमें रहनेवाले चिडेका मांस अत्यन्त वीर्यवर्द्धक है ॥ ५८ ॥

अथ कुक्कुटः वनकुक्कुटश्च (मुरगा) ।

कुक्कुटः कृकवाकुः स्यात्कालज्ञश्चरणायुधः ।
ताम्रचूडस्तथा दक्षो प्रातर्नादी शिखण्डकः ॥ ५९
कुक्कटो बृंहणः स्निग्धो वीर्योष्णानिलहृद्गुरुः ।

चक्षुष्यः शुक्रकफकृद्बल्यो वृष्यः कषायकः ॥६०॥
आरण्यकुक्कुटः स्निग्धो बृंहणः श्लेष्मलो गुरुः ।
वातपित्तक्षयवमिविषमज्वरनाशनः ॥ ६१ ॥

कुक्कुट, कृकवाकु, कालज्ञ, चरणायुध, ताम्रचूड, दक्ष, प्रातर्नादी और शिखण्डिक ये मुरगेके संस्कृत नाम है।

मुरगेका मांस-पुष्टिदायक, स्निग्ध, उष्णवीर्य, वातनाशक, भारी, नेत्रोंको हितकारी, वीर्य तथा कफवर्धक,वलदायक, वृष्य और कसैला है । वनमुरगेका मांस—स्निग्ध, पुष्टिकारक, कफकर्ता, भारी और वात, पित्त, क्षय, वमन तथा विषमज्वरनाशक है ॥ ५९—६१ ॥

अथ प्रतुदाः । हारीतः (हरियल) ।

हारीतो रक्तपीतः स्याद्धरितोऽपि स कथ्यते ॥६२ ॥
हारीतो रूक्ष उष्णश्च रक्तपित्तकफापहः ।
स्वेदस्वरकरः प्रोक्त ईषद्वातकरश्च सः ॥ ६३ ॥

हारीत, रक्तपीत और हरित, ये हरियलके संस्कृत नाम है।

हरियलका मांस—रूखा, गरम, रक्तपित्त तथा कफनाशक, स्वेदकारक, स्वरको उत्तम करनेवाला और किंचित् वातकारक है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

अथ पाण्डुधवलपाण्डू (पण्डाकुता) ।

पाण्डुस्तु द्विविधो ज्ञेयश्चित्रपक्षः कलध्वनिः ।
द्वितीयो धवलः प्रोक्तः स कपोतः स्फुटस्वनः ॥६४
चित्रपक्षः कफहरो वातघ्नो ग्रहणीप्रणुत् ।
धवलः पाण्डुरुद्दिष्टो रक्तपित्तहरो हिमः ॥ ६५ ॥

पण्डाकुता दो प्रकारकी होती है । एक चित्रित पंखोंयुक्त मीठे स्वरवाली होती है और दूसरी सफेदवर्णयुक्त स्फुटशब्दोंवाली होती है। पहिलीको पाण्डु और दूसरीको धवल और कपोत कहते है ॥ ६४ ॥

चित्रपक्षका मांस—कफनाशक और वात तथा संग्रहणी नाशक है।
धवलका मांस—रक्तपित्तनाशक और शीतल है॥ ६५॥

अथ मयूरः (मोर)।

मयूरश्चन्द्रकी केकी मेघरावो भुजंगभुक्।
शिखी शिखावलो वर्हीं शिखण्डी नीलकण्ठकः ६६
शुक्लोपांगः कलापी च मेघनादानुलास्यपि।
रसे पाके च मधुरः संग्राही वातशान्तिकृत्॥६७॥

मयूर, चन्द्रकी, केकी, मेघराव, भुजंगभुक्, शिखी, शिखावल, वर्हीं, शिखण्डी, नीलकण्ठ, शुक्लोपांग, कलापी और मेघनादानुलासी ये मोरके संस्कृत नाम हैं। मोरका मांस—रसमें तथा पाकमें मधुर, ग्राही और वातनाशक है॥६६॥६७॥

अथ पारावतः (कबूतर, परेवा)।

पारावतः कलरवः कपोतो रक्तवर्द्धनः।
पारावतो गुरुः स्निग्धो रक्तपित्तानिलापहः॥
संग्राही शीतलस्तज्ज्ञैः कथितो वीर्यवर्द्धनः॥६८॥

पारावत, कलरव, कपोत और रक्तवर्द्धन ये परेवा और कबूतरके नाम हैं। इन दोनोंका मांस—भारी, स्निग्ध, ग्राही, शीतल, वीर्यवर्द्धक और रक्तपित्त तथा वातनाशक है॥ ६८॥

अथ पक्ष्यण्डस्य (पक्षियोंके अण्डोंके) गुणाः।

नातिस्निग्धानि वृष्याणि स्वादुपाकरसानि च।
वातघ्नान्यतिशुक्राणि गुरूण्यण्डानि पक्षिणाम् ६९

पक्षियोंके अण्डेको हिन्दीमें अंडा। वं०—डिम्ब गु०—इंडा कहते है। पक्षियोंका अंडा—बहुत स्निग्ध नहीं, वृष्य, भारी, पाकमें तथा रसमें मधुर, वातनाशक और अत्यन्त वीर्यवर्द्धक है॥ ६९॥

अथ ग्राम्यच्छागः (बकरा)।

छागलो बर्करश्छागो बस्तोऽजश्छेलकः स्तुभः।
अजा छागा स्तुभा चापि छेलिका च गलस्तनी ७०
छागमांसं लघु स्निग्धं स्वादुपाकं त्रिदोषनुत्।
नातिशीतमदाहि स्यात्स्वादु पीनसनाशनम्॥७१॥
परं बलकरं रुच्यं बृंहणं वीर्यवर्द्धनम्।
अजायास्त्वप्रसूताया मांसं पीनसनाशनम्॥७२॥
शुष्ककासेऽरुचौ शोषे हितमग्नेश्च दीपनम्।
अजासुतस्य बालस्य मांसं लघुतरं स्मृतम्॥७३॥
हृद्यं ज्वरहरं श्रेष्ठं सुखदं बलदं भृशम्।
मांसं निष्कासिताण्डस्य छागस्य कफकृद् गुरु ७४
स्रोतःशुद्धिकरं बल्यं मांसदं वातपित्तनुत्।
वृद्धस्य वातलं रूक्षं तथा व्याधिमृतस्य च।
ऊर्द्ध्वजत्रुविकारघ्नं छागमुण्डं रुचिप्रदम्॥७५॥

छागल, वर्कर, छाग, वस्त, अज, छेलक और स्तुभ ये बकरेके संस्कृत नाम है।

बकरेका मांस—हलका, स्निग्ध, पाकमें मीठा, त्रिदोषनाशक, बहुत शीतल नहीं, दाहकारक नही, स्वादु, पीनसनाशक, अत्यन्त बलकर्त्ता, रुचिकारी, पुष्टिदायक और वीर्यवर्द्धक है।

अप्रसूता (विनाब्याई) बकरीका मांस—पीनसको नष्ट करनेवाला, अग्निप्रदीपक और सूखी खांसी, अरुचि तथा शोषरोगमें हितकारी है। बकरीके बच्चेका मांस—बहुत हलका, हृदयको प्रिय, ज्वरनाशक, श्रेष्ठ, सुखदायक और बहुत बलदायक है। जिसके अण्ड निकालडाले हों ऐसे बकरेका मांस—कफ-

कारक, भारी, नाडियोंको शुद्ध करनेवाला, बलदायक, मांसवर्द्धक और वात तथा पित्तनाशक है। वृद्ध, रोगयुक्त और मृतक बकरेका मांस वातकारक और रूखा है। बकरेके मस्तकका मांस—हँसलीसे ऊपरके विकारोंको नष्ट करनेवाला और रुचिकारी है ॥ ७०–७५ ॥

अथ मेषः (मेंढा)।

मेढ्रो मेढो हुडो मेष उरणोऽप्येडकोऽपि च ।
अविर्वृष्णिस्तथोर्णायुः कथ्यन्ते तद्गुणा अथ ॥ ७६ ॥
मेषस्य मासं पुष्टौ स्यात्पित्तश्लेष्मकरं गुरु ।
तस्यैवाण्डविहीनस्य मांसं किञ्चिल्लघुस्मृतम् ॥ ७७ ॥

मेढ्र, मेढ, हुड, मेष, उरण, एडक, अवि, वृष्णि और ऊर्णायु ये मेंढेके संस्कृत नाम है।

मेंढेका मांस—पुष्टिदायक, पित्त तथा कफकारक और भारी है। जिसके अण्ड निकाल लिये हों ऐसें मेंढेका मांस कुछ हलका है ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

अथ एडकः (दुम्बा)।

एडकः पृथुशृंगः स्यान्मेदः पुच्छस्तु दुंबकः ।
एडकस्य पलं ज्ञेयं मेषामिषसमं गुणैः ॥ ७८ ॥
मेदःपुच्छोद्भवं मांसं हृद्यं वृष्यं श्रमापहम् ।
पित्तश्लेष्मकरं किंचिद्वातव्याधिविनाशनम् ॥ ७९ ॥

एडक, पृथुशृंग, मेदःपुच्छ और दुंबक ये दुंबाके संस्कृत नाम है।

एडकका मांस—मेंढेके मांसके सदृश गुणवाला है और दुंबाका मांस—हृदयको प्रिय, वृष्य, श्रमनाशक, पित्त तथा कफकारक और वातसम्बन्धी रोगोंको नष्ट करता है ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

अथ वृषभः (बैल)।

बलीवर्दस्तु वृषभ ऋषभश्च तथा वृषः ।
अनड्वान्सौरभेयोऽपि गोरक्षा भद्र इत्यपि ॥ ८० ॥

सुरभिः सौरभेयी च माहेयी गौरुदाहृता ।
गोमांसं तु गुरु स्निग्धं पित्तश्लेष्मविवर्द्धनम् ॥
बृंहणं वातहृद्बल्यमपथ्यं पीनसप्रणुत् ॥ ८१ ॥

बलीवर्द, वृषभ, ऋषभ, वृष, अनड्वान्, सौरभेय, गौ, उक्षा और भद्र ये बैलके संस्कृत नाम है ।

और सुरभि, सौरभेयी, माहेयी और गौ, ये गायके संस्कृत नाम है ।

बैलका मांस–भारी, स्निग्ध, पित्त तथा कफवर्द्धक, पुष्टिकारक, वातनाशक, बलदायक, अपथ्य और पीनस रोगनाशक है ॥ ८० ॥ ८१ ॥

अथ अश्वः (घोडा)

घोटकोऽप्यश्वतुरगास्तुरंगाश्च तुरंगमाः ।
वाजिवाहार्वगन्धर्वहयसैन्धवसप्तयः ॥ ८२ ॥
अश्वमांसं तु तुवरं वह्निकृत्कफपित्तलम् ।
वातहृद्बृंहणं बल्यं चक्षुष्यं मधुरं लघु ॥ ८३ ॥

घोटक, अश्व, तुरग, तुरंग, तुरंगम, वाजि, वाह, अर्व. गन्धर्व, हय, सैधव और सप्ति ये घोडेके संस्कृत नाम है ।

घोडेका मांस–कसैला, अग्निकारक, कफ तथा पित्तको करनेवाला, वातनाशक. पुष्टिदायक, बलकारक, नेत्रोंको हितकारी. मधुर और हलका है ८२ । ८३

अथ कूलेचराः ।



तत्र महिषः (भैंसा) ।

महिषो घोटकारिः स्यात्कासरश्च रजस्वलः ।
पीनस्कन्धः कृष्णकायो लुलायो यमवाहनः ॥ ८४ ॥
माहिषस्यामिषं स्वादु स्निग्धोष्णं वातनाशनम् ।

निद्राशुक्रप्रदं बल्यं तनुदार्ढ्यकरं गुरु ।
वृष्यञ्च सृष्टविण्मूत्रं वातपित्तास्रनाशनम् ॥ ८५ ॥

महिष, घोटकारि, कासर, रजस्वल, पीनस्कन्ध, कृष्णकाय, लुलाय और यमवाहन ये भैंसेके संस्कृत नाम हैं ।

भैंसेका मांस—मधुर, स्निग्ध, गरम, वातनाशक, निद्रा, शुक्र, बलदायक शरीरको दृढ करनेवाला, वृष्य, मल तथा मूत्रको अधिक करनेवाला और वात, पित्त तथा रक्तविकारनाशक है ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

अथ मण्डूकः (मेंडक)

मंडूकः प्लवगो भेको वर्षाभूर्दर्दुरो हरिः
मंडूकः श्लेष्मलो नातिपित्तलो बलकारकः ॥ ८६ ॥

मण्डूक, प्लवग, भेक, वर्षाभू दर्दुर और हरि ये मेंडकके संस्कृत नाम हैं। मेंडकका मांस—कफकारक, अत्यन्त पित्तकारी नहीं और बलदायक है॥८६॥

अथ पादिनः ।



तत्र कच्छपः (कछुआ)

कच्छपो गूढपात्कूर्मः कमठो दृढपृष्ठकः ।
कच्छपो बलदो वातपित्तनुत्पुंस्त्वकारकः ॥ ८७ ॥

कच्छप, गूढपाद्, कूर्म, कमठ और दृढपृष्ठक ये कछुएके संस्कृत नाम है । कछुएका मांस—बलदायक, वात तथा पित्तको नष्ट करनेवाला और वीर्यकारक है ॥ ८७ ॥

सद्योहतस्य मांसस्य गुणाः ।

सद्योहतस्य मांसं स्याद्व्याधिघाति यथामृतम् ।
वयस्यं बृंहणं सात्म्यमन्यथा तद्धि वर्जयेत् ॥८८॥

तत्कालके मारेहुए जीवोंका मांस—अमृतके सदृश, रोगनाशक, आयुस्थापक,

पुष्टिदायक और शरीरके स्वभावसे मिलता हुआ है इससे इसको ग्रहण करे और बासी मांस त्याग दे ॥ ८८ ॥

स्वयंमृतस्य मांसम् ।

स्वयंमृतस्य चाबल्यमतिसारकरं गुरु ॥ ८९ ॥

स्वयं मरे हुए जीवका मांस—बलकी हानिकारक, अतिसारको करनेवाला और भारी है ॥ ८९ ॥

वृद्धबालमांसम् ।

वृद्धानां दोषलं मांसं बालानां बलदं लघु ।
सर्पदष्टस्य मांसञ्च शुष्कमांसं त्रिदोषकृत् ।
व्यालदष्टञ्च दुष्टञ्च शुष्कं शूलकरं परम् ॥ ९० ॥

वृद्ध(बुड्ढे) जीवोंका मांस—दोषकारक और बालक जीवोंका मांस बलदायक और हलका है।

सर्पके काटनेसे मरे हुए जीवोंका मांस और सूखा मांस त्रिदोषकारक है। हिसक जीवोंके काटनेसे मरे हुए जीवोंका मांस, सूखा मांस, और दूषित मांस अत्यन्त शूलकारक है ॥ ९० ॥

अथ विषादिमृतस्य (विषमृतका)
मांसम् ।

विषाम्बुरुङ्मृतस्यैतन्मृत्युदोषरुजाकरम् ।
क्लिन्नमुत्क्लेशजनकं कृशं वातप्रकोपणम् ।
तोयपूर्णं शिराजालं मृतमप्सु त्रिदोषकृत् ॥ ९१ ॥

विष, रोग, अथवा जलके मरे हुए जीवोंका मांस दोषोंको उत्पन्न करनेवाला, रोगकारक और मृत्युदायक है। गीला मांस—ग्लानिकारक, कृश करनेवाला और वातप्रकोपक है। जिसकी नसोंमें जल भर गया हो उसका मांस और जलमें मरे हुएका मांस त्रिदोषकारी है ॥ ९१ ॥

जात्यादिपरत्वेन गुणाः ।

विहंगेषु पुमाञ्छ्रेष्ठः स्त्री चतुष्पदजातिषु ॥ ९२ ॥
परार्द्धो लघु पुंसां स्यात्स्त्रीणां पूर्वार्द्धमादिशेत् ।
देहमध्यं गुरुप्रायं सर्वेषां प्राणिनां स्मृतम् ॥ ९३ ॥
पक्षक्षेपाद्विहंगानां तदेव लघु कथ्यते ।
गुरूण्यंडानि सर्वेषां गुर्वी ग्रीवा च पक्षिणाम् ॥९४॥
उरःस्कंधोदरं कुक्षी पादौ पाणी कटी तथा ।
पृष्ठत्वग्यकृदन्त्राणि गुरूणीह यथोत्तरम् ॥ ९५ ॥
लघु वातकरं मांसं खगानां धान्यचारिणाम् ।
मत्स्याशिनां पित्तकरं वातघ्नं गुरु कीर्त्तितम्॥९६॥
पलाशिनां श्लेष्मकरं लघु रूक्षमुदीरितम् ।
बृंहणं गुरु वातघ्नं तेषामेवं पलाशिनाम् ॥ ९७ ॥
तुल्यजातिष्वल्पदेहा महादेहेषु पूजिताः ।
अल्पदेहेषु शस्यंते तथैव स्थूलदेहिनः ॥ ९८ ॥

पक्षियोंमें पुरुषजातिके पक्षियोंका मांस और पशुओंमें स्त्रीजातिके पशुओंका मांस उत्तम है, पुरुषोंके ऊपर भागका मांस हलका है और स्त्रियोंके नीचेके भागका मांस उत्तम है। सम्पूर्ण प्राणियोंके मध्य भागका मांस अधिक भारी होता है। और पक्षियोंके पंख गिरजानेसे देहका मध्यभाग हलका होता है। सम्पूर्ण जातिके पक्षियोंका अण्डा और गरदन भारी होता है,तथा छाती, कंधा, उदर, कोख, पाँव, हाथ, कमर, पीठ, त्वचा (चमडा), कलेजा और आँत ये पूर्व पूर्वसे पीछे पीछेके भारी होते हैं। धान्य (गेहूँ, ज्वार,बाजरा आदि) खानेवाले पक्षियोंका मांस हलका और वातकारक है । मछली खानेवाले पक्षियोंका मांस–पित्तकारक, वातनाशक और भारी है। फल खाने

वाले पक्षियोंका मांस कफकारक, हलका और रूक्ष है । मांस खानेवाले पक्षियोंका मांस–पुष्टिकारक, भारी और वातनाशक है । जिनका देह बडा और मोटा होता है उनके सदृश जातिके प्राणियोंमें जो छोटे देहवाले होते हैं उनका मांस उत्तम और जिनका देह छोटा है उनके सदृश जातिके प्राणियोंमें जिनका देह बडा होता है उनका मांस उत्तम है ॥ ९२–९८ ॥

अथ मत्स्याः ।

रोहितः (रोहू) ।

रक्तोदरो रक्तमुखो रक्ताक्षो रक्तपक्षतिः ।
कृष्णपुच्छो झषः श्रेष्ठो रोहितः कथितो बुधैः ॥९९
रोहितः सर्वमत्स्यानां वरो वृष्योऽर्दितार्त्तिजित् ।
कषायानुरसः स्वादुर्वातघ्नो नातिपित्तकृत् ।
ऊर्ध्वजत्रुगतान्रोगान्हन्याद्रोहितमुण्डकम् ॥ १०० ॥

जिन मछलियोंके पेट, मुख, नेत्र और पंख ये लाल होते है तथा पूँछ काली होती है उनको विद्वानोंने उत्तम रोहू मछली कहा है । रोहित (रोहू)मछली, सर्व मछलियोंमें श्रेष्ठ, वृष्य, अर्दितवात (लकवा) नाशक, कसैली, स्वादु, वातनाशक और अत्यन्त पित्तकारक नहीं है। रोहूका मस्तक–हँसलीसे ऊपरके रोगोंको नष्ट करता है ॥ ९९ ॥ १०० ॥

अथ शिलींध्रः (सिलन्ध) ।

शिलींध्रः श्लेष्मलो बल्यो विपाके मधुरो गुरुः ।
वातपित्तहरो हृद्य आमवातकरश्च सः ॥ १०१ ॥

सिलन्ध मछली–कफकारी, बलदायक, पाकमें मधुर, भारी, वात तथा पित्तनाशक, हृदयको प्रिय और आमवातकारक है ॥ १०१ ॥

अथ भंकुरः (भाकुर)।

भंकुरो मधुरः शीतो वृष्यः श्लेष्मकरो गुरुः ।
विष्टम्भजनकश्चापि रक्तपित्तहरः स्मृतः ॥ १०२ ॥

भाकुर मछली—मधुर, शीतल, वृष्य, कफकारक, भारी, विष्टम्भजनक और रक्तपित्तनाशक है ॥ १०२ ॥

अथ मोचिका (मोई)।

मोचिका वातहृद्बल्या बृंहणी मधुरा गुरुः ।
पित्तहृत्कफकृद्रुच्या वृष्या दीप्ताग्नये हिता ॥१०३॥

मोचिका (मोई) मछली—वातनाशक, बलदायक, पुष्टिकारक, मधुर, भारी, पित्तनाशक, कफकारक, रुचि उत्पन्न करनेवाली, वृष्य और जिनकी अग्नि दीपन है उनके लिये हितकारी है ॥ १०३ ॥

अथ पाठीनः (बुआरी, बोयाल)।

पाठीनः श्लेष्मलो बल्यो निद्रालुः पिशिताशनः ।
दूषयेद्रुधिरं पित्तकुष्ठरोगं करोति च ॥ १०४ ॥

पाठीन (पठिना) मच्छी—कफकारक, बलदायक, निद्राजनक, मांसको तोडनेवाली, रुधिरको दूषित करनेवाली और पित्त तथा कोढरोग-कारक है ॥ १०४ ॥

अथ शृंगी (सींगी)।

शृंगी तु वातशमनी स्निग्धा श्लेष्मप्रकोपनी ।
रसे तिक्ता कषाया च लघ्वी रुच्या स्मृता बुधैः १०५

शृंगी (सींगी) मछली—वातनाशक, स्निग्ध, पित्तको कुपित करनेवाली, रसमें कडवी, कसैली, हलकी और रुचिकारक है ॥ १०५ ॥

अथ इल्लीसः (इल्सा) ।

इल्लीसो मधुरः स्निग्धो रोचनो वह्निवर्द्धनः ।
पित्तहृत्कफकृत्किञ्चिल्लघुर्वृष्योऽनिलापहः ॥१०६॥

इल्सा मछली–मधुर, स्निग्ध, रुचिकारक, अग्निवर्द्धक, पित्तनाशक, कफकारक, किंचित् हलकी, वृष्य और वातनाशक है ॥ १०६ ॥

अथ शष्कुली (सौरी) ।

शष्कुली ग्राहिणी हृद्या मधुरा तुवरा स्मृता ॥१०७॥

सौरी मछली–ग्राही, हृदयको प्रिय, मधुर और कसैली है ॥ १०७ ॥

अथ गर्गरः (गर्गरा) ।

गर्गरः पित्तला किंचिद्वातजित्कफकोपनः ॥१०८॥

गर्गरा मछली–पित्तकारक, किंचित् वातनाशक और कफको कुपित करनेवाली है ॥ १०८ ॥

अथ कविकः (कवई) ।

कविका मधुरा स्निग्धा कफघ्ना रुचिकारिणी ।
किंचित्पित्तकरी वातनाशिनी वह्निवर्द्धनी ॥१०९॥

कविका (कवई) मछली–मधुर, स्निग्ध, कफकारक, रुचिकारक, किंचित् पितकर्त्ता, वायुको नष्ट करनेवाली और अग्निवर्द्धक है ॥ १०९ ॥

अथ वर्मिमत्स्यः (वर्मी) ।

वर्मिमत्स्यो हरेद्वातं पित्तं रुचिकरो लघुः ॥११०॥

वर्मी मछली–वातनाशक, पित्तहारक, रुचिकारक और हलकी है॥११०॥

अथ दंडमत्स्याः (डंडारी)

दण्डमत्स्यो रसे तिक्तः पित्तरक्तं कफं हरेत् ।
वातसाधारणः प्रोक्तः शुक्रलो बलवर्द्धनः॥ १११॥

दंडारी मछली–रसमें कडवी, रक्तपित्त तथा कफनाशक, वातके लिये साधारण और वीर्यको तथा बलको बढानेवाली है ॥ १११ ॥

अथ एरङ्गी (अरंगी)।

एरंगी मधुरः स्निग्धो विष्टंभी शीतलो लघुः ११२

एरंगी मछली–मधुर, स्निग्ध, विष्टम्भी, शीतल और हलकी है॥ ११२॥

अथ महाशफरी (पपता)।

महाशफरसंज्ञस्तु तिक्तः पित्तकफापहः ।
शिशिरो मधुरो रुच्यो वातसाधारणः स्मृतः ११३॥

महाशफर (पपता) मछली–कडवी, पित्त तथा कफनाशक, शीतल, मधुर, रुचिकारक और वायुके लिये साधारण है ॥ ११३ ॥

अथ गरघ्नी (गरई)।

गरघ्नी मधुरा तिक्ता तुवरा वातपित्तहृत् ।
कफघ्नी रुचिकृल्लघ्वी दीपनी बलवीर्यकृत् ॥११४॥

गरघ्नी (गरई) मछली–मधुर, कडवी, कसैली, वात तथा पित्तनाशक, कफहारक, रुचिकारक, हलकी, अग्निप्रदीपक और बल तथा वीर्यवर्द्धक है ११४

अथ मद्गुरः (मंगुरी)।

मद्गुरो वातहृद्बल्यो वृष्यः कफकरो लघुः ॥११५॥

मद्गुर (मँगुरी) मछली–वातनाशक, बलदायक, वृष्य, कफकारक और हलकी है ॥ ११५ ॥

अथ सपादमत्स्यः (टेंगरा)।

सपादमत्स्यो मेधाकृन्मेदःक्षयकरश्च सः ।
वातपित्तकरश्चापि रुचिकृत्परमो मतः ॥ ११६ ॥

सपाद (टेंगरा) मछली–बुद्धिवर्धक, मेदका क्षय करनेवाली, वातपित्त तथा रुचिकारक है ॥ ११६ ॥

अथ प्रोष्ठी शफरी (पुंठी) ।

प्रोष्ठी तिक्ता कटुः स्वादुः शुक्रघ्नी कफवातजित् ।
स्निग्धास्यकण्ठरोगघ्नी रोचनी च लघुः स्मृता ११७

प्रोष्ठी (शफरी) मछली—कडवी, चरपरी, स्वादु, वीर्यनाशक, कफ तथा वातको जीतनेवाली, स्निग्ध, मुखकी विरसता तथा कण्ठरोगनाशक, रुचिकारी और हलकी है ॥ ११७ ॥

अथ क्षुद्रमत्स्याः ।

क्षुद्रा मत्स्याः स्वादुरसा दोषत्रयविनाशनाः ।
लघुपाका रुचिकरा बलदास्ते हिता मताः ॥११८॥

छोटी मछली—स्वादु, त्रिदोषनाशक, पाकमें हलकी, रुचिकारी, बलदायक और हितकारी है ॥ ११८ ॥

अथ अतिक्षुद्रमत्स्याः ।

अतिसूक्ष्माः पुंस्त्वहरा रुच्याः कासानिलापहाः ११९

बहुत छोटी मछली—पुरुषतानाशक, रुचिकारी, खाँसी और वातनाशक है ॥ ११९ ॥

अथ मत्स्याण्डः ।

मत्स्यगर्भो भृशं वृष्यः स्निग्धः पुष्टिकरो लघुः ।
कफमेदःप्रदो बल्यो ग्लानिकृन्मेहनाशनः ॥ १२०॥

मछलीका अंडा—अत्यंत वृष्य, स्निग्ध, पुष्टिकारक, हलका, कफ तथा मेद-वर्द्धक, बलदायक, ग्लानिकारक और प्रमेहनाशक है ॥ १२० ॥

अथ शुष्कमत्स्याः (सूखी मछली) ।

शुष्कमत्स्या नवा बल्या दुर्जरा विड्विबन्धिनः ।

सूखी हुई मछली—बलवर्द्धक, दुर्जर और मलरोधक है ॥ १२१ ॥

अथ दग्ध-(भूंजे हुए) मत्स्याः ।

दग्धमत्स्यो गुणैः श्रेष्ठः पुष्टिकृद्बलवर्द्धनः ॥१२२॥

भुनी हुई मछली—उत्तम, पुष्टिकारक और बलवर्द्धक है ॥ १२२ ॥

अथ कूपजादिमत्स्यगुणाः ।

कौपमत्स्याः शुक्रमूत्रकुष्टश्लेष्मविवर्द्धनाः ।
सरोजा मधुराः स्निग्धा बल्या वातविनाशनाः १२३
नादेया बृंहणा मत्स्या गुरवोऽनिलनाशनाः ।
रक्तपित्तकरा वृष्याः स्निग्धोष्णाः स्वल्पवर्चसः ॥
चौञ्जाः पित्तकराः स्निग्धा मधुरा लघवो हिमाः ।
ताडागा गुरवो वृष्याः शीतला मलमूत्रदाः ।
ताडागवत्क्षितजाता बलायुर्मतिदृक्कराः ॥ १२५ ॥

कूप (कुएकी) मछली—वीर्य, मूत्र, कोढ और कफवर्द्धक है । सरोज (छोटे तलावकी) मछली—मधुर, स्निग्ध, बलदायक और वातविनाशक है । नदीकी मच्छी—पुष्टिकारक, भारी, वातनाशक, रक्तपित्तकारक, मैथुन-शक्तिवर्द्धक, गरम और अल्पविष्ठा लानेवाली है । चौञ्ज (हौजकी) मछली—पित्तकारक, स्निग्ध, मधुर, हलकी और शीतल है । तडागकी मछली—भारी, वृष्य, शीतल और मल तथा मूत्रजनक है । झरनेकी मछली—तडागके सदृश बल, आयु, बुद्धि और दृष्टिकारक है ॥ १२३–१२५ ॥

अथ ऋतुविशेषे मत्स्यविशेषाः ।

हेमन्ते कूपजा मत्स्याः शिशिरे सारसा हिताः ।
वसन्ते त तु नादेया ग्रीष्मे चौञ्जसमुद्भवाः १२६॥

तडागजाता वर्षासु तास्वपथ्या नदीभवाः ।
नैर्झराः शरदि श्रेष्ठा विशेषोऽयमुदाहृतः ॥ १२७ ॥

इति श्रीभावप्रकाशनिघण्टौ मांसवर्गः ।

हेमन्तऋतुमें कुएंकी मछली, शिशिरऋतुमें तालावकी मछली, वसन्तऋतुमें नदीकी मछली, ग्रीष्मऋतुमें हौज (चोए)की मछली, वर्षाऋतुमें तडागकी मछली और शरदृऋतुमें झरनेकी मछली श्रेष्ठ है, वर्षाऋतुमें नदीकी मछली अपथ्य है ॥ १२६ ॥ १२७ ॥

इति श्रीवैद्यरत्नरामप्रसादात्मज–विद्यालङ्कारशिवशर्म्मवैद्यशास्त्रिकृत-शिवप्रकाशिकाभाषाटीकायां हरीतक्यादिनिघण्टौ मांसवर्गः समाप्तः ।

अथ कृतान्नवर्गः ।

तत्र अन्नानां साधनप्रकाराः सिद्धानां गुणाश्च ।

तत्र परिभाषा—

समवायिनि हेतौ ये मुनिभिर्गणिता गुणाः ।
कार्य्येऽपि तेऽखिला ज्ञेयाः परिभाषेति भाषिताः १
क्वचित्संस्कारभेदेन गुणभेदो भवेद्यतः ।
भक्तं लघु पुराणस्य शालेस्तच्चिपिटो गुरुः ॥ २ ॥
क्वचिद्योगप्रभावेण गुणान्तरमपेक्ष्यते ।
कदन्नं गुरु सर्पिश्च लघूक्तं सुहितं भवेत् ॥ ३ ॥

मुनीश्वरोंने जिन पदार्थोंमें जो गुण कहे है, उन पदार्थोंके बनाये हुए अन्नमें भी वे सम्पूर्ण गुण होते है, यह सामान्यतासे कहा है । किसी अन्नमें संस्कारभेदसे अन्यगुण होजाते है, जैसे कि–पुराने चावलोंका भात हलका होता है परन्तु वही शालीचावलोंका बना हुआ भात और चिउरा भारी

होता है । कहीं संयोगके प्रभावसे भी गुणोंमें अन्तर हो जाता है, जैसे कि दुष्ट अन्न भारी है और घी भी भारी है परन्तु वह दुष्ट अन्न या घृत यदि औषधान्तरोंके संयोगसे बना होय तो हलका और हितकारी होता है ॥ १-३ ॥

अथ भक्तस्य (भातके) नामानि साधनं गुणाश्च ।

भक्तमन्नं तथान्धश्च क्वचित्कूरं च कीर्तितम् ।
ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्सा दीदिविः पुंसि भाषितः ॥ ४ ॥
सुधौतांस्तण्डुलान् स्फीतांस्तोये पंचगुणे पचेत् ।
तद्भक्तं प्रस्रुतं चोष्णं विशदं गुणवन्मतम् ॥ ५ ॥
भक्तं वह्निकरं पथ्यं तर्पणं रोचनं लघु ।
अधौतमश्रृतं शीतं गुर्वरुच्यं कफप्रदम् ॥ ६ ॥

भक्त, अन्न, अंध, ओदन, भिस्सा और दीदिवि ये भातके संस्कृत नाम है । कहीं कूर भी भातका नाम है ।

भलेप्रकार उत्तमरीतिसे धोये हुए चावलोंको पांच गुने जलमें पकावे, जब पकजायँ तब वह जल (मांड) निकाल देवे तो वह उष्णभात निर्मल और गुणकारी होता है।

भात—अग्निकारक, पथ्य, तृप्तिदायक, रुचिकारक और हलका है । विना धोये हुए चावलोंका, विना मांड निकाला हुआ भात और शीतल हुआ भात भारी, अरुचिकारक और कफवर्द्धक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ दाली (दाल)

दलितन्तु शमीधान्यं दालिर्दाली स्त्रियामुभे ।
दाली तु सलिले सिद्धा लवणार्द्रकहिङ्गुभिः ॥ ७ ॥
संयुक्ता सूपनाम्नी स्यात्कथ्यन्ते तद्गुणा अथ ।
सूपो विष्टंभको रूक्षः शीतस्तु स विशेषतः ।
निस्तुषो भृष्टसंसिद्धो लाघवं सुतरां व्रजेत् ॥ ८ ॥

फलीके (मूँग, चना, अरहर, उरद आदि) धान्योंको दलनेसे दाल हो

जाती है। दालि और दाली ये दालके नाम हैं। जलमें डालकर दालको पकावे जब उसीदिज जाय तब उसमें नमक,अदरख और हीग यथायोग्य डाले तव वह सूप (दाल) तयार होती है। सूप (दाल) विष्टम्भकारी, रूक्ष और विशेष कर शीतल है। भुनीहुई छिलके रहित दाल—अत्यन्त हलकी है॥ ७॥ ८॥

अथ कृशरा (खिचरी)।

तण्डुला दालिसंमिश्रा लवणार्द्रकहिंगुभिः।
संयुक्ता सलिले सिद्धा कृशरा कथिता बुधैः॥ ९॥
कृशरा शुक्रला बल्या गुरुः पित्तकफप्रदा।
दुर्जरा बुद्धिविष्टम्भमलमूत्रकरी स्मृता॥ १०॥

दाल और चावल मिलाकर उनमें नमक, अदरक और हीग डालकर जलमें सिद्ध करे उसको विद्वानोंने कृशरा (खिचरी) कहा है। खिचरी -वीर्यवर्द्धक, बलदायक, भारी, कफ तथा पित्तको उत्पन्न करनेवाली, दुर्जर, बुद्धि, विष्टम्भ, मल तथा मूत्रकारक है॥ ९॥ १०॥

अथ तापहरी (ताहरी)।

घृते हरिद्रासंयुक्ते माषजां भर्जयेद्वटीम्।
तण्डुलांश्चापि निर्धौतान्सहैव परिभर्जयेत्॥ ११॥
सिद्धयोग्यं जलं तत्र प्रक्षिप्य कुशलः पचेत्।
लवणार्द्रकहिंगूनि मात्रया तत्र निक्षिपेत्॥ १२॥
एषा सिद्धिसुमानज्ञैः प्रोक्ता तापहरी बुधैः।
भवेत्तापहरी बल्या वृष्या श्लेष्माणमाचरेत्।
बृंहणी तर्पणी रुच्या गुर्वी पित्तहरा स्मृता॥ १३॥

घीमें हलदी डालकर उसमें उडदकी वडी और धुले हुए स्वच्छ चावलोंको भूनलेवे, पश्चात् जितने जलमें पक जाय उतना जल बढाकर कुशल पुरुष पकावे

और यथायोग्य नमक अदरख और हींग डाले, जब भलीभांति पक जाय तब तापहारी (ताहरी) कहाती है। ताहरी–तृप्तिदायक, रुचिकारक, बलदायक, वृष्य, कफकारक, पुष्टिदायक, भारी और पित्तनाशक है॥ ११–१३ ॥

अथ परमान्नम् (खीर)।

पायसं परमान्नं स्यात्क्षीरिकापि तदुच्यते।
शुद्धेऽर्द्धपक्के दुग्धे तु घृताक्तांस्तण्डुलान् पचेत् १४
ते सिद्धाः क्षीरिका ख्याता ससिताज्ययुतोत्तमा।
क्षीरिका दुर्जरा प्रोक्ता बृंहणी बलवर्द्धिनी ॥ १५ ॥

पायस, परमान्न और क्षीरिका ये खीरके संस्कृत नाम हैं।

हिन्दी–खीर। गु०–दूधपाक।

अधऔटे स्वच्छ दूधमें घीसे भुने हुए चावल डाले जब चावल पक जायँ तब उसमें स्वच्छ बूरा और घी डाले यह उत्तम खीर बन जाती है खीर दुर्जर पुष्टिकारक और बलवर्द्धक है॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ नालिकेरक्षीर (नारियलकी खीर)।

नालिकेरं तनूकृत्य छिन्नं पयसि गोः क्षिपेत्।
सितागव्याज्यसंयुक्ते तत्पचेन्मृदुनाऽग्निना ॥ १६ ॥
नालिकेरोद्भवा क्षीरी स्निग्धा शीतातिपुष्टिदा।
गुर्वी सुमधुरा वृष्या रक्तपित्तानिलाऽपहा ॥ १७ ॥

नारियल (गोले) के छोटे २ टुकडे गायके दूधमें डाले और उसमें स्वच्छ खांड और गायका घी डाले, इसप्रकार कर धीमी अग्निसे पकावे तो नारियलकी खीर बनजाती है।

यह खीर–स्निग्ध, शीतल, बहुत पुष्टिकारक, भारी, मधुर, वीर्यवर्द्धक और रक्तपित्त तथा वातनाशक है॥ १६ ॥ १७ ॥

अथ सेविका (सेमई) ।

समितां वर्त्तिकां कृत्वा सूक्ष्मां तु यवसन्निभाम् ।
शुष्का क्षीरेण संसाध्या भोज्या घृतसितान्विता १८
सेविका तर्पणी बल्या गुर्वी पित्तानिलापहा ।
ग्राहिणी सन्धिकृद्रुच्या तां खादेन्नातिमात्रया १९॥

मैदाकी बहुत बारीक जौके सदृश वत्ती बनाकर सुखावै, फिर दूधमें पकावे और घी तथा खांड डालकर सेवन करे ।

यह सेमई—तृप्तिकारक, बलवर्द्धक, भारी, पित्त तथा वातनाशक, ग्राही (मलको रोकनेवाली), सन्धानकारक और रुचिको उत्पन्न करनेवाली है, इसको बहुत नहीं खावे ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ मण्डकः (मण्डा) ।

गोधूमा धवला धौताः कुट्टिताः शोषितास्ततः ।
प्रोक्षिता यन्त्रनिष्पिष्टाश्चालिताः समिता स्मृता२०
वारिणा कोमलां कृत्वा समितां साधु मर्दयेत् ।
हस्तलालनया तस्या लोप्त्रीं सम्यक्प्रसारयेत्२१॥
अधोमुखघटस्यैतद्विस्तृतं प्रक्षिपेद्बहिः ।
मृदुना वह्निना साध्यः सिद्धो मण्डक उच्यते२२ ॥

लोप्त्री (लोई) इति लोके ।

दुग्धेन साज्यखण्डेन मण्डकं भक्षयेन्नरः ।
अथवा सिद्धमांसेन सतक्रवटकेन वा ॥ २३ ॥
मण्डको बृंहणो वृष्यो बल्यो रुचिकरो भृशम् ।
पाकेऽपि मधुरो ग्राही लघुर्दोषत्रयापहः ॥ २४ ॥

सफेद गेहूँ धोकर ओखलीमें कूटले फिर सुखाकर पिसवावे और हलके कप-

डेकी (चलनी) में छानले उसको मैदा कहते हैं। मैदाको पानीमें मांडकर भलीभांति कुचले, पश्चात् हाथोंसे लोई बनाकर रोटीके सदृश करले, फिर चूल्हेपर उलटे घडेकी तलीपर डालकर मन्दाग्निसे पकावे इसको मण्डक कहते हैं। खांड और घृतयुक्त दूधके साथ अथवा पकाये हुए मांसके साथ तथा दही पकोडीके साथ भक्षण करे । मण्डक—पुष्टिकारक, वृष्य, बलवर्द्धक, अत्यन्त रुचिकारक, पाकमें मधुर, ग्राही, हलका और तीनों दोषोंको नष्ट करता है ॥ २०–२४ ॥

अथ पूरी (दुनौरी)।

कुर्यात्समितयाऽतीव तन्वीं पर्पटिकां ततः ।
स्वेदयेत्तत्तके तां तु पोलिकां जगदुर्बुधाः ।
तां खादेल्लप्सिकायुक्तां तस्या मण्डकवद्गुणाः २५

मैदाकी अथवा चूनकी पर्पटिका (पपडी) अर्थात् पतली रोटीके सदृश पूरी बेलले, पश्चात् तवेमें सेकले उसको पोलिका (एक प्रकारकी पूरी) कहते हैं। उसको लप्सी (हलुए) के साथ भक्षण करे, इसके गुण मण्डकके सदृश हैं ॥ २५ ॥

अथ लप्सिका (लप्सी)।

समितां सर्पिषा भृष्टां शर्करां पयसि क्षिपेत् ।
तस्मिन्घनीकृते न्यस्येल्लवंग मरिचादिकम् ॥ २६ ॥
सिद्धैषा लप्सिका ख्याता गुणांस्तस्या वदाम्यहम् ।
लप्सिका बृंहणी वृष्या बल्या पित्तानिलापहा ।
स्निग्धा श्लेष्मकरी गुर्वी रोचनी तर्पणी परम् ॥२७॥

मैदाको घीमें भूनकर शर्करा (बूरा) युक्त पानीमें डाले, जब पकते २ गाढा हो जाय तब उसमें लौंग मिरच आदि डाले, सिद्ध होनेपर लप्सिका कहाती है । लप्सिका (हलुआ)—पुष्टिदायक, वृष्य, बलकारक, वात तथा पित्त-

नाशक,स्निग्ध,कफकारक,भारी रुचिकारी और अत्यन्त तृप्तिकारक है२६॥२७

अथ रोटिका (रोटी)

शुष्कगोधूमचूर्णेन किंचित्पुष्टाश्च पोलिकाम् ।
तप्तके स्वेदयेत्कृत्वा भूयंगारैश्च तां पचेत् ॥ २८ ॥
सिद्धैषा रोटिका प्रोक्ता गुणं तस्याः प्रचक्ष्महे ।
रोटिका बलकृद्रुच्या बृंहणी धातुवर्द्धनी ।
वातघ्नी कफकृद् गुर्वी दीप्ताग्नीनां प्रपूजिता ॥२९॥

सूखे गेहूँके चूनमें पानी डालकर माण्ड ले और बेलकर तवेपर सेंककर फिर नीचे अंगारोंपर सेंके, जब भली भाँति सिक जाय तब रोटिका (रोटी) कहाती है ।

रोटिका (रोटी)—बलकारक, रुचिकारी, पुष्टिकारक, धातुवर्द्धक, वात-नाशक, कफकारी, भारी और जिनकी अग्नि प्रदीप्त है उनको हितकारी है ॥ २८ ॥ २९ ॥

अथ अंगारकर्कटी (वाटी ।

शुष्कगोधूमचूर्णन्तु सांबु गाढं विमर्दयेत् ।
विधाय वटकाकारं निर्धूमेऽग्नौ शनैः पचेत् ॥३०॥
अङ्गारकर्कटी ह्येषा बृंहणी शुक्रला लघुः ।
दीपनी कफकृद्बल्या पीनसश्वासकासजित् ॥३१॥

सूखे हुए उत्तम गेहूँके चूनको मांडकर हाथोंसे गोल गोल लोई बना ले और धूमरहित मन्द मन्द अग्निसे पकावे, जब भलीभाँति सिद्ध हो जाय तो उसको अंगारकर्कटी (वाटी) कहते है । वाटी—पुष्टिकारक, वीर्यवर्द्धक और पीनस, श्वास तथा खाँसीको नष्ट करती है ॥ ३० ॥ ३१ ॥

अथ यवरोटिका।

यवजा रोटिका रुच्या मधुरा विशदा लघुः।
मलशुक्रानिलकरी बल्या हंति कफामयान् ॥ ३२ ॥

जौकी रोटी–रुचिकारी, मधुर, विशद, हलकी, मल, वीर्य तथा वातकारक, बलकारी और कफसम्बन्धी रोगोंको नष्ट करती है ॥ ३२ ॥

अथ माष–(उरदकी) रोटिका।

माषाणां दालयस्तोये स्थापितास्त्यक्तकंचुकाः।
आतपे शोषिता यंत्रे पिष्टास्ता धूमसी स्मृता ॥ ३३
धूमसी रचिता चैव प्रोक्ता झर्झरिका बुधैः।
झर्झरी कफपित्तघ्नी किंचिद्वातकरी स्मृता ॥ ३४ ॥

उडदकी दालको पानीमें भिजोकर छिलके निकाल देवे पश्चात् धूममें सुखाकर चक्कीमें पिसवावे, उस चूनको धूमसी कहते है, धूमसीकी बनाई हुई रोटीको संस्कृतमें झर्झरी कहते हैं, यह रोटी कफ, पित्तनाशक और किंचित् वातकारक है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

अथ चणक–(चनेकी) रोटिका।

चणक्या रोटिका रूक्षा श्लेष्मपित्तास्रनुद्गुरुः।
विष्टंभिनी न चक्षुष्या तद्गुणा चापि शष्कुली ३५

चनेकी रोटी–रूखी, विष्टम्भकारक, भारी, नेत्रोंको हितकारी नही और कफ, पित्त, तथा रक्तविकारनाशक है। इसकी पूरीमें भी यही गुण हैं ॥ ३५ ॥

अथ पिष्टिका।

दालिः संस्थापिता तोये ततोऽपहृतकंचुका।
सिलायां साधु संपिष्टा पिष्टिका कथिता बुधैः ३६

दालको पानीमें भिगोदे भीजनेपर छिलके निकाल डाले, पश्चात् शिलापर खूब पीसले इसको पिष्टिका (पिट्ठी) कहते हैं ॥ ३६ ॥

अथ वेढमिका (बेढई) ।

माषपिष्टिकया पूर्णगर्भा गोधूमचूर्णतः ।
रचिता रोटिका सैव प्रोक्ता वेढमिका बुधैः ॥ ३७ ॥
भवेद्वेढमिका बल्या वृष्या रुच्याऽनिलापहा ।
उष्णा सन्तर्पणी गुर्वी बृंहणी शुक्रला परम् ॥ ३८ ॥
भिन्नमूत्रमला स्तन्यमेदःपित्तकफप्रदा ।
गुदकीलार्दितश्वासपंक्तिशूलानि नाशयेत् ॥ ३९ ॥

गेहूँके मडेहुए आटेमें उडदकी पिट्ठी भरके रोटी बनावे उसको पिट्ठोंकी रोटी (बेढई) कहते हैं ।

यह रोटी–बलदायक, वृष्य, रुचिकारक, वातनाशक, गरम, तृप्तिदायक, भारी, पुष्टिकारक, अत्यन्त वीर्यवर्द्धक, मलभेदक, मूत्र लानेवाली, दूध तथा मेदवर्धक, पित्त तथा कफकारक और गुदकील (गुदाके मस्से), अर्दितवात, श्वास और पंक्तिशूलनाशक है ॥ ३७–३९ ॥

अथ पर्पटाः (पापड) ।

धूमसारचिता हिंगुहरिद्रालवणैर्युताः ।
जीरकस्वर्जिकाभ्याञ्च तनूकृत्य च वेल्लिताः ॥ ४० ॥
पर्पटास्ते सदांगारभृष्टाः परमरोचकाः ।
दीपनाः पाचना रूक्षा गुरवः किंचिदीरिताः ॥ ४१ ॥
मौद्गाश्च तद्गुणाः प्रोक्ता विशेषाल्लघवो हिताः ।
चणकस्य गुणैर्युक्ताः पर्पटाश्चणकोद्भवाः ।
स्नेहभृष्टास्तु ते सर्वे भवेयुर्मध्यमा गुणैः ॥ ४२ ॥

उडदकी दालको पानीमें भिजोकर छिलके निकाल कर धूपमें सुखा लेवे, उसको पिसवाकर बारीक आटा करले, उस आटेमें हींग, हलदी, नमक,

जीरा और सज्जी डालकर पानीसे मांडले और बहुत पतला पतला बेलके उसको पर्पट (पापड) कहते है। पापड अंगारोंपर भूनकर खावे तो अत्यन्त रुचिकारी, अग्निप्रदीपक, पाचक, रूक्ष और किंचित् भारी है, इसी प्रकार मूँगकी दालके पापडोंमें भी येही गुण हैं परन्तु विशेष हलके और हितकारक हैं। चनेके पापडोमें चनेके सदृश गुण हैं। जो पापड स्नेहमें भूने जायँ तो मध्यम गुणदायक हैं ॥ ४०-४२ ॥

अथ पूरिका (कचौरी)।

माषाणां पिष्टिकां पूर्याल्लवणार्द्रकहिंगुभिः।
तया पिष्टिकया पूर्णा समिताकृतपोलिका ॥ ४३ ॥
ततस्तैलेन पक्वा सा पूरिका कथिता बुधैः।
रुच्या स्वाद्वी गुरुः स्निग्धा बल्या पित्तास्रदूषिका ४४
चक्षुस्तेजोहरी चोष्णा पाके वातविनाशिनी।
तथैव घृतपक्वापि चक्षुष्या रक्तपित्तहृत् ॥ ४५ ॥

उडदोंकी पिट्ठीमें नमक अदरक तथा हींग डालकर मैदाकी लोईमें भर लेवे, पश्चात् बेलकर इसको तेलमें सेक लेवे, उसको पूरिका (कचौरी) कहते हैं। कचौरी-स्वादिष्ठ, भारी, स्निग्ध, बलकारी पित्त तथा रक्तविकारको दूषित करनेवाली, नेत्रोंका तेज हरनेवाली, पाकमें गरम और वातविनाशक है। यदि यह घीमें बनाई हुई होय तो नेत्रोंको हितकारी और रक्तपित्तनाशक है ॥ ४३-४५ ॥

अथ वटकाः (बरा)।

माषाणां पिष्टिकां युक्तां लवणार्द्रकहिंगुभिः।
कृत्वा विदध्याद्वटकांस्तांस्तैलेषु पचेच्छनैः ॥ ४६ ॥
विशुष्का वटका बल्या बृंहणा वीर्यवर्द्धनाः।
वातामयहरा रुच्या विशेषाद्र्दितापहाः ॥ ४७ ॥

विबन्धभेदिनः श्लेष्मकारिणोऽत्यग्निपूजिताः ।
संचूर्ण्य निक्षिपेत्तक्रे भृष्टजीरकहिंगुभिः ॥ ४८ ॥
लवणं तत्र वटकान्सकलानपि मज्जयेत् ।
शुक्रलस्तत्र वटको बलकृद्रोचनो गुरुः ॥ ४९ ॥
विबन्धहृद्विदाही च श्लेष्मलः पवनापहः ।
राज्यक्तपातिनो वान्यान्पाचनांस्तांस्तु भक्षयेत् ५०

राज्यक्ता (राइता) इति लोके ॥

उडदोंकी पिट्ठिमें नोंन, अदरक और हींग मिलाकर धीरे २ तेलमें वडे पकावे अथवा पिट्ठिकी बरी बनाकर तेलमें पकावे ।

बडे—बलदायक, पुष्टिकारक, वीर्यवर्द्धक, वायुरोगनाशक, रुचिकारक और विशेषकरके अर्दितवात (लकवा)को दूर करता, मलबन्धभेदक(दस्तावर), कफकारी और प्रदीप्तअग्निवालोंके लिये उत्तम हैं । तथा हिंगजीरेका चूर्ण भूनकर मट्ठे (छाल) में डाले पश्चात् नमक डालकर उनमें बडी छोड देवे ।

यह बडी—वीर्यवर्द्धक, रुचिकारक, भारी, मलभेदक, विदाही, कफकारक और वातनाशक है। अथवा रायतेमें मिलाकर वा और अन्य पाचन वस्तुओंके साथ खावे ॥ ४६—५० ॥

अथ काञ्जिकवटकः (काञ्जीवरा)

मन्थनी नूतना धार्या कटुतैलेन लेपिता ।
निर्मलेनाम्बुनापूर्य तस्यां चूर्णं विनिक्षिपेत् ॥ ५१॥
राजिकाजीरलवणहिंगुशुण्ठीनिशाकृतम् ।
निक्षिपेद्वटकांस्तत्र भांडस्यास्यञ्च मुद्रयेत् ॥ ५२ ॥
ततो दिनत्रयादूर्ध्वमम्लाः स्युर्वटका ध्रुवम् ।

काञ्जिकवटको रुच्यो वातघ्नः श्लेष्मकारकः शीतः ।
दाहं शूलमजीर्णं क्षिप्रं हरते दृगामयेष्वहितः ॥५३॥

एक नवीन मट्टीका पात्र लेकर उसमें सरसोंका तेल चुपडे, पश्चात् कडवे तेलको चुपडकर निर्मल जल भरके उसमें राई, जीरा, नमक, हींग, सोंठ और हलदी इनका चूर्ण डालकर वडे डालदे और पात्रको मुख बन्द करके तीन दिनतक रक्खे रहने देवे वे वडे खट्टे हो जायँगे. उनको कांजिकवटक(कांजीके बडे) कहते हैं ।

ये वडे-रुचिकारी, वातविनाशक, कफकारक, शीतल और दाह, शूल तथा अजीर्णनाशक है, नेत्ररोगियोंको अहितकारी है ॥ ५१-५३ ॥

अथ अम्लिकावटकाः (इमलीके बडे)

अम्लिकां स्वेदयित्वा तु जलेन सह मर्दयेत् ।
तन्नीरे कृतसंस्कारे वटकान्मज्जयेत्पुनः ॥ ५४ ॥
अम्लिकावटकास्ते तु रुच्या वह्निप्रदीपनाः ।
वटकस्य गुणैः पूर्वैरेषोऽपि च समन्वितः ॥ ५५ ॥

पक्की इमलीको कतर कर जलमें औटावे और जलके साथही मलले, पश्चात् उस बनाये हुए पानीमें वडे छोडदे और नमक मसाला आदि डालदे तो इमलीके वडे बनजाते है ।

यह बडे-रुचिकारी, अग्निदीपक है, इनमें पूर्वोक्त बडोंके भी सब गुण हैं ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

अथ मुद्गवटकाः (मूंगवरा)

मुद्गानां वटकास्तक्रे मज्जिता लघवो हिमाः ।
संस्कारजप्रभावेण त्रिदोषशमना हिताः ॥ ५६ ॥

मूँगके बडे छाछमें भिगोदे, उनको सेवन करे तो हलके और शीतल हैं । और संस्कारके प्रभावसे त्रिदोषनाशक तथा हितकारी होते है ॥ ५६ ॥

अथ माषवटिकाः (उरदकी बरी)।

माषाणां पिष्टिका हिंगुलवणार्द्रकसंस्कृता।
तया विरचिता वस्त्रे वटिकाः साधुशोषिताः॥५७॥
भर्जितास्तप्ततैलैस्ता अथवाम्बुप्रयोगतः।
वटकस्य गुणैर्युक्ता ज्ञातव्या रुचिदा भृशम्॥५८॥

उडदकी पीठीमें हींग, लोन तथा अदरक मिलाकर कपडेपर बडी तोडकर सुखालेवे। यह बडी तेलमें डालकर अथवा पानीमें डालकर पकावे। यह बडी बडोंके सदृश गुणवाली है और अत्यन्त रुचिकारक है॥ ५७॥ ५८॥

अथ कूष्मांडकवटी (पेठेकी बरी)।

कूष्मांडकवटी ज्ञेया पूर्वोक्तवटिकागुणा।
विशेषात्पित्तरक्तघ्नी लघ्वी च कथिता बुधैः॥५९॥

पेठेकी बडी भी पूर्वोक्त बडीकेसदृश गुणवाली है, विशेष करके रक्तपित्तनाशक और हलकी है॥ ५९॥

अथ मुद्गवटी (मूँगकी बरी)।

मुद्गानां वटिका तद्वद्रचिता साधिता तथा।
पथ्या रुच्या तथा लघ्वी मुद्गसूपगुणा स्मृता॥६०॥

उपरोक्त प्रकारही मूँगकी बडी बनावे। यह बडी–रुचिकरी, हलकी और मूँगकी दालके समान गुणवाली है॥ ६०॥

अलीकमत्स्य।

माषपिष्टिकया लिप्तं नागवल्लीदलं महत्।
तत्तु संस्वेदयेद्युक्त्या स्थाल्यामास्तारकोपरि।
ततो निष्कास्य तत्खण्डचं ततस्तैलेन भर्जयेत्॥६१॥
खण्डचं खंडेन योज्यमिति यावत्।

अलीकमत्स्य उक्तोऽयं प्रकारः पाकपंडितैः ।
तं वृन्ताकभटित्रेण वास्तूकेन च भक्षयेत् ॥ ६२ ॥

बडे नागरबेलके पान उडदकी पिट्ठीमें लपेटकर युक्तिसे कढाईमें पकावे, फिर छोटे छोटे कतरके तेलमें भून लेवे तो अलीकमत्स्य तैयार होते हैं, इनको बैंगनके भरतेके साथ अथवा बथुएके सागसे या रायतेसे भक्षण करे ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

अथ क्वथिता (कढी)।

स्थाल्यां घृते वा तैले वा हरिद्राहिंगु भर्जयेत् ।
अवलेहनसंयुक्तं तक्रं तत्रैव निक्षिपेत् ।
एषा सिद्धा समरिचा क्वथिता कथिता बुधैः ॥६३॥
क्वथिता पाचनी रुच्या लघ्वी वह्निप्रदीपिनी ।
कफानिलविबन्धघ्नी किंचित्पित्तप्रकोपिणी ॥६४॥
अलीकमत्स्याः शुष्का वा किं वा क्वथितया पुनः
बृंहणा रोचना वृष्या बल्या वातगदापहाः ॥६५॥
कोष्ठशुद्धिकराः शुक्त्या किंचित्पित्तप्रकोपणाः ॥
अर्दिते सहनुस्तंभे विशेषेण हिताः स्मृताः ॥६६॥

कढाईमें घी अथवा तेल डालकर उसमें हलदी और हींगको भूने, पश्चात् उसमें घुला हुआ बेसन और मट्ठा डाले, फिर नोंन, मिरच, मसाला आदि डालकर पकावे, पकनेपर क्वथिता (कढी) तयार होती है। कढी—पाचक, रुचिकारक, हलकी, अग्निप्रदीपक, किञ्चित् पित्तप्रकोपक और कफ, वात तथा मलके अवरोधको नष्ट करती है। ऊपर कही हुई अलीकमत्स्य सूखी खावे या कढीके साथ खावे। कढीके साथ खाई हुई—पुष्टिकारक, रुचिकारी, वृष्य, बलकारक और वातसम्बन्धी रोगोंको नष्ट करती है । यह (अली-

कमत्स्य) सूखी खाय तो कोठेको शुद्ध करनेवाली, किंचित् पित्तप्रकोपक और अर्दित वातमें तथा हनुस्तम्भ रोगमें विशेष करके हितकारी है ६३-६६॥

अथ मुद्गार्द्रकवटकाः (अदरकबडा)।

मुद्गपिष्टिविरचितान्वटांस्तैलेन पाचितान्।
हस्तेन चूर्णयेत्सम्यक्तस्मिश्चूर्णे विनिक्षिपेत् ६७॥
भृष्टं हिंग्वार्द्रकं सूक्ष्मं मरीचं जीरकं तथा।
निंबूरसं यवानीं च युक्त्या सर्वं विमिश्रयेत् ॥ ६८
मुद्गपिष्टिं पचेत्सम्यक्स्थाल्यामास्तारकोपरि।
तस्यास्तु गोलकं कुर्यात्तन्मध्ये पूरणं क्षिपेत् ॥६९॥
तैले तान्गोलकान्पक्त्वा क्वथितायां निमज्जयेत्।
गोलकाः पाचकाः प्रोक्तास्ते त्वार्द्रकवटा अपि ॥७०
मुद्गार्द्रकवटा रुच्या लघवो बलकारकाः।
दीपनास्तर्पणाः पथ्यास्त्रिषु दोषेषु पूजिताः ॥ ७१ ॥

मूंगकी पिट्ठीकी बडी बनाकर तेलमे पकावे, पश्चात् हाथसे मलकर चूर्ण कर ले, उसमें भुनी हुई हींग, छोटे छोटे अदरकके टुकडे, भुना हुआ जीरा, मिरच, नीबूका रस और अजवायन, ये सब युक्तिसे मिलाकर फिर कढाईमें पकावे, पश्चात् इसके गोले बनाकर उसके भीतर मसाला भरकर फिर उन गोलोंको तेलमें पकावे, पकनेपर कढीमें डाल देवे। ये बडे-रुचिकारक, पाचक, हलके, बलदायक, अग्निप्रदीपक, तृप्तिकारक, पथ्य और त्रिदोषनाशक हैं ॥ ६७-७१ ॥

अथ पकौरी (फुलौरी)

दालयश्चणकानां तु निस्तुषा यन्त्रपेषिताः।
तच्चूर्णं बेसनं प्रोक्तं पाकशास्त्रविशारदैः ॥ ७२ ॥

वटिका बेसनस्यापि क्वथितायां निमज्जिता ।
रुच्या विष्टम्भजननी बल्या पुष्टिकरी स्मृता ॥७३॥

चनेकी दालके छिलके छुटाकर चक्कीमें पिसवावे, उस दालके चूर्णको पाकशास्त्र जाननेवाले बेसन कहते है, इस बेसनकी वरियोंको कढीमें डाले उसको पकौडी कहते हैं। ये बडी रुचिकारक, विष्टम्भजनक, बलदायक और पुष्टिकारक हैं ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अथ मांसस्य प्रकाराः ।



तत्र शुद्धमांसम् ।

पाकपात्रे घृतं दद्यात्तैलं च तदभावतः ।
तत्र हिंगु हरिद्रां च भर्जयेत्तदनन्तरम् ॥ ७४ ॥
छागादेरस्थिरहितं मांसं तत्खण्डितं ध्रुवम् ।
धौतं निर्गालितं तस्मिन्घृते तद्भर्जयेच्छनैः ॥७५ ॥
सिद्धयोग्यं जलं दत्त्वा लवणन्तु पचेत्ततः ।
सिद्धं जलेन संपिष्य वेशवारं परिक्षिपेत् ॥ ७६ ॥

वेशवारः (पिसा हुआ मसाला)।

द्रव्याणि वेशवारस्य नागवल्लीदलानि च ।
तंडुलाश्च लवंगानि मरीचानि समासतः ॥ ७७ ॥
अनेन विधिना सिद्धं शुद्धमांसमिति स्मृतम् ।
शुद्धमांसं परं वृष्यं बल्यं रुच्यं च वृंहणम् ।
त्रिदोषशमकं श्रेष्ठं दीपनं धातुवर्द्धितम् ॥ ७८ ॥

पकानेके वरतनमें घी और घी न मिले तो तेल डाले, तदनन्तर हींग तथा

हलदीको डालकर उसमें भूने पश्चात् बकरी आदिका हड्डीरहित मांस लेवे, उसके टुकडे करके धोवे, पश्चात् तेलमें अथवा घीमें धीरे २ पकावे, इसमें नोन और जल भी डाले, जब पकजाय तब उसमें गरममसाला डाल देवे । नागर बेलके पान, चावल, लौंग और मिरच, ये मसालेके पदार्थ संक्षेपसे जानने । इसप्रकारसे पकाये हुए मांसको शुद्ध मांस कहते है । शुद्ध मांस अत्यन्त वृष्य, बलदायक, रुचिकारक, पुष्टिकारी, त्रिदोषनाशक, श्रेष्ठ, अग्निको दीपन करनेवाला और धातुवर्द्धक है ॥ ७४–७८ ॥

अथ सहद्रकम् (सहबांसु) ।

छागादेर्मांसमूर्वादेः कुट्टितं खंडितं पुनः ।
शुद्धमांसविधानेन पचेदेतत्सहद्रकम् ।
सहद्रकं गुणैर्ग्रन्थे शुद्धमांसगुणं स्मृतम् ॥ ७९ ॥

बकरेका मांस और मूर्वा आदिकके टुकडे कर कूट ले और उपरोक्त शुद्ध मांसकी रीतिसे पकावे, पकनेपर इसको सहद्रक कहते है, सहद्रक मांसमें शुद्ध मांसके सदृश गुण है, ये गुण अन्य ग्रन्थोंमें कहे हैं ॥ ७९ ॥

अथ तक्रमांसम् (अखनी)

पाकपात्रे घृतं दत्त्वा हरिद्रां हिंगु भर्जयेत् ।
छागादेः सकलस्यापि खण्डान्यपि च भर्जयेत् ८०
सिद्धयोग्यं जलं दत्त्वा पचेन्मृदुतरं तथा ।
जीरकादिप्लुते तक्रे मांसखण्डानि तारयेत् ॥ ८१ ॥
तक्रमांसन्तु वातघ्नं लघु हृच्यं बलप्रदम् ।
कफघ्नं पित्तलं किञ्चित्सर्वाहारस्य पाचनम् ॥८२॥

पाकपात्र (कढाई, डेगची) में घी डालकर उसमें हलदी तथा हींग भूनले और बकरीआदिके मांसके टुकडे भी उसमें भूने, फिर यथायोग्य जल डालकर मन्द २ अग्निमे पकावे, पश्चात् जीरा आदि मसाला पडे हुए मट्ठेमें उन मांसके टुकडोंको डाले, तैयार होनेपर इसको तक्रमांस (अखनी) कहते है, तक्रमांस

(अखनी)-वात तथा कफनाशक, हलका, रुचिकारक, बलदायक, किञ्चित् पित्तकारक और सम्पूर्ण प्रकारके आहार पचानेवाला है ॥ ८०-८२ ॥

अथ हरीसा (आस)।

पाकपात्रे तु बृहति मांसखण्डानि निक्षिपेत् ।
पानीयं प्रचुरं सर्पिः प्रभूतं हिंगु जीरकम् ॥ ८३ ॥
हरिद्रामार्द्रकं शुण्ठीं लवणं मरिचानि च ।
तण्डुलांश्चापि गोधूमाञ्जम्बीराणां रसान्बहून् ८४॥
तथा सर्वाणि वस्तूनि सुपक्वानि भवन्ति हि ।
तथा पचेत्तु निपुणो बहुमांसं क्षितिर्यथा ॥ ८५ ॥
एषा हरीसा बलकृद्वातपित्तापहा गुरुः ।
शीतोष्णा शुक्रदा स्निग्धा सरा सन्धानकारिणी८६

पाकपात्रमें बडे २ मांसके टुकडे डालकर उसमें पानी, घी, हींग, जीरा, हलदी अदरक, सोंठ, नमक, मिरच, चावल, गेहूँ तथा जम्भीरी नीबूका रस बहुत डालके पकावे जब सब वस्तुएँ भलीभाँति पक जायँ तब उतारलेवे इसको हरीसा कहतेहैं।

हरीसा (आस)-बलदायक, वात तथा पित्तनाशक, भारी, शीतल, गरम, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, दस्तावर और टूटी हड्डी आदिको जोडनेवाला है ॥८३-८६

अथ तलितमांसम् (तला हुआ मांस)।

शुद्धमांसविधानेन मांसं सम्यक्प्रसाधितम् ।
पुनस्तदाज्ये सम्भृष्टं तलितं प्रोच्यते बुधैः ॥८७॥
तलितं बलमेधाग्निमांसौजःशुक्रवृद्धिकृत् ।
तर्पणं लघु सुस्निग्धं रोचनं दृढताकरम् ॥ ८८ ॥

शुद्ध मांसकी रीतिके अनुसार मांसको पकाकर पीछे उसको घीमें तल लेवे, उसको तलित मांस कहते है ।

तलित मांस—तृप्तिकारक, हलका, बहुत स्निग्ध, रुचिकारी, शरीरको दृढ करनेवाला और बल, बुद्धि, अग्नि, मांस, ओज तथा वीर्यवर्द्धक है॥८७॥८८॥

अथ शूल्यपलम् (कवाब)।

कालखण्डादिमांसानि ग्रथितानि शलाकया ।
घृतं सलवणं दत्त्वा निर्धूमे दहने पचेत् ॥ ८९ ॥
तत्तु शूल्यमिदं प्रोक्तं पाककर्मविचक्षणैः ।
शूल्यं पलं सुधातुल्यं रुच्यं वह्निकरं लघु ।
कफवातहरं बल्यं किञ्चित्पित्तकरं हि तत् ॥ ९० ॥

कलेजेके मांसको कुचलकर घी और नोंन मिलाकर लोहेकी सलाईमें लपेटकर धुएँरहित अग्निपर पकावे. पाककर्ममें कुशल पुरुष इसको शूल्यमांस (कवाब) कहते है। यह मांस—अमृततुल्य, रुचिकारी, अग्निको दीपन करनेवाला, हलका, कफ तथा वातनाशक, बलदायक और किञ्चित् पित्तकारक है॥ ८९ ॥ ९० ॥

अथ मांसशृंगाटकम् (मांसका सिंगाडा)।

शुद्धमांसं तनूकृत्य कर्तितं स्वेदितं जले ।
लवंगहिंगुलवणमरिचार्द्रकसंयुतम् ॥ ९१ ॥
एलाजीरकधान्याकनिम्बूरससमन्वितम् ।
घृते सुगन्धे तद्भृष्टं मांसशृंगाटकं स्मृतम् ॥९२॥
मांसशृंगाटकं रुच्यं बृंहणं बलकृद् गुरु ।
वातपित्तहरं वृष्यं कफघ्नं वीर्यवर्धनम् ॥ ९३ ॥

शुद्ध मांसके छोटे २ टुकडे करके पानीमें पकावे पश्चात् उसमें लौंग, हींग, जीरा, नोंन, मिरच, अदरक, इलायची, जीरा, धनियाँ तथा नींबूका रस डालकर घीमें भूनले, उसको मांसशृंगाटक कहते है। मांसशृंगाटक-

रुचिकारी, पुष्टिकारक, बलदायक, भारी, वात तथा पित्तनाशक, वृष्य, कफ-नाशक और वीर्यवर्द्धक है ॥ ९१-९३ ॥

अथ मांसरसः (सुरवा)

सिद्धमांसरसो रुच्यः श्रमश्वासक्षयापहः ।
प्रीणनो वातपित्तघ्नः क्षीणानामल्परेतसाम् ॥९४॥
विश्लिष्टभग्नसन्धीनां शुद्धानां शुद्धिकांक्षिणाम् ।
स्मृत्योजोबलहीनानां ज्वरक्षीणक्षतोरसाम् ॥ ९५ ॥
शस्यते स्वरहीनानां दृष्ट्यायुःश्रवणार्थिनाम् ।
प्रकाराः कथिताः सन्ति बहवो मांससम्भवाः ।
ग्रन्थविस्तारभीतेस्ते मया नात्र प्रकीर्तिताः ॥९६॥

पकाये हुए मांसका रस—रुचिकारक, तृप्तिदायक, वात तथा पित्तनाशक और परिश्रम, श्वास तथा, क्षयनाशक है । क्षीण (दुबले) तथा अल्पवीर्य-वालोंको पुष्टिकर्त्ता, विखरी हुई और टूटीहुई संधियोंको जोडनेवाला, शरी-रकी शुद्धि चाहनेवालेंको, स्मृति, ओज तथा बलहीनोंको, ज्वरसे क्षीण हुए और क्षतरोगवालोंको, स्वरहीनोंको, दृष्टि, आयु और श्रवण शक्ति बढानेवा-लोंको तथा स्वस्थ शरीरवालोंको भी मांसका रस परम हितकारी है । मांस बनानेके भेद अनेक प्रकारके हैं । परन्तु यहाँ ग्रन्थका विस्तार होनेके भयसे नही कहे हैं ॥ ९४-९६ ॥

अथ शाकपाकविधिः ।

हिंगुजीरयुते तैले क्षिपेच्छाकं सुखण्डितम् ।
लवणं चाम्लचूर्णादि सिद्धे हिंगूदकं क्षिपेत् ।
इत्येवं सर्वशाकानां साधनोऽभिहितो विधिः ॥९७॥

तेलमें हींग तथा जीरा भूने पश्चात् सुधारा हुआ शाक कतरकर उसमें

छौंक देवे, जब गलजाय तब नोंन खट्टा चूर्ण आदि तथा हींगका पानी डाले, यही सम्पूर्ण शाक बनानेकी रीति है ॥ ९७ ॥

अथ मठकम् (मठरी)।

समितां मर्दयेदन्यजलेनापि च सन्नयेत् ।
तस्यास्तु वटिकां कृत्वा पचेत्सर्पिषि नीरसम् ॥९८
एलालवंगकर्पूरमरिचाद्यैरलंकृते ।
मज्जयित्वा सितापाके ततस्तं च समुद्धरेत् ।
अयं प्रकारः संसिद्धो मठ इत्यभिधीयते ॥ ९९ ॥
सन्नयेत् मर्दयेत् ।
मठस्तु बृंहणो वृष्यो बल्यः सुमधुरो गुरुः ।
पित्तानिलहरो रुच्यो दीप्ताग्नीनां सुपूजितः ॥१००॥
समिता शर्करासर्पिर्निर्मिता अपरेऽपि ये ।
प्रकारा अमुना तुल्यास्तेऽपि चेत्तद्गुणाः स्मृताः १०१

मैदाको घी तथा जलसे खूब मलकर उसमें इलायची, लोंग, कपूर और मिरच आदिक डाले और चपटी बडी बना लेवे, फिर घीमें सेंककर खाडकी चासनीमें पाग लेवे, फिर चासनीसे निकाल लेवे। इस प्रकारसे बनाई हुई वस्तुको मठ (मठरी) कहते हैं।

मठ–पुष्टिकारक, वृष्य, बलदायक, मधुर, भारी, वात तथा पित्तनाशक, रुचिकारी और प्रदीप्त अग्निवालोंके लिये उत्तम है। इसी प्रकार और भी मैदा, खांड तथा घीके बने पदार्थ (बालूसाइ आदि) जानने, उनमें भी यही गुण हैं॥ ९८–१०१ ॥

अथ संयावः (गुंजिया)।

पर्पटयः साज्यसमिता निर्मिता घृतभर्जिताः ।
कुट्टिताश्चालिताः शुद्धशर्कराभिर्विमर्दिताः ॥१०२॥

तत्र चूर्णं क्षिपेदेलालवंगमरिचानि च।
नालिकेरं सकर्पूरं चारबीजान्यनेकधा ॥ १०३ ॥
घृताक्तसमिता पुष्टरोटिका रचिता ततः।
तस्यान्तःपूरणं तस्य कुर्य्यान्मुद्रां दृढां सुधीः १०४
सर्पिषि प्रचुरे तान्तु सुपचेन्निपुणो जनः।
प्रकारज्ञैः प्रकारोऽयं संयाव इति कीर्तितः ॥ १०५॥

मैदा और घी मिलाय रोटी बनाकर घीमें सेंक लेवे,सिकनेपर कूट ले और छान ले,पश्चात् स्वच्छ बूरा मिलावे, फिर इलायची, लौंग, काली मिरच,नारियलकी मींग और कपूर,चिरोंजी डाले। फिर मोवन पडी हुई मैदाकी रोटीसी वेल लेवे, पश्चात् उस चूर्णको उसके भीतर भरे और मजबूत मुख बंद करदेवे, चतुर पुरुष इसको घीमें भली भांति सेंकलेवे,सिकनेपर इसको संयाव(गुजिया), कहते हैं। इस संयावके गुण मठके सदृश ही जानने ॥ १०२–१०५ ॥

अथ कर्पूरनालिका।

घृताढ्यया समितया लम्बं कृत्वा पुटं ततः।
लवंगोलवणकर्पूरयुतया सितयाऽन्वितम् ॥ १०६ ॥
पचेदाज्येन सिद्धैषा ज्ञेया कर्पूरनालिका।
संयावसदृशी ज्ञेया गुणैः कर्पूरनालिका ॥ १०७ ॥

मोवन पडी हुई मैदाका लोईको वेलकर लम्बा सुपुट बनावे, फिर लौंग, मिरच,कपूर और खांड मिलाकर उसके भीतर भरे और मुख बंद करके घृतमें सेंक लेवे,इसको कर्पूरनालिका कहते हैं,इसमें संयावके सदृश गुण हैं१०६॥१०७

अथ फेनिका (फेनी)।

समितायां घृताढ्यायां वर्तिं दीर्घां समाचरेत्।
तास्तु सन्निहिता दीर्घाः पाठस्योपरि धारयेत् १०८

वेल्लयेद्वेल्लनेनैता यथैका पर्पटी भवेत्।
ततश्छुरिकया तान्तु संलग्नामेव कर्त्तयेत् ॥ १०९ ॥
ततस्तु वेल्लयेद्भूयः सट्टकेन च लेपयेत्।
शालिचूर्णं घृतं तोयं मिश्रितं सट्टकं वदेत् ॥ ११०
ततः संवृत्य तल्लोप्त्रीं विदधीत पृथक् पृथक्।
पुनस्तां वेल्लयेल्लोप्त्रीं यथास्यान्मंडलाकृतिः १११
ततस्तां सुपचेदाज्ये भवेयुश्च स्फुटाः स्फुटाः।
सुगन्धया शर्करया तदुद्धूलनमाचरेत् ॥ ११२ ॥
सिद्धैषा फेनिका नाम्नी मंडकेन समा गुणैः।
ततः किञ्चिल्लघुरियं विशेषोऽयमुदाहृतः ॥ ११३॥

वेल्लयेत् प्रसारयेत्। वेल्लन 'वेलुन' इति लोके।

पर्पटी (रोटी) लोप्त्री 'लोई' इति लोके।

मोवनयुक्त मैदाको मलकर उसमें घी डालकर लम्बी लम्बी बत्ती बनावे, फिर सबको लपेटकर लम्बी २ बत्ती करे, पश्चात् बेलनसे बेलकर रोटी बनावे तदनन्तर चाकूसे कतरकर सबको मिला ले, फिर कतरकर बेले और सट्टकका लेप करे, चावलका चूर्ण घृत और जल इन सबको मिला लेवे, इसको सट्टक कहते है, इस सट्टकको लपेटकर बेल लेवे. फिर मिलाकर गोल२बना ले,तत्पश्चात् घीमें सेंक लेंवे, जब सिक जायगी तब तार तार अलग होजायँगे, फिर सुगन्धित खाण्डकी चासनीमें पागलेवे, तयार होने पर फेनिका (फेनी) कहाती है।फेनीमें मंडकके सदृश गुण है विशेष करके किंचित् हलकी है१०८-११६

अथ शष्कुली (खस्तापूरी)।

समितायां घृताक्तायां लोप्त्रीं कृत्वा च वेल्लयेत्।
आज्ये तां भर्जयेत्सिद्धां शष्कुलीं फेनिकागुणाम् ११४

मोवनयुक्त मैदाको मलकर लोई करे, फिर पतली बेलकर घीमें छोड देवे,

जब सिकजाय तब निकाल ले इसको शष्कुली (खस्तापूरी) कहते हैं इसमें फेनीके सदृश गुण हैं ॥ ११४ ॥

अथ सेविकामोदकः (सेवके लड्डू)।

घृताढ्यया समितया कृत्वा सूत्राणि तानि तु ।
निपुणो भर्जयेदाज्ये खण्डपाकेन योजयेत् ।
युक्तेन मोदकान्कुर्य्यात्ते गुणैर्मंडका यथा ॥ ११५॥

घृतयुक्त मैदाके सेव बनाकर घीमें सेकलेवे और खाँडकी चासनीमें डालके लड्डू बनायले, इन लड्डुओंमें भी मंडकके सदृश गुण है ॥ ११५ ॥

अथ मुक्तामोदकाः (बूँदीके लड्डू)।

मुद्गानां धूमसीं सम्यग्घोलयेन्निर्मलाऽम्बुना ।
कटाहस्थघृतेरूर्ध्वं झर्झरं स्थापयेत्ततः ॥ ११६ ॥
धूमसीन्तु द्रवीभूतां प्रक्षिपेज्झर्झरोपरि ।
पतन्ति बिंदवस्तस्मात्तान्सुपक्कान्समुद्धरेत् ।
सितापाकेन संयोज्य कुर्याद्धस्तेन मोदकान्॥११७॥
लघुग्राही त्रिदोषघ्नः स्वादुः शीतो रुचिप्रदः ।
चक्षुष्यो ज्वरहृद्बल्यस्तर्पणो मुद्गमोदकः ॥ ११८ ॥

मूंगकी धूमसीको जलमें घोलकर घीकी भरी हुई कढाईमें बडे बडे छेदवाली झर्झरमें उस सनीहुई मूँगकी धूमसीको झाडदेवे तो उसकी छोटी छोटी बूंद कढाईमें पडेंगी उनको सिकनेपर निकालले और चासनीमें डालकर हाथसे लड्डू बनावे । बूँदीके लड्डू—हलके, ग्राही, त्रिदोषनाशक, स्वादिष्ठ, शीतल, रुचिकारक, नेत्रोंको हितकारी, ज्वरनाशक, बलदायक और तृप्तिकारक है ॥ ११६–११८ ॥

अथ बेसनमोदकः (मोतीचूरके लड्डू)।

एवमेव प्रकारेण कार्य्या बेसनमोदकाः ।

ते बल्या लघवः शीताः किंचिद्वातकरास्तथा ।
विष्टम्भिनो ज्वरघ्नाश्च पित्तरक्तकफापहाः ॥११९॥

उपरोक्त लड्डूके सदृशही बेसनके लड्डू बनावे उनको मोतीचूरके लड्डू कहते है । मोतीचूरके लड्डू–बलकारक, हलके, शीतल, किंचित् वातकारक, विष्टम्भी, ज्वरनाशक और पित्तरक्त तथा कफनाशक है ॥ ११९ ॥

दुग्धकूपिका ।

तण्डुलचूर्णविमिश्रितनष्टक्षीरेण सान्द्रपिष्टेन ।
दृढकूपिकां विदध्यात्तांश्च पचेत्सर्पिषा सम्यक् १२०
अथ तां कोरितमध्यां घनपयसा पूर्णगर्भाश्च ।
सट्टकमुद्रितवदनां सर्पिषि सुपक्ववदनाञ्च ॥ १२१॥
अथ पाण्डुखण्डपाके स्नपयेत्कर्पूरवासिते कुशलः ।
अथ दुग्धकूपिका सा बल्या पित्तानिलापहा चैव ।
वृष्या शीता गुर्वी शुक्रकरी बृंहणी रुच्या॥ १२२ ॥
विदधाति कायपुष्टिं दृष्टिं दूरप्रसारिणीं सुचिरम् ।

चावलोंके चूर्णमें सावा (खोहा) मिलाकर मजबूत कुप्पी बनावे, उसको घीमें छोडकर सेकलेवे, पकनेपर निकालकर बीचमें छेदकर गाढा मिश्रीयुक्त दूध भरदेवे और सट्टकसे मुख खूब बंद करके फिर घीमें सेके जब उसका मुख सिकजाय तब चतुर मनुष्य कपूरसे सुवासित खाँडकी चासनीमें पागलेवे, उसको दुग्धकूपिका कहते है ।

यह दुग्धकूपिका–बलकारक, पित्त तथा कफनाशक, वृष्य, शीतल, भारी, वीर्यवर्द्धक, पुष्टिकारी, रुचिकारक, शरीरकी पुष्टि करनेवाली, और दृष्टिको दूरदर्शक करनेवाली है ॥ १२०–१२२ ॥

अथ कुण्डलिनी (जलेबी) ।

नूतनं घटमानीय तस्यान्तः कुशलो जनः ।

प्रस्थार्द्धपरिमाणेन दध्नाऽम्लेन प्रलेपयेत् ॥ १२३ ॥
द्विप्रस्थः समितां तत्र दध्यम्लं प्रस्थसम्मितम् ।
घृतमर्द्धशरावञ्च घोलयित्वा घृतं क्षिपेत् ॥ १२४ ॥
आतपे स्थापयेत्तावद्यावद्याति तदम्लताम् ।
ततस्तत्प्रक्षिपेत्पात्रे सच्छिद्रे भाजने तु तत् ॥१२५
परिभ्राम्यपरिभ्राम्य तत्सन्तप्ते घृते क्षिपेत् ।
पुनः पुनस्तदावृत्त्या विदध्यान्मण्डलाकृतिम् १२६।
तां सुपक्वां घृतान्नीत्वा सितापाके तनुद्रवे ।
कर्पूरादिसुगन्धश्च स्थापयित्वोद्धरेत्ततः ॥ १२७ ॥
एषा कुंडलिनी नाम्ना पुष्टिकान्तिबलप्रदा ।
धातुवृद्धिकरी वृष्या रुच्या च क्षिप्रतर्पणी ॥ १२८॥

नवीन मृत्तिकाके घडेमें आधसेर खट्टे दहीका लेप कर देवे पश्चात् दोसेर मैदा उसमें डाले और एकसेर दही तथा आधसेर घृत घोलकर जबतक खट्टा न हो तबतक धूपमें रक्खा रहने दे पश्चात् जिस बासनमें नीचे छेद हो उस पात्रमें करके नीचे घृत भरी हुई कढाईमें गोल २ करके छोडता जाय, जब वह सिक जाय तब घीमेंसे निकालकर कर्पूर आदिसे सुगंधित हुई खांडकी चासनीमें डाल देवे और पश्चात् निचोडकर निकालले उसको कुंडलिनी (जलेबी) कहते है। यह जलेबी—पुष्टिकारक, कांतिकारक, बलदायक, धातुवर्द्धक, वृष्य, रुचिकारक और तुरन्त तृप्तिकारक है ॥ १२३–१२८ ॥

अथ पश्चात् परिवेष्याणि ।

रसाला (सिखरन)।

आदौ माहिषमम्लमंबुरहितं दध्याढकं शर्करां
शुभ्रां प्रस्थयुगोन्मितां शुचिपटे किञ्चिच्च किंचित्क्षिपेत्

दुग्धेनार्द्धघटेन मृन्मयनवस्थाल्यां हठं स्रावये-
देलाबीजलवंगचन्द्रमरिचैर्योग्यैश्च तद्योजयेत् १२९
भीमेन प्रियभोजनेन रचिता नाम्ना रसाला स्वयं
श्रीकृष्णेन पुरा पुनःपुनरियं प्रीत्या समास्वादिता।
एषा येन वसन्तवर्जितदिने संसेव्यते नित्यश-
स्तस्य स्यादतिवीर्य्यवृद्धिरनिशं सर्वेन्द्रियाणां
बलम् ॥ १३० ॥

ग्रीष्मे तथा शरदि ये रविशोषितांगा
ये च प्रमत्तवनितासुरतातिखिन्नाः ।
ये चापि मार्गपरिसर्पणशीर्णगात्रा-
स्तेषामियं वपुषि पोषणमाशु कुर्य्यात् ॥१३१॥

रसाला शुक्रला बल्या रोचनी वातपित्तजित्।
दीपनी बृंहणी स्निग्धा मधुरा शिशिरा सरा ।
रक्तपित्ततृषां दाहं प्रतिश्यायं विनाशयेत् ॥ १३२॥

प्रथम खट्टा तथा जलरहित दोसौ छप्पन २५६ तोले भर भैसका दही लेवे और उसको स्वच्छकपडेमें रखकर एकसौअठ्ठाईस १२८तोला भर सफेद बूरा डाल कर नीचेको स्वच्छ नवीन मिट्टीके पात्रमें दही छानता जाय, पश्चात् इसमें पांचसौ बारह ५१२ तोला भर दूध डाले और इलायची, लौंग, कपूर, मिरच, यथा-योग्य डाले । प्रिय भोजनके बनानेवाले भीमसेनने स्वयं यह रसाला बनाई थी और श्रीकृष्णने परम प्रीतिसे वारंवार स्वाद लेकर खाई थी । जो मनुष्य वसन्तऋतुको त्यागकर नित्य रसाला भोजन करते हैं उनको निरन्तर वीर्यकी अत्यन्त वृद्धि होती है और सर्व इन्द्रियोंमें बल बढता है । जिनका शरीर ग्रीष्म तथा शरदृऋतुमें सूर्यके तापसे सूख गया है, जो मदोन्मत स्त्रियोंके

संभोगसे अतिखिन्न हो गया है और जिनका शरीर मार्ग चलनेसे शिथिल हो गया है उन पुरुषोंके शरीरोंको तत्काल पुष्टि करती है। यह रसाला- (श्रीखण्ड) वीर्यवर्द्धक, बलदायक, रुचिकारक, वात तथा पित्तनाशक, अग्निको दीपन करनेवाली, पुष्टिकारक, स्निग्ध, मधुर, शीतल, दस्तावर और रक्तपित्त, तृषा, दाह तथा प्रतिशाय (जुखाम) नाशक है ॥ १२९-१३२॥

अथ शर्करोदकम् (सरबत)।

जलेन शीतलेनैव घोलिता शुभ्रशर्करा।
एलालवङ्गकर्पूरमरिचैश्च समन्विता ॥ १३३ ॥
शर्करोदकनाम्ना तत्प्रसिद्धं विदुषां मुखैः।
शर्करोदकमाख्यातं शुक्लं शिशिरं सरम् ॥ १३४ ॥
बल्यं रुच्यं लघु स्वादु वातपित्तप्रणाशनम्।
मूर्च्छाच्छर्दितृषादाहज्वरशान्तिकरं परम् ॥ १३५ ॥

शीतल जलमें सफेद खांड घोलकर उसमें इलायची, लौंग, कपूर तथा मिरच डाल देवे उसको विद्वान् शर्करोदक (सरबत) कहते हैं।

सरवत-वीर्यवर्धक, शीतल, दस्तावर, बलदायक, रुचिकारी, स्वादिष्ठ, हलका और वात, पित्त, मूर्च्छा, वमन, तृषा, दाह तथा ज्वरको शांत करता है ॥ १३३-१३५ ॥

अथ प्रपानकानि (सरबत)।

तत्र आम्रफलप्रपानकम्।

आम्रमामं जले स्विन्नं मार्दितं दृढपाणिना।
सिताशीतांबुसंयुक्तं कर्पूरमरिचान्वितम् ॥ १३६ ॥
प्रपानकमिदं श्रेष्ठं भीमसेनेन निर्मितम्।
सद्यो रुचिकरं बल्यं शीघ्रमिन्द्रियतर्पणम् ॥ १३७ ॥

कच्ची अमियोंको जलमें औटाकर दृढतासे मल लेवे, पश्चात् सफेद बूरा, शीतल जल, कपूर और मिरच डाले इसको प्रपानक (आमका पन्ना) कहते

है। यह श्रेष्ठ प्रपानक भीमसेनने निर्माण किया है । यह प्रपानक—तत्काल रुचिकारी, वलदायक और तुरन्त इन्द्रियोंको तृप्त करनेवाला है॥१३६॥१३७

अथ अम्लिकाफलपानकम्।

अम्लिकायाः फलं पक्वं मर्दितं वारिणा दृढम् ।
शर्करामरिचैर्मिश्रं लवंगेन्दुसुवासितम् ॥ १३८ ॥
अम्लिकाफलसम्भूतं पानकं वातनाशनम् ।
पित्तश्लेष्मकरं किञ्चित्सुरुच्यं वह्निबोधनम्॥१३९॥

पक्की इमलीको जलमें भिगोकर खूब मलले, उसमें सफेद बूरा, मिरच, लौंग और कपूर आदि डालकर सुवासित करले, इसको अम्लिकाप्रपानक (इमलीका पन्ना) कहते है, यह इमलीका पन्ना—वातविनाशक, पित्त तथा कफकारी, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक है ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

निम्बुकफलपानकम्।

भागैकं निम्बुजं तोयं षड्भागं शर्करोदकम् ।
लवंगमरिचैर्मिश्रं पानं पानकमुत्तमम् ॥ १४० ॥
निम्बूफलभवं पानमत्यम्लं वातनाशनम् ।
वह्निदीप्तिकरं रुच्यं समस्ताहारपाचकम् ॥ १४१ ॥

एक भाग नींबूके रसमें छः भाग खाडका पानी (सरबत) डाले और उसमें लौंग तथा मिरच डाले, इसको नीबूप्रपानक (नीबूका पन्ना) कहते है। नीबूका पन्ना—उत्तम, अग्निको दीपन करनेवाला, रुचिकारक और सम्पूर्ण आहारको पचानेवाला है ॥ १४० ॥ १४१ ॥

धान्याकपानकम्।

शिलायां साधु सम्पिष्टं धान्याकं वस्त्रगालितम् ।

शर्करोदकसंयुक्तं कर्पूरादिसुसंस्कृतम् ।
नूतने मृन्मये पात्रे स्थितं पित्तहरं परम् ॥ १४२ ॥

धनियोंको शीलापर भली भांति पीसकर वस्त्रमें छान लेवे उसमें बूराका पानी डाले और कपूरादिसे सुगंधित करे और उसको नवीन मट्टीके पात्रमें रक्खे वह पन्ना अत्यन्त पित्तनाशक है ॥ १४२ ॥

अथ काञ्जी ।
(कांजीविधिर्वटकावसरे लिखितः) ।

कांजीकं रोचनं रुच्यं पाचनं वह्निदीपनम् ।
शूलाजीर्णविबन्धघ्नं कोष्ठशुद्धिकरं परम् ।
न भवेत्कांजिकं यत्र तत्र जालिःप्रदीयते ॥१४३॥

कांजी बनानेकी विधि वडे बनानेके विषयमें लिख आये है, कांजीका प्रपानक—रुचियुक्त, रुचिकारक, पाचक, अग्निको दीपन करनेवाला और शूल, अजीर्ण तथा मलवन्धनाशक है और कोठेको अत्यन्त शुद्ध करनेवाला है । कांजी जहां न मिले वहां नीचे लिखी हुई जाली देवे ॥ १४३ ॥

अथ जालिः ।

आममाम्रफलं पिष्टं राजिकालवणान्वितम् ।
भृष्टहिंगुयुतं पूतं घोलितं जालिरुच्यते ॥ १४४ ॥
जालिर्हरति जिह्वायाः कुण्ठत्वं कण्ठशोधनी ।
मन्दं मन्दन्तु पीता सा रोचनी वह्निबोधनी १४५॥

कच्ची अमियोंको पीसकर उसमें राई,सेंधानोन और भुनी हुई हींग डालकर उसे पानीमें घोल लेवे, उसको जाली कहते है । जाली—जीभकी जडताको नष्ट करती है तथा कण्ठको शुद्ध करती है, यह जाली धीरे २ पीवे तो अत्यन्त रुचिकारी और अग्निवर्द्धक है ॥ १४४ ॥ १४५ ॥

अथ तक्रम् (छाछ) ।

तुर्यांशेन जलेन संयुतमतिस्थूलं सदम्लं दधि
प्रायो माहिषमम्बुकेन विमले मृद्भाजने गालयेत् ।
भृष्टं हिंगु च जीरकञ्च लवणं राजीञ्च किञ्चिन्मितां
पिष्टांतत्रविमिश्रयेद्भवति तत्तक्रं न कस्यप्रियम् १४६
तक्रं रुचिकरं वह्निदीपनं पाचनं परम् ।
उदरे ये गतास्तेषां नाशनं तृप्तिकारकम् ॥ १४७ ॥

अत्यन्त गाढे और खट्टे भैसके दहीको लेकर उसमें चौथा भाग जल डाले पश्चात् मृत्तिकाके पात्रमें वस्त्रस छानलेवे फिर उसमें भुनी हीग,जीरा,नमक तथा किंचित् राई इनको पीसकर मिला देवे तो तक्र (मट्ठा, छाछ) तयार हो जाता है, यह छाछ किसको प्रिय नही है ? तक्र–रुचिकारी, अग्निको दीपन करनेवाला, अत्यन्त पाचन, पेटके सम्पूर्ण रोगोंको नष्ट करनेवाला और तृप्तिकारक है ॥ १४६ ॥ १४७ ॥

अथ दुग्धम् (दूध) ।

विदाहीन्यन्नपानानि यानि भुंक्ते हि मानवः ।
तद्विदाहप्रशान्त्यर्थं भोजनान्ते पयः पिबेत्॥१४८॥
दुग्धस्य अपरे गुणा उक्ता एव दुग्धवर्गे ।

जो मनुष्य दाह करनेवाले अन्नपानका उपयोग करते है उनको दाहकी शांति करनेके लिये भोजनके अन्तमें दूध पीना चाहिये, दूधमें जो और गुण है वे दुग्धवर्गमें कहे हैं ॥ १४८ ॥

अथ सक्तवः (सत्तू)

धान्यानिभ्राष्ट्रभृष्टानि यन्त्रपिष्टानि सक्तवः १४९

चावल जौ आदि धान्योंको भाडमें भुनाकर पिसवा लें उसको सतू कहते हैं ॥ १४९ ॥

तत्र यवसक्तवः।

यवजाः सक्तवः शीता दीपना लघवः सराः।
कफपित्तहरा रूक्षा लेखनाश्च प्रकीर्तिताः॥ १५०॥
ते पीता बलदा वृष्या बृंहणा भेदनास्तथा।
तर्पणा मधुरा रुच्याः परिणामे बलापहाः॥१५१॥
कफपित्तश्रमक्षुत्तृड्व्याधिनेत्रामयापहाः।
प्रशस्ता घर्मदाहाढ्यव्यायामार्तशरीरिणाम् १५२॥

जौंके सत्तु—शीतल, अग्निदीपक, हलके, दस्तावर, कफ तथा पित्तनाशक, रूक्ष और लेखन है। सत्तुओंका पीना—बलादायक, वृष्य, पुष्टिकारक, मलभेदक, तृप्ति करनेवाला, मधुर, रुचिकारी, अन्तमें बलनाशक है। और कफ, पित्त, परिश्रम, भूँख प्यास, अण्डवृद्धि और नेत्ररोगको नष्ट करता है, जो पसीना, दाह तथा व्यायाम (कसरत) करनेसे व्याकुल है, उन मनुष्योंको यह हितकारी है॥ १५०–१५२॥

अथ चणकयवसक्तवः।

निस्तुषैश्चणकैर्भृष्टैस्तुर्यांशैश्च यवैः कृताः।
सक्तवः शर्करासर्पिर्युक्ता ग्रीष्मेऽतिपूजिताः १५३॥

छिलकेरहित भुनेहुए चनोंके और चौथे भाग भुने हुए जौके सत्तु बनाकर उसमें बूरा और घी मिलाकर खावे ये ग्रीष्मऋतुमें अत्यन्त हितकारी है १५२

शालिसक्तवः।

सक्तवः शालिसम्भूता वह्निदा लघवो हिमाः।
मधुरा ग्राहिणो रुच्याः पथ्याश्च बलशुक्रदाः १५४॥

शाली चावलोंके सत्तु—अग्निप्रदीपक, हलके, शीतल, मधुर, ग्राही, रुचिकारी, पथ्य और बल तथा वीर्यवर्द्धक है॥ १५४॥

अथ सामान्यपरिभाषा ।

न भुक्त्वा न रदैश्छित्त्वा न निशायां न वा बहून् ।
न जलान्तरितानद्भिः सक्तूनद्यान्न केवलान् ॥ १५५ ॥
पृथक्पानं पुनर्दानमामिषं पयसा निशि ।
दंतच्छेदनमुष्णं च सप्त सक्तुषु वर्जयेत् ॥ १५६ ॥

सत्तू भोजन करनेके अनन्तर न खाय, दातोसे कुचलकर न खावे, रात्रिमें न खाय, अधिक न खाय, दो वार पानी डालकर न खाय. और केवल सत्तू न खाय । अलग पीना, एकबार जिसने खाये हो उसको दूसरी वार न देना, मांसके साथ और दूधके साथ, रात्रिमें, दांतोंसे कुचलकर और गरम करके इस प्रकार सत्तू नही खाना चाहिये, ऐसे वर्जित है ॥ १५५ ॥ १५६ ॥

अथ धानाः (बहुरी) ।

यवास्तु निस्तुषा भृष्टाः स्मृता धाना इति स्त्रियाम् ।
धानाः स्युर्दुर्जरा रूक्षास्तृट्प्रदा गुरवश्च ताः ।
तथा मेहकफच्छर्दिनाशिन्यः संप्रकीर्त्तिताः ॥ १५७ ॥

भूसीरहित यवोंको भुनवा लेवे, उसको धाना (बहुरी) कहते हैं । बहुरी– दुर्जरी (कठिनतासे पचे), भारी, रूक्ष, तृषा लगानेवाली और प्रमेह, कफ तथा वमननाशक है ॥ १५७ ॥

अथ लाजाः (खील) ।

येषां स्युस्तण्डुलास्तानि धान्यानि सतुषाणि च ।
भृष्टानि स्फुटितान्याहुर्लाजा इति मनीषिणः १५८॥
लाजाः स्युर्मधुराः शीता लघवो दीपनाश्च ते ।
स्वल्पमूत्रमला रूक्षा बल्याः पित्तकफच्छिदः ।
छर्द्यतीसारदाहास्रमेहमेदस्तृषापहाः ॥ १५९ ॥

जिसमें चावल निकलते है उन छिलके सहित धान्योंको भाड़में भुना लेवे

उसको लाजा (खील) कहते हैं । खीलें—मधुर, शीतल, हलकी, अग्निप्रदीपक, मल तथा मूत्रको अल्प करनेवाली, रूक्ष, बलदायक और पित्त, कफ, वमन, अतीसार, दाह, रक्तविकार, प्रमेह, मेद तथा तृषानाशक है॥१५८॥१५९

अथ चिपिटाः (चिउड़ा) ।

शालयः सतुषा आर्द्रा भृष्टा अस्फुटिताश्च तत् ।
कुट्टिताश्चिपिटाः प्रोक्तास्तेस्मृताः पृथुकाअपि१६०
पृथुका गुरवो वातनाशनाः श्लेष्मला अपि ।
सक्षीरा बृंहणा वृष्या बल्या भिन्नमलाश्च ते॥१६१॥

भूसी सहित गीले शालिधान्योंको भूनकर विना खिले ही तत्काल कूट लेवे वे कूटकर चिपटे होजाते है तो उनको चिपिट और पृथुक कहते है। पृथुक (चिउड़ा) भारी, वातनाशक, कफकारक, खारी, पुष्टिकारक वृष्य, बलदायक और मलभेदक(दस्त लानेवाले) हैं ॥ १६० ॥ १६१ ॥

अथ होला ।

अर्द्धपक्वैःशमीधान्यैस्तृणभृष्टैश्च होलकः ।
होलकोऽल्पानिलो मेदःकफदोषत्रयापहः ।
भवेद्यो होलको यस्य स च तत्तद्गुणो भवेत्॥१६२॥

अधपके शमी धान्योंको तोडकर भूनले उसको होला कहते है । होला—अल्प वातकारक और मद तथा त्रिदोषनाशक है । जिस धान्यके होले होयँ उसके गुण भी उन होलोमें रहते हैं ॥ १६२ ॥

अथ ऊची (ऊंबी) ।

मञ्जरी त्वर्द्धपक्वा या यवगोधूमयोर्भवेत् ।
तृणानलेन संभृष्टा बुधैरूचीति सा स्मृता ॥ १६३ ॥

ऊची कफप्रदा बल्या लघ्वी पित्तानिलापहा ॥१६४॥

जौ अथवा गेहूंकी अधपकी मंजरी (बाल) लेकर तृणोंकी आगमें भून लेवे, उसको ऊची कहते है ऊची (ऊँबी)—कफकारक, बलदायक, हलकी और पित्त तथा वातनाशक है ॥ १६३ ॥ १६४ ॥

अथ कुल्माषाः (घुघुरी) ।

अर्धस्विन्नास्तु गोधूमा अन्येऽपि चणकादयः ।
कुल्माषा इति कथ्यन्ते शब्दशास्त्रेषु पंडितैः ।
कुल्माषा गुरवो रूक्षा वातला भिन्नवर्चसः ॥१६५॥

गेहूँ अथवा चने आदिको अध सीजा कर लेवे उसको शब्दशास्त्रविशारद कुल्माष (घुघुरी) कहते है । कुल्माष (घुघुरी)—भारी, रूखी, वातकारक और मलभेदक है ॥ १६५ ॥

अथ तिलकुट्टम् (तिलकुट) ।

पललन्तु समाख्यातं सक्षवं तिलपिष्टकम् ।
पललं मलकृद् वृष्यं वातघ्नं कफपित्तकृत् ।
बृंहणं च गुरु स्निग्धं मूत्राधिक्यनिवर्त्तकम् ॥१६६॥

तिलोंको कूटकर उसमें गुड आदि मिलावे उसको पलल (तिलकुट) कहते है । तिलकुट—मलकारक, वृष्य, वातनाशक, कफ तथा पित्तकर्ता, पुष्टि-दायक, भारी, चिकना, और मूत्रकी अधिकताको नष्ट करता है ॥ १६६ ॥

अथ तिलखलिः (खल, पीना) ।

तिलकुट्टन्तु पिण्याकं तथा तिलखलिः स्मृता ।
पिण्याको लेखनो रूक्षो विष्टम्भी दृष्टिदूषणः१६७॥

तिलकुट्ट, पिण्याक और तिलखलि ये खलके संस्कृत नाम है ।

हिंदी—खल । गु०— खोल ।

तिलकी खल—ग्लानिकारक, रूक्ष, विष्टंभी और दृष्टिको दूषित करती है ॥ १६७ ॥

अथ तंदुलः (चावल)।

तंडुलो मेहजन्तुघ्नः स नवस्त्वतिदुर्जरः ॥ १६८ ॥

इति श्रीभावप्रकाशनिघण्टौ कृतान्नवर्गः ।

चावल–प्रमेह तथा कृमिरोगको नष्ट करते हैं । जो चावल नवीन होयँ वे अत्यन्त दुर्जर हैं ॥ १६८ ॥

इति श्रीभावप्रकाशे हरीतक्यादिनिघण्टौ भाषाटीकायां
कृतान्नवर्गः समाप्तः ।

त्रिवसु नव चन्द्रेब्दे मध्याह्ने गुरुवासरे
ज्येष्ठशुक्लस्य सप्तम्यां पूरिताश्शिवशर्म्मणा ॥

दो०–संवत्त्रय वसु नव शशि,(१९८३) मध्य दिवस गुरुवार ।
ज्येष्ठ शुक्ल तिथि सप्तमी, लिखकर भले प्रकार ॥ १ ॥
हिन्दी भाषायुत कियो, अधिकारिनके हेत ।
शिवकी शिवपरकाशिका, दैशिक शब्द समेत ॥ २ ॥

प्रभु प्रार्थना ।

जगके वन उपवनके मालिक तुम्हें पूजने आया हूँ ।
तेरे आयुर्वैदिक वनका पुष्प भेंटमें लाया हूँ ॥ ३ ॥
द्रव्य गुणोंकी केसरसे षट्रंग पुष्प यह शोभित है ।
जगके हित अनहित कर्मोंसे शीत उष्ण हो क्षोभित है ॥ ४ ॥
इसका कुछ २ ज्ञान गुरुचरणोंसे प्रापित कर ईश्वर ।
शिवशर्मा वर मांगत है चित तव चरणोंमें धर ईश्वर ॥ ५ ॥

दो०–प्रथम भेट लाया प्रभो, लीजे भक्ति पछान ।
नित्य पुष्प लाया करूं, दीजे ऐसा ज्ञान ॥ ६ ॥
शिव शर्म्माकी प्रार्थना, विनय सहित महाराज ।
निस दिन आयुर्वेदको, माने मनुज समाज ॥ ७ ॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः ।

अनेकार्थवर्गः ।



दो अर्थवाले शब्द ।

(१) **अश्मंतक**—अम्ललोणिका (खट्टी नोनिया); कोविदार (कचनार)

(२) **कुलक**—पटोल (परवल), कुपीलु (कुचला).

(३) **कोशातकी**—महाकोशातकी (तुरई),राजकोशातकी (गलकातोरई)

(४) **चुक्रिका**—अम्लिका (इमली);चाङ्गेरी (अम्ललोनिया)

(५) **दीप्यक**—यवानी (अजवाइन), अजमोदा (अजमोद).

(६) **मरुबक**—फणिज्जक (मरुआ), पिण्डीतक (मैनफल).

(७) **रुचक**—सौवर्चल (कालानमक), वीजपूरक (विजौरा निम्बू)

(८) **लोणिका**—लोणीशाक (नोनिया शाक), चागेरी शाक (चूका).

(९) **वाह्लीक**—कुंकुम (केशर), हिंगु (हींग).

(१०) **स्वादुकण्टक**—गोक्षुर (गोखरू), विकंकित (कटाई).

(११) **अग्निमुखी**—भल्लातकी (भिलावा), कुसुम्भ (कुसुम्भा).

(१२) **अजशृंगी**—मेषशृंगी (मेढासिंगी), कर्कटशृंगी (काकडासिंगी).

(१३) **प्रियंगु**—फलिनी (गोंदी), कंगू (कंगनी).

(१४) **भृङ्ग**—भृंगराज (भांगरा), त्वक् (तज).

(१५) **समंगा**—मञ्जिष्ठा (मजीठ), लज्जालु (लज्जालु).

(१६) **अमोघा**—विडंग (वायविडंग), पाटला (पाढल).

(१७) **मोचा**—कदली (केला), शाल्मलि (सेमल).

(१८) **कनटी**—धनिका (धनियाँ), मनाशिला (मैनाशिला).

(१९) **कुटन्नट**—स्योनाक (टेंटू), कैवर्त्तिमुस्तक (केवटीमोथा).

(२०) **घोंटा**—पूग (सुपारी), बदरी (बेर).

(२१) **दन्तशठा**—आम्लिका (इमली), चांगेरी (चूका).

(२२) **त्रिपुटा**—त्रिवृत् (निसोत), सूक्ष्मैला (छोटी इलायची).

(२३) **शटी**—कर्चूर (कचूर), गन्धपलाशी (गन्धपलाशी).
(२४) **दन्तशठ**—जम्भीर (जम्भीरी नीम्बू), कपित्थ (कत्था).
(२५) **अरुणा**—मंजिष्ठा (मजीठ), अतिविषा (अतीस).
(२६) **कणा**—पिप्पली (पीतल), जीरक (जीरा).
(२७) **तालपर्णी**—मुसली (मुसली), मुरा (मुरा).
(२८) **पीलुपर्णी**—मूर्वा (मूर्वा). बिम्बी (कन्दूरी).
(२९) **ब्राह्मी**—भांर्गी (भारंगी), स्पृक्का (असवर्ग).
(३०) **अपराजिता**—विष्णुक्रान्ता (कोयल) शालपर्णी).
(३१) **आस्फोता**—अपराजिता (कोयल), सारिव (सरवन).
(३२) **पारावतपदी**—ज्योतिष्मती (मालकंगनी), काकजंघा.
(३३) **शारदी**—शारिवा (सरिवन), जलपिप्पली (जलपीपल).
(३४) **उग्रगन्धा**—वचा (वच), यवानी (अजवायन).
(३५) **परिव्याध**—कर्णिकार (कनेर), जलवेतस (जलवेत),
(३६) **अञ्जन**—स्रोतोंजन (कालासुरमा) सौवीर (सफेदसुरमा).
(३७) **अग्नि**—चित्रक (चीता), भल्लातक (भिलावे).
(३८) **कृमिघ्न**—विडंग (वायविडंग), हरिद्रा (हलदी).
(३९) **तेजन**—शर (सरपता), वेणु (वास).
(४०) **तेजनी**—तेजस्वती (मालकंगनी). मूर्वा.
(४१) **रोचना**—गोरोचना (गोलोचन), रक्तोत्पल (लालकमल)
(४२) **राजादन**—क्षीरिका (खिरनी), प्रियाल (चिरौंजी).
(४३) **नकुलादनी**—कटुका, (कुटकी), जलपिप्पली (जलपीपल).
(४४) **गोलोमी**—श्वेतदूर्वा (सफेद दूब), वचा (वच).
(४५) **पद्मा**—पद्मचारिणी (सरोजनी) भार्ङ्गी (भारंगी).
(४६) **श्यामा**—सारिक (सारिवन), प्रियंगु.
(४७) **उत्तम**—त्रिफला, सर्वतोभद्रा (गम्भारी वृक्ष).
(४८) **धान्य**—धान्यक (धनियाँ), शाल्यादि (शाली चावल).
(४९) **सहस्रवीर्या**—नीलदूर्वा (नीलीदूब),महाशतावरी (बडी शतावर)
(५०) **सेव्य**—उशीर— (खस), लामज्जक.

(५१) **उदुंबर**—जन्तुफल (गूलर), ताम्र (ताम्बा).

(५२) **ऐन्द्री**—इन्द्रवारुणी(इन्द्रायण) इन्द्राणी (सम्हालुवृक्ष. वडी इलायची)

(५३) **कटंभरी**—कटुका (कुटकी) श्योनाक (अरलू).

(५४) **क्षार**—यवक्षार (जौखार), स्वर्जिका (सज्जीखार).

(५५) **गान्धारी**—दुरालभा (धमासा), गन्धपलाशी.

(५६) **चित्रा**—इन्द्रवारुणी (इन्द्रायन), वृहद्दन्ती (वडी दन्ती)

(५७) **तुण्डकेशी**—कर्पासी (कपास), बिम्बा (कुन्दरु).

(५८) **धारा**—गुडूची (गिलोय), क्षीरकाकोली.

(५९) **वालपत्र**—खदिर (खैर). यवास (जवासा).

(६०) **वारि**—वालक (नेत्रवाला), उदक (जल).

(६१) **अंगारवल्ली**—भांर्गी (भारंगी), गुंजा (रत्तक).

(६२) **अमृणाल**—उशीर (खस), लामज्जक.

(६३) **कुण्डली**—गुडूची (गिलोय), कोविदार (कचनार).

(६४) **गन्धफली**—प्रियंगु, चम्पककलिका (चम्बेकी कलिया).

(६५) **दीर्घमूल**—यवास (जवासा) शालिपर्णी.

(६६) **पुष्पफल**—कपित्थ (कैथ), कूष्माण्ड (पेठा).

(६७) **पोटगल**—नल (नरसल), कास (कांस)

(६८) **यवफल**—कुटज (इन्द्रजौ), वंश (वांस).

(६९) **विश्वा**—शुंठी (सोंठ), अतिविषा (अतीस).

(७०) **शीतशिव**—सैन्धव (सैन्धानमक), मिश्रेया (सौंफ)

(७१) **कर्कश**—काम्पिल्य (कवीला), कासमर्द (कसौन्दी).

(७२) **चर्मकषा**—शीतला (सीतला), मांसरोहणी,

(७३) **नन्दिवृक्ष**—अश्वत्थभेद (वेलिया पीपल), गोमुखपत्रशाख (तुन)

(७४) **पय**—क्षीर (दूध) उदक और (पानी)

(७५) **स्पृहा**—दूर्वा (दूब) मांसरोहणी ।

(७६) **सिंही**—बृहती (कटेरी), वासा (अडूसा)

(७७) **कतक**—विड़लवण (विड़नमक), निर्मलीफल,

(७८) **कंटकाढ्य**—कुब्जक (कूजावृक्ष), शाल्मलि (सेमल).
(७९) **यक्षधूप**- सरलनिर्यास (सरलका गोन्द), राल.
(८०) **द्राविडी**—शटी (कचूर), सूक्ष्मैला (छोटी इलायची).
(८१) **हट्टविलासिनी**—हरिद्रा (हलदी), नखी.
(८२) **तिलपर्ण**—रक्तचन्दन (लालचन्दन), ग्रन्थिपर्ण (गठिवन).
(८३) **मधुर**—जीवक, जीवनीयगण (जीवक आदि दश औषधियें).
(८४) **लोहद्रावणी**—गण्डदूर्वा(सफेददूब), अम्लवेतस(अम्लवेत).
(८५) **नागिनी**—ताम्बूली (पान), नागपुष्पी (नागदौन).
(८६) **मृदुरेचनी**—त्रिवृत् (निसोथ), मार्कण्डिका (भूईखखसा).
(८७) **नट**—श्योनाक (टेंटू), अशोक (अशोकवृक्ष).
(८८) **वनस्पति**—वट (बरौटा), नन्दिवृक्ष.
(८९) **मन्दार**—श्वेतार्क (सफेद आक), महानिम्ब.
(९०) **अम्बुज**—कमल (उत्पल), इज्जल(समुद्रफल).
(९१) **कुमारी**—घृतकुमारिका (घीकुवार), शतपत्री (गुलाब)
(९२) **वरातिक्तक**—पाठा (लताविशेष), पर्पट (पित्तपापडा).
(९३) **चित्रक**—पाठा (लताविशेष), अनलनामा (चीता),
(९४) **यज्ञिय**—खदिर (खैर), पलाश (ढाक).
(९५) **रक्तबीज**—अरिष्टक (रीठा), कन्दूरी (फलविशेष).
(९६) **क्षारश्रेष्ठ**—पलाश (ढाक), मोक्षक (मोखा वृक्ष).
(९७) **श्वेतपुष्प**—श्वेतार्क (सफेद आक),इन्द्रवारुणी (इन्द्रायण).
(९८) **तुवरी**—सौराष्ट्री (गोपीचन्दन), आढकी (अड़हर).
(९९) **कुंभिका**—पूगफला (सुपारी),वारिपर्णी(जलकुम्भी).
(१००) **राजपुत्रिका**—रेणुका (रेणुका), जाती (चमेली),
(१०१) **रक्तपुष्प**—रक्तार्क (लाल आक), कन्दूरी.
(१०२) **सतला**—शातला (सातला), वासन्ती (जूही).
(१०३) **विषमुष्टिक**—महानिम्ब, विषतिन्दुक (कुचलेका वृक्ष).

(१०४) रक्तफला–स्वर्णवल्ली (लताविशेष), वच.
(१०५) चन्द्रहासा–गुडूची (गिलोय), लक्ष्मणा.

त्र्यर्थकवर्गः ।

(१) क्रमुक–पूग(सुपारी), तूद (शहतूत),पट्टिकालोध्रप(पठाणी लोद)
(२) क्षुरक–कोकिलाक्ष (तालमखाना), गोक्षुर (गोखरू) तिलकपुष्प
(३) प्रियक–प्रियंगु, कदंब (कदम), असन (वीजेसार)
(४) पृथ्वीका–कालाजाजी (कलौंजी), बृहदेला (वडी इलायची) हिंगुपत्री.
(५) भृंग–भृङ्गराज (भांगरा), त्वग् (तज), भ्रमर (भौंरा).
(६) सौगंधिक–कह्लार (लाल कमल), कत्तृण, गन्धक.
(७) अरिष्ट–निंब (नीम), रसोन (लसुन), मद्य.
(८) मर्कटी–कपिकच्छु (कौंच), अपामार्ग(चिर्चिटा),करञ्जी(करञ्ज)
(९) अम्बष्ठा–पाठा (पाढ), चांगेरी (चूका). मोचिका (माइया)
(१०) कृष्णा–पिप्पली, कलाजी (कलौजी), नीली (नील)
(११) क्षीरिणी–दुग्धिका (दूधी), क्षीरकाकोली, श्वेतशारिवा.
(१२) मधुपर्णी–गुडूची (गिलोय), गंभारी, नीला (नील)
(१३) मण्डूकपर्ण–स्योनाक (अर्लू), माञ्जिष्ठा(मजीठ) ब्रह्ममण्डूकी.
(१४) श्रीपर्णी–गंभारी, गणिकारिका (गनियारी), कट्फल
(१५) अमृता–गुडूची (गिलोय), हरीतकी (हरड), धात्री (आमले)
(१६) अनन्ता–दुरालभा (धमासा), नीलदूर्वा (नीलीदूब), लांगली (कलियारी)
(१७) ऋष्यप्रोक्ता–अतिबला, महाशतावरी (बडी सतावर), कपिकच्छु (कौंच)
(१८) भूतीक–भूनिंब (चिरायता), कत्तृण, भूस्तृण.
(१९) कृष्णवृंता–पाटली (पाढ़ल), गंभारी माषपर्णी (मसीवन).

(२०) **जीवंती**–गुडूची (गिलोय), शाकविशेष, वंदा (वांदा)
(२१) **लता**–सारिवा (सरन),प्रियंगु, ज्योतिष्मती (मालकंगुनी)
(२२) **समुद्रांता**– (दुरालभा धमासा) कर्पासी (कपास), स्पृक्का
(२३) **हैमवती**–हरीतकी (हरड़) श्वेतवच (सफेदवच), पीतदुग्ध सेहुंड (पीले दूधकी कटोरी)
(२४) **अव्यथा**–हरीतकी (हरड़), महाश्रावणी (मुंडी), पद्मचारिणी (कमलनी)
(२५) **षड्ग्रन्था**–वचा (वच), गंधपला (गंधपलासी), शीकरंजी (करञ्ज)
(२६) **ताम्रपुष्पी**–धातकी (धायेके फूल) पाटला (पाढल), श्यामा-त्रिवृत् (निसोत)
(२७) **वरदा**–सुवर्चला (हुलहुल), अश्वगंधा (असगंध), वाराही (वाराहीकंद)
(२८) **इक्षुगन्धा**–काश (कांस), कोकिलाक्ष (तालमखाना) गोक्षुर (गोखरू)
(२९) **कालस्कंध**–तमाल, तिदुक (तेंदु), कालखदिर (कालाखैर)
(३०) **महौषध**–रसोन (लसुन), शुंठी (सोंठ), विष
(३१) **मधु**–क्षौद्र (शहत), पुष्परस, मद्य (मदिरा)
(३२) **कपीतन**–अम्रातक (अंबाडा), शिरीष (सिरिस), गर्दभाण्ड
(३३) **मदन**–पिण्डीतक (मैनफल) धत्तूर (धतूरा), सिक्थक (मोम)
(३४) **शतपर्वा**–वंश (वांस), दूर्वा (दूब) वचा (वच)
(३५) **सहस्रवेधी**–अम्लवेतस (अम्लवेत). मृगमद (कस्तूरी) हिंगु (हींग)
(३६) **सदापुष्प**–श्वेतार्क (सफेद आक), रक्तार्क (लालआक), कुन्द (कन्द)
(३७) **सुरभि**–शल्लकी (सलाई), मुरा, एलवालुक (एलवा)
(३८) **लक्ष्मी**–ऋद्धि, वृद्धि और शमी (छोंकरा)

(३९) **कालानुसार्य**–कालीयक (पीला चन्दन), तगर, शैलेय (छड़ी)

(४०) **चांपेय**–चंपक (चंपा), नागकेसर, पद्मकेशर (कमलकेशर)

(४१) **नादेयी**–गणकारिका (गनियारी) जलजंबु (जलजामन)
　　जलवेतस (जलवेत)

(४२) **पाक्य**–विड़ (विडनोन) सोवर्चल सोवर्चलनोन (यवक्षार),
　　(जौखार)

(४३) **विशल्या**–लांगली (कलियारी) गुडूची (गिलोय) मधुदन्ती
　　(छोटीदन्ती)

(४४) **इंद्रद्रु**–कुंकुम (कोह), देवदारु (देवदार), कुटज (कुडा)

(४५) **काश्मोर**–कुंकुम (केसर) पुष्करमूल (पोहकरमूल) गंभारी.

(४६) **गुंद्र**–पटेरक, मुंज, शर (सरपता)

(४७) **गुंद्रा**–प्रियंगु, फलिनी, भद्रमुस्तक (भद्रमोथा)

(४८) **चुक्र**–शुक्तक, अम्लवेतस (अम्लवेतस), वृक्षाम्ल

(४९) **पारिभद्र**–निंब (नीम), पारिजात (फरहद).देवदारु

(५०) **पीतदारु**–हरिद्रा (हलदी), देवदारु सरल

(५१) **वीर**–कुकुम (कोह), वीरण (वीरणतृण), काकोली

(५२) **वीरतरु**–कुकुम (कोह), वीरण (वीरणतृण), शर (शरपता),

(५३) **मयूर**–अपामार्ग (चिरचिटा), अजमोदा.तुत्थ (नीलाथोथा)

(५४) **रक्तसार**–रक्तचन्दन (लालचन्दन),पतंग (पतंग),खदिर (खैर).

(५५) **वदरा**–सुवर्चला (हुलहुल), अश्वगन्धा (असगन्ध), वाराही
　　(वाराहीकन्द)

(५६) **वशिर**–रक्तमार्ग (लाल चिरचिटा), गजपिप्पली, समुद्रलवण
　　(समुद्रनोन)

(५७) **सौवीर**–अंजनभेद (सफेदसुरमा), बदर (बेर), संधानभेद
　　(कांजीका भेद)

(५८) **वंजुल**—अशोक, वेतस (असलवेत), तिनिश (तिनिस)
(५९) **शिला**—मनःशिल (मनशिल), शिलाजतु (शिलाजीत), गैरिक (गेरू),
(६०) **सोमवल्ली**—वाकुची (वावची), गुडूची (गिलोय), ब्राह्मी,
(६१) **अक्षीव**—सोभांजन (सहिंजना), महानिंब (बकायन), समुद्रलवण,
(६२) **धामार्गव**—रक्तापामार्ग (लालचिराचिटा), राजकोशातकी (गलका तुरई),महाकोशातकी (वडी तुरई).
(६३) **दुःस्पर्श**—यवास (जवासा), कपिकच्छु (कौच), कंटकारि (कटेरी).
(६४) **पलाश**—किंशुक (ढाक), गंधपलास, पत्र (पत्रज),
(६५) **कार्मेषी**—मंजिष्ठा (मजीठ), वाकुची (वावची), श्यामत्रिवृत (काली निसोत),
(६६) **पलंकश**—गुग्गुल, गोक्षुर (गोखरू), लाक्षा (लाख),
(६७) **मधुरसा**—द्राक्षा (दाख), मूर्वा, गंभारी,
(६८) **रसा**—रसना, शल्यकी (छलवृक्ष) पाढा,
(६९) **श्रेयसी**—हरीतकी (हरड), रास्ना, गजपिप्पली,
(७०) **लोह**—अय (लोहा), कांस्य (कांसी),अगरू (अगर),
(७१)**साहा**—मुद्गपर्णी (बनमूग),बलाभेद (कंघी),शतपत्री (गुलाव)
(७२) **सुवहा**—रास्ना (रायसन), नाकुली (नाकुलीकंद), सिंदुबार (संभालू).
(७३) **काठिल्लक**—कारवेल्लक (करेला), रक्तपुनर्नवा,(लालविसखपरा) कृष्णवर्वरी (काली तुलसी)
(७४) **मधूलिका**—मूर्वा, यष्टि (मुलट्ठी), मधूक (महुआ),
(७५) **वितुन्नक**—धान्यक (धनिया), तुत्थ (नीलाथोथा), गोनर्द (केवटी मोथा)
(७६) **देवी**—स्पृक्का (असवर्ग), मूर्वा, करकोटी (ककोडा),

(७७) वसुक–शिवमल्ली (बडी मौलसरी), श्वेतार्क (सफेद आक) रोमक (पांशुलवण),

(७८) गंडीर–शाकविशेष, मंजिष्ठा (मजीठ),गण्डमूर्वा(सफेद दूब)

(७९) लांगली–कलिहारी (लांगलीकन्द), गजपिप्पली, नारिकेल (नारियल),

(८०) पिच्छिला–शिंशिपा (शीशम), शाल्मली (सिंवल), भूतवृक्ष (सोनापाठा),

(८१) महासहा–माषपर्णी (बनमाष), अम्लातक (वाणपुष्प) कुब्जक (कूजो),

(८२) चांद्रिका–मेथी, चन्द्रशूल (हालों),श्वेतकण्टकारी(सफेदकटेरी)

चार अर्थोंवाले शब्द ।

(१) श्वेतपुष्पा–इन्द्रवारुणी (इंद्रायन), सिंदुवार (संभालू),श्वेतार्क (सफेद आक), सैरेयक (कटसरैया) ,

(२) कारवी–पृथ्वीका (जीरा), शतपुष्पा (सौंफ), कालाजाजी (कलौंजी) अजमोदा (अजमोद).

(३) अंबष्ठ–पाठा (सोनापाठा), चांगेरी (खटमीठी) माचिका (माई) यूथिका (जूही).

बहुत अर्थोंवाले शब्द ।

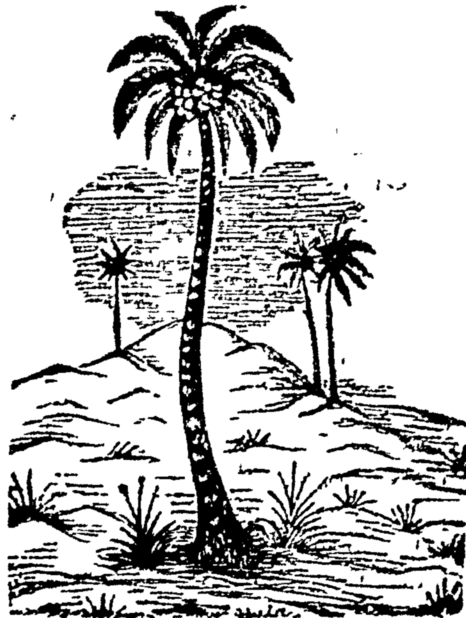
(१) अक्ष–सौवर्चल (संचर नमक), विभीतक(बहेड़ा), कर्ष (एक तोला), पद्माक्ष (पदमाख), रुद्राक्ष, शकट (गाड़ी), इंद्रिय, और पाशक (फांसी).

(२) काक–काकमाची (मकोह), काकोली, काकणंतिका(लालरत्तक), काकजंघा, काकनासा, काकोदुम्बरिका (कठूमर), और काक (कव्वा).

(३) **नाग**-सर्प (सांप) द्विरद (हाथी), मेष (मिंढा,) सीसक(सीसा) नागकेसर, नागवल्ली (नागरवेल) और नागदन्ती.

(४) **रस**-मांस, द्रव, इक्षुरस (ईखका रस), पारद (पारा), मधुरादि (मधुर आदि छः रस), वालरोग (बच्चोंका एक रोग) विष और नीर(जल).

इति श्रीवैद्यरत्नपण्डितरामप्रसादात्मजविद्यालंकार-शिवशर्म्मवैद्यकृत-शिवप्रकाशिकाभाषायां हरीतक्यादिनिघण्टौ अनेकार्थवर्गः समाप्तः ।



परिशिष्टनामानि ।



संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
अलूकम् ।	आलू बुखारा	उष्णपत्रिका ।	चाह
अप्फलम् ।	बीहफल	ऋषिका ।	ऋसई
अवरोहकः ।	असगंध	ऐशमूलम् ।	ईसरमूल
अंगभेदनम् ।	कुलत्थी	कर्णपूरः ।	सिरसअशोक
अर्द्धचान्द्रिका ।	कालीनिसोथ	नीलोत्पलम् ।	नीलकमल
अग्निः ।	कलहारी अजमोद	कपोतवंका ।	हुलहुल
अहिपुष्पम् ।	नागकेसर	कंदपालिका ।	आकंद सूरण
अमृतफलम् ।	नासपाती	कटंभरा ।	भद्राणिका
अवाक्पुष्पी ।	मीठी सौंफ	कंचुकी ।	क्षीरिवृक्ष
अश्वकर्णः ।	ईसवगोल	ककुंदरमेचकम् ।	गोरक्षचाकुल्या
अजगंधा ।	छोटीजवैन	कांतपाषाणः ।	चुंबक
आजम् ।	थूहरदूध	काछी ।	सौराष्ट्रिका
आरुकम् ।	आडू	कालपर्णी ।	कालीनिसोत
आल्ला ।	धनिआ	काकाण्डीला ।	(सेम) कौलशिंबि
आखुपाषाणम्	संखिया	कालमारिषः ।	कालीसील
इत्कटा ।	सूक्ष्म पत्रिका दीर्घ लोहित यष्टिका धान्यविशेष वा ओकण्ड ।	कालावकरकः ।	कालावाडा
		कीलालः ।	सल्लकी रस
ईश्वरम् ।	पित्तल	कुलिंजरम् ।	चिरपोटी
ईषद्गोलम् ।	ईसवगोल	कुची ।	कुचाई बीज
उपोदिका ।	पुदीना	कुलिशम् ।	काउज बं०
उरगः ।	सीसा	कुरंगनी ।	मुद्गपर्णी
उत्कटः ।	ऊठकटारा	कुंभी ।	यवासवाका फल

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
कुदरुः ।	खोटी मस्तकी	चक्राकः ।	शलगम
कुंदरुः ।	तीक्ष्णगंध	चंडालिनी ।	लसुन, उल
कूटरवाहिनी ।	सफेदत्रिवी	चंडी ।	महिषी, भैंस
कृष्णवीजम् ।	कालादाना	चंडाली ।	उमा औषधिभेद
कृमिघ्नी ।	तमाकू	चन्द्रलेखा ।	वाकुची
कोटिवल्कलम् ।	गुड्त्वक्	चावटी ।	कुंभाडु वा ब्रह्मी
खगः ।	सोनामाक्खी	चांवषा ।	चौप्रकलामूल
खंडितकर्णम् ।	खारकोल कनफोडा	चेलकम् ।	गुवाकत्वक्
गरुत्मान् ।	सोनामखी	जतुका ।	ग्रामचिरैया
गजचिर्भटम् ।	कचरीचिंभड	जलजा ।	मधुयष्टी
गंधपर्णी ।	भडंगी	जामातृ ।	सूर्य्यावर्त
गंगापुत्रः ।	गंगाराईल वं०	जीवंती ।	दौडीति गुर्जरदेशे
गंडीरः ।	शमटशाक	जुंगा ।	वृद्धदारुक
गंगावती ।	वटगंधारी	जूणः ।	ज्वारधान्य
गारुडी ।	गरुडचूडामणि	ज्वालामरीचम् ।	लालमिर्च
गांगेयी ।	मुस्ता, मथुरा	जोंगकम् ।	अगुर
गिलोड्यम् ।	गल्होट	टंगाः	राजआम्र
ग्रीष्मसुंदरम् ।	गीमाशाक	ढिंढिणिका	डिंढैन
गुण्ठः ।	वृंततृण	तरुणम् ।	एरंड
गुप्तस्नेहः ।	अकोल	तरङ्गः ।	मैनफल
गोधावती ।	नोहालिया	ताम्रवल्ली ।	चित्रकूट
शौणालम्	शौणाल	ताम्रकूटं ।	तमाकू
चतुरंगुलम् ।	अमलतासकी जड	तिक्तं ।	चिरायता
चर्मचटा ।	अजिनपत्रा	तिक्ता ।	कौड
		तिक्तका ।	हिंगोट
		दण्डोत्पलम् ।	श्वेतबला

१ गरुडो माक्षिकापक्षी बृहद्वर्णं स्मृता इति नाम मंजरीकारः ।

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
दारुसूषा ।	दारूसूसी वा अतीस	प्रत्यक्पुष्पी ।	अपामार्ग अपुठकण्डा
द्विवृन्तः ।	मेंहदी	पञ्चतृणम् ।	कुशा, कास, शालि शर, इक्षु.
दीर्घमूला ।	शामलता	प्रग्रहः ।	शोणालुफल
दीर्घविटपी ।	लांगली	पाषाणजित् ।	कुलत्थी
दूरमूलम् ।	जुवाह	पातालनृपतिः ।	सीसा
देवद्रुमः ।	निंब	पार्वती[1] ।	बेंगामृतिका
देवपुष्पी ।	देवहुली	पाशी ।	वरणा
देवदाली ।	घीयातोरी	पिडारकम् ।	पेंढरी
धन्वजम् ।	जांगल मांसरस	पुलहः ।	मुरदासङ्ग
धवला ।	श्वेतापराजिता	पुष्पकम्[2] ।	रसोंत
धन्वन्तरीबीजम् ।	ढांगढहेला	पुरुषः ।	गुग्गुल
धावनी ।	चाकुल्या	पेरुकम् ।	अमरूद
ध्यामकम् ।	गन्धतृण	प्रोष्ठिका ।	मच्छी
धूनकः ।	लोबान	फणी ।	सफेदचन्दन
धूम्रपत्रिका ।	तमाकू	फणिज्जकः ।	पन्हास
नदीजम् ।	सेंधानमक	वटपत्री ।	पाषाणभेद
नखरञ्जकः ।	मेंहदी	बहुपुत्रा ।	(जवांह) यवासा
नवनीतम् ।	लाडयागन्धक वं०	बालपत्रम् ।	पठानीलोध
नक्तम् ।	करञ्जबीज	बालाग्निः ।	झाणा
नागदन्तिका ।	नागदन्ती	बृहत्पत्रम् ।	हस्तिकंद
नागार्जुनी ।	दूधी	बृश्चीवम् ।	सफेद इटसिट
नांगा ।	वल्मीकमृत्तिका		
निकुम्भः ।	क्षुद्रदन्ती		
निर्गुण्डी ।	ब्रह्मचारिणी		
पयस्या ।	क्षीरकाकोली		

(१) सौराष्ट्री पार्वती मृत्स्ना तथा कांबोज पर्पटीति शब्दप्रकाशः ।

(२) शोभांजनं च सौवीरं नांतिकं पुष्पकं तथा ।

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
वृश्चकाली ।	बीछुणाबूटी	राक्षसी ।	राई, मुरा
बोटा ।	अलम्बुषा	रुद्रजटा ।	लटूपारि
बोलम् ।	फुलसत्व	रुधिरम्[1] ।	गेरी तांबा
भद्रः ।	देवदारु	रेणुका ।	नेगबीज
भव्यम् ।	जीवन्ती कर्मरङ्ग	रोहिणी ।	बडी अरणी
भद्रोत्कटा ।	भादांवतक	लक्ष्मी ।	लोहा
भारवाहिनी ।	(वसमा) नीलिनी	वसुः[2] ।	घन्धक
भूचणका ।	मूँगफली	वराहक्रांता ।	लज्जालु
भूनागः ।	गण्डोआ	वल्लूरम् ।	गुख्तामांस
भूषणम् ।	हडताल	वण्डांगतानः ।	शांता
भूलता ।	चुंचत्वक्	वसिवः ।	श्वेतबला
मयूरजंघा ।	अरलु	वराहः ।	मथुरा
महावृक्षम् ।	थाक	वसुकः ।	सांभरनमक
महाराष्ट्री ।	मरहटी	वज्रवल्ली	हाडजोड
महापुरुषदेवता ।	शतावर	वज्रकर्णम् } वज्रीकंदः }	शकरकंदी
मायाफलम् ।	माजू		
मारिषा ।	माठा	वाष्पिका ।	हिंगुपत्री चौलाई
मालुकापत्रम् ।	अश्मन्तक	वेत्राग्रम् ।	वंशसदृशाग्र
माद्री ।	अतीस	शकारिः ।	कचनार
मूलवीरम् ।	पोहकरमूल	शनकंदः ।	चर्मकपाकंद
मोरटः ।	अंकोट	शतसुता ।	शतावरी
यज्ञनेता ।	सोमलता	शाकम् ।	पटोल
यमचिचा ।	कच्चीइमली	शालिचः ।	शमठशाक
रक्तवीजा ।	मूंगफली		
रात्रिहासकः ।	हारसिंगार		
राजावर्तः ।	गोविन्दमणि		
राजा ।	राजपलांडु		

(१) रक्तरीवस्तु म्लेच्छास्यमितिविश्वः

(२) दोलाधगंधपाषाणः पामारिगधको वसुरिति ॥

संस्कृत	भाषा	संस्कृत	भाषा
शार्ङ्गेष्टा ।	करंजी	सुरंगी ।	लाल सुहांजना
श्यामा ।	नीलनी	सुरभिः ।	कुंदरु
शावरकंदः ।	लसुन	स्पृक् ।	पृक्का
श्यामलम् ।	रोहिष	स्नेहवृक्षम् ।	देवम¹
शिखंडिनी ।	जूही रतियां	स्थविरः ।	शलेय
शीतपाकी ।	अतिवला	स्वरसः ।	पन्हास
श्राहः ।	सरलस्राव	सौगंधिकम् ।	अनन्तमूल
शुक्तिः	झिनाजि	हरिः	गुग्गुलु
श्रीवासः ।	देवदारु	हंसपादी ।	थानकुनी
शुकमाता ।	भडंगी	ह्रस्वांगः ।	जीवक
शुठकम् ।	सूखीमूली	हिंस्रा ।	गुडकाडायि हींस
शूराह्वा ।	क्षीरकाकोली	हिंगुपत्रा ।	काकादनी
शृगालविन्ना ।	क्रोष्टुविन्ना	हिंगुपुत्री ।	हिंगुवर्त्ति वावांफली
शूकरी ।	वृद्धदारक	त्र्याष्टिका ।	राई
षडंगः ।	मखडा	त्रायमाणा ।	बालोयालता वा देववल
सप्तला ।	सातला	त्रिकत्रयम् ।	त्रिकटु त्रिफला त्रिमद
सर्जकः ।	लोबान	त्रिपादी ।	कीटमारिका
समंनृपतिः ।	सुहांजना	त्रुटिः ।	छोटी इलायची
सीताफलम् ।	सरीफ		
सुदर्शना ।	तानीवेल		

१ हरिर्गुग्गुलुर्हरिरिंद्रः ।

परिशिष्टभाषानामानि ।

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
अम्लवेत ।	अम्लवेतसम्	अरहड ।	आढकी
अग्निझाड ।	दीर्घजीरकम्	असाल्यूं ।	चंद्रशूरम्
		अतारकीदवा । अंजरूदः	गोस्तखोरा

१ गलगल ।

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
अरंडोली।	एरंडबीजम्	कटैली।	कंटकारी
अंधाहुली।	अवाक्पुष्पी	कचूर।	कर्चूरम्
अंगेथु	गणकारिका	कछकप।	कपिकच्छुः
अंरुष।	भिषग्माता	कवैया।	काकमाची
अंकोट।	दीर्घकालः	कनगच।	करंजम्
अंजरूत।	निर्य्यासविशेषः	कहारी।	लांगली
अंतर[1]।	पुष्पसत्त्वम्	कडाका।	लंघनम्
अराणि।	वन्यकरीषम्	करेल।	कारवल्लीलता
आमी हल्दी।	आम्रगंधी हरिद्रा	कपास्या।	कर्पासीबीजम्
आदों।	आर्द्रिका	कवारपाठा।	कुमारी
आककनपान।	अर्कपत्रम् मूलम्	कचलन।	काचलवणम्
आसी।	आसवम्	कहुवावकल।	धववल्कलम्
आमलीकाचिया।	अम्लिकाबीजम्	कस्स।	वीरणमूलम्
आंधीझाड।	अपामार्गः	कसौंदी।	कासमर्दम्
इंद्राणी।	इंद्रवारुणी	केपलो।	रक्तमृत्तिका
उदपर्णी।	माषपर्णी	कारण।	ज्योतिष्मती
उमजिनी।	ज्योतिष्मती	कालाअभ्रक।	कृष्णाभ्रम्
ऊंदर।	मूषिकम्	काञ्चली।	सर्पत्वक्
कलूंजी।	उपकुंची	किरमाल।	आरग्वधः
कठवर।	कपित्थम्	किसोया।	पक्षिविशेषः
कणगूगली।	गुग्गलकणा	किरायता।	कैरातः
कटुम्बर कठोडी।	कपित्थमज्जा	पीस।	पीयूषम्
कवीटफल।	कपित्थफलम्	कुमेरपाठ।	पाटली
कपूर चीनिया।	पक्वकर्पूरम्	कुलञ्जन।	तांबूलीजटा
		कुचिला।	विषतिंदुकः

---

१ अतर।

भाषा	संस्कृत
कुन्दरु ।	मुकुन्दः
कूठ ।	कुष्ठम्
कूट ।	शाल्मली
कूचकी फली ।	कपिकच्छुः
केली साहिली ।	कदलीसार
केसूलोंका चून ।	पलाशपुष्पम्
कोअल ।	विष्णुक्रांता
कण्डीर ।	करवीरम्
खस ।	उशीरम्
खपरिया ।	खर्परम्
खाप ।	प्रसारिणी
गवार ।	कुमारी
गजपिप्पला ।	बृहत्पिप्पली
गडूंबा ।	इन्द्रवारुणी
गिलवे ।	निंबोमृता च
गुडहुल (गुलतुर्रा) ।	जपाकुसुमम्
गोलकाकडी ।	कुलकम्
गंगेरणा । गुलशकरी ।	नागवला
चव ।	चव्यम्
चकवड ।	चक्रमर्दः
चन्दलेई ।	तंडुलीयः
चारोली ।	उपकुची
चिंचरीविहना ।	अपामार्गः
चिरपोटन ।	काकमाची
चिरमटी ।	गुंजा
चालित्रो ।	वास्तुकम्

भाषा	संस्कृत
चूक ।	चांगेरी
छड ।	शिलापुष्पम्
छीला ।	चित्रकं, पलाशम्
जलकुम्भी ।	वारिपणः
जीयोपोता ।	पुत्रजीवः
जाल ।	पीलु
जीयोपोता ।	पुत्रजीवः
झाऊ ।	झावुकः
ठेरा ।	अकोलम्
डासरया (डांसरा) ।	तितिडीकम्
डाभ ।	दर्भम्
डोडा ।	खसफलम्
तस्तुम्बा ।	इन्द्रवारुणी
ताल	हरितालम्
तिलकंठी ।	विष्णुक्रान्ता
तिलवाणी ।	सूर्यभक्ता
तिदुकी ।	तिदुवृक्ष
तूण ।	तुणि
तवरसी ।	त्रिवृत
तोरुं ।	कोशातकी
त्रायामाणा सोमलता त्रहुला	देवबला
दडगला ।	द्रोणपुष्पी
दात्यूणी ।	लघुदन्ती
धमासा ।	धन्वयासकः
धव ।	धवः
धनबहेर ।	राजवृक्षः

भाषा	संस्कृत
धोली गूंद ।	धातकीनिर्यासः
नरसल ।	पोटगलः
नरकचूर ।	वैधमुख्यः
नखल्या ।	नखः
नागकेसर ।	नागपुष्पम्
नागदौण ।	नागदमनी
नादुबाण ।	कर्पासी
नागरबेल ।	तांबूलवल्ली
निसोत ।	निवृत्
निर्मली ।	कतकम्
नीलटांच ।	गरुडः
नेगड ।	निर्गुंडी
पद्माक ।	पद्मकाष्ठम्
पत्रज ।	तगालपत्रम्
पतंग ।	कुचन्दनम्
पंचांगुल ।	एरंडः
पठानीलोध्र ।	श्वेतलोध्रम्
पत्थरफोडी ।	पाषाणभेदः
पाडल ।	पाटला
पट्कडी ।	स्फुटिका
फूलफिरंग ।	प्रियंगुः
फरहिद ।	पारिभद्रः
बाधापरो ।	वृद्धदारुकम्
बन्दा ।	त्रपु
वढहल ।	लिकुचः
बभनेटी ।	भार्ङ्गी
[illegible]ी ।	अवल्गुजः
[illegible]टी ।	वंध्याककोंटी
बिजयासार ।	बीजक
बिसखपरा ।	रक्तपुनर्नवा
बिजौरा (तुरंज) ।	अम्लवेतसम्
बैद ।	वेतसम्
बोल ।	गन्धरसम्
बौली ।	वंमूलः
बौलसिरी ।	वकुलः
भरहंडा	कंटकारी
मसूर ।	मसूरिका
महलोठी ।	मधुयष्टी
मटर	कलायः
महदी ।	जखरंजकम्
ममरेला	उपकुंची
मंडुआ ।	निर्गुंडी
मड्र ।	लोहकिट्टम्
मालकगुनी ।	ज्योतिष्मती
मुनक्का ।	द्राक्षा
माजू ।	मायफलम्
मुर्वा ।	मधूलिका
मुर्दासंग ।	कंकुष्ठम्
मुचकुन्द ।	क्षत्रवृक्षः
मेवड ।	निर्गुंडी
मैडल ।	मदनफलम्
मोरचूत ।	तुत्थकम्
मोठ ।	मकुष्ठकम्
मोचरस ।	शाल्मलीनिर्यासः
मोरसिखा ।	मयूरशिखा

भाषा	संस्कृत	भाषा	संस्कृत
राम्ना ।	एलापर्णी	सिंघाडा ।	जायफलम्
राल ।	शालनिर्यासः	सरीफा ।	सीताफलम्
रांग ।	त्रपु	सिण ।	घणः
रुदन्ती ।	रुद्रवन्ती	सिंगी मोहरा ।	शृंगकम्
रेवदचीनी ।	पीतकाष्ठम्	सेंधा ।	सैंधवम्
रोहीस ।	गंधतृणम्	सस्या ।	शशः
लटजीरा ।	अपामार्गः	सुफेददोब ।	श्वेतदूर्वा
लाजेरी ।	लज्जालुः	श्वेतसर्ज ।	धुनकः
लख ।	तित्तिरिः	सुफेदबावची ।	श्वेतबर्बरी
वरी ।	शतावरी	सुफेदकंडी ।	श्वेतकरवीरः
सर्पाक्षी ।	नाकुली	सुफेद खैरसार ।	शुद्धखादिरसारः
सहदेई ।	महाबला	सोमल ।	आखुपाषाणः
सतोन्यूं ।	सप्तपर्णा	संभालू ।	निर्गुण्डी
सरकडा ।	मुञ्जः	सांटी ।	पुनर्नवा
सरपुंखा ।	प्लीहशत्रुः	सोंचरलून ।	सौवर्चलम्
सरिव ।	शालपर्णी	हरफारेवडी	लवली
सावन ।	माषपर्णी	हारशृंगार ।	रात्रिहासकः
संखाहुली ।	शंखपुष्पी	हुलहुल ।	सुवर्चला सूर्यभक्तः
सामरा ।	शाकंभरीयम्	हिंगोरा ।	इंगुदी
सामरा ।	न्यंकुः मृगः	हिंगुल ।	हिंगुल
सांठा ।	इक्षुः	हिंगोटा ।	इंगुदी
साखोट ।	शाखोटम्	निउजे ।	निकोचकम्
सिरस ।	शिरीषम्	सारदा ।	सरदाफलम्
सिखरणी ।	दधिशर्करा	गंगेरुआ ।	गांगेरुकीफलम्

इति परिशिष्टभाषानामानि समाप्तानि !

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस
बम्बई.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस.
कल्याण-बम्बई.